ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

झारखंड राज्य एवं अन्य

cuke

चंपा पाठक

L.P.A. No. 321 of 2013. Decided on 28th March, 2014.

जनवितरण प्रणाली–अनुज्ञप्ति–यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रत्यर्थी को प्रदान की गयी अनुज्ञप्ति का रद्दकरण पूर्णतः अवैध, मनमाना और संविधान के अनुच्छेदों 14 एवं 19 (1) (g) के प्रावधानों का उल्लंघनकारी है, रिट न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध अपील–एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती किया कि संविधान के अनुच्छेदों 14 एवं 19 (1) (g) की दृष्टि में प्रत्यर्थी रिट याची को व्यापार अथवा व्यवसाय करने के अपने अधिकार से केवल इस आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता है कि उसका पति भी वही व्यापार अथवा व्यवसाय करता है–झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति का एकीकरण) आदेश, 1984 के प्रासंगिक प्रावधानों को प्रत्यर्थी द्वारा रिट न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी गयी थी, जिसके परिणामस्वरुप रिट याचिका अनुज्ञात की गयी थी–यह अभिनिश्चित करने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी और उसका पति पृथक रूप से रह रहे थे या नहीं, मामले में जाँच करने के बाद नया आदेश पारित करने के लिए मामला उपायुक्त के पास वापस भेजा गया–एलः पीः एः अनुज्ञात। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–M/s. Rajesh Kumar, Abhijeet Kumar Singh, For the Appellants; Mr. Binod Singh, For the Respondent.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–दिनांक 11.7.2005 के आदेश का अभिखंडन इप्सित करते हुए रिट याचिका दाखिल की गयी थी जिसके द्वारा प्रत्यर्थी को प्रदान की गयी खुदरा उचित मूल्य दुकान से संबंधित अनुज्ञप्ति सं॰ 7/2005 रद्द कर दी गयी थी। उपायुक्त, राँची द्वारा पारित ई॰ सी॰ अधिनियम अपील सं॰ 81R15/2005-06 में दिनांक 17.8.2011 के आदेश के अभिखंडन के लिए आगे प्रार्थना की गयी थी। दिनांक 5.12.2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा रिट याचिका अनुज्ञात की गयी थी और सब–डिविजनल अधिकारी–सह–अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा जारी दिनांक 11.7.2005 का आदेश और उपायुक्त, राँची द्वारा जारी दिनांक 17.8.2011 का आदेश यह अभिनिर्धारित करते हुए अभिखंडित किया गया था कि रद्दकरण पूर्णतः मनमाना, अवैध और भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 19 (1) (g) का उल्लंघनकारी था। व्यथित होकर, झारखंड राज्य ने वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल किया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि दिनांक 11.5.2005 को सं॰ 7/2005 वाली अनुज्ञप्ति प्रत्यर्थी के नाम में जारी की गयी थी और खुदरा उचित मूल्य दुकान के माध्यम से वितरण के लिए वस्तुओं को प्रत्यर्थी को आवंटित किया गया था। किंतु, कोई कारण बताओ नोटिस जारी किए बिना और सुनवाई का अवसर दिए बिना प्रत्यर्थी को प्रदान की गयी अनुज्ञप्ति सब–डिविजनल अधिकारी–सह–अनुज्ञापन प्राधिकारी ने इस आधार पर दिनांक 11.7.2005 को रद्द कर दी गयी थी कि पहले प्रत्यर्थी के पति के नाम में अनुज्ञप्ति सं॰ 97/1984 के तहत अनुज्ञप्ति जारी की गयी थी। प्रत्यर्थी डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 4603 वर्ष 2005 में इस न्यायालय के पास आयी जिसे दिनांक 16.11.2005 के आदेश द्वारा इस संप्रेक्षण के साथ निपटाया गया था कि प्रत्यर्थी सांविधिक अपील के वैकल्पिक उपचार का लाभ लेने के लिए स्वतंत्र होगी। तद्नुसार, प्रत्यर्थी ने उपायुक्त, राँची के समक्ष ई॰ सी॰ अधिनियम अपील सं॰ 81R15/2005-06 दाखिल किया जिसे दिनांक 17.8.2011 को खारिज कर दिया गया था। इन तथ्यों में, प्रत्यर्थी ने डब्लू॰ पी॰ (सी॰)

सं॰ 6006 वर्ष 2011 दाखिल किया जिसे दिनांक 5.12.2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा अनुज्ञात किया गया है।

3. हमने पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

4. अपीलार्थी झारखंड राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अभिजीत कुमार सिंह ने निवेदन किया है कि उस समय जब दिनांक 11.5.2005 को प्रत्यर्थी को अनुज्ञप्ति सं॰ 7/2005 जारी किया गया था, स्वीकृत रूप से प्रत्यर्थी का विवाह अस्तित्वयुक्त था। दिनांक 11.7.2005 को प्रत्यर्थी की अनुज्ञप्ति रद्द कर दिए जाने के काफी बाद तलाक डिक्री इप्सित करते हुए प्रत्यर्थी द्वारा वैवाहिक मामला एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 56/2010 दाखिल किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि सरकारी अधिसूचना के निबंधनानुसार एक परिवार के सदस्यों को एक अनुज्ञप्ति से अधिक प्रदान नहीं किया जाता है और चूँकि अनुज्ञप्ति सं॰ 97/1984 के तहत प्रत्यर्थी के पति के नाम में पहले ही अनुज्ञप्ति जारी की गयी थी, दिनांक 11.5.2005 को गलत रूप से प्रत्यर्थी के नाम में एक अन्य अनुज्ञप्ति जारी की गयी थी जिसे सही प्रकार से दिनांक 11.7.2005 को रद्द कर दिया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 के अधीन प्रत्यर्थी को जनवितरण प्रणाली खुदरा दुकान के लिए अनुज्ञप्ति जारी की गयी थी जिसके लिए सब्सिडी देकर खाद्यान्न एवं अन्य वस्तुओं की आपूर्ति की जाती है और इस प्रकार, अनुज्ञप्ति प्रत्यर्थी को प्रदत्त विशेषाधिकार की प्रकृति का था और ऐसा होने के कारण विद्वान एकल न्यायाधीश ने भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 19(1)(g) के अधीन प्रावधानों के उल्लंघन के आधार पर दिनांक 11.7.2005 के रद्दकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने की गलती की। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि जहाँ तक प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अभिवचन कि उसको सुनवाई का अवसर दिए बिना अनुज्ञप्ति रद्द कर दी गयी है का संबंध है, इसे अपीलीय चरण पर सुधारा गया है जब प्रत्यर्थी ने उपायुक्त, राँची के समक्ष अपील दाखिल किया।

5. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विनोद सिंह ने निवेदन किया है कि न्यायालय के समक्ष अपीलार्थीगण द्वारा विश्वास किया गया परिपत्र प्रस्तुत नहीं किया गया था और इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से संप्रेक्षित किया है कि विधि का कोई प्रावधान दर्शाया नहीं गया है जिसके अधीन प्रत्यर्थी को अनुज्ञप्तिधारक की पत्नी होने के नाते जीविका अर्जित करने अथवा अपने नाम में व्यवसाय करने के अधिकार से वंचित किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि यदि यह माना जाता है कि प्रत्यर्थी और उसका पति साथ रह रहे हैं, फिर भी प्रत्यर्थी की अनुज्ञप्ति का रद्दकरण भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 19 (1) (g) के प्रावधानों के उल्लंघन में होगा और अपीलार्थी राज्य द्वारा इसका कोई कारण प्रकट नहीं किया गया है कि इसके बजाए प्रत्यर्थी के पति की अनुज्ञप्ति रद्द क्यों नहीं की गयी थी। बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 के प्रावधानों पर विश्वास करते हुए यह निवेदन किया गया है कि एक बार प्रदान की जा चुकी अनुज्ञप्ति केवल अनुज्ञप्ति के निबंधनों एवं शर्तों के उल्लंघन के आधार पर और न कि अन्य आधार पर रद्द की जा सकती है। किंतु, वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी को प्रदान की गयी अनुज्ञप्ति, अनुज्ञप्ति के निबंधनों एवं शर्तों के भंग के आधार पर रद्द नहीं की गयी है और रद्दकरण का आदेश प्रत्यर्थी को सुनवाई का अवसर दिए बिना और प्रत्यर्थी को कारण बताओ नोटिस जारी किए बिना पारित किया गया है और इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सही प्रकार से आक्षेपित आदेशों को अभिखंडित किया गया है।

6. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और परस्पर पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए प्रतिवादों के अधिमूल्यन पर हमारा दृष्टिकोण है कि दिनांक 5.12.2012 का आक्षेपित आदेश इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किए जाने का दायी है। प्रत्यर्थी का प्रतिवाद यह है कि दिनांक 11.7.2005 का रद्दकरण का आदेश उसको कोई कारण बताओ नोटिस जारी किए बिना और सुनवाई का अवसर दिए बिना जारी किया गया है। यह सुनिश्चित है कि ऐसे समस्त मामलों में जिसमें नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के आधार पर आदेश विधि में संपोषणीय नहीं पाया गया है, व्यथित व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने के बाद मामले को नए सिरे से न्याय निर्णीत करने के लिए मामला प्राधिकारी के पास वापस भेजा जाता है। किंतु, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा ऐसा रास्ता अपनाया नहीं गया है। इसके अतिरिक्त, अपीलीय चरण पर प्रत्यर्थी को सुनवाई का पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया है। यह प्रतीत होता है कि मामले में जाँच की गयी थी और दिनांक 22.11.2010 की जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी जिसके अधीन यह संप्रेक्षित किया गया था कि यह अभिनिश्चित नहीं किया जा सकता था कि प्रत्यर्थी अपने पति के साथ अथवा उससे अलग रह रही है। ई॰ सी॰ अधिनियम अपील सं॰ 81R15/2005-06 में उपायुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 17.8.2011 का आदेश भी प्रकट करता है कि उपायुक्त ने भी इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि इसे अभिनिश्चित नहीं किया जा सका था कि क्या प्रत्यर्थी अपने पति से अलग रह रही है या नहीं।

7. प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि चूँकि पति द्वारा प्रत्यर्थी का परित्याग कर दिया गया था, उसने विशेष विवाह अधिनियम की धारा 27 के अधीन वैवाहिक मामला एम॰ टी॰ एस॰ 56/2010 दाखिल किया। किंतु, बाद में, हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13B के अधीन संयुक्त याचिका दाखिल की गयी थी और दिनांक 4.9.2013 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी और उसके पति अर्थात् श्रीकांत पाठक के बीच विवाह विघटित कर दिया गया था और हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13B के अधीन आपसी सहमति से तलाक डिक्री पारित की गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि अन्यथा भी प्रत्यर्थी अनुज्ञप्ति के प्रदान के लिए हकदार थी और दिनांक 11.7.2005 का रद्दकरण का आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 19 (1) (g) के अधीन नागरिकों को प्रत्याभूत अधिकारों के उल्लंघन में था और इसलिए विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से रिट याचिका अनुज्ञात किया है।

8. हम प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद में गुणागुण नहीं पाते हैं। स्वीकृत रूप से, बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 के अधीन प्रत्यर्थी को अनुज्ञप्ति जारी की गयी थी। अनुज्ञप्ति प्रदान करने और 1984 आदेश के अधीन संगणित अनुज्ञप्ति के प्रवर्तन को विनियमित करने वाली कतिपय शर्तें हैं। बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 का भाग III कीमतों एवं स्टॉक, आदि से संबंधित निर्बंधनों पर विचार करता है। अपीलार्थी राज्य के विद्वान अविवक्ता ने भी वर्ष 1984 में जारी पत्र सं॰ 8444 पर विश्वास किया है जिसके अधीन यह उल्लेख किया गया है कि उचित मूल्य की दुकान एक परिवार के सदस्यों के नाम में नहीं होनी चाहिए। यह प्रतिवाद भी किया गया है कि उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से वितरण के लिए खाद्य वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान किए जाने के बाद अनुज्ञप्तिधारक और अपीलीय प्राधिकारी के बीच करार निष्पादित किया जाता है जो अनुज्ञप्तिधारक को सहायकी दर पर खाद्य एवं अन्य वस्तुओं को पाने का हकदार बनाता है और इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि चूँकि यह अनुज्ञप्ति धारक को दिया गया विशेषाधिकार है, अपीलार्थी राज्य अनुज्ञप्ति के प्रदान के लिए निर्बंधन लगाने के लिए स्वतंत्र है। हम यह भी पाते हैं कि चूँकि बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 के प्रावधानों के अधीन अनुज्ञप्ति विनियमित की जाती है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 19(1) (g) की दृष्टि में प्रत्यर्थी रिट

याची को व्यापार अथवा व्यवसाय करने के अपने अधिकार से केवल इस आधार पर वंचित नहीं किया जा सकता है कि उसका पति भी वही व्यापार अथवा व्यवसाय करता है। इसके अतिरिक्त, बिहार/झारखंड व्यापारिक वस्तु (अनुज्ञप्ति एकीकरण) आदेश, 1984 के अधीन प्रासंगिक प्रावधानों को प्रत्यर्थी द्वारा रिट न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दिया गया था और इसलिए, पूर्वोक्त आधार पर रिट याचिका अनुज्ञात करने का अवसर विद्वान एकल न्यायाधीश के पास नहीं था।

9. प्रत्यर्थी की अनुज्ञप्ति दिनांक 11.7.2005 को रद्द की गयी थी और उसने वैवाहिक मामला एम॰ टी॰ एस॰ 56/2010 दाखिल किया जिसे दिनांक 4.9.2013 के आदेश द्वारा डिक्री किया गया था। चूँकि दिनांक 22.11.2010 की जाँच रिपोर्ट और ई॰ सी॰ अधिनियम अपील सं॰ 81R15/2005-06 में दिनांक 17.8.2011 का आदेश इस आधार पर अग्रसर हुआ था कि यह अभिनिश्चित नहीं किया जा सकता था कि क्या प्रत्यर्थी और उसका पति अलग रह रहे थे या नहीं, हमारा मत है कि मामले में जाँच करने के बाद नया आदेश पारित करने के लिए मामले को उपायुक्त, राँची के पास वापस भेजने की आवश्यकता है। तद्नुसार, डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 6006 वर्ष 2011 में दिनांक 5.12.2012 का आदेश और ई॰ सी॰ अधिनियम अपील सं॰ 81R15/2005-06 में दिनांक 17.8.2011 का आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और मामला उपायुक्त, राँची के पास वापस भेजा जाता है। परिणामस्वरुप, पूर्वोक्त निर्देश के साथ इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj ,o vferkHk dekj xlrk] U;k;efrx.k

अशोक राम एवं अन्य (606 में)

उमेश राम (763 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Criminal Appeal (D.B.) Nos. 606 with 763 of 2004. Decided on 19th February, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 279 वर्ष 1993 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, कोडरमा द्वारा पारित दिनांक 20.3.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 22.3.2004 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/149/323—हत्या–घोर उपहति–सामान्य उद्देश्य–दोषसिद्धि–अ॰ सा॰ का साक्ष्य संगत पाया गया–दुकान से मृतक की बेदखली के संबंध में पक्षों का संबंध कटु था–संबंध वह कारक नहीं है जो गवाह की विश्वसनीयता प्रभावित करता है–चाक्षुक परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य और आई॰ ओ॰ के वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष से पूर्ण समर्थन पाता है–अपील अंशतः अनुज्ञात। (पैराएँ 11, 12, 14, 15, 17 से 22)

निर्णयज विधि.–(2012) 4 SCC 79—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s A.K. Sahani, Ajit Kumar, Deepak Kumar, For the Appellant; Sri Anand Kumar Pandey, For the Respondents; Sri A.N. Deo, For the Informant.

प्रशान्त कुमार, न्यायमूर्ति.–ये अपीलें अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, कोडरमा द्वारा क्रमशः दिनांक 20.3.2004 और दिनांक 22.3.2004 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है, जिसके द्वारा और जिसके अधीन उन्होंने अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149/323 के अधीन दोषसिद्ध किया। अपीलार्थी अशोक राम को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन

भी विनिर्दिष्टत: दोषसिद्ध किया गया है। समस्त अपीलार्थीगण को आजीवन कारावास भुगतने का निर्देश दिया गया था और उन्हें आगे 10,000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। किंतु, अपीलार्थी अशोक राम को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन पृथक दंडादेश नहीं दिया गया था। विद्वान अवर न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि दोषसिद्धों से जुर्माना की प्राप्ति पर इसे मृतका की पत्नी अर्थात् करुणा देवी को उसके भरण-पोषण हेतु सौंपा जाए।

2. अनावश्यक विशिष्टियों के बिना अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 26.6.1990 को रात्रि लगभग 8 बजे अशोक राम, बिनू राम, तिलक राम और कैलाश राम लाठी और डंडा से लैस होकर सूचक की दुकान पर आए और उसको गाली दी और उसको दुकान खाली करने का निर्देश दिया अन्यथा उसे और उसके परिवार के सदस्यों की हत्या कर दी जाएगी। आगे यह कथन किया गया है कि सूचक के चाचा श्रवण कुमार (मृतक) ने उनको मना किया, तब अभियुक्तगण ने लाठी एवं डंडा से उस पर प्रहार किया जिस कारण उसे अपने मस्तक पर उपहति आयी और गिर गया। तत्पश्चात, अभियुक्त बिनू राम अपने घर से तलवार लाया और तलवार से सूचक के चाचा पर प्रहार करने का प्रयास किया, किंतु सूचक ने हस्तक्षेप किया और तलवार पकड़ लिया। तत्पश्चात, अन्य अभियुक्तगण ने सूचक पर लाठी एवं डंडा से प्रहार किया, जिस कारण उसे अपने मस्तक पर उपहति आयी। यह कथन किया गया है कि हल्ला होने पर अगल-बगल रहने वाले व्यक्ति आए और उनको बचाया। आगे यह कथन किया गया है कि दुकान के संबंध में अभियुक्तगण और सूचक के बीच मामला चल रहा है और उस मामले के कारण वर्तमान घटना हुई।

3. यह प्रतीत होता है कि पूर्वोक्त सूचना के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 341/323/307/34 के अधीन दिनांक 26.6.1990 को कोडरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 140 वर्ष 1990 संस्थित किया गया था और पुलिस ने अन्वेषण किया। तब यह प्रतीत होता है कि समस्त घायलों का परीक्षण कोडरमा अस्पताल में पदस्थापित डॉक्टर अ॰ सा॰ 1 द्वारा किया गया था। तत्पश्चात, डॉक्टर ने घायल श्रवण कुमार को राजेन्द्र मेडिकल कॉलेज एन्ड हॉस्पिटल, रांची बेहतर इलाज के लिए निर्दिष्ट किया, किंतु इलाज के दौरान अगले दिन श्रवण कुमार की मृत्यु हो गयी। परिणामस्वरुप, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध जोड़ा गया था। यह प्रतीत होता है कि श्रवण कुमार के मृत शरीर का शव परीक्षण दिनांक 28.6.1990 को राजेन्द्र मेडिकल कॉलेज एन्ड हॉस्पिटल में किया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण अधिकारी ने गवाहों का बयान दर्ज किया और अन्वेषण पूरा करने के बाद भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147/148/149/302/307/323/380 के अधीन अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। विद्वान ए॰ सी॰ जे॰ एम॰, कोडरमा ने अपराधों का संज्ञान लिया। तत्पश्चात, उन्होंने मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया, क्योंकि भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/307 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है।

4. मामले की प्राप्ति के बाद, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने इसे विचारण के लिए अपर सत्र न्यायाधीश, कोडरमा की फाइल में अंतरित किया। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, कोडरमा ने दिनांक 4.6.1998 के अपने आदेश के तहत भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149/323 के अधीन अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप विरचित किया। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी अशोक राम के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन पृथक आरोप विरचित किया गया था। समस्त आरोपों को अपीलार्थीगण एवं अन्य अभियुक्तगण को स्पष्ट किया गया था जिसके प्रति उन्होंने अपनी निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

5. तत्पश्चात, अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुल 12 गवाहों का परीक्षण किया। अभियोजन ने प्रदर्श 1 श्रृंखला (उपहति रिपोर्ट), प्रदर्श 2 (लिखित रिपोर्ट पर विजय कुमार का हस्ताक्षर) प्रदर्श 3

(उपहति रिपोर्ट), प्रदर्श 4 (शव परीक्षण रिपोर्ट), प्रदर्श 5 प्राथमिकी, प्रदर्श 6 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट) भी सिद्ध किया। अभियोजन का मामला बंद होने के बाद, अपीलार्थीगण एवं अन्य अभियुक्तगण के बयानों को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया था, जिसमें उनका बचाव पूरा इनकार का है। आगे यह प्रतीत होता है कि बचाव ने भी अभिलेख पर प्रदर्श A (अशोक राम की उपहति रिपोर्ट); प्रदर्श B दिनांक 26.6.90 की कोडरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 141/90 की प्राथमिकी); प्रदर्श C (कोडरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 141/90 का आरोप पत्र), प्रदर्श D (बेदखली वाद सं॰ 12/92 का निर्णय) लाया है। तब यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान अवर न्यायालय ने समस्त अपीलार्थीगण और सह-अभियुक्तगण अर्थात् कैलाश राम, बैजू पांडे को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149/323 के अधीन दोषसिद्ध किया। अपीलार्थी अशोक राम को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन विनिर्दिष्टत: दोषसिद्ध किया गया था। समस्त अपीलार्थीगण और सह-दोषसिद्धों को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149 के अधीन अपराधों के लिए आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। किंतु, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अशोक राम को पृथक दंडादेश अधिनिर्णीत नहीं किया गया था। इसी प्रकार, अपीलार्थीगण और अन्य सह-दोषसिद्धों को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 323 के अधीन दंडादेश अधिनिर्णीत नहीं किया गया था। दोषसिद्धि के पूर्वोक्त निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध वर्तमान अपीलें दाखिल की गयी है।

6. दांडिक अपील सं॰ 606 वर्ष 2004 में अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ साहनी और दांडिक अपील सं॰ 763 वर्ष 2004 में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री दीपक कुमार सुने गए। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वर्तमान मामले में समस्त अभियोजन गवाह एक-दूसरे से संबंधित हैं। आगे यह निवेदन किया गया है कि यह स्वीकृत अवस्था है कि अपीलार्थीगण का प्रश्नगत दुकान से बेदखली के संबंध में सूचक के परिवार के साथ मुकदमा चल रहा है। तब यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन गवाहों के साक्ष्य में महत्वपूर्ण विरोधाभास है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 1 जो डॉक्टर है ने स्वयं घटना की तिथि पर रात्रि लगभग 8 बजे अपीलार्थी अशोक राम का परीक्षण किया है और अशोक राम के शरीर पर गंभीर उपहति पाया है। यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन ने अपीलार्थी अशोक राम के शरीर पर उपहति स्पष्ट नहीं किया था। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी अशोक राम की उपहतियों का गैर-स्पष्टीकरण अभियोजन के मामले के प्रति घातक है।

अपीलार्थी उमेश राम के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 5 जो घायल गवाह है ने अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ सं॰ 21 पर कथन किया था कि घटना के समय अपीलार्थीगण उमेश राम और कैलाश राम घटनास्थल पर उपस्थित नहीं थे। अ॰ सा॰ 8 (सूचक) ने प्राथमिकी में उमेश राम को नामित नहीं किया था और न ही अपने मुख्य परीक्षण में उमेश राम के विरुद्ध कोई चीज अभिकथित किया था। वह आगे निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 2 ने पैराग्राफ 18 पर कथन किया था कि कैलाश राम और उमेश राम ने किसी पर प्रहार नहीं किया था। अ॰ सा॰ 3 ने अपीलार्थी उमेश राम के विरुद्ध कोई प्रकट कृत्य अभिकथित नहीं किया है। अ॰ सा॰ 4 ने अपने सम्पूर्ण अभिसाक्ष्य में अभियुक्त उमेश राम के विरूद्ध कोई चीज अभिकथित नहीं किया है। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त साक्ष्य के आधार पर उमेश राम की दोषसिद्धि पूर्णत: अनावश्यक है और इसलिए, अपास्त किए जाने की दायी है।

7. दूसरी ओर, विद्वान अपर ए॰ पी॰ पी॰ श्री ए॰ के॰ पांडे और सूचक के विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ एन॰ देव निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में लघु अंतरों और असंगतियों को छोड़ कर समस्त अभियोजन गवाहों जो घटना के चश्मदीद गवाह हैं के साक्ष्य संगत है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 घायल गवाह हैं, इस प्रकार, वे अत्यन्त विश्वसनीय गवाह हैं और घटनास्थल पर उनकी

उपस्थिति पर संदेह नहीं किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी अशोक राम को वर्तमान घटना में उपहतियाँ नहीं आयी है। इस प्रकार, अभियोजन उसको आयी उपहतियों को स्पष्ट करने के लिए बाध्य नहीं है। इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि कोडरमा पी॰ एस॰ केस सं॰ 141/1990 की प्राथमिकी प्रदर्श B के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि अशोक राम ने घटना जो सायं सात बजे हुई में उपहति प्राप्त किया, जबकि वर्तमान घटना रात्रि आठ बजे हुई। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी अशोक राम ने एक अन्य घटना में उपहति प्राप्त किया, अत: अभियोजन पूर्वोक्त उपहतियों को स्पष्ट करने के लिए बाध्य नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है, अत: इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

8. पक्षों के निवेदनों को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। अ॰ सा॰ 9 डॉ॰ चंद्रशेखर प्रसाद ने मृतक श्रवण कुमार के मृत शरीर का शव परीक्षण किया और उसके शरीर पर कुल चार उपहतियाँ पायी। उनके अनुसार, समस्त उपहतियाँ मृत्यु पूर्व प्रकृति की है और कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी है। उन्होंने आगे मत दिया कि मृतक की मृत्यु मस्तक उपहति के कारण हुई थी। अ॰ सा॰ 9 का पूर्वोक्त साक्ष्य मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट से पूर्ण समर्थन पाता है। इस प्रकार, मेरा मत है कि मृतक श्रवण कुमार की मृत्यु मानव वध मृत्यु थी।

9. आगे यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 1 ने जो कोडरमा अस्पताल में चिकित्सा अधिकारी है। घटना की तिथि पर कोडरमा अस्पताल में अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 8 और मृतक का परीक्षण किया था और उनके शरीर पर उपहतियाँ आयी थी और तद्नुसार उपहति रिपोर्ट प्रदर्श 1 श्रृंखला तैयार किया था। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि घटना की तिथि और समय पर, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 ने भी कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा उपहतियाँ आयी थी। अब विनिश्चयकरण के लिए प्रश्न उद्भूत हुआ कि क्या अपीलार्थीगण और अन्य सह-दोषसिद्धों का वर्तमान अपराध की कारिता में भूमिका है?

10. पहली बार में, मैं अशोक राम, बिनू राम और तिलक राम द्वारा दाखिल अपील अर्थात् दांडिक अपील सं॰ 606 वर्ष 2004 पर विचार कर रहा हूँ। यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि पूर्वोक्त अपीलार्थीगण किशुन राम के पुत्र हैं। यह स्वीकृत अवस्था है कि अपीलार्थीगण का पिता दुकान का मालिक था जिसमें मृतक किराना दुकान चला रहा था। यह भी स्वीकृत अवस्था है कि उक्त दुकान के संबंध में पक्षों के बीच विवाद था। यह भी स्वीकृत अवस्था है कि दुकान से मृतक की बेदखली के संबंध में पक्षों के बीच संबंध कटु हो गया था। प्राथमिकी में यह उल्लेख किया गया है कि दुकान के संबंध में पक्षों के बीच विवाद के कारण वर्तमान घटना हुई थी। उक्त परिस्थिति के अधीन, मैं पाता हूँ कि इस मामले में घटना के हेतु कमो-बेश स्वीकृत है।

11. जैसा ऊपर गौर किया गया है, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 घायल गवाह हैं। उन्होंने कथन किया कि रात्रि 8 बजे अपीलार्थीगण अशोक राम, बिनू राम, तिलक राम, कैलाश राम और उमेश राम लाठी एवं डंडा से लैस होकर दुकान आए और उनको गाली दी और दुकान खाली करने के लिए कहा अन्यथा उनको विनष्ट कर दिया जाएगा। उन्होंने आगे अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थीगण ने मृतक को दुकान से घसीट कर बाहर निकाला और उस पर प्रहार किया। अपीलार्थी बिनू राम अपने घर से तलवार लाया और इससे मृतक पर प्रहार करने का प्रयास किया। किंतु अ॰ सा॰ 8 ने हस्तक्षेप किया और बिनू राम को ऐसा करने से रोका जिस कारण अ॰ सा॰ 8 को भी उपहतियाँ आयी। तत्पश्चात, सह-दोषसिद्ध बैजू पांडे लोहे की छड़ लाया और इसे अशोक राम को सौंपा जिसने उक्त लोहे की छड़ से मृतक पर प्रहार किया जिस कारण मृतक को अपने मस्तक पर उपहति आयी और जमीन पर गिर गया और बेहोश हो गया। अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 का साक्ष्य लिखित रिपोर्ट में दिए गए बयान के साथ संगत है जहाँ तक यह अपीलार्थीगण

अशोक राम, बिनू राम और तिलक राम के विरुद्ध किए गए अभिकथनों से संबंधित है। अपने घर से बिनू राम द्वारा तलवार लाए जाने के संबंध में और सह-दोषसिद्ध बैजू पांडे द्वारा अशोक राम को लोहे की छड़ सौंपे जाने के संबंध में कुछ लघु अंतर हैं। इसके अतिरिक्त, अभिसाक्ष्य में अतिशयोक्ति और/अथवा सुधार नहीं है। इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि पूर्वोक्त अंतर और/अथवा सुधार अभियोजन मामले पर प्रभावकारी है।

12. अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 का साक्ष्य अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 6, अ॰ सा॰ 11 और अ॰ सा॰ 12 के चाक्षुक परिसाक्ष्य से पूर्ण समर्थन पाता है जो हल्ला सुनने के बाद घटना स्थल पर आए और घटना देखा था। उन्होंने भी कथन किया है कि अपीलार्थीगण द्वारा मृतक श्रवण कुमार पर प्रहार किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 6, अ॰ सा॰ 12 घटनास्थल के निकट उपस्थित थे क्योंकि उनकी दुकानें भी बाजार में ही थी। इस प्रकार, वे स्वाभाविक गवाह प्रतीत होते हैं। अ॰ सा॰ 11 मृतक की पत्नी करुणा देवी है और वह हल्ला सुनने के बाद घटनास्थल पर आयी और देखा कि उसका पति जमीन पर पड़ा था और लोहे की छड़ और लाठी से लैस अपीलार्थीगण वहाँ से भाग रहे थे। इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि अ॰ सा॰ 11 ने भी स्पष्टत: कथन किया है कि अपीलार्थीगण ने वर्तमान अपराध किया था।

13. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 6, अ॰ सा॰ 8, अ॰ सा॰ 11 और अ॰ सा॰ 12 संबंधित गवाह हैं और उनका अपीलार्थीगण के साथ बैर है। उक्त परिस्थितियों के अधीन केवल उनके साक्ष्य पर अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि-अपेक्षणीय नहीं है। मेरे दृष्टिकोण में, अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का पूर्वोक्त निवेदन स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

14. यह सुनिश्चित है कि मात्र इसलिए कि गवाह मृतक के साथ निकट रूप से संबंधित हैं, उनका परिसाक्ष्य त्यक्त नहीं किया जा सकता है। अत:, पक्षों में से एक के साथ संबंध वह कारक नहीं है जो गवाह की विश्वसनीयता प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त, संबंधी वास्तविक दोषी को नहीं छुपाएँगे और निर्दोष व्यक्ति के विरुद्ध अभिकथन करेंगे। किंतु, न्यायालय को अतिरिक्त सावधानी एवं चौकसी से संबंधित गवाहों के साक्ष्य का विश्लेषण करने की आवश्यकता है।

15. पूर्वोक्त गवाहों के प्रति परीक्षण के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि बचाव पक्ष ने कोई सामग्री नहीं निकाला है जिस पर उनके साक्ष्य को त्यक्त किया जा सके। यह उल्लेखनीय है कि अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 घायल गवाह हैं। इस प्रकार, घटनास्थल पर उनकी उपस्थिति पर संदेह नहीं किया जा सकता है, विशेषत: इस तथ्य की दृष्टि में कि डॉक्टर द्वारा समय गंवाए बिना कोडरमा अस्पताल में उनका परीक्षण किया गया था। अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 के विस्तारपूर्ण प्रति परीक्षण के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि बचाव पक्ष ने कुछ लघु अंतरों के सिवाए कुछ भी नहीं निकाला है जो अभियोजन मामले के केंद्र को अन्यथा प्रभावित नहीं करता है। भले ही उक्त लघु अंतर और असंगति बने रहते हैं, ये उनके साक्ष्य को अस्वीकार करने की अपेक्षा नहीं करेंगे। उक्त परिस्थिति के अधीन, पूर्वोक्त गवाहों के साक्ष्य के सूक्ष्म संवीक्षण पर, मैं पाता हूँ कि उनका साक्ष्य स्वीकार्य है जहाँ तक यह अपीलार्थीगण अशोक राम, बिनू राम और तिलक राम से संबंधित है।

16. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का दूसरा प्रतिवाद यह है कि अशोक राम ने भी घटना के दौरान घोर उपहति प्राप्त किया है और अभियोजन द्वारा उक्त उपहतियों को स्पष्ट नहीं किया गया था, अत:, संपूर्ण अभियोजन मामला अविश्वास किए जाने का दायी है। **मोनो दत्त एवं एक अन्य बनाम**

उत्तर प्रदेश राज्य, (2012)4 SCC 79, में पैराग्राफ 29 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि:–

> *^^vfHk;ktu xokgk }kjk vfHk;Dr d 'kjhj ij migfr;k d xj&Li"Vhdj.k dk vfHk;ktu ekey dk çHkkfor dju okyk vfHkfuèkkfjr fd, tku d igy U;k;ky; dk nk 'krk d fo|eku gku l lr"V fd;k tkuk gkxkA*
>
> *(i) fd vfHk;Dr d 'kjhj ij migfr;k Hkh xHkhj çÑfr dh Fkh(vkj*
>
> *(ii) fd , lh migfr;k ç'uxr ?kVuk d le; ij gh dkfjr dh x;h gkxhA***

17. वर्तमान मामले में, यद्यपि अ॰ सा॰ 1 ने अपीलार्थी अशोक राम के बाएँ हाथ पर गंभीर उपहतियाँ आयी थी, किंतु प्रदर्श B के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी अशोक राम ने घटना जो सायं सात बजे हुई थी में पूर्वोक्त उपहतियों को प्राप्त किया था। यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान घटना रात्रि आठ बजे हुई थी। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी ने उस घटना में उपहति नहीं पाया है जिस घटना में मृतक (श्रवण कुमार), अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 ने उपहति पाया था। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी अशोक राम ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपने बयान में दावा नहीं किया है कि उसने भी वर्तमान घटना के क्रम में उपहति पाया था। यह सिद्ध करने के लिए बचाव गवाह का परीक्षण नहीं किया गया था कि अशोक राम ने प्रश्नगत घटना के दौरान उपहति पाया था। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि अभियोजन अपीलार्थी अशोक राम के शरीर पर उपहति स्पष्ट करने के लिए बाध्य नहीं है। अत:, अपीलार्थी (अशोक राम) के शरीर पर उपहति का गैर स्पष्टीकरण अभियोजन मामले पर कोई प्रभाव नहीं डालता है।

18. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में मैं पाता हूँ कि चाक्षुक साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य और अन्वेषण अधिकारी के वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष से पूर्ण समर्थन पाता है। इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि अभियोजन ने सिद्ध किया है कि अपीलार्थीगण अशोक राम, बिनू राम और तिलक राम ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149/ 323 के अधीन अपराध किया था। इस प्रकार, अवर न्यायालय ने पूर्वोक्त अपराधों के लिए उनको सही प्रकार से दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया है।

19. अब, मैं अपीलार्थी उमेश राम द्वारा दाखिल अपील पर विचार करने के लिए अग्रसर हो रहा हूँ। यह उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी उमेश राम को प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया है। अ॰ सा॰ 2 ने अपने अभिसाक्ष्य में कथन किया है कि कैलाश राम और उमेश राम ने किसी पर प्रहार नहीं किया था। अ॰ सा॰ 3 ने अपने मुख्य परीक्षण में उमेश राम का नाम नहीं लिया है और न ही उसके विरुद्ध किसी प्रत्यक्ष कृत्य को अभिकथित किया है। अ॰ सा॰ 4 ने भी अपीलार्थी उमेश राम को नामित नहीं किया है। अ॰ सा॰ 5 जो घायल गवाहों में से एक है ने स्पष्टत: पैराग्राफ 21 पर कथन किया है कि घटना के समय पर उमेश राम घटनास्थल पर उपस्थित नहीं था। अ॰ सा॰ 6 ने भी अपीलार्थी उमेश राम को नामित नहीं किया था। अ॰ सा॰ 8 जो इस मामले का सूचक है ने अपने मुख्य परीक्षण में उमेश राम को नामित नहीं किया है। यह उल्लेखनीय है कि उमेश राम का प्रश्नगत दुकान के साथ कोई सरोकार नहीं था। इस प्रकार, वर्तमान अपराध करने के लिए उसके पास हेतु नहीं था। मैं आगे पाता हूँ कि अभियोजन द्वारा दिया गया साक्ष्य उमेश राम को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/323 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है। इस प्रकार, मेरे दृष्टिकोण में विद्वान अवर न्यायालय द्वारा उमेश राम की दोषसिद्धि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के विरुद्ध है और इसलिए, इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है।

20. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं दांडिक अपील सं॰ 606 वर्ष 2004 में गुणागुण नहीं पाता हूँ और, इसलिए इसे खारिज किया जाता है।

21. यह प्रतीत होता है कि दांडिक अपील सं॰ 606 वर्ष 2004 के अपीलार्थीगण अर्थात् बिनू राम और तिलक राम जमानत पर हैं। उनके जमानत बंध पत्रों को रद्द किया जाता है। उन्हें उनके विरुद्ध अधिनिर्णीत दंडादेश को भुगतने के लिए अवर न्यायालय में आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है। अवर न्यायालय को उनकी गिरफ्तारी के लिए, समस्त प्रपीड़क कदम उठाने का निर्देश भी दिया जाता है।

22. अपीलार्थी उमेश राम द्वारा दाखिल अपील अर्थात् दांडिक अपील सं॰ 763 वर्ष 2004 अनुज्ञात की जाती है। अपीलार्थी उमेश राम के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी उमेश राम को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी उमेश राम जमानत पर है। इस प्रकार, उसे उसके जमानत बंध पत्र के दायित्वों से उन्मोचित किया जाता है।

अमिताभ कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

कैलाश पासवान (992 में)

मोहन नायक (1031 में)

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से (दोनों में)

Criminal Appeal (S.J) Nos. 992 with 1031 of 2005. Decided on 13th March, 2014.

आर॰ सी॰ सं॰ 15 (ए॰) वर्ष 2002 (आर॰) में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा पारित दिनांक 26.7.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध।

(क) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 7 एवं 13 (1) (d) सह-पठित धारा 13(2)—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 120B—अवैध परितोषण–दोषसिद्धि–छाया गवाह के परिसाक्ष्य स्वीकार किए जाने योग्य हैं–उन दो गवाहों को ट्रैप टीम का सदस्य पुलिस की प्रेरणा पर बनाया गया था किंतु यह स्वयं में स्वतंत्र गवाह होने के उनके हैसियत में सूराख नहीं बनाता है–अभियोजन यह स्थापित करने में सक्षम रहा है कि अपीलार्थी ने अवैध परितोषण मांगा था–दंडादेश में उपांतरण के साथ अपीलें खारिज की गयीं। (पैराएँ 23, 24, 29 से 33)

(ख) दांडिक विधि–साक्ष्य का अधिमूल्यन–पक्षद्रोही गवाह के मामले में भी परिसाक्ष्य के उस भाग जिसे न्यायालय विश्वसनीय पाता है को स्वीकार किया जा सकता है–किंतु यदि गवाह का पूर्ण परिसाक्ष्य अविश्वसनीय हो जाता है, साक्ष्य को त्यक्त करने की आवश्यकता है। (पैरा 28)

निर्णयज विधि.–AIR 1976 SC 294; (2007)2 SCC (Cr.) 520—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s. S.K. Murari, Ranjan Raj, Jitendra Nath, For the Appellants; Mr. M. Khan, For the C.B.I.

आर॰ आर॰ प्रसाद, न्यायमूर्ति.–एक ही निर्णय से उद्भूत होने वाली दोनों दांडिक अपीलों को एक साथ सुना गया था और इस एक ही निर्णय द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. पूर्वोक्त दोनों अपीलें आर॰ सी॰ सं॰ 15 (ए॰) वर्ष 2002 (आर॰) में पारित दिनांक 26.7.2005 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित हैं जिसके द्वारा दोनों अपीलार्थीगण को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 सह-पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 120B के अधीन और भ्रष्टाचार

निवारण अधिनियम की धारा 13 (1) (d) सह पठित धारा 13 (2) के अधीन भी अपराधों के लिए दोषी पाया गया था और प्रत्येक अपीलार्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 सह–पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 120B के अधीन डेढ़ वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और व्यतिक्रम खंड के साथ 4000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया गया था। आगे उन्हें भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (d) के अधीन ढाई वर्ष का कठोर कारावास भुगतने और व्यतिक्रम खंड के साथ 6000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया गया था।

3. अभियोजन का मामला यह है कि परिवादी खलीउद्दीन (अ॰ सा॰ 7) सेंट्रल कोल फील्ड लिमिटेड की इकाई भुरकुंडा कोलियरी से मेकेनिकल फिटर के रूप में सितंबर, 2001 में सेवानिवृत्त हुआ था। तब से, सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ रिफंड से संबंधित मामला सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ कार्यालय, राँची में लंबित था। दिनांक 12.11.2002 को परिवादी प्रातः लगभग 10 बजे अपीलार्थीगण कैलाश पासवान और मोहन नायक, दोनों उच्च श्रेणी लिपिक से उनके कार्यालय में मिला। दोनों ने परिवादी खलीउद्दीन को 1000/- रुपया घूस के रूप में भुगतान करने के लिए कहा ताकि उसको सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ रिफंड का भुगतान किया जा सके। ऐसी स्थिति में, परिवादी खलीउद्दीन (अ॰ सा॰ 7) ने प्रभारी एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ एस॰ पी॰, राँची के समक्ष परिवाद (प्रदर्श 11) दाखिल किया। तत्कालीन प्रभारी एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ ने एस॰ एन॰ चौधरी (अ॰ सा॰ 8) को परिवादी द्वारा किए गए अभिकथन को सत्यापित करने का निर्देश दिया। सत्यापित किए जाने पर अभिकथन प्रथम दृष्टया सत्य पाया गया था और इसलिए, उसने उस प्रभाव का सत्यापन रिपोर्ट (प्रदर्श 12) प्रस्तुत किया। सत्यापन रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने पर दोनों अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्राथमिकी (प्रदर्श 13) दर्ज की गयी थी। इंस्पेक्टर के॰ के॰ सिंह (अ॰ सा॰ 9) ने अन्वेषण किया। तत्कालीन प्रभारी एस॰ पी॰ ने के॰ के॰ सिंह, इंस्पेक्टर (अ॰ सा॰ 9), एस॰ एन॰ चौधरी (अ॰ सा॰ 8), विकास गुप्ता, इंस्पेक्टर, आर॰ एस॰ सोलंकी, सब इंस्पेक्टर और कॉंस्टेबलों तथा दो स्वतंत्र गवाहों, विनोद कुमार बिरुआ (अ॰ सा॰ 5), उपप्रबंधक और खुर्शीद आलम, सहायक प्रबंधक (अ॰ सा॰ 4), एस॰ बी॰ आई॰, राँची से गठित टीम गठित किया। तत्पश्चात, ट्रैप–पूर्व अभ्यास किया गया था जिसके द्वारा गवाहों को फेनोल्फथलीन पाउडर की विशेषताओं के बारे में बताया गया था। परिवादी द्वारा प्रस्तुत 50/- रुपयों मूल्य वाले 1000/- रुपयों की करेंसी नोटों पर फेनोल्फथलीन पाउडर छिड़का गया था और परिवादी को वापस दिया गया था। अ॰ सा॰ 4 खुर्शीद आलम, स्वतंत्र गवाह को परिवादी के साथ सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ कार्यालय जाने के लिए कहा गया था। तद्नुसार, ट्रैप–पूर्व ज्ञापन (प्रदर्श 14) तैयार किया गया था। तत्पश्चात, ट्रैप टीम रवाना हुई और दोपहर लगभग 1.20 बजे सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ कार्यालय पहुँची। परिवादी (अ॰ सा॰ 7) को अभियुक्तगण के पास जाने के लिए कहा गया था जिन्हें अपने कार्यालय में बैठा पाया गया था। स्वतंत्र गवाह (अ॰ सा॰ 4) को परिवादी के साथ जाने के लिए कहा गया था। तत्पश्चात, परिवादी खुर्शीद आलम के साथ अभियुक्तगण की ओर गया। स्वतंत्र गवाह बी॰ के॰ बिरुआ (अ॰ सा॰ 5) सहित ट्रैप टीम के अन्य सदस्यों ने हॉल के प्रवेश द्वार जहाँ से वे घटना देख सकते थे के निकट उपयुक्त स्थान पर आए। जब अभियुक्तगण अपीलार्थी मोहन नायक के टेबुल के पास आये, उसने परिवादी को अपीलार्थी मोहन नायक के टेबल के सामने रखी कुर्सी पर बैठने के लिए कहा। परिवादी और स्वतंत्र गवाह खुर्शीद आलम (अ॰ सा॰ 4) कुर्सी पर बैठे। इस पर अपीलार्थी कैलाश पासवान ने परिवादी से पूछा कि क्या वह धन लाया है। जब परिवादी ने सकारात्मक उत्तर दिया, अपीलार्थी कैलाश पासवान ने परिवादी को मोहन नायक को धन का भुगतान करने के लिए कहा। इसी समय, अपीलार्थी कैलाश पासवान ने मोहन नायक को धन स्वीकार करने का

अनुदेश दिया। तद्नुसार, परिवादी खलीलुद्दीन ने धन निकाला जिस पर फेनॉल्फथलीन पाउडर छिड़का गया था और इसे मोहन नायक को दिया जिसने अपना दायां हाथ बढ़ाकर इसे स्वीकार किया और दोनों हाथों से इसे गिना और तब 500/- रुपयों के तुल्य 50/- रुपया मूल्य वाले दस करेंसी नोटों को अपीलार्थी कैलाश पासवान को बढ़ाया। यह सब कुछ स्वतंत्र गवाह खुर्शीद आलम (अ॰ सा॰ 4) की उपस्थिति में हुआ। अन्य स्वतंत्र गवाह विनोद कुमार बिरूआ जो उक्त हॉल के प्रवेश द्वार के निकट खड़ा था ने भी परिवादी को अपीलार्थीगण को धन देते देखा जिसे उनके द्वारा स्वीकार किया गया था। अपीलार्थीगण द्वारा धन प्राप्त किए जाने के बाद उन्होंने परिवादी को बताया कि वे जो आवश्यक होगा, करेंगे ताकि उसको रिफंड किया जा सके। इस बीच परिवादी ने पूर्व नियत संकेत दिया। संकेत देखने पर के॰ के॰ सिंह (अ॰ सा॰ 9) स्वतंत्र गवाह विनोद कुमार बिरुआ सहित टीम के सदस्यों के साथ दौड़कर अपीलार्थीगण के निकट आए। अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 9) के॰ के॰ सिंह ने उन दोनों को चुनौती दी, जिसके परिणामस्वरुप वे दोनों नर्वस हो गए। इस पर धन, प्रदर्श IX से IX/19, उनमें से प्रत्येक से बरामद किया गया था। तत्पश्चात, प्रत्येक अपीलार्थी के दोनों हाथों को धोया गया था जिससे वे गुलाबी हो गए। समस्त औपचारिकताओं को पूरा किए जाने पर ट्रैप पश्चात ज्ञापन (प्रदर्श 15) तैयार किया गया था। तत्पश्चात आई॰ ओ॰ (अ॰ सा॰ 9) ने अधिग्रहण सूची के अधीन रिफंड फाइल जब्त किया।

4. अन्वेषण पूरा करने पर और मंजूरी आदेश प्राप्त करने पर अभियोजन ने आरोप-पत्र (प्रदर्श 7) प्रस्तुत किया था जिस पर दोनों अपीलार्थीगण के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था।

5. समय के क्रम में, अपीलार्थीगण का विचारण किया गया था जिसके दौरान, अभियोजन ने कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से परिवादी (अ॰ सा॰ 7) ने मामले जैसा एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ के समक्ष प्रस्तुत उसके लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श 11) में बनाया गया था का पूरा समर्थन नहीं किया था। उक्त परिवाद (प्रदर्श 11) में इस प्रभाव का बयान दिया गया था कि दोनों अपीलार्थीगण ने धन मांगा था किंतु अपने साक्ष्य में उसने अभिसाक्ष्य दिया कि केवल अपीलार्थी मोहन नायक द्वारा धन मांगा गया था। उसने यहाँ तक कहा कि कैलाश पासवान ने कोई मांग कभी नहीं किया था। ऐसी स्थिति में, अ॰ सा॰ 7 को पक्षद्रोही घोषित किया गया था। किंतु, अ॰ सा॰ 4 खुर्शीद आलम स्वतंत्र गवाह, ने परिसाक्ष्य दिया है कि ट्रैप-पूर्व अभ्यास के क्रम में परिवादी ने कथन किया था कि दोनों अपीलार्थीगण धन मांग रहे थे। आगे उसने अभिसाक्ष्य दिया है कि जाल बिछाए जाने के बाद, ट्रैप टीम सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ कार्यालय आयी। वहाँ वह परिवादी के साथ अपीलार्थीगण के पास गया। इस पर, अपीलार्थी कैलाश पासवान ने परिवादी से पूछा कि क्या उसने धन का प्रबंध किया है। जब परिवादी ने सकारात्मक उत्तर दिया, उसने परिवादी को अपीलार्थी मोहन नायक को धन सौंपने के लिए कहा। तद्नुसार, मोहन नायक को धन दिया गया था जिसने इसे गिना और तब कैलाश पासवान को 500/- रुपया बढ़ाया। इस पर मोहन नायक ने परिवादी से कहा कि अब उसको भुगतान किया जाएगा। इसी समय पर कैलाश पासवान ने भी परिवादी से कहा कि जब फाइल उसके पास आएगी, वह जो आवश्यक होगा करेगा ताकि उसको भुगतान किया जा सके। तत्पश्चात जब संकेत दिया गया था, आई॰ ओ॰ के॰ के॰ सिंह ट्रैप टीम के अन्य सदस्यों के साथ वहाँ पहुँचे और उन दोनों से कलंकित धन बरामद किया।

6. कमोबेश, समरुप परिसाक्ष्य एक अन्य स्वतंत्र गवाह विनोद कुमार बिरुआ (अ॰ सा॰ 5) का भी है जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि यद्यपि खुर्शीद आलम, अ॰ सा॰ 4, परिवादी के साथ अभियुक्तगण के पास

गया था, वह हॉल के दरवाजा के निकट खड़ा रहा था। परिवादी को देखने पर अपीलार्थी कैलाश पासवान ने उससे पूछा कि क्या वह धन लाया है। जब उसने सकारात्मक उत्तर दिया, अपीलार्थी कैलाश पासवान ने परिवादी को मोहन नायक को धन सौंपने के लिए कहा। तद्नुसार, इसे मोहन नायक को दिया गया था जिसने धन गिनने के बाद 50/- रुपया मूल्य प्रत्येक वाले दस करेन्सी नोटों को कैलाश पासवान को दिया और तब कैलाश पासवान ने परिवादी से कहा कि अब भुगतान किया जाएगा। उसके अनुसार भी उन दोनों से कर्लंकित धन बरामद किया गया था। यद्यपि ट्रैप टीम के सदस्यों में से एक अ॰ सा॰ 8 ने परिसाक्ष्य दिया है कि उसने परिवादी और अभियुक्तगण के बीच हुए वार्तालाप को नहीं सुना था किंतु उसने दोनों व्यक्तियों से धन की बरामदगी के बारे में कहा है। समरुप परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 9 आई॰ ओ॰ का है। ऐसे साक्ष्य पर, विचारण न्यायालय ने दर्ज किया कि यद्यपि परिवादी खलीउद्दीन (अ॰ सा॰ 7) ने मामले का समर्थन नहीं किया है कि अपीलार्थी कैलाश पासवान द्वारा धन मांगा गया था और उसने इसे प्राप्त किया था किंतु स्वतंत्र गवाह सहित अन्य गवाहों के साक्ष्य से यह स्थापित हो जाता है कि दोनों अपीलार्थीगण ने धन मांगा और स्वीकार किया था जो आगे इस तथ्य से मजबूत होता है कि कलंकित धन दोनों अपीलार्थीगण के कब्जा से बरामद किया गया था।

7. ऐसे निष्कर्ष पर आने पर विद्वान विचारण न्यायालय ने दोनों अपीलार्थीगण को आरोपों का दोषी पाया और तद्नुसार दोषसिद्धि का आदेश और दंडादेश पारित किया।

8. अपीलार्थी कैलाश पासवान के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस॰ के॰ मुरारी निवेदन करते हैं कि कोई फहीम आलम, उच्च श्रेणी लिपिक, सी॰ एम॰ पी॰ एफ॰ के रिफंड से संबंधित मामले पर विचार कर रहा था। उसने दिनांक 12.11.2002 को दोपहर लगभग 1.05 बजे फाइल का प्रभार दिया था और इसलिए, दिनांक 12.11.2002 को प्रात: 10 बजे अवैध मांग सामने रखने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और कि रिफंड दावा फाइल (प्रदर्श 5) के परिशीलन से यह प्रतीत होगा कि फहीम आलम (अ॰ सा॰ 1) द्वारा मामले पर विचार किया गया था।

9. आगे यह निवेदन किया गया था कि परिवादी (अ॰ सा॰ 7) के साक्ष्य के अनुसार केवल सह-दोषसिद्ध मोहन नायक द्वारा अवैध मांग किया गया था और जब उसको धन का भुगतान किया गया था, उसने, अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य के अनुसार, जानबूझकर अपीलार्थी के विरोध के बावजूद इसे अपीलार्थी की ओर धकेला था। उसने स्पष्टत: अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी ने कोई मांग कभी नहीं किया था।

10. आगे, यह निवेदन किया गया था कि यद्यपि अन्य स्वतंत्र गवाह, विशेषत: अ॰ सा॰ 5 ने वार्तालाप सुनने और परिवादी द्वारा अभियुक्तगण को धन देने का कृत्य देखने का दावा किया है किंतु उसका परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 4 के साक्ष्य से झूठा हो जाता है जिसने अपने प्रति परीक्षण में कथन किया है कि ट्रैप टीम के शेष सदस्य नीचे की सीढ़ीयों पर खड़े रहे थे।

11. इस प्रकार, इन परिस्थितियों के अधीन यह कहा जा सकता है कि अभियोजन इस तथ्य को स्थापित करने में विफल रहा है कि अपीलार्थी ने कभी परिवादी से अवैध धन का मांग किया था और तद्द्वारा न्यायालय ने अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया है।

12. अपीलार्थी मोहन नायक के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से इस अपीलार्थी द्वारा रिफंड फाइल पर विचार नहीं किया गया था, बल्कि अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य के मुताबिक

फाइल का प्रभार कैलाश पासवान को दिया गया था और इसलिए इस अपीलार्थी के पास परिवादी से अवैध मांग करने का अवसर नहीं था।

13. आगे यह निवेदन किया गया था कि यद्यपि अ॰ सा॰ 7 ने अपने साक्ष्य में अभिसाक्ष्य दिया है कि इस अपीलार्थी ने धन मांगा था और घूस स्वीकार भी किया था किंतु उसका साक्ष्य अ॰ सा॰ 4 खुर्शीद आलम के साक्ष्य से मिथ्या प्रमाणित होता है, जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह परिवादी के साथ कैलाश पासवान के पास उसके कार्यालय में गया था, कैलाश पासवान ने ही उससे पूछा था कि क्या वह धन लाया है और जब सकारात्मक उत्तर दिया गया था, कैलाश पासवान ने परिवादी को इस अपीलार्थी को धन सौंपने के लिए कहा। समरुप परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 5 का है। इस प्रकार, एक ओर परिवादी का साक्ष्य और दूसरी ओर अन्य दो गवाहों का साक्ष्य एक-दूसरे का विरोधाभासी है।

14. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि यह स्पष्ट है कि परिवादी अ॰ सा॰ 7 का साक्ष्य अ॰ सा॰ 4 और 5 के साक्ष्यों के साथ असंगत कभी नहीं है और तद्द्वारा अभियोजन को किसी युक्तियुक्त संदेह के परे आरोपों को सिद्ध करने में विफल हुआ कहा जा सकता है और इसलिए, दोषसिद्धि का आदेश और दंडादेश अपास्त किए जाने योग्य है।

15. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री खान निवेदन करते हैं कि अभियोजन ने नि:संदेह दोनों अपीलार्थीगण से कलंकित धन की बरामदगी का तथ्य स्थापित किया है। बरामदगी के बिंदु पर अपीलार्थी यह स्पष्ट करने में सक्षम नहीं हुआ है कि किस प्रकार उसके कब्जा से कलंकित धन बरामद किया गया है।

16. आगे, यह निवेदन किया गया था कि भले ही परिवादी पक्षद्रोही हो गया है, उसके साक्ष्य को संपूर्णता में त्यक्त नहीं किया जा सकता है बल्कि साक्ष्य का वह भाग जो स्वीकार किए जाने योग्य है पर विश्वास किया जा सकता है।

17. ऐसी स्थिति में, अ॰ सा॰ 7 का इस प्रभाव का परिसाक्ष्य कि मोहन नायक ने अवैध परितोषण का मांग किया था, स्वीकार करने योग्य है क्योंकि यह विवरण परिवाद (प्रदर्श 11) में दिए गए बयान से संपुष्ट होता है।

18. इन परिस्थितियों के अधीन अभियोजन को मोहन नायक के विरुद्ध अपना मामला किसी युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करता हुआ कहा जा सकता है।

19. जहाँ तक अपीलार्थी कैलाश पासवान का संबंध है, उसे परिवादी द्वारा छोड़ दिया गया प्रतीत होता है यद्यपि परिवाद याचिका में परिवादी का इस प्रभाव का विनिर्दिष्ट बयान है कि दोनों अपीलार्थीगण ने मांग किया था। किंतु, कैलाश पासवान द्वारा किया गया अवैध परितोषण की मांग का वह भाग स्वतंत्र गवाहों अ॰ सा॰ 4 और 5 के साक्ष्य से सिद्ध हो जाता है। अत: इस तथ्य कि इस अपीलार्थी के कब्जा से कलंकित धन बरामद किया गया था, के साथ इस अपीलार्थी द्वारा की गयी मांग के संबंध में साक्ष्यों को विचार में लेते हुए अभियोजन को समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला सिद्ध करता हुआ कहा जा सकता है और तद्द्वारा दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को अपास्त करने की आवश्यकता नहीं है।

20. अभियोजन के मामले पर आते हुए, जैसा परिवादी द्वारा अपने लिखित परिवाद (प्रदर्श 11) में आरंभ में बनाया गया है, दोनों अपीलार्थीगण ने अवैध परितोषण की मांग की थी। एस॰ पी॰, सी॰ बी॰ आई॰ के समक्ष किए गए परिवाद पर मामला दर्ज किया गया था। उस पर, जाल बिछाया गया था। उस क्रम में, जब परिवादी (अ॰ सा॰ 7) छाया गवाह अ॰ सा॰ 4 खुर्शीद आलम के साथ अपीलार्थी कैलाश पासवान के पास आया, कैलाश पासवान ने उसको देखने पर पूछा कि क्या धन का प्रबंध किया गया

है। जब सकारात्मक उत्तर दिया गया था, अपीलार्थी ने परिवादी अ॰ सा॰ 7 को अपीलार्थी मोहन नायक को धन सौंपने के लिए कहा। उसको 1000/- रुपया दिया गया था। उसने गिना और तब 500/- रु॰ कैलाश पासवान को दिया गया था। उस समय तक, ट्रैप टीम के अन्य सदस्य, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 8 और अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 9 भी वहाँ पहुँचे और तब उन दोनों से कलंकित धन बरामद किया गया था और धन जब्त किया गया था जिस पर फेनोल्फथलीन परीक्षा की गयी थी जिसने सकारात्मक परिणाम दर्शाया था। यह तथ्य समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध किया गया है क्योंकि गवाह जैसे अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 8 और अ॰ सा॰ 9 इस बिन्दु पर संगत हैं।

21. किंतु अपीलार्थी कैलाश पासवान की ओर से किया गया निवेदन यह है कि धन की बरामदगी मात्र व्यक्ति को दोषी अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (1) (d) सह-पठित धारा 13(2) के अधीन मामला स्थापित करने के लिए मांग और बरामदगी दोनों अनिवार्य हैं।

22. निवेदन के संदर्भ में यह परीक्षण करने की आवश्यकता है कि क्या अभियोजन ने दोनों अपीलार्थीगण के विरुद्ध मांग का तथ्य सिद्ध किया है या नहीं?

23. मैंने पहले ही उपदर्शित किया है कि अपने परिवाद (प्रदर्श 11) में परिवादी द्वारा बनाया गया मामला यह है कि दोनों अपीलार्थीगण ने मांग सामने रखा था। किंतु, परिवादी (अ॰ सा॰ 7) ने अपने साक्ष्य में अभिसाक्ष्य नहीं दिया है कि अपीलार्थी कैलाश राम ने कभी कोई मांग किया था। उसने अपने पूर्व विवरण का समर्थन भी नहीं किया है कि अपीलार्थी कैलाश पासवान से बरामदगी की गयी थी। शायद यही कारण है कि अभियोजन ने उसे पक्षद्रोही घोषित कर दिया है। जहाँ तक इस अपीलार्थी का संबंध है किंतु अन्य अपीलार्थी के मामले के संदर्भ में नहीं, अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य को अनदेखा करने पर भी अभियोजन अपना मामला स्थापित करता प्रतीत होता है कि इस अपीलार्थी ने मांग सामने रखा था। इस संबंध में, छाया गवाह अ॰ सा॰ 4 का साक्ष्य निर्दिष्ट किया जाए जो परिवादी के साथ अपीलार्थी के पास गया था कि जब परिवादी अपीलार्थी कैलाश पासवान के पास गया उसने परिवादी को देखने पर पूछा कि क्या धन का प्रबंध किया गया है। जब परिवादी ने सकारात्मक उत्तर दिया, उसने परिवादी को इसे अपीलार्थी मोहन नायक को देने के लिए कहा। अ॰ सा॰ 4 का परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 5, एक अन्य छाया गवाह, के परिसाक्ष्य से संपुष्टि पाता है जो यद्यपि परिवादी के साथ नहीं था जब परिवादी अपीलार्थी के पास गया था किंतु वह हॉल के दरवाजा के निकट खड़ा था जहाँ से वह वार्तालाप सुन सकता था और घटना देख सकता था। उसने भी परिसाक्ष्य दिया है कि जब परिवादी अपीलार्थी कैलाश पासवान के पास गया, उसने पूछा कि क्या धन का प्रबंध किया गया है। इसका कोई कारण नहीं है कि इन दोनों गवाहों, यद्यपि वे छाया गवाह हैं, के परिसाक्ष्य को स्वीकार क्यों नहीं किया जाए। यह सत्य है कि उन दोनों गवाहों को पुलिस की प्रेरणा पर ट्रैप टीम का सदस्य बनाया गया है, किंतु यह स्वयं में स्वतंत्र गवाह के रूप में उनके दर्जे में कोई सुराख नहीं बनाता है। दोनों ही व्यक्ति बैंक में कार्यरत थे और इस प्रकार वे पुलिस पर निर्भर कभी नहीं थे।

24. इन परिस्थितियों के अधीन, मांग के तथ्य से संबंधित इन दोनों गवाहों के परिसाक्ष्यों को स्वीकार करने में संकोच नहीं है। इस प्रकार, मेरे मत में, अभियोजन यह स्थापित करने में सक्षम हुआ है कि इस अपीलार्थी ने भी अवैध परितोषण की मांग को सामने रखा था। इस प्रभाव का निवेदन भी किया गया

है कि स्वयं उसी दिन पर उसने प्रभार लिया था और इसलिए, 10 बजे परिवादी से मांग करने का अवसर उसके पास नहीं था। चूँकि निष्कर्ष मामले के इस पहलू पर आधारित नहीं है, बल्कि यह बाद में की गयी मांग के तथ्य पर आधारित है, मुझे इस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

25. जहाँ तक अपीलार्थी मोहन नायक का संबंध है, परिवादी अ॰ सा॰ 7 ने अपने पूर्व बयान से विपथन करके अपने परिसाक्ष्य में परिसाक्ष्य दिया है कि इस अपीलार्थी द्वारा मांग की गयी थी। उस स्थिति में, इस प्रभाव का निवेदन किया गया था कि उसका परिसाक्ष्य विश्वास करने योग्य नहीं है।

26. इन परिस्थितियों के अधीन, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या अ॰ सा॰ 7 जिसे अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है के परिसाक्ष्य के उस भाग जो पहले दिए गए बयान के अनुकूल है का लाभ लिया जा सकता था।

27. कमोबेश, समरुप प्रश्न **सत पॉल बनाम दिल्ली प्रशासन, AIR 1976 SC 294,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ आया जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने अनेक निर्णयों को विचार में लेने के बाद निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

> *^^mDr fnXn'ku l ;g Li"V : i l lkeu vkrk g fd nkfMd vfHk;ktu e Hkh tc U;k;ky; dh vuefr l mldk cyku oky i{k }kjk xokg dk çfr ijh{k.k fd;k tkrk g vkj [kfMr fd;k tkrk g] mldk lk{; fofèkr% vfHky[k l i.kr% feVk fn, x, d : i e ekuk ugh tk ldrk gA oLrr% U;k;kèkh'k dk çR;d ekey ij fopkj djuk g fd D;k , l çfr ijh{k.k vkj [kMu d ifj.kkeLo#i xokg ijh rjg vfo'oluh; cu tkrk g vFkok mld ifjlk{; d Hkkx d lcèk e vHkh Hkh ml ij fo'okl fd;k tk ldrk gA ;fn U;k;kèkh'k ikrk g fd çfØ;k e xokg dh fo'oluh;rk ijh rjg fgyk ugh nh x;h g] og xokg d lk{; dk li.k : i l lrdrk d lkFk i<u vkj bl ij fopkj dju d ckn vfHky[k ij miyCèk vU; lk{; d vkykd e mld ifjlk{; d ml Hkkx dk Lohdkj dj ldrk g ft l og fo'okl ;kX; ikrk g vkj bl ij ÑR; dj ldrk gA ;fn fn, x, ekey e xokg dk i.k ifjlk{; vk{kfir fd;k tkrk g vkj bl çfØ;k e xokg i.kr% vfo'oluh; cu tkrk g] U;k;kèkh'k food'khyrk e mldk ijk lk{; R;Dr dj ldrk gA***

28. इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पक्षद्रोही गवाह के मामले में भी, परिसाक्ष्य के उस भाग जिसे न्यायालय विश्वास योग्य पाता है को स्वीकार किया जा सकता है किंतु यदि गवाह का पूरा परिसाक्ष्य अविश्वसनीय बन जाता है, उसके साक्ष्य को त्यक्त करने की आवश्यकता है।

29. यहाँ वर्तमान मामले में, जैसा ऊपर गौर किया गया है, परिवादी द्वारा आरंभ में बनाया गया मामला यह है कि दोनों व्यक्तियों ने मांग किया था। किंतु, अ॰ सा॰ 7 ने अपने साक्ष्य में परिसाक्ष्य दिया है कि केवल इस अपीलार्थी ने मांग किया था। गवाह को इस कारण से और अन्य कारणों से भी पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है किंतु साक्ष्य का वह टुकड़ा जहाँ गवाह ने इस अपीलार्थी द्वारा की गयी मांग के बारे में परिसाक्ष्य दिया है, परिवाद (प्रदर्श 11) में किए गए उसके पूर्व बयान से संपुष्टि पाता है। अत:, अ॰ सा॰ 7 के साक्ष्य के उस भाग को निश्चय ही विश्वास योग्य और स्वीकार्य कहा जा सकता है।

30. इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि अभियोजन किसी युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम हुआ है कि दोनों अपीलार्थीगण ने अवैध परितोषण का मांग किया था जिसे दिए जाने पर उन

दोनों द्वारा स्वीकार किया गया था और तब उन दोनों से इसे बरामद किया गया था और तद्द्वारा विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 7 सह–पठित धारा 120B और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह–पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन दोषसिद्ध किया है यद्यपि दोनों अपराध एकल संव्यवहार में किए गए प्रतीत होते हैं किंतु फिर भी **राज्य, पुलिस इंस्पेक्टर, पुदुकोट्टाय, तमिलनाडु के प्रतिनिधित्व में बनाम ए॰ पर्थीवन, (2007)1 SCC (Cr.) 520,** में दिए गए निर्णय की दृष्टि में किसी को धारा 7 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह–पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है भले ही कृत्य एकल संव्यवहार में किया गया था।

31. यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अवैध परितोषण का प्रत्येक स्वीकरण, चाहे यह मांग के पहले हो या नहीं, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 द्वारा आच्छादित होगी किंतु यदि अवैध परितोषण का स्वीकरण लोक सेवक द्वारा मांग के अनुसरण में है, तब यह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (1) (d) के अधीन भी आएगा। किंतु, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चूँकि अपराध ऐसा है जो भिन्न दंडों को प्रावधानित करने वाले दो भिन्न धाराओं के अधीन आता है, अपराधी को उस दंड, जो न्यायालय दो अपराधों में से किसी एक के लिए व्यक्ति को अधिनिर्णीत कर सकता था, की तुलना में अधिक कठोर दंड के साथ दंडित नहीं किया जाना चाहिए।

32. यह गौर किया जाए कि धारा 7 के अधीन न्यूनतम दंड छह माह है और धारा 13 (1) (d) के अधीन न्यूनतम दंड एक वर्ष है। पूर्वोक्त प्रावधान के अधीन विहित न्यूनतम दंडादेश और इस तथ्य कि अपीलार्थी वर्ष 2002 से विचारण की कठोरता का सामना कर रहा है, को दृष्टि में रखते हुए, प्रत्येक अपीलार्थी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 सह–पठित भारतीय दंड संहिता की धारा 120B के अधीन अपराध के लिए छह माह के लिए और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (1) (d) सह–पठित धारा 13 (2) के अधीन अपराध के लिए एक वर्ष के लिए उक्त अपराधों के लिए विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित जुर्माना के दंडादेश के संबंध में किसी उपांतरण के बिना दंडादेश देना न्याय के हित में समुचित होगा।

33. तद्नुसार, दंडादेश के बिंदु पर उपांतरण के साथ इन दोनों अपीलों को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

प्रेम लाल साहू

cuke

बिहार राज्य एवं अन्य

CWJC No. 1768 of 1999 (R). Decided on 27th March, 2014.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 71A—पुनर्स्थापन–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर सामग्री मौजूद नहीं है कि याची को नोटिस और समुचित रूप से प्रतिवाद करने तथा सुनवाई का अवसर दिया गया था–धारा 71A के प्रावधानों और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का प्रकट उल्लंघन हुआ है–विधि द्वारा स्थापित सम्यक प्रक्रिया के सिवाए व्यक्ति को उसके बहुमूल्य अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है–पुनर्स्थापन का आक्षेपित आदेश संविधान के अनुच्छेदों 14, 21 और 300A का उल्लंघनकारी है और शून्य तथा अकृत है–जमाबंदी पुनर्स्थापित करने के निर्देश के साथ आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 23 से 27)

अधिवक्तागण.–M/s Amar Kumar Sinha, Delip Jerath, Rajesh Kumar, Abhiresh Kumar, Vineet Vasisth, Amit Kumar, For the Petitioner; Mr. Deepak Kumar Dubey, For the State.

न्यायालय द्वारा–इस रिट याचिका में, याची ने एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 86/89-90 (परिशिष्ट–7) में विद्वान सब–डिविजनल अधिकारी–सह–विशेष अधिकारी, गुमला द्वारा पारित दिनांक 2.5.1992 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा ग्राम सिसई, पी॰ एस॰ एवं जिला गुमला के खाता सं॰ 167 से संबंधित 6 डिसमिल क्षेत्रफल वाले भूखंड सं॰ 3034 की भूमि का पुनर्स्थापन छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के प्रावधानों के अधीन प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पक्ष में इप्सित किया गया था। याची ने आगे एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 14/92-93 में विद्वान अपर कलक्टर, गुमला द्वारा पारित दिनांक 15.6.1992 के आदेश और गुमला राजस्व पुनरीक्षण सं॰ 107/1992 में विद्वान आयुक्त दक्षिण छोटानागपुर डिविजन द्वारा पारित दिनांक 18.5.1999 के आदेश के अभिखंडन के लिए भी प्रार्थना किया है। उक्त आदेशों द्वारा क्रमश: अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारियों ने सब–डिविजनल अधिकारी, गुमला के आदेश को मान्य ठहराया।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 बुधवा ओराँव ने यह अभिकथित करते हुए कि भूमि उसकी है और उसे ग्राम सिसई, पी॰ एस॰ एवं जिला गुमला के खाता सं॰ 167, भूखंड सं॰ 3034, क्षेत्रफल 6 डिसमिल की भूमि का याची के पक्ष में अंतरण के बहाना पर अवैध रूप से बेदखल कर दिया गया था, उक्त भूमि के कब्जा की पुनर्स्थापना के लिए प्रार्थना करते हुए छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के अधीन सब–डिविजनल अधिकारी, गुमला के समक्ष आवेदन दाखिल किया था। उक्त मामला एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 86/89-90 के रूप में दर्ज किया गया था।

3. सब–डिविजनल अधिकारी ने विरोधी पक्षकार को नोटिस जारी किया और अंचलाधिकारी, सिसई से रिपोर्ट भी मंगवाया। अंचलाधिकारी, सिसई ने दिनांक 20.12.1989 का अपना रिपोर्ट दाखिल किया। विद्वान सब–डिविजनल अधिकारी ने दिनांक 2.5.1992 के अपने आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पक्ष में पूर्वोक्त भूमि की पुनर्स्थापना का निर्देश देते हुए आवेदन अनुज्ञात किया, यद्यपि कोई पक्ष उपस्थित नहीं हुआ था और मामला सुना नहीं गया था।

4. अंचलाधिकारी की जाँच रिपोर्ट के आधार पर विद्वान विशेष अधिकारी ने अभिनिर्धारित किया कि यह स्पष्ट है कि भूमि आवेदक की है जो अनुसूचित जनजाति का सदस्य है और गैर–आदिवासी के पक्ष में उक्त भूमि का अंतरण करने के लिए प्रावधान नहीं है। उक्त अंतरण छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान के उल्लंघन में है।

5. विद्वान सब–डिविजनल अधिकारी ने आवेदक प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पक्ष में उक्त भूमि को पुनर्स्थापित किया और अंचलाधिकारी को कब्जा प्रभावकारी बनाने का निर्देश दिया गया था।

6. उक्त आदेश से व्यथित होकर, याची ने अपर कलक्टर के समक्ष अपील एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 14/92-93 दाखिल किया।

7. याची ने आधार लिया था कि प्रश्नगत भूमि जगरनाथ प्रसाद साहू, पुत्र गुरुबाबू हरिहर प्रसाद शर्मा द्वारा दिनांक 3.6.1959 के विक्रय विलेख के फलस्वरुप खरीदी गयी थी। तत्पश्चात, भूमि जगरनाथ प्रसाद साहू द्वारा दिनांक 22.12.1979 के रजिस्टर्ड विलेख द्वारा उर्मिला देवी के पक्ष में बंदोबस्त की गयी थी। उक्त उर्मिला देवी का नाम अंचल कार्यालय में नामांतरित किया गया था और अंचल कार्यालय द्वारा रखे गए राजस्व अभिलेख रजिस्टर–II में बना हुआ है किंतु उसे कार्यवाही का पक्ष नहीं बनाया गया था। उक्त दावा के समर्थन में दस्तावेजों को भी प्रस्तुत किया गया था।

8. विद्वान अपर कलक्टर ने उक्त आधार को अनदेखा करते हुए यह संप्रेक्षित करते हुए कि अनुसूचित जनजाति के सदस्य की भूमि का गैर आदिवासी को अंतरण की संपूर्ण प्रक्रिया कपटपूर्ण है,

दिनांक 15.6.1992 के आदेश द्वारा संक्षिप्त रूप से अपील अस्वीकार कर दिया। विद्वान अपर कलक्टर ने उर्मिला देवी के नाम में चल रही जमाबंदी को भी रद्द कर दिया।

9. तत्पश्चात, याची ने आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे गुमला राजस्व पुनरीक्षण सं० 107/1992 के रूप में दर्ज किया गया था। याची ने दावा और स्वामित्व तथा कब्जा के अधिकार को सिद्ध करने के लिए विस्तारपूर्वक समस्त तथ्यों को उल्लिखित किया था, किंतु दिनांक 18.5.1999 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण गैर अभियोजन के लिए खारिज कर दिया गया था।

10. याची ने अपने विरुद्ध पारित समस्त उक्त आदेशों को इस रिट याचिका में इस आधार पर मुख्यत: चुनौती दिया है कि कोई नोटिस तामील नहीं किया गया था और याची को अभ्यावेदन देने तथा सुनवाई करने का अवसर नहीं दिया गया था और उसके पीठ पीछे आदेश पारित किया गया था और उक्त आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन है और शून्य तथा अकृत हैं। उक्त आदेश को मान्य ठहराने वाला अपीलीय एवं पुनरीक्षण आदेश दूषित है और विधि में असंपोषणीय हैं।

11. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अमर कुमार सिन्हा ने निवेदन किया कि विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी का आक्षेपित आदेश संक्षिप्त एवं कारण रहित है और विवेक के बिल्कुल गैर इस्तेमाल के कारण दूषित है। उन्होंने निवेदन किया कि याची को नोटिस तामील किए जाने के संबंध में अभिलेख पर कुछ भी मौजूद नहीं है और विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी द्वारा मंगाए गए अंचलाधिकारी की रिपोर्ट पर भी विचार नहीं किया गया था। उक्त रिपोर्ट में यह स्पष्टत: उल्लिखित किया गया था कि उक्त भूमि के संबंध में जमाबंदी नामांतरण केस सं० 7 और 8 वर्ष 1980-81 में पारित अंचलाधिकारी के दिनांक 21.7.1980 के आदेश द्वारा खोली गयी थी और रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप किए गए अंतरण के आधार पर श्रीमती उर्मिला देवी, पत्नी प्रेम लाल साहू के नाम में चल रही है। उन्होंने यह भी रिपोर्ट किया कि 1,10,000/- रुपयों की मूल्यांकित कीमत पर सुनिर्मित पक्की संरचना है। किंतु विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी ने उक्त रिपोर्ट को भी दरकिनार कर दिया और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत और सी० एन० टी० अधिनियम की धारा 71A के प्रावधान के घोर उल्लंघन में उक्त आदेश पारित किया जो विनिर्दिष्टत: पुनर्स्थापन का आदेश पारित किए जाने के पहले पक्षों को नोटिस और सुनवाई का अवसर दिया जाना प्रावधानित करता है।

12. उन्होंने आगे निवेदन किया कि मामले के गुणागुण पर विचार किए बिना अपीलीय आदेश और पुनरीक्षण न्यायालय का आदेश लापरवाह, मनमाना और अवैध है। उक्त आदेशों ने सब-डिविजनल अधिकारी के आदेश को मान्य ठहराया है जो अकृतता है और इस प्रकार उक्त आदेश पूर्णत: अवैध, असंपोषणीय हैं और अभिखंडित किए जाने के दायी है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि चूँकि आयुक्त का न्यायालय कभी-कभार बैठता है और पक्षों की उपस्थिति में तिथियों को नियत नहीं किया गया है, व्यतिक्रम और गैर-अभियोजन के लिए पुनरीक्षण खारिज करने के पहले मामलों में नियत की गयी तिथि सूचित करना आयुक्त पर बाध्यकारी था। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी मौजूद नहीं है कि याची को सुनवाई की तिथि संसूचित की गयी थी। विद्वान आयुक्त ने विधि की विहित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना याची की गैर उपस्थिति के लिए पुनरीक्षण खारिज कर दिया है।

13. श्री सिन्हा ने निवेदन किया कि उक्त प्रावधान के अधीन दाखिल आवेदन पर कार्यवाही करने के लिए और इसे विनिश्चित करने के लिए छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A द्वारा प्रक्रिया विहित की गयी है। किंतु आज्ञापक विधिक प्रावधान को दरकिनार कर दिया गया है और सब-डिविजनल

अधिकारी द्वारा पुनर्स्थापन का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था। उन्होंने निवेदन किया कि याची काफी पहले वर्ष 1979 में श्रीमती उर्मिला देवी, याची की पत्नी, के पक्ष में रजिस्टर्ड विलेख के फलस्वरुप किए गए अंतरण के आधार पर भूमि धारण कर रहा था और इस पर काबिज था। उसका नाम सक्षम प्राधिकारी द्वारा नामांतरण केस सं० 7/8 वर्ष 1980-81 में पारित आदेश के आधार पर वर्ष 1980 में नामांतरित किया गया था और जैसा अंचलाधिकारी द्वारा रिपोर्ट किया गया है, उसका नाम राजस्व अभिलेख रजिस्टर II में निरंतर बना हुआ है। उक्त रिपोर्ट के बावजूद, उक्त खरीददार श्रीमती उर्मिला देवी को पक्षकार नहीं बनाया गया था और प्रतिवाद करने तथा सुने जाने का अवसर नहीं दिया गया था।

14. उन्होंने आगे निवेदन किया कि अपर कलक्टर ने न केवल उक्त अवैध आदेश को मान्य ठहराकर बल्कि याची के पीठ पीछे और इसके लिए कोई कार्यवाही आरंभ किए बिना कलम की नोंक द्वारा श्रीमती उर्मिला देवी की अरसे से चली आ रही जमाबंदी रद्द करके अयुक्तियुक्तता तथा मनमानेपन की समस्त सीमाओं के परे चले गए।

15. विद्वान अधिवक्ता ने आग्रह किया कि न केवल इस न्यायालय द्वारा आक्षेपित अवैध और विकृत आदेश अभिखंडित किया जाए बल्कि उक्त भूमि के संबंध में श्रीमती उर्मिला देवी के नाम में चल रही जमाबंदी को तुरन्त पुनर्स्थापित करने का निर्देश प्रत्यर्थीगण को दिया जाए।

16. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित स्थायी अधिवक्ता-I के विद्वान कनीय अधिवक्ता ने यद्यपि आरंभ में आक्षेपित आदेशों को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया किंतु सी० एन० टी० अधिनियम की धारा 71A के अधीन पुनर्स्थापन के आक्षेपित आदेशों और श्रीमती उर्मिला देवी, जो कार्यवाही का पक्ष भी नहीं थी, के नाम में चल रही जमाबंदी के रद्दकरण को न्यायोचित ठहराने के लिए विधिक आधार भी नहीं पाया।

17. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि नयी कार्यवाही के लिए और विधि के अनुरुप मामला निपटाने के लिए मामला विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी के पास वापस भेजा जाए।

18. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और संपूर्ण अभिलेख का परिशीलन करने के बाद मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में काफी सार पाता हूँ।

19. सब-डिविजनल अधिकारी, गुमला के आक्षेपित आदेश में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया गया है कि कोई पक्ष उपस्थित नहीं था जब मामला सुना गया था और पुनर्स्थापन का आक्षेपित आदेश पारित किया गया था। यह भी उल्लिखित नहीं किया गया है कि याची पर वैध रूप से नोटिस तामील किया गया था। आगे, मैं पाता हूँ कि उसमें यह उल्लिखित करने वाला अंचलाधिकारी, सिसई का रिपोर्ट है कि कार्यवाही की भूमि श्रीमती उर्मिला देवी द्वारा दिनांक 22.12.1979 के रजिस्टर्ड विक्रय-विलेख के फलस्वरुप खरीदी गयी थी। उक्त रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के आधार पर उक्त उर्मिला देवी का नाम नामांतरण केस सं० 7 और 8 वर्ष 1980-81 में पारित दिनांक 21.7.1980 के आदेश द्वारा नामांतरित किया गया था और वर्ष 1982 तक 1,10,000/- रुपयों की मूल्यांकित कीमत पर पक्का घर एवं कुआँ निर्मित किया गया था। किंतु एस० ए० आर० केस सं० 86/89-90 में पारित दिनांक 7.5.1992 के विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी के आदेश में यह अभिनिर्धारित करने के सिवाए कि अंतरण का औचित्य नहीं था, उन तथ्यों पर विचार नहीं किया गया है।

20. उक्त रिपोर्ट के बावजूद कि श्रीमती उर्मिला देवी भूमि की खरीददार थी और उसका नाम जमाबंदी राजस्व अभिलेख में चल रहा है, उसे पक्ष नहीं बनाया गया था और उस पर नोटिस तामील नहीं किया गया था। विद्वान सब -डिविजनल अधिकारी ने प्रश्नगत भूमि पर खड़े 1,10,000/- रुपयों के

मूल्यांकित मूल्य के सारवान संरचना के बारे में भी कुछ भी दर्ज नहीं किया है और छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के परन्तुक में ऐसे मामले पर विचार करने के लिए प्रावधान का अनुसरण किए बिना पुनर्स्थापन का आदेश पारित किया है। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री मौजूद नहीं है कि याची को नोटिस तथा समुचित रूप से प्रतिवाद करने एवं सुनवाई का अवसर दिया गया था। इस प्रकार, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A के प्रावधानों एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का प्रकट उल्लंघन हुआ है।

21. यद्यपि संपत्ति का अधिकार अब मूल अधिकार नहीं है, यह बहुमूल्य अधिकार है और विधि द्वारा स्थापित सम्यक प्रक्रिया के सिवाए व्यक्ति को उसके बहुमूल्य अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है।

22. विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी द्वारा पारित पुनर्स्थापन का आक्षेपित आदेश न केवल मनमाना है और विवेक का इस्तेमाल किए बिना पारित किया गया है, यह भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14, 21 और 300A का उल्लंघनकारी है और शून्य तथा अकृत है।

23. एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 14/1992-93 में विद्वान अपर कलक्टर द्वारा पारित अपीलीय आदेश (परिशिष्ट 8) और गुमला राजस्व पुनरीक्षण सं॰ 107/1992 में विद्वान आयुक्त द्वारा पारित आदेश भी इसी आधार पर गैर विद्यमान है।

24. विद्वान अपीलीय न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में लेने के बावजूद कि श्रीमती उर्मिला देवी भूमि की खरीददार है और कि उसका नाम जमाबंदी में चल रहा है और कि राज्य द्वारा लगान रसीद जारी किया गया है, विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी के आदेश को मान्य ठहराया और उक्त उर्मिला देवी की अनुपस्थिति में अथवा उसको कोई नोटिस अथवा सुनवाई का अवसर दिए बिना रजिस्टर-II में प्रविष्टि रद्द कर दिया यद्यपि जमाबंदी रद्द करने के लिए ऐसा आवेदन अथवा कार्यवाही नहीं था।

25. विद्वान आयुक्त ने व्यतिक्रम तथा याची की अनुपस्थिति के लिए याची का पुनरीक्षण खारिज कर दिया यद्यपि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं मौजूद है कि याची को पुनरीक्षण में सुनवाई के लिए नियत तिथि के बारे में सूचित किया गया था।

26. पूर्वोक्त कारणों से, एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 86/89-90 में विशेष अधिकारी, गुमला द्वारा पारित दिनांक 2.5.1992 का आदेश (परिशिष्ट 7); एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 14/92-93 में विद्वान अपर कलक्टर, गुमला द्वारा पारित दिनांक 15.6.1992 का आदेश (परिशिष्ट 8) और गुमला राजस्व पुनरीक्षण सं॰ 107/1992 में विद्वान आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा पारित दिनांक 18.5.1999 का आदेश विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार, अभिखंडित किया जाता है। यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

27. प्रत्यर्थीगण को तुरन्त श्रीमती उर्मिला देवी के नाम में चल रही जमाबंदी को रजिस्टर II में पुनर्स्थापित करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

भारतीय इस्पात प्राधिकरण लि॰ एवं अन्य (दोनों में)

cuke

प्रोगेसिव कंस्ट्रक्शन कॉरपोरेशन एवं अन्य (119 में)

बोकारो स्टील वर्क्स यूनियन एवं एक अन्य (122 में)

L.P.A. Nos. 119 and 122 of 2014. Decided on 3rd April, 2014.

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 2 (9)—''निर्णय''– सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 2 (9) में ''निर्णय'' की परिभाषा की लेटर्स पेटेन्ट के प्रति प्रयोज्यता नहीं है–निर्णय की धारणा संकुचित है, जैसा सी॰ पी॰ सी॰ द्वारा परिभाषित किया गया है और सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 2 (2) द्वारा संयोजित सीमितताओं को भौतिक रूप से शब्द ''निर्णय'' जैसा लेटर्स पेटेन्ट के खंड 15 में प्रयुक्त किया गया है, की परिभाषा में इसका आयात नहीं किया जा सकता है।(पैरा 9)

(ख) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 39, नियम 1 एवं 2—व्यादेश का आदेश केवल आपवादिक परिस्थितियों के अधीन प्रदान किया जा सकता है–केवल प्रबल मामलों में अंतरिम आदेश पारित किया जा सकता है–लोक विधि अथवा लोकहित को अंतर्ग्रस्त करने वाले राज्य के वाणिज्यिक संव्यवहार के मामले में न्यायालय को स्थगन का अंतरिम आदेश प्रदान करने में धीमा होना है। (पैराएँ 17 एवं 18)

निर्णयज विधि.–AIR 1981 SC 1786; (1994)4 SCC 225; (2005)5 SCC 61—Relied; (1999)1 SCC 492—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Ananda Sen, For the Appellant; M/s. Sujit Narayan Prasad, Rajeev Ranjan Tiwary (in 119), For the Resp. No. 1-3; M/s. Indrajit Sinha, Sumeet Gadodi, Shrest Gautam (in 119), For the Resp. No. 4-6; M/s. Anil Kumar Sinha, Amit Tiwary (in 122), For the Respondents.

आर॰ बानुमथी, न्यायमूर्ति–ये दोनों अपीलें क्रमश: डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 1359/2014 में और डब्लू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 715/2014 में पारित दिनांक 10.3.2014 और दिनांक 18.2.2014 के आदेशों के विरुद्ध दाखिल की गयी हैं, जिसमें और जिसके द्वारा अपीलार्थी SAIL को ई॰ निविदा को अंतिम रूप नहीं देने का निर्देश दिया गया था।

2. इन अपीलों की दाखिली की ओर ले जाने वाले संक्षिप्त तथ्य निम्नलिखित हैं:–

झारखंड के गढ़वा जिले में तुलसीडामर डोलोमाइट खानों में डोलोमाइट के मैनुअल रेजिंग, पिकिंग, सॉर्टिंग, साइजिंग, स्टैकिंग, टिपर्स में डोलोमाइट के मैनुअल लोडिंग, रेलवे साइडिंग में परिवहन, यांत्रिक साधनों द्वारा डोलोमाइट के वैगन लोडिंग के मिश्रित काम के लिए अपीलार्थीगण द्वारा दिनांक 20.1.2014 की निविदा नोटिस सं॰ RMD/C/CC 25 वर्ष 2013-14 जारी की गयी थी। निविदा दो भागों में थी–(1) टेक्निकल बिड और (2) वाणिज्यिक बिड अर्थात् कीमत बिड/उक्त निविदा नोटिस के अनुसरण में, सात प्रस्ताव प्राप्त किए गए थे और निविदा निबंधनों के मुताबिक मूल्यांकित किए गए थे। टेक्नो–वाणिज्यिक संवीक्षण के बाद छह निविदादाता को तकनीकी रूप से अर्हित किया गया था और इसे निविदा देने वालों को सूचित किया गया था–पहले टेलीफोन पर और तब दिनांक 28.2.2014 के ई॰ मेल द्वारा नियत कीमत बोली दिनांक 1.3.2014 को डी॰ जी॰ एम॰ (सी॰ सी॰), आर॰ एम॰ डी॰, SAIL, कोलकाता के कार्यालय में सायं 4 बजे खोली जाएगी और दिनांक 1.3.2014 को सायं 4 बजे तय समय पर बोली खोली गयी थी। किंतु, कीमत बोली खोलने के बाद जब अपीलार्थी ने अपना ई॰ मेल खोला, यह देखा गया था कि मेसर्स प्रोगेसिव कंस्ट्रक्शन कॉरपोरेशन, मेसर्स आर॰ एस॰ ग्रेवाल और मेसर्स आई॰ एस॰ एस॰ (प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3) ने कीमत बोली खोलने को स्थगित करने और कीमत बोली खोलने के लिए एक अन्य तिथि नियत करने का अनुरोध किया था। बोली पहले ही खोल दी गयी थी जैसा तय किया गया था और उन्हें दिनांक 1.3.14 के ई॰ मेल द्वारा सूचित किया गया था कि इस चरण पर उनका अनुरोध नहीं माना जा सकता है। प्रत्यर्थीगण ने संपूर्ण निविदा प्रक्रिया को इस आधार पर अभिखंडित करने की प्रार्थना करते हुए डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1359/2014 दाखिल किया कि बोली खोलते हुए उनको पर्याप्त अवसर नहीं दिया गया था और कि कीमत बोली को उनकी उपस्थिति में खोला जाना चाहिए था। न्यायालय ने दिनांक 10.3.2014 के आदेश के तहत रिट याचिका ग्रहण किया और प्रत्यर्थी/अपीलार्थी को निविदा को अंतिम रूप देने से अवरुद्ध करते हुए अंतरिम आदेश पारित किया।

3. डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 715/2014 संविदा मजदूरों द्वारा दाखिल किया गया था जो उक्त काम के ठेकेदार के माध्यम से यांत्रिक साधनों द्वारा डोलोमाइट उठाने और लादने के काम में लगे हुए हैं। संविदा मजदूरों ने अपने यूनियन के माध्यम से पहले नियमितिकरण इप्सित करते हुए दो रिट याचिकाओं सी॰ डब्लू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2348/2000 (R) और डब्लू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3996 वर्ष 2006 दाखिल किया। प्रत्यर्थीगण ने दिनांक 20.1.2014 के निविदा को इस आधार पर चुनौती दिया कि कुछ खंड अर्थात् खंड सं॰ 10.2, 10.6, 19.6, 31.11, 31.16 मजदूरों के हित के प्रति हानिकारक हैं और नियमितिकरण के लिए भी प्रार्थना किया। उक्त रिट याचिका में प्रबंधन ने बयान दिया कि मजदूरों के हितों को पर्याप्त रूप से सुरक्षित किया गया है। ऐसे बयान पर, उक्त रिट याचिका में, SAIL को निर्देश देते हुए कि शपथ पत्र पर स्पष्ट बयान देने के पहले और इस आधार पर न्यायालय को संतुष्ट किए बिना निविदा को अंतिम रूप नहीं दिया जाएगा, दिनांक 18.2.2014 का अंतरिम आदेश पारित किया गया।

4. अपीलार्थी SAIL के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आनन्द सेन ने निवेदन किया कि ऐसा कोई अभिकथन नहीं है कि प्राईवेट प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 को क्या प्रतिकूलता कारित की गयी है और कि यह दर्शाने के लिए कोई सारवान आधार नहीं बनाया गया है कि निविदा का अंतिमकरण द्वेष से पीड़ित है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि निविदा प्रक्रिया को अंतिम रूप नहीं देने का अंतरिम आदेश SAIL के अधिकारों को सारवान रूप से प्रभावित कर रहा है और अंतरिम आदेश के फलस्वरुप डोलोमाइट की उठाई और परिवहन प्रभावित हुआ है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि निविदाकारों/प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 6 द्वारा उद्धृत दर प्रचलित दर की तुलना में कम है जिसे वर्तमान संविदाकारों/प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 (रिट याचीगण) ने उद्धृत किया है। यह प्रतिवाद किया गया था कि कोई अंतरिम आदेश पारित करने के पहले न्यायालय को परस्पर विरोधी हितों को सावधानीपूर्वक तौलना होगा और विद्वान एकल न्यायाधीश ने व्यापक लोक हित को दृष्टि में नहीं रखा था कि अंतरिम आदेश वित्तीय हानि कारित करने के अतिरिक्त अपीलार्थी के उत्पादन को विलंबित कर सकता था। **रौनक इंटरनेशनल लि॰ बनाम आई॰ वी॰ आर॰ कंस्ट्रक्शन लि॰ एवं अन्य, (1999)1 SCC 492;** और **बॉम्बे डायिंग एन्ड मैन्यूफैक्चरिंग कं॰ लि॰ बनाम बॉम्बे एनवायरोमेन्टल एक्शन ग्रुप एवं अन्य, (2005)5 SCC 61,** मामलों में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वाणिज्यिक संविदा में निविदा के अंतिमकरण को स्थगित करने वाला अंतरिम आदेश पारित नहीं किया जा सकता है।

5. ''शाह बाबूलाल खिमजी बनाम जयाबेन डी॰ कनिया एवं एक अन्य'', AIR 1981 SC 1815, में दिए गए निर्णय पर और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 195 वर्ष 2011 और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 202 वर्ष 2010 में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित आदेशों पर विश्वास करते हुए एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 122 वर्ष 2014 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा ने निवेदन किया कि निविदा को अंतिम रूप नहीं देने का निर्देश प्रत्यर्थीगण (वर्तमान अपीलार्थीगण) को देने वाले दिनांक 10.3.2014 के अंतरिम आदेश को शब्द ''निर्णय'' के अर्थ के अंतर्गत आने वाला नहीं कहा जा सकता है ताकि पटना उच्च न्यायालय के लेटर्स पेटेन्ट का खंड 10 आकृष्ट हो सके। आगे यह निवेदन किया गया है कि मामला दिनांक 25.3.2014 के लिए नियत किया गया था किंतु, इसकी सुनवाई नहीं की जा सकी थी और पक्षों की सहमति से मामला दिनांक 7.4.2014 को सुने जाने के लिए नियत किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थीगण ने दिनांक 10.3.2014 के अंतरिम आदेश को रिक्ति इप्सित करते हुए आवेदन दाखिल किया है और इसलिए, अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील खारिज किए जाने की दायी है।

6. विद्वान अधिवक्ता श्री सुजीत नारायण प्रसाद ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 ने अन्य बातों के साथ इस लेटर्स पेटेन्ट अपील की पोषणीयता पर प्रतिवाद किया। **शाह बाबूलाल खिमजी बनाम**

जयाबेन डी॰ कनिया एवं एक अन्य, AIR 1981 SC 1786, मामले में निर्णय पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यदि कोई अंतर्वर्ती आदेश अंतिमता का चरित्र और लक्षण रखता है, ऐसे मामले में लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया था कि वर्तमान मामले के तथ्यों में स्थगन का अंतरिम आदेश अंतिमता का चरित्र अथवा गुण अथवा लक्षण नहीं रखता है और विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश का अर्थ ''निर्णय'' के रूप में नहीं लगाया जा सकता है और आदेश शुद्धत: अंतर्वर्ती है और अपीलार्थी को विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष रिट याचिका में लिए गए अपने प्रतिवादों/बिंदुओं को उठाने की छूट सदैव है और एल॰ पी॰ ए॰ पोषणीय नहीं है।

7. क्या निर्णय अथवा आदेश ''अंतिम'' है या नहीं, इसे विषय वस्तु के संदर्भ में देखना होगा। कभी–कभार प्रकटत: अंतर्वर्ती चरित्र का आदेश अंतिम कहा जा सकता है भले ही पक्षों के बीच मुख्य विवाद निपटाया नहीं गया है और इस प्रकार ऐसा आदेश पटना उच्च न्यायालय के लेटर्स पेटेन्ट के खंड 10 के परिधि के अंतर्गत आएगा। **''उड़ीसा राज्य बनाम मदन गोपाल रूँगटा'', AIR 1952 SC 12,** में यद्यपि उच्च न्यायालय ने विवाद विनिश्चित नहीं किया था, इसने प्रस्तावित वादों को दाखिल किए जाने तक सरकार को कार्रवाई करने से अवरुद्ध करते हुए परमादेश प्रदान किया। इस प्रतिवाद को अस्वीकार करते हुए कि आदेश अंतिम नहीं था क्योंकि यह अंतरिम अनुतोष के लिए था और दाखिल किए जाने वाले प्रस्तावित वादों में पक्षों के बीच विवाद विनिश्चित किए जाने के लिए बना रहा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उक्त आदेश अंतिम था और उक्त आदेश के विरुद्ध दाखिल अपील पोषणीय था।

8. जहाँ तक एल॰ पी॰ ए॰ की पोषणीयता पर दिए गए तर्क का संबंध है, **शाह बाबूलाल खिमजी AIR 1981 SC 1786,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एल॰ पी॰ ए॰ केवल उस आदेश के विरुद्ध पोषणीय है जो अंतिमता का चरित्र एवं लक्षण रखता है और पैरा 120 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अंतर्वर्ती आदेशों के उदाहरणों को संगणित किया जिन्हें ''निर्णय के रूप में माना जा सकता है। पैरा 123 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

> *"123. oreku ekey e] pfd fopkj.k U;k;kèkh'k dk vkn'k fjlhoj dh fu;fDr vkj rnrfje 0;kn'k d çnku l budkj dju dk Fkk] ;g fu%lng yVl iVUV d vFk d vrxr fu.k; g D;kfd gekj fu.k; dh nf"V e] vkn'k 43 fu;e 1 mPp U;k;ky; e vkrfjd vihyk ij ykx gkrk g vkj bld vfrfjDr ,lk vkn'k x.kkx.k ij Hkh vfrerk dk x.k vrfo"V djrk g vkj blfy, yVl iVUV d [kM 15 d vFk d vrxr fu.k; gkxkA Åij xkj fd, x, vud ekeyk e vFkok vU; ekeyk e] ftUg yVl iVUV d [kM 15 dh dBkj 0;k[;k d lcèk e gekj }kjk è;ku e ugh fy;k x;k g] ckEc mPp U;k;ky; }kjk viuk;k x;k lxr nf"Vdk.k ,rn }kjk myVk tkrk g vkj ckEc mPp U;k;ky; dk gekj fu.k; d vkykd e Hkfo"; e ç'u fofuf'pr dju dk fun'k fn;k tkrk gA***

9. अब यह सुनिश्चित है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (9) में ''निर्णय'' की परिभाषा लेटर्स पेटेन्ट पर प्रयोज्य नहीं है। **''शाह बाबूलाल खिमजी बनाम जयाबेन डी॰ कनिया एवं एक अन्य (ऊपर)** में भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि निर्णय की धारणा जैसा सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा परिभाषित की गयी है कुछ संकुचित प्रतीत होती है और धारा 2 की उपधारा (2) में स्थापित सीमितताओं को भौतिक रूप से शब्द ''निर्णय'', जैसा लेटर्स पेटेन्ट के खंड 15 में प्रयुक्त किया गया है (जो पटना उच्च न्यायालय के लेटर्स पेटेन्ट के खंड 10 की समविषयक है), की परिभाषा में आयातित नहीं किया जा सकता है।

10. संव्यवहार की प्रकृति को ध्यान में रखकर, हमारा दृष्टिकोण है कि रिट न्यायालय द्वारा पारित आदेश अंतिमता का गुण अंतर्विष्ट करता है और इसलिए, पटना उच्च न्यायालय गठित करने वाले लेटर्स पेटेन्ट के खंड 10 के अर्थ के अंतर्गत ''निर्णय'' होगा और खंडपीठ के समक्ष अपील पोषणीय है।

11. एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 119/2014 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सुजीत नारायण प्रसाद ने प्रतिवाद किया कि तकनीकी भाग पर रिट याचीगण प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 को सफल पाया गया है और वे इस प्रत्याशा में थे कि कीमत बोली उनकी उपस्थिति में खोली जाएगी और कीमत बोली खोलने की तिथि पर उन्हें स्वयं का प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया जाएगा। आगे यह निवेदन किया गया था कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 को कोलकाता में SAIL के कार्यालय में दिनांक 1.3.14 को सायं 4 बजे उपस्थित होने के लिए कहते हुए उन्हें दिनांक 28.2.2014 को ई॰ मेल के माध्यम से संसूचित किया गया है और रिट याचीगण ने इसे दिनांक 28.2.14 को सायं 5.48 बजे ई॰ मेल के माध्यम से प्राप्त करने के बाद स्वयं को दिनांक 1.3.14 को सायं 4 बजे SAIL के कार्यालय, कोलकाता में 750 कि॰ मी॰ से अधिक की दूरी के कारण उपस्थित होने में अक्षम पाया और क्षेत्र जहाँ प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 निवास करते हैं उग्रवादी प्रभावित क्षेत्र है और इसलिए स्वयं को दिनांक 1.3.14 को उपस्थित करने के लिए रात में कोलकाता पहुंचना उनके लिए संभव नहीं था और इसलिए प्रत्यर्थीगण ने कीमत बोली खोलने की तिथि को स्थगित करने का अनुरोध प्राधिकारियों से करते हुए ई॰ मेल के माध्यम से आवेदन दिया और यद्यपि SAIL ने सम्यक रूप से इसे प्राप्त किया है, अपीलार्थी जल्दबाजी में अग्रसर हुआ और संविदा पंचाट करने के मामले में समस्त बोली लगाने वालों को उचित अवसर प्रदान करने की मूल सिद्धांत का अनुसरण किए बिना अपीलार्थी ने कीमत बोली की तिथि स्थगित करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 को उनकी पात्रता के बावजूद SAIL की मनमानी कार्रवाई के कारण कीमत बोली में भाग लेने से वंचित कर दिया गया है और संपूर्ण तथ्य दर्शाएँगे कि सेल ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 6 को अनुचित अधिमान देने में और उनको सफल घोषित करने में मनमाने तरीके से कृत्य किया और बनाए गए प्रथम दृष्टया मामले की दृष्टि में विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से अंतरिम स्थगन प्रदान किया।

12. एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 122 वर्ष 2014 में प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा ने निवेदन किया है कि मजदूर जो प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 यूनियन के सदस्य हैं विगत 25-30 वर्षों से कार्यरत हैं और उक्त तथ्य को ध्यान में लेते हुए इस न्यायालय ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2348 वर्ष 2000 (R) में श्रम न्यायालय द्वारा उनका दावा अंतिम रूप से न्याय निर्णीत किए जाने तक मजदूरों को हटाने से प्रबंधन को अवरुद्ध किया। लाइम स्टोन एवं डोलोमाइट खानों में संविदा मजूदरों का नियोजन निषिद्ध करते हुए केंद्र सरकार द्वारा जारी दिनांक 17.3.1993 की अधिसूचना के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 यूनियन ने SAIL के अनेक संविदाओं के अधीन कार्यरत संविदा मजदूरों का विभागीकरण एवं आमेलन का मांग किया। किंतु, अपीलार्थी SAIL की प्रेरणा पर संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970 की धारा 10 (1) के अधीन केंद्र सरकार द्वारा जारी अधिसूचना को कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी जिसमें एक पक्षीय स्थगन आदेश पारित किया गया था। कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश का लाभ लेते हुए अपीलार्थी SAIL ने अपने खानों में काम निष्पादित करने के लिए संविदा मजदूरों को काम पर लगाना जारी रखा। यद्यपि, प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2 यूनियन द्वारा दाखिल डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3996 वर्ष 2006 में सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2348 वर्ष 2000 (R) में पारित आदेश पुनः अभिपुष्ट किया गया था और दोहराया गया था किंतु,

प्रत्यर्थी मजदूरों के अनुसार, अपीलार्थी SAIL ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश का उल्लंघन करना जारी रखा क्योंकि अपीलार्थी SAIL द्वारा कर्मकारों को उपदान का भुगतान कभी नहीं किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि इस बीच अनेक मजदूरों की मृत्यु हो गयी है और अपीलार्थी SAIL ने मजदूरों को भुगतान किए जाने वाले सांविधिक देयों का दायित्व स्वीकार करते हुए इस न्यायालय के समक्ष झूठा शपथ पत्र दाखिल किया और अब संविदाकारों को उपदान एवं छँटनी लाभ के भुगतान के लिए दायी बनाते हुए निविदा दस्तावेज में खंड 19.6 सम्मिलित करके अपीलार्थी SAIL मजदूरों के हित को नकारने का प्रयास कर रहा है और इसलिए रिट याचिका दाखिल की गयी है। अपीलार्थी SAIL के विगत आचरण की दृष्टि में विद्वान एकल न्यायाधीश ने SAIL को न्यायालय को इस बात पर संतुष्ट करते हुए शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश दिया कि मजदूरों के हित एवं कल्याण को सम्यक रूप से सुरक्षित किया गया है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने यह निवेदन करते हुए कि केवल वर्तमान अपीलार्थीगण की प्रेरणा पर विद्वान एकल न्यायाधीश ने SAIL द्वारा दिया गया आश्वासन दर्ज किया है कि शपथ पत्र पर स्पष्ट बयान देने के पहले निविदा को अंतिम रूप नहीं दिया जाएगा और न्यायालय को इस बात पर संतुष्ट करते हुए कि मजदूरों के हित एवं कल्याण को निविदा दस्तावेज के खंड 19.6 के अधीन सम्यक रूप से संरक्षित किया गया है, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 715 वर्ष 2014 में पारित दिनांक 18.2.2014 के अंतरिम आदेश को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया है।

13. उक्त के विरुद्ध, अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आनन्द सेन ने निवेदन किया है कि मजदूरों की ओर से जतायी गयी आशंका काल्पनिक है और वस्तुतः पूर्व प्रावधानों की तुलना में खंड 19.6 के अधीन मजदूरों के हित को बेहतर तरीके से सुरक्षित किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अनुपालन में मजदूरों की छँटनी नहीं की गयी है और विभिन्न संविदाकारों को अधिनिर्णीत कार्य संविदा के निरपेक्ष इन मजदूरों को काम पर लगाया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि मजदूर यूनियन द्वारा रिट याचिका संविदाकार की प्रेरणा पर दाखिल की गयी है जिसने पृथक रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1359 वर्ष 2014 दाखिल किया है। चूँकि संविदाकार उच्चतर दरों पर भुगतान प्राप्त करना जारी रखेगा, यह इस न्यायालय का अंतरिम आदेश बने रहने से लाभान्वित होगा जो अपीलार्थी SAIL को विपुल वित्तीय हानि कारित करेगा।

14. एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 119/2014 में अपील के गुणागुण पर आते हुए, इस चरण पर न्यायालय का सरोकार केवल रिट न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के साथ है। मुख्य रिट याचिका लंबित है। विवादित बिंदुएँ–(i) SAIL द्वारा संविदा के पंचाट से संबंधित मामले में न्यायिक पुनर्विलोकन की गुंजाइश क्या है; (ii) क्या प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 को कीमत बोली खोलने के समय पर स्वयं को प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना चाहिए था; (iii) क्या प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 को कीमत बोली खोलने के समय पर उपस्थित होने का पर्याप्त अवसर दिया गया था; (iv) क्या दिनांक 1.3.2014 को कीमत बोली खोला जाना जल्दबाजी में किया गया था जैसा प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 द्वारा अभिकथित किया गया है; (iv) क्या निविदा प्रक्रिया मनमानेपन के कारण दूषित हो गयी है और रद्द किए जाने की दायी है और मुख्य रिट याचिका में विचारार्थ आने वाले ऐसे अन्य विवादित बिंदुओं और पक्षों द्वारा उठाए गए विवादित बिंदुओं को रिट न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है।

15. यह निवेदन किया गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 10.3.2014 के अंतरिम निर्देश के कारण अपीलार्थीगण को निविदा को अंतिम रूप देने की अनुमति नहीं दी गयी है जो अपीलार्थीगण को अपूरणीय और गंभीर हानि करता रहा है क्योंकि अपीलार्थी सं॰ 1 विपुल वित्तीय हानि से पीड़ित हो रहा है क्योंकि उन्हें पूर्व कार्य संविदा में नियत दर पर संविदाकारों को भुगतान करना है जबकि नयी निविदाओं में अपीलार्थी सं॰ 1 ने कमतर दरों पर बोलियों को प्राप्त किया है। आगे यह निवेदन किया

गया है कि नयी निविदाओं के गैर–अंतिमकरण के कारण अपीलार्थीगण गंभीर मजदूर आंदोलन की आशंका कर रहे हैं जिसका परिणाम विधि व्यवस्था की समस्या में होगा क्योंकि स्टील प्लान्ट को डोलोमाइट की आपूर्ति को गंभीर रूप से अस्त व्यस्त कर दिया गया है। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद यह है कि यह ऐसा मामला नहीं है जहाँ असद्भाव अभिकथित किया गया है और प्रत्यर्थीगण कीमत बोली खोले जाने के कारण स्वयं पर कारित प्रतिकूलता को प्रदर्शित करने में विफल रहे हैं और चूँकि ऐसा है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने सुविधा के संतुलन और अपीलार्थीगण को अपूरणीय हानि की संभावना को विचार में नहीं लिया था और इसलिए, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1359 वर्ष 2014 में पारित दिनांक 10.3.2014 के आदेश और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 715 वर्ष 2014 में पारित दिनांक 18.2.2014 के आदेश में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की प्रार्थना करते हैं।

16. एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 122/2014 में, प्रश्न कि क्या मजदूरों के हित की पर्याप्त रूप से सुरक्षा की गयी है और क्या प्रबंधन द्वारा दिए गए वचन का उल्लंघन किया गया है जैसा मजदूरों द्वारा अभिकथित किया गया है, ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें केवल रिट याचिका में विनिश्चित किया जाना है।

17. यह सुनिश्चित है कि केवल आपवादिक परिस्थितियों में व्यादेश का आदेश प्रदान किया जा सकता है। केवल प्रबल मामलों में, अंतरिम आदेश पारित किया जा सकता है जब न्यायालय सुविधा के संतुलन का प्रथम दृष्टया मामला और जहाँ रिट याचीगण अपूरणीय क्षति से पीड़ित होंगे, दर्शाने पर एक पक्षीय व्यादेश के लिए अधिकथित मापदंड से संतुष्ट है।

18. विचारों, जो सामान्यत: व्यादेश का प्रदान मार्गदर्शित करते हैं, को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **मोर्गन स्टैनली म्युचुअल फंड बनाम कार्तिक दास, (1994)4 SCC 225,** में उपदर्शित किया गया है। **बॉम्बे डाइंग एन्ड मैन्यूफैक्चरिंग कं॰ लि॰, (2005)5 SCC 61,** में **मॉर्गन स्टैनली म्युच्युल फंड, (1994)4 SCC 225,** मामले को निर्दिष्ट करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 22 और 25 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"22. bl pj.k ij bl U;k;ky; dk ljkdkj mPp U;k;ky; }kjk ikfjr vrfje vkn'k d lkFk gA fjV ;kfpdk dk vHkh Hkh luk tkuk ckdh gA i{kk d chp 'kiFk i=k dk vknku&çnku vHkh gkuk 'k"k gA fjV ;kfpdk dh ik"k.kh;rk d lcèk e vkifÙk dk Hkh Lo; mPp U;k;ky; }kjk vfre :i l fofuf'pr dju dh vko';drk gA bl çdkj] ;g U;k;ky; bl pj.k ij bu vihyk e mBk, x, leLr fookfnr ç'uk ij fopkj ugh dj ldrk gA fdr] dkb Hkh lng vFkok fookn ugh gk ldrk g fd vrfje vkn'k ikfjr fd, tku d igy] vkj fo'k"kr% tufgr ;kfpdk e] U;k;ky; dk çFke n"V;k ekey d vfLrRo] lfoèkk d lryu d lcèk e ç'u ij vkj bl ç'u ij Hkh fd D;k fjV ;kphx.k vij.kh; {kfr l ihfMr gkx ;fn bfllr 0;kn'k l budkj fd;k tkrk g] fopkj djuk gkxkA U;k;ky; lkekU;r% vrorh vkn'k ikfjr ugh djr g tk fdlh 0;fDr dk ml luokb dk volj fn, fcuk çHkkfor djxkA doy icy ekeyk e rnrfje vkn'k ikfjr fd;k tk ldrk g fdr mld fy, Hkh ekxu LVuyh E;pvy QM cuke dkfrd nkl (Åij) e bl U;k;ky; }kjk vfèkdfFkr fuEufyf[kr ekinMk dk vuikyu dju dh vko';drk g% (SCC PP. 241-42, Para 36)*

> *"36. fl)krr% doy vkiokfnd ifjfLFkfr;k d vèkhu ,di{kh; 0;kn'k çnku fd;k tk ldrk FkkA ,di{kh; 0;kn'k çnku dju e U;k;ky; dk ftu dkjdk dk eY;kdu djuk pkfg,] o g%*

(a) D;k oknh dk vij.kh; vFkok xHkhj fjf"V dkfjr gkxh(

(v) D;k ,di{kh; 0;kn'k l budkj bld çnku dh ryuk e mPprj vU;k; vrxLr djxk(

(c) U;k;ky; ml le; ij Hkh fopkj djxk ftl ij oknh u igyh ckj ifjokn fd, x, ÑR; dk è;ku e fy;k Fkk rkfd mldh vuifLFkfr e i{k d fo#) vufpr vkn'k ikfjr gku dk jkdk tk ldA

(d) U;k;ky; fopkj djxk fd D;k oknh dN le; l mier gvk Fkk vkj ,lh ifjfLFkfr;k e ,d i{kh; 0;kn'k çnku ugh djxk(

(e) U;k;ky; ,di{kh; 0;kn'k d fy, vkonu nu oky i{k l vkonu nu e vR;Ur lnfo'okl n'kku dh mEehn djxk(

(f) Hky gh bl çnku fd;k tk,] ,di{kh; 0;kn'k le; dh lhfer vofèk d fy, gkxk(

(f) U;k;ky; }kjk çFke n"V;k ekeyk] lfoèkk dk lryu] vij.kh; gkfu tl lkekU; fl)krk ij Hkh fopkj fd;k tk,xkA"

(;g Hkh n[k% vkèk cd cuke vkfèkdkfjd lekid] (2005)5 SCC 75)]

....

25. देवराज बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2004)4 SCC 697 में इस न्यायालय ने मत दिया: (SCC P. 703 Para 12)—

"12. fLFkfr;k lkeu vkrh g tgk vrfje vurk"k çnku fd;k tkuk Lo; vfre vurk"k çnku fd, tku d rY; gkxkA vkj rc foijhr ekey gk ldr g tgk vrfje vurk"k jkdk tkuk Lo; e[; ;kfpdk dh [kkfjth d rY; gkxk(D;kfd ml le; rd tc e[; ekeyk luokb d fy, vk,xk] ;kph dk vurk"k d :i e fn, tku d fy, dN Hkh vuKkr dju d fy, ugh cpxk ;|fi leLr fu"d"k mld i{k e gk ldr gA ,l ekeyk e] ,d vR;Ur etcr çFke n"V;k ekey dh miyCèkrk&doy çFke ny ;k ekey dh ryuk e vfèkd mPprj Lrj dk ekeyk&i.kr% vkond d i{k e ekey d lryu dk etcrh l >dkr g, lfoèkk d lryu vkj vij.kh; {kfr d fopkj U;k;ky; dk vrfje vurk"k çnku dju gr vk'oLr cuk ldr g] ;|fi ;g Lo; vfre vurk"k çnku dju d rY; gA fu'p; gh] ; fojy ,o vkiokfnd ekey gkxA U;k;ky; doy bl ckr ij lr"V gku ij ,lk vrfje vurk"k çnku djxk fd bldk jkdk tkuk U;k;ky; dh vrjkRek ij dBkjk?kkr djxk vkj U;k; d ckèk d çfr fglk djxk ftldk ifj.kke ijh luokb d nkjku vU;k; LFkk;h cuku e gkxk vkj vrr% U;k;ky; U;k; d gr dk LFkkfir dju e l{ke ugh gkxkA Li"Vr% ,l vfuok; ifjfLFkfr;k l tM fojy ekey gkx tgk ifjokn fd, x, migfr fudV dh g vkj vR;Ur dfBukb dkfjr djxhA i{kk d vkpj.k dk Hkh n[kk tkuk gkxk vkj U;k;ky; i{kk ij ,l fucèku vkjkfir dj ldrk g tk foodi.k gkA"

उक्त सुनिश्चित सिद्धांतों के आलोक में वर्तमान मामले पर विचार करते हुए, लोक विधि अथवा लोकहित अंतर्ग्रस्त करने वाले राज्य के वाणिज्यिक संव्यवहार के मामले में, न्यायालयों को स्थगन का अंतरिम आदेश प्रदान करने में धीमा होना होगा। जब मुख्य याचिका लंबित है, काम की प्रकृति को ध्यान में रखकर और SAIL की गतिविधियों पर विचार करते हुए हमारा दृष्टिकोण है कि यह अंतरिम आदेश प्रदान करने के लिए सुयोग्य मामला नहीं है।

19. रौनक इंटरनेशनल लि॰ (1999)1 SCC 492; AIR 1999 SC 393 के मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए यह निवेदन किया गया था कि निविदा मामलों में न्यायिक पुनर्विलोकन की गुंजाइश सीमित होने के कारण न्यायालय को प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने से स्वयं को तब तक अवरुद्ध करना था जब तक सक्षम प्राधिकारी का निर्णय लोकहित के विरुद्ध, अतार्किक, असद्भावपूर्ण अथवा अवैध नहीं था। चूँकि इस बिंदु के गुणागुण पर रिट न्यायालय द्वारा विचार किया जाना है, हम उठाए गए इस बिंदु के गुणागुण पर विचार करने का प्रस्ताव नहीं देते हैं।

20. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अन्य निविदाकारों (प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 6) द्वारा उद्धृत दर 684.55/- रुपया प्रति टन है जो प्रचलित दर 727.67/- रुपया प्रति टन की तुलना में कम है जिसे वर्तमान संविदाकारों/रिट याचीगण–प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 3 ने उद्धृत किया है और जिस पर वे काम कर रहे हैं। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रति टन अंतर लगभग 43.12/- रुपया है और अंतरिम आदेश के कारण SAIL को अत्यन्त वित्तीय कठिनाई के अध्यधीन किया गया है और सुविधा का संतुलन केवल अपीलार्थी के पक्ष में है। यह निवेदन भी किया गया था कि यदि अंतरिम आदेश जारी रहने दी जाती है, SAIL द्वारा इस्पात का उत्पादन प्रभावित होगा और अपीलार्थी को अपूरणीय क्षति होगी। जैसा अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही प्रकार से कथन किया गया है, यदि अंतरिम आदेश जारी रहता है, SAIL वित्तीय हानि के अध्यधीन होगा। पारित किए गए अंतरिम आदेश की दृष्टि में डोलोमाइट की उठाई और परिवहन प्रभावित होता है जो परिणामस्वरुप SAIL के उत्पादन को प्रभावित करता है।

21. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखने पर, हमारा दृष्टिकोण है कि न्याय का उद्देश्य पूरा होगा यदि SAIL को निविदा प्रक्रिया पूरी करने की अनुमति दी जाती है और यह रिट याचिका के परिणाम के अध्यधीन होगा और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित अंतरिम आदेश रिक्त किए जाने का दायी है।

22. परिणामस्वरुप, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1359/2014 में पारित दिनांक 10.3.2014 का अंतरिम आदेश और डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 715/2014 में पारित दिनांक 18.2.2014 का अंतरिम आदेश रिक्त किया जाता है और इन एल॰ पी॰ ए॰ को अनुज्ञात किया जाता है। यह कथन किया गया था कि रिट याचिकाएँ दिनांक 7.4.2014 के लिए सूचीबद्ध की गयी हैं। पक्षगण मामला सुने और निपटाए जाने के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश से अनुरोध करने के लिए स्वतंत्र हैं। दोनों पक्षों को रिट याचिकाओं के जल्दी निपटान के लिए सहयोग करने का निर्देश भी दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjh ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 441 of 2013. Decided on 4th April, 2014.

खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957—धारा 21 (5)—कोयला खनन–बालू उठाई–बालू की कीमत एवं ब्याज के मद में की गयी मांग–प्रमाण पत्र कार्यवाही ग्यारह वर्षों से अधिक तक जारी रही जिसके दौरान अपीलार्थी सी॰ सी॰ एल॰ के पास अपना दावा सिद्ध करने का पर्याप्त अवसर था कि इसके द्वारा बालू का अवैध निष्कर्षण नहीं किया

गया था–एकल न्यायाधीश ने लोक मांग वसूली अधिनियम के अधीन अपीलों के सांविधिक उपचार की उपलब्धता के बावजूद अधिकारिता का प्रयोग किया है–उच्च न्यायालय नए निर्णय के लिए मामला सांविधिक प्राधिकारी के पास वापस भेजते हुए शर्त विहित कर सकता है–एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में गलती नहीं है–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Amit Kumar Das, For the Appellant; Mr. Shadab Bin Haque, For the Respondent.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थी सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लि॰ द्वारा प्रमाण पत्र केस सं॰ 06B/01-02 में पारित दिनांक 26.12.2012 के आदेश, जिसके द्वारा अपीलार्थी को बालू की कीमत और उस पर ब्याज के मद में 60,61,038/- रुपयों की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था, का अभिखंडन इप्सित करते हुए एक रिट याचिका दाखिल की गयी थी। इस शर्त के अध्यधीन कि अपीलार्थी एक माह की अवधि के भीतर राजकोष में 25,00,000/- रुपया जमा करेगा, दिनांक 26.12.2012 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हुए रिट याचिका अनुज्ञात की गयी थी। पच्चीस लाख रुपयों की राशि का भुगतान करने के निर्देश से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल किया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी, लोक क्षेत्र उपक्रम कंपनी अधिनियम की धारा 615 के अर्थ के अंतर्गत सरकारी कंपनी है और कोयला खनन के व्यवसाय के काम में लगी हुई है। अपीलार्थी कंपनी कोयला के निष्कर्षण के बाद खानों को भरने के लिए निकट के क्षेत्रों से बालू उठाती है बालू उठाने के लिए, जब और जैसे इसकी आवश्यकता होती है, सक्षम प्राधिकारी से समय-समय पर उस प्रयोजन से आवश्यक अनुमति ली जाती है। अपीलार्थी समय-समय पर रॉयल्टी का तदर्थ/अग्रिम भुगतान करता है और उक्त राशि से बालू जिसे अपीलार्थी कंपनी द्वारा हटाया गया है के लिए रॉयल्टी खान विभाग द्वारा समायोजित की जाती है। अपीलार्थी कंपनी ने दिनांक 7.10.1998 के पत्र के तहत दिनांक 25.9.1998 के डिमान्ड ड्राफ्ट सं॰ 820683 के तहत 2,00,000/- रुपयों की राशि जमा किया था और इसने दिनांक 30.9.1998 की अवधि के परे बालू उठाने के लिए अनुमति के विस्तारण के लिए आवेदन भी दिया था। तत्पश्चात, अपीलार्थी ने अनुमति के प्रदान की प्रत्याशा में ट्रायल एन्ड रन के आधार पर रेजिडेंट मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में 1875.58 क्यूबिक मीटर बालू हटाया और बालू उठाने के बाद अपीलार्थी ने इस संबंध में दिनांक 26.2.1999 के पत्र के तहत प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण को सम्यक रूप से सूचित किया। किंतु, 25,35,999/- रुपयों की राशि का दावा करते हुए प्रमाण पत्र की तलब पर प्रमाण पत्र केस सं॰ 06B/01-02 अपीलार्थी के विरुद्ध आरंभ किया गया था और दिनांक 26.12.2012 के आदेश के तहत 50,719.87 एम॰ टी॰ बालू के अवैध निष्काषण के लिए ब्याज के साथ 25,35,999/- रुपयों का दावा न्यायोचित अभिनिर्धारित किया गया था और अपीलार्थी को 60,61,038/- रुपयों का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। व्यथित होकर, अपीलार्थी रिट न्यायालय के पास आया और जैसा ऊपर गौर किया गया है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 20.11.2013 के आदेश के तहत अपीलार्थी द्वारा निकाले गए बालू की भावी कीमत की ओर समायोजित किया जाना था।

3. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया जाना था।

4. अपीलार्थी सी॰ सी॰ एल॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ दास ने निवेदन किया है कि प्रमाण पत्र कार्यवाही में अपीलार्थी उपस्थित हुआ और प्रमाण पत्र अधिकारी को सूचित किया कि तलब के काफी पहले अपीलार्थी ने 50,917.87 एम॰ टी॰ बालू के लिए रॉयल्टी पहले ही जमा कर दिया था और इसलिए, बालू की कीमत एवं ब्याज के रूप में दंड का दावा पोषणीय नहीं था। तद्नुसार, प्रमाण पत्र अधिकारी ने दिनांक 7.5.2007 के आदेश के तहत अधिग्रहण अधिकारी को अपीलार्थी सी॰ सी॰ एल॰

द्वारा उठाए गए बालू के संबंध में अभिलेख सत्यापित करने और साक्ष्य प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। किंतु, अधिग्रहण अधिकारी कोई अभिलेख प्रस्तुत करने में विफल रहा और वास्तविक तथ्यों को अभिनिश्चित किए बिना प्रमाण पत्र अधिकारी ने 60,61,038/- रुपयों की राशि का भुगतान आदेशित किया। यह निवेदन किया गया है कि चूँकि दिनांक 26.12.2012 का आदेश अपीलार्थी को सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित किया गया था, विद्वान एकल न्यायाधीश से दिनांक 26.12.2012 के आदेश को अभिखंडित करने का अनुरोध किया गया था किंतु, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी को राजकीय कोष में 25,00,000/- रुपयों की राशि जमा करने का निर्देश देने में विधि में गलती किया। इस प्रकार, प्रतिवाद यह है कि इस चरण पर जब अपीलार्थी कंपनी के प्रतिवाद को अभी तक सत्यापित किया जाना है और प्रत्यर्थी का दावा अभी तक सही नहीं पाया गया है, पक्षों के परस्पर विरोधी दावों को न्यायनिर्णीत किए बिना विद्वान एकल न्यायाधीश अपीलार्थी को 25,00,000/- रुपयों की राशि जमा करने का आदेश नहीं दे सकते थे।

5. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री शादाब बिन हक ने निवेदन किया कि बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के अधीन अपील के सांविधिक प्रावधान की दृष्टि में रिट याचिका भी पोषणीय नहीं थी। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह कथन करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को न्यायोचित ठहराया कि अपीलार्थी को प्रमाणपत्र अधिकारी के समक्ष अपना मामला स्थापित करने का अवसर दिया गया है किंतु, यह ऐसे आधार पर, जो विधि में संपोषणीय नहीं है, लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल करके भुगतान करने से बच रहा है। आगे यह कथन किया गया है कि प्रमाणपत्र कार्यवाही के अतिरिक्त अपीलार्थी कंपनी बालू की चोरी के लिए अभियोजित किए जाने की दायी है। यह कथन किया गया है कि मेसर्स सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰ की जारंगडीह कोलियरी खान के सुरक्षात्मक उपायों के लिए बालू भराई के प्रयोजन से बालू का उपयोग करती है और उसके लिए बालू उठाने के लिए अस्थायी अनुमति समय-समय पर जिला खनन कार्यालय, बोकारो द्वारा जारंगडीह कोलियरी के पक्ष में जारी किया जाता था। उन्होंने आगे निवेदन किया कि खनन राजस्व के निर्धारण के लिए जिला खनन कार्यालय, बोकारो द्वारा जारी भराई के लिए बालू उठाने के लिए अस्थायी परमिट के संबंध में अक्टूबर, 1999 में सुलह भी किया गया था। सुलह और संबंधित दस्तावेजों के भौतिक सत्यापन के क्रम में यह पाया गया था कि मई, 1997 में 25355.09 क्यूबिक मीटर बालू और जुलाई 1998 में 4469.25 क्यूबिक मीटर बालू भेजा गया था, किंतु अपीलार्थी द्वारा जिला खनन कार्यालय, बोकारो को प्रस्तुत किए गए मासिक रिटर्न में दर्शाया नहीं गया था। यह भी पाया गया था कि अपीलार्थी कंपनी ने अक्टूबर, 1998 से दिसंबर, 1998 के दौरान 1875.58 क्यूबिक मीटर बालू अवैध रूप से उठाया था क्योंकि जारंगडीह कोलियरी को अक्टूबर, 1998 से दिसंबर, 1998 तक की अवधि के दौरान बालू उठाने की अनुमति नहीं थी। उन्होंने यह निवेदन भी किया कि बालू की ये समस्त मात्राएँ (25355.09 M^3 + 4469.25M^3 + 1875.58M^3 = 31699.92 M^3 अर्थात् 50,719.87 मेट्रिक टन के समतुल्य) खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957 की धारा 21 (5) के अधीन खनिज की कीमत की दर पर प्रभारित किए जाने की दायी है। अत: दिनांक 30.11.1999 के कार्यालय पत्र सं॰ 1541 के तहत अवैध रूप से उठाए गए और भेजे गए 50719.87 मेट्रिक टन बालू के लिए 50/- रु॰ प्रति मेट्रिक टन की दर पर खनिज की कीमत 25,35,998/- रुपया मांगा गया था और तत्पश्चात उक्त राशि की वसूली के लिए जिला खनन कार्यालय, बोकारो से अनेक स्मरण पत्र जारी किए गए थे। जब कोलियरी द्वारा देय राशि का भुगतान नहीं किया गया था, लोक मांग की वसूली के लिए बिहार और उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के प्रावधान के मुताबिक परियोजना अधिकारी, जारंगडीह कोलियरी के विरुद्ध प्रमाण पत्र केस सं॰ 6B/2001-02 दाखिल किया गया।

6. हमने अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया है जो उपदर्शित करता है कि दिनांक 26.9.2001 को प्रमाण पत्र केस सं॰ 06B/01-02 आरंभ किया गया था। तत्पश्चात, ग्यारह वर्षों से

अधिक के लिए कार्यवाही जारी रही जिसके दौरान अपीलार्थी सी॰ सी॰ एल॰ के पास अपना दावा कि इसके द्वारा बालू का अवैध निष्कासन नहीं किया गया था, सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर सामग्री प्रस्तुत करने का पर्याप्त अवसर था। अपीलार्थी सी॰ सी॰ एल॰ का दावा यह है कि बालू उठाने के लिए अपीलार्थी द्वारा समय-समय पर अनुमति प्राप्त की गयी थी और प्रश्नगत अवधि अर्थात् अक्टूबर एवं दिसंबर, 1998 के बीच की अवधि के लिए भी दिनांक 26.2.1999 के आदेश के तहत विस्तारण प्रदान किया गया था। प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दिनांक 3.2.1999 के पत्र के तहत मेसर्स सी॰ सी॰ एल॰ के जारंगडीह कोलियरी, बी॰ टी॰ पी॰ एस॰, बोकारो के परियोजना अधिकारी को झूठी सूचना देने के लिए कारण बताओ जारी किया गया था और केवल तत्पश्चात अपीलार्थी कंपनी के विरुद्ध प्रमाण पत्र मामला आरंभ किया गया था। दिनांक 3.2.1999 के नोटिस से यह प्रतीत होता है कि दिनांक 27.6.1998 के पत्र सं॰ 809 द्वारा जिला खनन कार्यालय, बोकारो ने बालू उठाने के लिए अस्थायी अनुमति की अवधि को दिनांक 30.9.1998 तक बढ़ा दिया था। अनुमति दिनांक 1.1.1999 से दिनांक 31.5.1999 तक के लिए आगे बढ़ायी गयी थी। यह प्रतीत होता है कि अक्टूबर, 1998 से दिसंबर, 1998 की अवधि के बीच बालू उठाने के लिए अनुमति नहीं थी, किंतु अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत मासिक विवरणों से जिला खनन कार्यालय, बोकारो ने पाया कि अपीलार्थी ने उक्त अवधि के दौरान भी बालू उठाया है। यह भी अभिलेख पर है कि प्रमाण पत्र कार्यवाही 06B/01-02 दिनांक 26.9.2001 को आरंभ की गयी थी और यह वर्ष 2012 तक चली। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी भुगतान विलंबित करने का प्रयास कर रहा है। प्रत्यर्थीगण ने बालू की अवैध उठाई का विनिर्दिष्ट विवरण दिया है और इसने प्रश्नगत अवधि के लिए बालू की कुल मात्रा 50719.87 एम॰ टी॰ संगणित किया है। अपीलार्थी को खान एवं खनिज विनियमन अधिनियम, 1957 की धारा 21 (5) के निबंधनानुसार दायी बनाया गया है और उसे 50/- रुपया प्रति मेट्रिक टन की दर पर खनिज की कीमत का भुगतान करने की आवश्यकता है। दिनांक 30.9.1998 के पत्र के तहत प्रत्यर्थीगण द्वारा अवैध रूप से उठाए गए और भेजे गए बालू की 50,719.87 एम॰ टी॰ मात्रा के लिए 25,35,998/- रुपयों की राशि मांगी गयी थी और तत्पश्चात जिला खनन कार्यालय, बोकारो से अनेक स्मरण पत्र भी जारी किया गया था। किंतु, अपीलार्थी द्वारा देय राशि का भुगतान नहीं किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 26.12.2012 के आदेश में इस शर्त पर हस्तक्षेप किया है कि अपीलार्थी राजकोष में 25,00,000/- रुपया जमा करेगा। ऐसी राशि का भुगतान भावी समायोजन के अध्यधीन किया गया है, यदि प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा अपीलार्थी का अभिवचन स्वीकार किया जाता है और प्रमाण पत्र कार्यवाही समाप्त कर दी जाती है।

7. अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार स्वविवेकी उपचार है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने बिहार और उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 के अधीन अपील के सांविधिक उपचार की उपलब्धता के बावजूद अधिकारिता का प्रयोग किया है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग स्वविवेकी प्रकृति का होने के नाते उच्च न्यायालय नए निर्णय के लिए सांविधिक प्राधिकारी के पास मामला वापस भेजते हुए शर्तों को नि:संदेह विहित कर सकता है। अपीलार्थी सी॰ सी॰ एल॰ द्वारा कथन किया गया है कि यह खान विभाग को तदर्थ/एकमुश्त भुगतान किया करता था और ऐसे किए गए भुगतान से बालू उठाने के लिए रॉयल्टी की राशि राज्य प्राधिकार द्वारा समायोजित की जाती है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह आदेश भी दिया है कि 25,00,000/- रुपयों की राशि भावी भुगतान के मद में समायोजित की जाएगी।

8. हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में गलती नहीं पाते हैं और तद्नुसार इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को खारिज किया जाता है।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

नंद लाल शर्मा

cuke

राज कुमार शर्मा एवं अन्य

Civil Revision No. 29 of 2013. Decided on 24th April, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 47—सिविल न्यायालय नियमावली का नियम 459—डिक्री के निष्पादन के प्रति आपत्ति–यदि डिक्री के निष्पादन के विरुद्ध आपत्ति के लिए ठोस तार्किक कारणों से गठित याचिका सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल की जाती है जिसे इसकी प्रस्तुति के चरण पर ही निपटाया नहीं जा सकता है, तब विविध मामले का दर्जकरण आवश्यक है–चूँकि आपत्ति याचिका में सार नहीं था, आगे अग्रसर होने की आवश्यकता नहीं थी–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.–AIR 1990 P & H 91; AIR 2000 Patna 240—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Ayush Aditya, For the Petitioner; Mr. A.K. Sahani, For the Opp. Parties.

आदेश

यह सिविल पुनरीक्षण निष्पादन केस सं॰ 5 वर्ष 2013 में विद्वान उप न्यायाधीश I, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 6.9.2013 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा विद्वान उप न्यायाधीश–I ने याची द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के अधीन दाखिल याचिका अस्वीकार कर दिया है।

2. यह निवेदन किया गया है कि याची ने उप न्यायाधीश I, गिरिडीह के न्यायालय के समक्ष सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन याचिका दाखिल किया था और विद्वान न्यायालय ने विविध मामला दर्ज करने के बजाए, जैसा सिविल न्यायालय नियमावली के नियम 459 के अधीन आवश्यक है, स्वयं याचिका पर पृष्ठांकन करके संक्षिप्त रूप से याचिका अस्वीकार कर दिया। याचिका इस प्रकार किया गया पृष्ठांकन दिनांक 6.9.20132 के ऑर्डरशीट में था। स्वयं याचिका पर न्यायालय द्वारा किया गया पृष्ठांकन उपदर्शित करता है कि न्यायालय ने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल नहीं किया है और न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना जल्दबाजी में आक्षेपित आदेश पारित किया। याची को साक्ष्य एवं दस्तावेज देने का अवसर नहीं दिया गया था। निष्पादन न्यायालय के समक्ष प्रतिवाद किया गया था कि निर्णीत ऋणी सं॰ 2 संतोष कुमार शर्मा का हिस्सा उपदर्शित नहीं किया गया है। उसे निष्पादन कार्यवाही का पक्ष नहीं बनाया गया है और निर्णीत ऋणी सं॰ 2 का हिस्सा उपदर्शित किए बिना डिक्री निष्पादित किया जाना संभव नहीं था और इसलिए याची ने सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन आपत्ति किया है। विद्वान अधिवक्ता ने **मंगल दास (मृतक विधिक प्रतिनिधियों द्वारा) बनाम एस॰ एस॰ संधु एवं अन्य, AIR 1990 Punjab & Haryana 91,** मामले में निर्णय पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि यदि सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन याचिका दाखिल की जाती है, इसे विविध मामले के रूप में दर्ज करना न्यायालय का बाध्यकारी कर्त्तव्य है और की गयी आपत्ति के समर्थन में साक्ष्य देने के लिए अवसर दिया जाना चाहिए। सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन याचिका को संक्षिप्त रूप से अस्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने आगे **गोपाल प्रसाद बनाम बंशीधर सिंह एवं अन्य, AIR 2000 Patna 240,** मामले में निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 22 के अधीन याचिका दाखिल की गयी थी और इस पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था और इसलिए माननीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि निष्पादन कार्यवाही में प्रत्येक आपत्ति, यदि इसे दाखिल किया जाता है, को

विविध मामला दर्ज किए जाने के बाद और पक्षों को साक्ष्य देने का अवसर दिए जाने के बाद विनिश्चित किया जाना है। पृथक वाद दर्ज करने की आवश्यकता नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि तर्कपूर्ण कारण दिए बिना विद्वान उप–न्यायाधीश द्वारा सी० पी० सी० की धारा 47 के अधीन दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी है और इसलिए, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने का दायी है। अंत में यह निवेदन किया गया है कि समय सीमा देने के बाद विविध मामला दर्ज करने के निर्देश के साथ मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा जा सकता है और पक्षों को अवसर देने के बाद समुचित आदेश पारित किया जा सकता है।

3. दूसरी ओर, विरोधी पक्षकार सं० 1 से 3 (वादीगण) के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि निर्णीत ऋणी सं० 1 निष्पादन प्रक्रिया में विलंब करने के आशय से एक के बाद दूसरी याचिका दाखिल करने का आदी है और इसे आक्षेपित आदेश में स्पष्टत: परिलक्षित किया गया है। दिनांक 27.5.2013 को आदेश XXI नियम 29 के अधीन याचिका दाखिल की गयी थी और इसे पक्षों को अवसर देने के बाद दिनांक 30.5.2013 को अस्वीकार कर दिया गया था किंतु याची ने किसी उच्चतर न्यायालय के समक्ष उक्त आदेश को चुनौती देना नहीं चुना है। उसने पुन: उसी तिथि पर अर्थात् दिनांक 30.5.2013 को कारण बताओ दाखिल किया है और इसे भी अस्वीकार कर दिया गया था। तत्पश्चात, दिनांक 6.9.2013 को सी० पी० सी० की धारा 47 के अधीन याचिका दाखिल की गयी थी जो चुनौती के अधीन है।

4. आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि विरोधी पक्षकार सं० 1 से 3 (वादीगण) द्वारा बँटवारा वाद सं० 46 वर्ष 2004 दाखिल किया गया था और उक्त वाद में याची को प्रतिवादी सं० 1 बनाया गया था। दिनांक 28.11.2005 को वाद डिक्री किया गया था और दिनांक 13.12.2005 को आरंभिक डिक्री मुहरबंद और हस्ताक्षरित की गयी थी। पक्षों के बीच वाद माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक गया और अंतत: दिनांक 19.12.2012 को बँटवारा की अंतिम डिक्री मुहरबंद और हस्ताक्षरित की गयी थी। निष्पादन के लिए विरोधी पक्षकार सं० 1 से 3 द्वारा दाखिल याचिका अत्यन्त स्पष्ट है और कॉलम (i) में उल्लेख किया गया है कि डिक्री धारक प्रतिवादी सं० 2 पुत्र स्व० जगदीश शर्मा के विरुद्ध डिक्री निष्पादित करना नहीं चाहते हैं और संपत्ति अनुसूची, जिसके लिए निष्पादन इप्सित किया गया है, भी स्पष्ट रूप से उल्लिखित की गयी है। याची ने उपदर्शित नहीं किया है कि किस प्रकार उस पर प्रतिकूल प्रभाव कारित होगा यदि डिक्री निष्पादित की जाती है बल्कि उसने प्रतिवाद किया है कि निर्णीत ऋणी सं० 2 को पक्ष नहीं बनाया गया है और निष्पादन के लिए दाखिल याचिका में उसका हिस्सा उपदर्शित नहीं किया गया है। विद्वान उप न्यायाधीश ने आदेश में स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया है और अभिलेख पर मौजूद सामग्री से भी यह प्रकट है कि निर्णीत ऋणी सं० 2 संतोष कुमार शर्मा ने डिक्री के निष्पादन के विरुद्ध आपत्ति नहीं किया है। अंत में, यह निवेदन किया गया है कि दाखिल याचिका अस्वीकार किए जाने की दायी है।

5. सिविल न्यायालय नियमावली को अधीनस्थ न्यायालयों के समुचित प्रशासन और सुगम क्रियाकलाप के लिए सृजित किया गया है और विचारण तथा कार्यवाही की सुविधाजनक प्रगति के लिए नियम विरचित किए गए हैं। नियमावली विभिन्न शीर्षों के अधीन कार्यवाही पृथक एवं वर्गीकृत करना उपदर्शित करती है। उस संदर्भ में, सिविल न्यायालय नियमावली का नियम 459 उपदर्शित करता है कि अभिलेख के रख रखाव के प्रयोजन से किस प्रकार की याचिकाओं को सिविल विविध मामलों के रूप में दर्ज किया जाना है। वर्तमान मामले में, निर्णीत ऋणी सं० 1 द्वारा यह शिकायत करते हुए याचिका दाखिल की गयी थी कि यदि डिक्री निष्पादित की जाती है, यह निर्णीत ऋणी सं० 2 पर प्रतिकूलता कारित कर सकता है किंतु निर्णीत ऋणी सं० 2 संतोष कुमार ने कोई शिकायत नहीं किया है। याची द्वारा कोई अन्य बिंदु उपदर्शित नहीं किया गया है जो उस पर प्रतिकूलता कारित कर सकता है यदि डिक्री निष्पादित की जाती है और इसलिए, विद्वान न्यायाधीश ने सही प्रकार से आरंभिक चरण पर ही, जब न्यायालय के समक्ष याचिका प्रस्तुत की गयी थी, न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किया है। चूँकि आपत्ति याचिका में सार नहीं है, आगे अग्रसर होने की आवश्यकता नहीं थी और विविध मामला दर्ज करने की आवश्यकता नहीं थी

जो विवाद्यक विनिश्चित करने में और भी समय लेगा। मुझे यह अभिनिर्धारित करने में संकोच नहीं है कि यदि न्यायालय सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल याचिका में प्रथम दृष्टया सार नहीं पाता है, संबंधित पक्षों को सुनवाई का अवसर देने के बाद भी न्यायालय स्वयं निष्पादन कार्यवाही में ही विविध मामला दर्ज किए बिना इसे निपटा सकता है। किंतु, यह स्पष्ट किया जाता है कि केवल अत्यन्त विनिर्दिष्ट परिस्थिति में और स्थिति विशेष में ही यह प्रथा अपनायी जा सकती है जिसके लिए तर्कपूर्ण कारण देना होगा और इसे नियम के रूप में अपनाया नहीं जा सकता है। यदि डिक्री के निष्पादन के विरुद्ध आपत्ति के लिए तर्कपूर्ण कारण से गठित याचिका सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल की जाती है, जिसे इसकी प्रस्तुति के चरण पर ही निपटाया नहीं जा सकता है, तब विविध मामला का दर्जकरण आवश्यक है जैसा सिविल न्यायालय नियमावली में उपदर्शित किया गया है और पक्षों को साक्ष्य और दस्तावेज देने का अवसर दिया जाना चाहिए और इस प्रकार की गयी आपत्ति को विधि के अनुरुप विनिश्चित किया जाना है।

6. मैं विद्वान उप न्यायाधीश के समक्ष सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 47 के अधीन दाखिल याचिका में कोई सार नहीं पाता हूँ और विद्वान उप न्यायाधीश ने इसे अस्वीकार करने का कारण दिया है। मैं पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

अजित सिंह नामधारी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 950 of 2007. Decided on 22nd March, 2014.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881—धारा 138 सह-पठित भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973— धारा 482—चेक का अनादर–छल–याची ने चेक पर हस्ताक्षर नहीं किया है–याची ने इस अनुबद्धता के साथ कि ऐसी खरीद पर 30,000/- रुपयों का चेक दिया जाएगा जो छह वर्षों बाद भुगतेय होगा, ग्राहकों को टी॰ वी॰ खरीदने के लिए कहते हुए कोई विज्ञापन कभी नहीं जारी किया था–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 420 के अधीन याची के विरुद्ध मामला नहीं बनता है–याची चेक का लेखीवाल नहीं है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–Prem Chand Tripathi, For the Petitioner; APP., For the State.

आदेश

कार्यालय नोट की दृष्टि में, नोटिस को वैध रूप से वि॰ प॰ सं॰ 2 पर तामील किया गया स्वीकार किया गया है, क्योंकि आदेशिका तामीलकर्ता द्वारा रिपोर्ट किया गया है कि वि॰ प॰ सं॰ 2 ने नोटिस स्वीकार करने से इनकार कर दिया है।

2. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता सुने गए।

3. यह आवेदन दिनांक 24.2.2005 के आदेश सहित परिवाद मामला सं॰ 611 वर्ष 2004 की संपूर्ण कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा और जिसके अधीन दंडाधिकारी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन और एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन भी दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया।

4. परिवादी का मामला, जैसा परिवाद में बनाया गया है यह है कि बैरन इंटरनेशनल लिमिटेड, नयी दिल्ली के स्वत्वधारी और निदेशक द्वारा इस अनुबद्धता के साथ कि जो कोई भी अकाई टी॰ वी॰ खरीदेगा, उसे 30,000/- रुपयों का पोस्ट डेटेड चेक दिया जाएगा जो छह वर्ष बाद भुगतेय होगा, समाचार पत्र में विज्ञापन जारी किया गया था। ऐसे बयान से प्रेरित होकर परिवादी ने इस याची, जो बैरन इंटरनेशनल लिमिटेड जिसने समाचार पत्र में विज्ञापन जारी किया था का डीलर है, की दुकान से अकाई टी॰ वी॰ खरीदा। टी॰ वी॰ खरीदने के बाद बैरन इंटरनेशनल लिमिटेड के स्वत्वधारी एवं निदेशक द्वारा हस्ताक्षरित चेक इस याची द्वारा परिवादी को दिया गया था। देय तिथि पर इसे बैंक के समक्ष प्रस्तुत किए जाने पर खाता बंद हो जाने के कारण इसका अनादर किया गया था। उस स्थिति में, परिवाद मामला दर्ज किया गया था जिसे परिवाद मामला सं॰ 611 वर्ष 2004 के रूप में दर्ज किया गया था जिसमें दिनांक 24.2.2005 के आदेश के तहत पूर्वोक्तानुसार अपराध का संज्ञान लिया गया था जिसे इस मामले में चुनौती दी गयी है।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री प्रेमचंद त्रिपाठी निवेदन करते हैं कि याची ने समाचार पत्र में ऐसा विज्ञापन कभी नहीं जारी किया था बल्कि कंपनी ने ऐसा विज्ञापन जारी किया था। परिवादी ने इस याची की दुकान से टी॰ वी॰ खरीदा था क्योंकि याची बैरन इंटरनेशनल लिमिटेड के रूप में ज्ञात फर्म का डीलर था। उक्त बैरन इंटरनेशनल लिमिटेड के स्वत्वधारी द्वारा हस्ताक्षरित चेक परिवादी को सौंपा गया था जिसका अनादर किया गया, किंतु परिवादी ने न केवल बैरन इंटरनेशनल के स्वत्वधारी के विरुद्ध मामला दर्ज किया बल्कि याची के विरुद्ध भी मामला दर्ज किया जिसे परिवादी के साथ कपट करता हुआ कभी नहीं कहा जा सकता है और न ही एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध करता हुआ कहा जा सकता है क्योंकि याची ने चेक पर हस्ताक्षर नहीं किया था जिसका अनादर किया गया था और तद्द्वारा न्यायालय ने याची के विरुद्ध पूर्वोक्तानुसार अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया है।

6. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि याची ने इस अनुबद्धता के साथ कि ऐसी खरीद पर 30,000/- रुपयों का चेक दिया जाएगा जो छह वर्ष बाद भुगतेय होगा, ग्राहकों को टी॰ पी॰ खरीदने के लिए कहते हुए विज्ञापन जारी नहीं किया था। वह विज्ञापन बैरन इंटरनेशनल के स्वत्वधारी द्वारा जारी किया गया था और चेक पर भी स्वत्वधारी द्वारा हस्ताक्षर किया गया था। उस स्थिति में, याची को परिवादी के साथ कपट करता हुआ कभी नहीं कहा जा सकता है और तद्द्वारा याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन मामला नहीं बनता है।

7. आगे कथन किया जाए कि याची चेक का लेखीवाल नहीं है बल्कि बैरन इंटरनेशनल लिमिटेड का स्वत्वधारी चेक का लेखीवाल है। उस स्थिति में याची एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अभियोजित किए जाने का दायी नहीं होगा। एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधान का पठन निम्नलिखित है:–

> *138.* ***y[kk e tek jkf'k vi;kIr gku vkfn d dkj.k pdk dk vuknr gk tkuk-****&tgk fdlh 0;fDr }kjk fdlh cd e lekfjr viu [kkrk e l viu fdlh _.k vFkok vU; nkf;Ro l Hkkxr% ;k i.kr% mUekfpr gku d fy, dkb pd fn;k tkrk g vkj og pd [kkr e vi;kIr jkf'k gku d dkj.k vFkok igy l gh ml [kkr e l fdUgh vU; 0;fDr;k dk lnk; dju dk djkj dj fn;*

tku d dkj.k cd }kjk fcuk Hkxrku fd; iuk ykVk fn;k tkrk g] ogk ;g le>k tk;xk fd ml 0;fDr u vijkèk dkfjr fd;k g vkj ml bl vfèkfu;e d vU; micèkk ij çfrdy çHkko Mky fcuk] mruh vofèk d dkjkokl l tk fd nk o"k rd dh gk ldxh vFkok mruh jkf'k d teku l tk pd dh jkf'k l nxuh rd gk ldxh vFkok nkuk l nf.Mr fd;k tk ldxk(

ijUr bl èkkjk dh dkbi ckr rc rd ykx ugh gkxh(tc rd fd&

(a) og pd tkjh gku dh frfFk l N% ekl d vUnj vFkok ml d fofèkekU; jgu dh vofèk d vUnj] tk Hkh io gk] cd e i'k ugh dj fn;k tkrk]

(b) pd d vèkhu jkf'k iku okyk vFkok lkekU; vuØe e pd dk èkkjd] ;FkkfLFkfr] cd l cd d vuknr gkdj ykVu dh frfFk l rhl fnu d vUnj pd d y[khoky dk 'kkè; jkf'k dk lnk; dju d vk'k; dh lpuk ugh nrk] vkj

*(c) y[khoky ml lpuk dh ikfIr d iUng fnu d vUnj ml 0;fDr dk tk pd d vèkhu jkf'k ikIr dju okyk gk vFkok tk lkekU; vuØe e pd dk èkkjd gk] ml jkf'k dk lnk; dju e vlQy ugh jgrkA**

8. प्रावधान के परिशीलन से प्रतीत होता है कि यदि कोई व्यक्ति किसी कर्ज या अन्य दायित्व के उन्मोचन के लिए किसी राशि के भुगतान के लिए अपने द्वारा चलाये जा रहे खाता पर किसी अन्य व्यक्ति को चेक लिखता है जिसे चेक के लेखीवाल को भुगतान किए बिना बैंक द्वारा लौटा दिया जाता है, वह एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अभियोजन के लिए दायी होगा। स्वीकृत रूप से याची चेक का लेखीवाल है। उस स्थिति में, एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अभियोजन दोषपूर्ण है।

9. इन परिस्थितियों के अधीन, दिनांक 24.2.2005 के संज्ञान लेने वाले वाले आदेश सहित संपूर्ण परिवाद मामला सं॰ 611 वर्ष 2004 एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है जहाँ तक याची अजित सिंह नामधारी का संबंध है।

10. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

राजा हंसदा एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. (Jail) Appeal (DB) No. 848 of 2003. Decided on 13th March, 2014.

(क) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 304/34— हत्या की कोटि में नहीं आनेवाला आपराधिक मानव वध–चश्मदीद गवाहों पर अविश्वास करने का कारण नहीं है–चश्मदीद गवाह विश्वास योग्य एवं विश्वसनीय हैं–भले ही चिकित्सीय साक्ष्य और चाक्षुक साक्ष्य में तनिक अंतर है, चाक्षुक साक्ष्य को समस्त अधिमान दिया जाना चाहिए यदि चाक्षुक साक्ष्य विश्वास योग्य चश्मदीद गवाह द्वारा दिया गया है–चिकित्सीय साक्ष्य चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य को संपुष्ट

करता है–दोनों अपीलार्थीगण ने मृतक की हत्या कारित करने में सामान्य आशय शेयर किया था–अपील खारिज। (पैराएँ 5 एवं 6)

(ख) दाण्डिक विधि–साक्ष्य का मूल्यांकन–ग्रामीण चश्मदीद गवाह से गणितीय सटीकता तथा सांख्यिकीय शुद्धता की अपेक्षा नहीं की जाती है विशेषकर जब वे 24 माह के बाद न्यायालय में अभिसाक्ष्य दे रहे हों–जब भी चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य से विश्वासोत्पादक सत्य सामने आ रहा हो तथा अगर इसमें आंशिक विसंगति भी हो, इसे अभियुक्त को दोषमुक्त करने के लिए इस्तेमाल में लाया जाएगा। (पैरा 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Rahul Saboo, For the Appellant; Mr. Pankaj Kumar, For the State.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–वर्तमान दांडिक अपील सत्र मामला सं॰ 30/2001 में चतुर्थ अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है। विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 25 अक्टूबर, 2002 के आदेश के तहत भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 304/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए इन अपीलार्थीगण को दंडित किया है।

2. अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 2.6.2000 को रात्रि 9.15 बजे सूचक बिट्टी हेम्ब्रम (अ॰ सा॰ 9) ने रामगढ़ अस्पताल में पुलिस को फर्दबयान दिया कि दिनांक 2.6.2000 को सायं 4.30 बजे सूचक, उसका पति गिरीश हंसदा (मृतक) और उसका पुत्र इंद्र हंसदा (अ॰ सा॰ 8) अपने घर में थे। उस समय पर सूचक का देवर अर्थात् राजा हंसदा (अभियुक्त सं॰ 1) और नंदन हंसदा (अभियुक्त सं॰ 2) वहाँ आए और अपनी पुत्री के विवाह की बात के संबंध में बात करने के लिए गिरीश हंसदा को राजा हंसदा के घर ले गए और गिरीश हंसदा अभियुक्त राजा हंसदा के घर चला गया। उन्होंने गिरीश हंसदा की भतीजी के विवाह के बारे में बात किया और पैतृक भूमि के बँटवारा के बारे में भी बात किया और तब भूमि के बँटवारा के लिए वे सूचक के पति के साथ झगड़ा करने लगे। तत्पश्चात, सायं 5 बजे सूचक ने देखा कि नंदन हंसदा ने राजा हंसदा के दरवाजा पर उसके पति को पकड़ लिया था और राजा हंसदा ने गिरीश हंसदा पर तेज धार वाले फसुली से दो वार किया और घायल होने के बाद गिरीश हंसदा अपनी जान बचाने के लिए वहाँ से भागा किंतु दोनों अभियुक्तगण ने उसका पीछा किया और उसकी छाती तथा मस्तक पर फसुली का 2-3 वार किया और उसे घायल कर दिया। तब सूचक ने हल्ला किया और उसका पुत्र इंद्रेय हंसदा अपने पिता को बचाने दौड़ा। अभियुक्त राजा हंसदा ने गिरीश हंसदा के जमीन पर गिरने के बाद भी फसुली से और अधिक वार किया और तब अभियुक्तगण वहाँ से भाग गए। तब सूचक का पुत्र इंद्रेय हंसदा अपने पिता गिरीश हंसदा को घर लाया और गाँववालों की मदद से उसे इलाज के लिए रामगढ़ अस्पताल ले गया किंतु डॉक्टर ने उसे मृत घोषित कर दिया। सूचक ने आगे अभिकथित किया कि घटना केवल पैतृक भूमि के बँटवारा पर मतभेद के कारण हुई थी।

अभियोजन द्वारा दस गवाहों का परीक्षण किया गया था।

अ॰ सा॰ 1	रामेश्वर हेम्ब्रम	वह घटना का चश्मदीद गवाह है और उसने प्रदर्श 1 के रूप में चिन्हित फर्दबयान पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है और प्रदर्श 1/1 के रूप में चिन्हित अभिग्रहण सूची पर भी अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है।
अ॰ सा॰ 2	सोनालाल हंसदा	वह घटना का चश्मदीद गवाह है।

अ॰ सा॰ 3	सनत किस्कू	वह घटना का चश्मदीद गवाह है और उसने प्रदर्श 2 और 2/1 के रूप में चिन्हित मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर अपना हस्ताक्षर और सुकलाल किस्कू का हस्ताक्षर सिद्ध किया है। उसने प्रदर्श 1/2 के रूप में चिन्हित अभिग्रहण सूची पर भी अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है।
अ॰ सा॰ 4	सुकलाल किस्कू	वह घटना का चश्मदीद गवाह है।
अ॰ सा॰ 5	धनेश्वर हेम्ब्रम	वह मृतक गिरीश हंसदा का दामाद है और घटना का चश्मदीद गवाह है।
अ॰ सा॰ 6	बाबूराम बेसरा	पक्षद्रोही गवाह घोषित किया गया है।
अ॰ सा॰ 7	डॉ॰ नसीमुल हक	वह डॉक्टर है जिन्होंने गिरीश हंसदा के मृत शरीर का शव परीक्षण किया है और प्रदर्श 3 के रूप में चिन्हित शव परीक्षण रिपोर्ट सिद्ध किया है।
अ॰ सा॰ 8	इंद्रेय हंसदा	मृतक गिरीश हंसदा का पुत्र है और घटना का चश्मदीद गवाह है।
अ॰ सा॰ 9	बिट्टी हंसदा	मृतक गिरीश हंसदा की पत्नी है और घटना की चश्मदीद गवाह है।
अ॰ सा॰ 10	श्यामलाल टूडू	इस मामले का अन्वेषण अधिकारी है। उसने प्रदर्श 4 के रूप में चिन्हित फर्दबयान सिद्ध किया है और उसे प्रदर्श 4/1 के रूप में चिन्हित ओ॰/सी॰ रामगढ़ पुलिस थाना के पृष्ठांकन को फर्दबयान में सिद्ध किया है। उसने प्रदर्श 5 के रूप में चिन्हित औपचारिक प्राथमिकी को सिद्ध किया है और प्रदर्श 6 के रूप में चिन्हित मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट की कार्बन कॉपी को भी सिद्ध किया है। उसने प्रदर्श 7 के रूप में चिन्हित अभिग्रहण सूची को सिद्ध किया है और अभिग्रहण सूची में प्रदर्श 1/3 के रूप में चिन्हित राजा हंसदा (अभियुक्त) के हस्ताक्षर को भी सिद्ध किया है।

3. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने समुचित रूप से तथ्य का अधिमूल्यन नहीं किया है और अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्य में मुख्य विरोधाभास, लोप एवं सुधार हैं और इसलिए विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष उनके मुख्य परीक्षण एवं प्रति परीक्षण को देखते हुए प्रश्नगत घटना के तथाकथित चश्मदीद गवाह वस्तुतः चश्मदीद गवाह नहीं है और तथाकथित चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य में काफी अधिक अंतर है जो मुख्य लोप, विरोधाभास और सुधार के तुल्य है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा समुचित रूप से मामले के इस पहलू का अधिमूल्यन नहीं किया गया है। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि पीड़ित द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियों की संख्या के बारे में अभियोजन गवाहों में असंगतता है, उदाहरणस्वरुप, अ॰ सा॰ 1 अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा मृतक के मस्तक पर किए गए दो वारों

के बारे में कहता है कि जबकि अ॰ सा॰ 2 अपने अभिसाक्ष्य में पैराग्राफ 1 में कहता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा 5-6 वार किया गया है। इस प्रकार, विभिन्न गवाह संपूर्ण घटना का विभिन्न विवरण दे रहे हैं और परिणामस्वरुप चाक्षुक साक्ष्य एवं चिकित्सीय साक्ष्य के बीच मुख्य विरोधाभास है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 7 डॉक्टर ने कथन किया कि है कि उपहतियाँ भारी तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित की गयी है जबकि अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा प्रयुक्त अभिकथित हथियार भारी तेज धार वाला हथियार बिल्कुल नहीं है और न ही इस हथियार को विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा समुचित रूप से मामले के इस पहलू का अधिमूल्यन नहीं किया गया है। अत:, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन द्वारा अभिकथित हेतु भूमि विवाद है। ये दोनों अपीलार्थीगण पीड़ित के भाई हैं और संपत्ति हड़पने की दृष्टि से सूचक द्वारा इन अपीलार्थीगण को झूठा आलिप्त किया गया है और अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा वैकल्पिक रूप से निवेदन किया गया है कि यह मानते हुए कि अपीलार्थी सं॰ 1 जिसने उपहति कारित किया है के विरुद्ध संपूर्ण मामला सिद्ध होता है, तब भी अपीलार्थी सं॰ 2 जिसने मृतक पर कोई उपहति कारित नहीं किया है को लाभ दिया जा सकता है। आधा दर्जन गवाहों ने भी कथन किया है कि मृतक के शरीर पर अपीलार्थी सं॰ 2 द्वारा एक भी उपहति कारित नहीं की गयी है, अत:, अपीलार्थी सं॰ 2 को न्यायालय द्वारा तुरन्त निर्मुक्त किया जाना चाहिए। आगे यह निवेदन किया गया है कि जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 1 का संबंध है, वैकल्पिक रूप से अपीलार्थी सं॰ 1 को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग II के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया जा सकता है क्योंकि संपूर्ण घटना अचानक झगड़े के कारण और केवल संपत्ति विवाद के कारण हुई है। यह अपीलार्थी सं॰ 1 की ओर से हत्या की पूर्व नियोजित कार्रवाई नहीं है जो साढ़े तेरह साल से कारा में बना हुआ है और, इसलिए, यदि दोनों अपीलार्थीगण को दस वर्ष के कठोर कारावास से दंडित किया जाता है, तब यह भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग II के अधीन दंड अधिरोपित करने के प्रयोजन से पर्याप्त होगा। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा समुचित रूप से मामले के इस पहलू का अधिमूल्यन नहीं किया गया है और इस प्रकार विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है।

4. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा निवेदन किया गया है कि अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा गलती नहीं की गयी है। अभियोजन का मामला आधा दर्जन चश्मदीद गवाहों पर आधारित है। प्राथमिकी तुरन्त दर्ज की गयी है। अपीलार्थीगण के नाम प्राथमिकी में उल्लिखित किए गए हैं और अ॰ सा॰ 1, 2, 3, 4, 5, 8 और 9 घटना के चश्मदीद गवाह हैं। उन्होंने स्पष्टत: कथन किया है कि इन दोनों अपीलार्थीगण ने मृतक गिरीश हंसदा की हत्या कारित किया है। विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा निवेदन किया गया है कि आरंभ में प्रहार अपीलार्थी सं॰ 1 के घर पर किया गया था और तत्पश्चात् पीड़ित भागने लगा और वह अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से बाहर आया और गली में गया (गवाहों ने स्वयं अपनी भाषा में इसे ''कुल्ही'' के रूप में निर्दिष्ट किया है) और गली में इन दोनों अपीलार्थीगण द्वारा मृतक का पीछा करने के बाद चार उपहतियाँ कारित की गयी थी और अपीलार्थीगण द्वारा मृतक का पीछा किया जाना उनके आशय को प्रकट करता है। अपने सामान्य आशय को अग्रसर करने में एक ने हत्या को सुकर बनाया और दूसरे ने हत्या कारित किया। इस प्रकार, उन्होंने सामान्य आशय शेयर किया। आगे यह निवेदन किया गया है कि चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य में अंतर नहीं है और न ही मुख्य विरोधाभास, लोप और सुधार है। आधा दर्जन चश्मदीद गवाहों ने अपने अभिसाक्ष्य में कथन किया है कि

उन्होंने घटना देखा था और वे स्वाभाविक गवाह है। जैसा अन्वेषण अधिकारी जो अ॰ सा॰ 10 है द्वारा कथन किया गया है कि अपीलार्थीगण का घर घटनास्थल के निकट था। सूचक (अ॰ सा॰ 9) जो मृतक की पत्नी है ने हल्ला किया और तुरन्त मृतक का पुत्र (अ॰ सा॰ 8) घटनास्थल की ओर दौड़ा और अन्य भी घटनास्थल की ओर दौड़े। इस प्रकार, उन्होंने पूरी घटना को देखा है। चश्मदीद गवाहों ने किसी अतिशयोक्ति के बिना पूरी घटना का विवरण दिया है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा निवेदन किया गया है कि अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्य में सदैव सत्य होने का अवसर है और ''एक बात में मिथ्या तो सब बातों में मिथ्या'' का सिद्धांत दांडिक विधि शास्त्र में प्रयोज्य नहीं है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि चाक्षुक साक्ष्य और डॉ॰ नसीमुल हक (अ॰ सा॰ 7) द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य में अंतर नहीं है। मृतक द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियाँ चश्मदीद गवाहों द्वारा दिए गए घटना के विवरण से मेल खाती है। जहाँ तक न्यायालय में हथियार की पेशी का संबंध है, यह निवेदन किया गया है कि उक्त हथियार अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से बरामद किया गया था। अभिग्रहण सूची के गवाह हैं जो अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 3 है और वे घटना के चश्मदीद गवाह भी हैं और उन्होंने हथियार की बरामदगी सिद्ध किया है, अत:, न्यायालय में हथियार की पेशी हत्या के प्रमाण के लिए अनिवार्य नहीं है। इस प्रकार, चिकित्सीय साक्ष्य चश्मदीद गवाहों के अभिसाक्ष्य द्वारा संपुष्ट किया गया है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा समुचित रूप से मामले के इस पहलू का अधिमूल्यन किया गया है। अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे मृतक गिरीश हंसदा की हत्या सिद्ध किया है। मृतक गिरीश हंसदा की हत्या कारित करने के लिए इन दोनों अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करने और दंडादेशित करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा गलती नहीं की गयी है। अत:, इस न्यायालय द्वारा इस अपील को ग्रहण नहीं किया जा सकता है।

5. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों, अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य और न्यायिक उद्घोषणाओं जिन्हें यहाँ नीचे कथित किया गया है को देखते हुए हम मुख्यत: निम्नलिखित तथ्यों, कारणों और न्यायिक उद्घोषणाओं के कारण इस दांडिक अपील को ग्रहण करने का कारण नहीं पाते हैं:

(i) अ॰ सा॰ 9 मृतक की पत्नी है जिसने फर्दबयान दिया था जब वह रामगढ़ अस्पताल गयी थी कि दिनांक 2.6.2000 को सायं लगभग 4.30 बजे यह सूचक बिट्टी हेम्ब्रम (अ॰ सा॰ 9), उसका पति गिरीश हंसदा (मृतक) और उसका पुत्र इंद्रेय हंसदा (अ॰ सा॰ 8) अपने घर पर थे। सूचक का देवर अर्थात् राजा हंसदा (अभियुक्त सं॰ 1) और नंदन हंसदा (अभियुक्त सं॰ 2) पीड़ित के घर आए थे और वे गिरीश हंसदा (मृतक) के साथ अपीलार्थी सं॰ 1 की पुत्री के विवाह के बारे में चर्चा करने के लिए अपीलार्थी सं॰ 1 के घर गए थे। गिरीश हंसदा (मृतक) अपीलार्थी सं॰ 1 राजा हंसदा के घर गया था जहाँ अपीलार्थी सं॰ 1 की पुत्री के विवाह की बात हुई थी। ये दोनों अपीलार्थीगण मृतक के भाई हैं। उनके पास कुछ पैतृक संपत्ति और भूमि थी। उन्होंने उक्त संपत्ति के बारे में चर्चा करना शुरू किया जिसका परिणाम जोरदार झगड़े में हुआ और तत्पश्चात सूचक राजा हंसदा (अपीलार्थी सं॰ 1) के घर की ओर दौड़ी जहाँ उसने देखा कि अपीलार्थी सं॰ 2 ने उसके पति (गिरीश हंसदा) को पकड़ लिया था और राजा हंसदा (अपीलार्थी सं॰ 1) ने फसुली (तेज धार वाला हथियार) से दो वार किया था। पीड़ित (गिरीश हंसदा) अपने को बचाने के लिए घर से भागा। किंतु दोनों अपीलार्थीगण ने गली में उसका पीछा किया। उसे पुन: अपीलार्थी सं॰ 2 द्वारा पकड़ लिया गया था, और अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसकी छाती और मस्तक पर फसुली से वार किया और उसे घायल किया। इस समय पर, अ॰ सा॰ 9 ने हल्ला किया और उसका हल्ला सुनकर उसका पुत्र (अ॰ सा॰ 8) घटनास्थल की ओर दौड़ा और उसने भी गली में इस घटना को देखा। गली में भी अभियुक्त

सं॰ 1 ने कतिपय वार किया और तत्पश्चात, पीड़ित (गिरीश हंसदा) बेहोश हो गया। सूचक का पुत्र (अ॰ सा॰ 8) उसे घर लाया और तत्पश्चात उसे रामगढ़ अस्पताल ले गया जहाँ डॉक्टर ने उसे मृत घोषित किया और इसलिए, रामगढ़ अस्पताल में मृतक की पत्नी (अ॰ सा॰ 9) द्वारा फर्दबयान दर्ज किया गया था और इस फर्दबयान के कारण घटना के दिन ही प्राथमिकी दर्ज की गयी थी, अन्वेषण शुरू किया गया था, अनेक गवाहों के बयानों को दर्ज किया गया था और पुलिस द्वारा घटना स्थल का नक्शा बनाया गया था और अनेक गवाहों के दर्ज बयान के आधार पर पुलिस द्वारा आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और सत्र मामला सं॰ 30/2001 सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और अ॰ सा॰ 1 से 10 तक के साक्ष्य के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय ने इन अपीलार्थीगण को मृतक की हत्या के लिए दोषसिद्ध किया और दोनों अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन आजीवन कारावास के साथ दंडित किया गया था। इस प्रकार, अभियोजन के मामले को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 1, 2, 3, 4, 5, 8 और 9 घटना के चश्मदीद गवाह है और अ॰ सा॰ 7 डॉक्टर है जिन्होंने मृतक का शव परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 10 अन्वेषण अधिकारी है और अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 3 घटना के चश्मदीद गवाह भी हैं क्योंकि वे अभिग्रहण सूची के गवाह हैं क्योंकि अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से हथियार बरामद किया गया था।

(ii) अ॰ सा॰ 1 और स्वतंत्र चश्मदीद गवाह है और गाँव का प्रधान है, के अभिसाक्ष्य को देखते हुए, उसने कथन किया है कि उसने अपीलार्थी सं॰ 1 को गली में मृतक के मस्तक पर उपहति कारित करते हुए देखा है जब पीड़ित को अपीलार्थी सं॰ 2 ने पकड़ रखा था। उसने अभिग्रहण सूची और पुलिस के समक्ष सूचक (अ॰ सा॰ 9) द्वारा दिए गए फर्दबयान पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है। इस गवाह ने किसी अतिशयोक्ति के बिना इन दोनों अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका के बारे में स्पष्टत: कथन किया है। यह प्रतीत होता है कि इस गवाह के प्रतिपरीक्षण से अपीलार्थीगण के पक्ष में कुछ भी नहीं आया है। इस गवाह ने कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 2 मृतक को पकड़े हुए था और अपीलार्थी सं॰ 1 ने मृतक के मस्तक पर उपहति कारित किया था। इस प्रकार, एक ने हत्या को सुकर बनाया और दूसरे ने हत्या कारित किया। इस प्रकार, दोनों ने अपना सामान्य आशय शेयर किया था। इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 2 ने भी संपूर्ण घटना और इन दोनों अपीलार्थीगण की भूमिका का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। यह गवाह भी एक सहग्रामीण है और स्वतंत्र चश्मदीद गवाह है और मृतक का संबंधी बिल्कुल नहीं है और न ही अपीलार्थीगण के साथ उसकी दुश्मनी है। उसने भी विवरण दिया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने मृतक के मस्तक पर उपहतियों को कारित किया था और अपीलार्थी सं॰ 2 मृतक को पकड़े हुए था। इस प्रकार, समस्त चश्मदीद गवाह मृतक के संबंधी नहीं हैं और न ही उनका संपत्ति हड़पने की मंशा है जैसा अपीलार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा कथन किया गया है। जहाँ तक अ॰ सा॰ 3 का संबंध है, वह भी मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट और अभिग्रहण सूची का चश्मदीद गवाह है। उसने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट और अभिग्रहण सूची पर अपना हस्ताक्षर सिद्ध किया है। उसने भी घटना देखा था और उसने भी विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने मृतक पर उपहति कारित किया और अपीलार्थी सं॰ 2 मृतक को पकड़े हुए था। अ॰ सा॰ 3 की उपस्थिति में अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से हथियार भी बरामद किया गया था। समरुप अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 4 का है जो भी घटना का चश्मदीद गवाह है और सह-ग्रामीण है और मृतक का संबंधी नहीं है और न ही इन दोनों अपीलार्थीगण के साथ उसकी दुश्मनी है। हमने इन गवाहों के प्रति परीक्षण को देखा है जो मुख्य परीक्षण में स्थिर बने रहे। जहाँ तक अ॰ सा॰ 5 का संबंध है, वह मृतक

का दामाद है और घटना का चश्मदीद गवाह है। वह भी सूचक (अ॰ सा॰ 9) के हल्ला करने पर दौड़ा था। चूँकि वह मृतक से संबंधित है, यह नहीं कहा जा सकता है कि न्यायालय द्वारा उसके अभिसाक्ष्य को दरकिनार कर देना चाहिए। जब मृतक का निकट संबंधी न्यायालय में अभिसाक्ष्य देता है, उसके अभिसाक्ष्य को सतर्कतापूर्वक देखना होगा। हमने इस अ॰ सा॰ 5 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य का निकटता से परिशीलन किया है और उसके प्रति परीक्षण से प्रतीत होता है कि यह चश्मदीद गवाह विश्वास योग्य एवं विश्वसनीय गवाह है। उसने अपने अभिसाक्ष्य में अतिशयोक्ति नहीं किया है और न ही इसमें कोई विरोधाभास, लोप और सुधार है। इस गवाह द्वारा स्पष्टत: कथन किया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने मृतक पर उपहति कारित किया है और अपीलार्थी सं॰ 2 मृतक को पकड़े हुए था। इस गवाह का विवरण स्थिर बना हुआ है। हम इस चश्मदीद गवाह पर अविश्वास करने का कारण नहीं देखते हैं और इस चश्मदीद गवाह के अभिसाक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विद्वान विचारण न्यायालय ने कोई गलती नहीं की है। जहाँ तक अ॰ सा॰ 8 का संबंध है, वह मृतक का पुत्र है और वह अपनी माता (अ॰ सा॰ 9) जो सूचक है द्वारा हल्ला किए जाने पर घटनास्थल की ओर भागा था। मृतक का पुत्र तुरन्त गली में गया जहाँ उसने देखा कि अपीलार्थी सं॰ 1 उसके पिता पर उपहति कारित कर रहा था और अपीलार्थी सं॰ 2 उसके पिता को पकड़े हुए था। इन उपहतियों के कारण उसका पिता बेहोश हो गया। मृतक का पुत्र अपने बेहोश पिता को घर लाया और तत्पश्चात अस्पताल ले गया जहाँ उसे मृत घोषित किया गया। उसके प्रति परीक्षण को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उसके मुख्य परीक्षण से इस गवाह का विपथन नहीं है यद्यपि वह मृतक का निकट संबंधी है और स्वयं अपने घर में उसकी उपस्थिति स्वाभाविक है और अन्य के साथ उसके समग्र अभिसाक्ष्य को देखते हुए स्पष्ट है कि वह स्थिर बना रहा और विश्वास योग्य एवं विश्वसनीय गवाह है क्योंकि उसके अभिसाक्ष्य में कोई मुख्य विरोधाभास, लोप और सुधार नहीं है। अ॰ सा॰ 9, जो भी चश्मदीद गवाह है और मामले की सूचक है और मृतक की पत्नी है, द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह स्पष्ट है कि उसने तुरन्त रामगढ़ अस्पताल में पुलिस के समक्ष प्राथमिकी दर्ज कराया था। उसने विस्तारपूर्वक संपूर्ण घटना का विवरण दिया कि किस प्रयोजन से इन दोनों अपीलार्थीगण ने अपीलार्थी सं॰ 1 के घर में जहाँ अपीलार्थी सं॰ 1 की पुत्री के विवाह पर चर्चा हो रही थी उसके पति की हत्या की थी। अपीलार्थी सं॰ 1 की पुत्री के विवाह पर चर्चा के बाद पैतृक संपत्ति के बारे में भी चर्चा हुई थी और तत्पश्चात उनके बीच जोरदार झगड़ा हुआ था और तत्पश्चात अपीलार्थी सं॰ 1 मृतक पर प्रहार करने लगा और अपीलार्थी सं॰ 2 मृतक को पकड़े हुए था। कुछ उपहति प्राप्त करने के बाद उसका पति मृतक (गिरीश हंसदा) अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से भाग गया। इन दोनों अपीलार्थीगण ने मृतक (गिरीश हंसदा) का गली में पीछा किया और अपीलार्थी सं॰ 2 ने पुन: मृतक को पकड़ लिया और अपीलार्थी सं॰ 1 ने गिरीश हंसदा (मृतक) के शरीर के महत्वपूर्ण अंग पर वार किया। इस बीच, मृतक की पत्नी ने हल्ला किया और मृतक का पुत्र जो अ॰ सा॰ 8 है अपने घर से दौड़ा और उसने इन अपीलार्थीगण द्वारा गली में अपने पिता पर प्रहार किए जाते देखा था। अ॰ सा॰ 9 सूचक का यह विवरण इन दोनों अपीलार्थीगण द्वारा किए गए हत्या के अपराध को पर्याप्त रूप से सिद्ध करता है। उसके प्रति परीक्षण को देखते हुए, इन दोनों अपीलार्थीगण के पक्ष में कुछ भी नहीं आया है। अ॰ सा॰ 9 के अभिसाक्ष्य में कोई मुख्य विरोधाभास, लोप और सुधार नहीं है। उसी घटना स्थल पर उसकी उपस्थिति बिल्कुल स्वाभाविक है। उसने घटना की तिथि, घटनास्थल और घटना का तरीका और इन दोनों अपीलार्थीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका को किसी अतिशयोक्ति, लोप, विरोधाभास और सुधार के बिना सिद्ध किया है। हम इस चश्मदीद गवाह पर अविश्वास करने का

कोई कारण नहीं पाते हैं। वह विश्वास योग्य एवं विश्वसनीय गवाह है। **दांडिक मामले में गवाह संपूर्ण घटना के आँख-कान होते हैं। दांडिक अपराध के इन आँख-कान को समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करना होगा।** अनेक चश्मदीद गवाह हैं जिन्होंने घटना के बारे में कथन किया है और अभियोजन गवाह के अभिसाक्ष्य को देखते हुए इन दोनों अपीलार्थीगण द्वारा की गयी गिरीश हंसदा की हत्या समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध की गयी है। वारों की संख्या गिनने में थोड़ा अंतर गवाहों को अविश्वसनीय और अविश्वास योग्य बनाने के बजाए अधिक विश्वसनीय और अधिक विश्वास योग्य बनाता है क्योंकि यदि सारे गवाह बिल्कुल सटीक विवरण देते हैं, उन्हें पट्टी पढ़ाया गया गवाह कहते हुए उन पर हमला किया जाएगा। यदि कोई अंतर होता है, उन पर हमला किया जाएगा क्योंकि वे अपने अभिसाक्ष्य में असंगत हैं। किंतु घटना के इन आँख-कान का न्यायालय को समुचित रूप से मूल्यांकन करना होगा। यदि वारों की गिनती में कुछ गलती हुई है, इसका अर्थ यह नहीं है कि वे अविश्वास योग्य गवाह हैं। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अ॰ सा॰ के मुताबिक 2/3 वार किए गए थे जबकि अ॰ सा॰ 2 ने अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा 5/6 वार किया गया था। जब अभियुक्त द्वारा एक के बाद एक वार किया जाता है, किसी देहाती गवाह से गणितज्ञ की तरह गिनती करने की उम्मीद करना बहुत ज्यादा है। **देहाती चश्मदीद गवाह से गणितीय शुद्धता और सांख्यिकी शुद्धता की उम्मीद नहीं की जाती है विशेषतः जब वे 24 माह बाद न्यायालय में अभिसाक्ष्य दे रहे हैं। गवाहों का अभिसाक्ष्य संप्रेक्षण की शक्ति, स्मरण शक्ति तथा क्षमता और न्यायालय में उद्धृत करने की क्षमता पर निर्भर करता है। इन तीनो फेनोमेनन अर्थात् संप्रेक्षण, स्मरण शक्ति और न्यायालय में प्रस्तुति में कुछ अंतर हो सकता है और उसका अर्थ यह नहीं है कि गवाह अविश्वास योग्य एवं अविश्वसनीय हैं।** इसके विपरीत, कुछ अंतर उनके अभिसाक्ष्य में न्यायालय का विश्वास उत्पन्न करता है। अतः वारों की संख्या की गिनती के बारे में अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया प्रतिवाद इस न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है।

(iii) डॉ॰ नसीमुल हक जिन्होंने मृतक का शव परीक्षण किया था द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य को देखते हुए, मृतक के शरीर पर निम्नलिखित शव पूर्व उपहतियाँ पायी गयी थी;

(a) अग्रमस्तक के बाएँ हिस्से के ऊपर 4" x 1" x अस्थि तक गहरा कटने का जख्म/विच्छेदन करने पर सामने की हड्डी टुकड़ों में टूटी हुई पायी गयी थी। मेम्ब्रेंस और ब्रेन के नीचे टिशु को खून से सना पाया गया था और क्रेनियल कैविटी के इर्द-गिर्द के क्षेत्र में जमा खून मौजूद था।

(b) बाएँ हिस्से के ऊपरी भाग के ऊपर 3" x 1" x मांसपेशी तक गहरा कटने का जख्म।

(c) पृष्ठ के बाएँ स्कापुलर क्षेत्र के ऊपर 5" x 1" x मांसपेशी तक गहरा कटने का जख्म।

(d) छाती के बाएँ हिस्से पर बाएँ एक्सिला के एक्सिलियरी फोल्ड के ठीक नीचे 6 " x 1" x मांसपेशी तक गहरा कटने का जख्म।

(e) बाएँ हाथ के पीछे ऊपर 2" x 1"x मांसपेशी तक गहरा कटने का जख्म।

(f) बाएँ हिस्से के इंफ्रा स्कैपुलर क्षेत्र के ऊपर 2" x 1" x मांसपेशी तक गहरा कटने का जख्म।

डॉक्टर के मत में मृत्यु उक्त उपहतियों के कारण हुए आघात एवं हेमरेज के कारण हुई थी। उपहति सं॰ 1 समय के स्वाभाविक क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। प्रयुक्त हथियार भारी तेज धार वाला था। मृत्यु के समय से बीता समय 36 घंटा था।

(iv) डॉक्टर (अ॰ सा॰ 7) द्वारा दिए गए पूर्वोक्त अभिसाक्ष्य को देखते हुए, अनेक कटने के जख्म हैं और वे तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित किए गए हैं। हत्या में प्रयुक्त हथियार, जैसा आधा दर्जन गवाह द्वारा विवरण दिया गया है, चिकित्सीय साक्ष्य में दिए गए विवरण से बिल्कुल मेल खाता है।

(v) अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चिकित्सीय मत के मुताबिक प्रयुक्त किया गया अभिकथित हथियार भारी तेज धार वाला हथियार होना ही चाहिए और हथियार ''फसुली'' भारी तेज धार वाला हथियार नहीं है और इसलिए, तथाकथित चश्मदीद गवाह चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है और चाक्षुक एवं चिकित्सीय साक्ष्य एक-दूसरे के विरोध में हैं। न्यायालय द्वारा इस प्रतिवाद को मुख्यत: निम्नलिखित कारणों से स्वीकार नहीं किया गया है:

(a) डॉक्टर जिन्होंने अ॰ सा॰ 7 के रूप में साक्ष्य दिया है घटना का चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है। उसका जो भी मत है, वह भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 45 के मुताबिक है।

(b) अभियोजन का मामला अनेक चश्मदीद गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 1, 2, 3, 4, 5, 8 और 9 पर आधारित है और जैसा ऊपर कथन किया गया है, वे विश्वास योग्य एवं विश्वसनीय गवाह हैं। घटना स्थल पर उनकी उपस्थिति प्रथम दृष्टया स्वाभाविक है। उन्होंने स्पष्टत: कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने मृतक के शरीर पर अनेक वार कारित किया था।

(c) जब कभी खोपड़ी का फ्रैक्चर होता है, सामान्यत: चिकित्सीय मत में, भारी हथियार के उपयोग के प्रति निर्देश होगा। किंतु वर्तमान मामले के तथ्य को देखने के बाद इस पर भी विवाद किया गया है क्योंकि हथियार जिसका उपयोग किया गया है फसुली है जो तेज धार वाला हथियार है और यदि पूरी ताकत से मस्तक पर उपहति कारित की जाती है, खोपड़ी का फ्रैक्चर हो सकता है और प्रत्येक समय खोपड़ी का फ्रैक्चर कारित करने के लिए भारी पदार्थ का उपयोग करने की आवश्यकता नहीं है। **मस्तक उपहति कारित करने के लिए अभियुक्त द्वारा प्रयुक्त हथियार के ताकत के प्रयोग से हथियार के भारीपन की आवश्यकता को समाप्त किया जाता है। अत:, जब चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य से सत्य सामने आ रहा है और यदि इसमें तनिक अंतर है, अपीलार्थी अभियुक्त को दोषमुक्त करने के लिए इसका उपयोग नहीं किया जाएगा।**

(vi) **पूर्वोक्त साक्ष्यों की दृष्टि में, यदि चिकित्सीय साक्ष्य एवं चाक्षुक साक्ष्य के बीच तनिक अंतर है चाक्षुक साक्ष्य को समस्त अधिमान देना होगा यदि विश्वास योग्य गवाह द्वारा चाक्षुक साक्ष्य दिया गया है।** वर्तमान मामले में चिकित्सीय साक्ष्य और चाक्षुक साक्ष्य के बीच कोई अंतर बिल्कुल नहीं है। इसके विपरीत, चिकित्सीय साक्ष्य गवाहों के अभिसाक्ष्य को संपुष्ट करता है। मृत्यु का समय भी प्राथमिकी में पुलिस के समक्ष सूचक द्वारा दिए गए विवरण से मेल खाता है।

(vii) चश्मदीद गवाहों द्वारा घटना के विवरण को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि कुछ उपहतियाँ अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा अपने घर में कारित की गयी थी और तत्पश्चात गिरीश हंसदा (पीड़ित) अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से गली में भाग गया था और इन दोनों अपीलार्थीगण ने पीड़ित का पीछा किया जो उनके सामान्य आशय को प्रकट करता है। संभवत: सामान्य आशय बिल्कुल प्रारंभ से ही मौजूद न हो। यह बाद में भी प्रारंभ हो सकता है आशय का कोई भौतिक साक्ष्य नहीं होता है। **गवाहों के अभिसाक्ष्य से न्यायालय को आशय एकत्रित करना होगा। चश्मदीद गवाहों द्वारा दिए गए घटना के विवरण**

को देखते हुए कि अपीलार्थीगण सं॰ 2 ने मृतक को पकड़ लिया और उपहति कारित करने में अपीलार्थी सं॰ 1 को सुकर बनाया, मृतक की हत्या करने में उनके सामान्य आशय को प्रकट करता है। इस प्रकार, मृतक की हत्या कारित करने में दोनों अपीलार्थीगण ने सामान्य आशय शेयर किया और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार करने में विचारण न्यायालय ने गलती नहीं किया है।

(viii) अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि केवल अपीलार्थी सं॰ 1 ने मृतक पर उपहति कारित किया है और, इसलिए, अपीलार्थी सं॰ 2 को लाभ दिया जा सकता है क्योंकि उसने मृतक के शरीर पर कोई उपहति कारित नहीं किया है। यह प्रतिवाद न्यायालय द्वारा मुख्यत: निम्नलिखित कारणों से स्वीकार नहीं किया जाता है:

(a) अपीलार्थी सं॰ 2 ने अपीलार्थी सं॰ 1 के घर में पीड़ित पर उपहति कारित करने में अपीलार्थी सं॰ 1 को सुकर बनाया है।

(b) जब मृतक अपीलार्थी सं॰ 1 के घर से भाग रहा था, अपीलार्थी सं॰ 2 ने अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ मृतक गिरीश हंसदा का पीछा किया और अपीलार्थी सं॰ 2 ने पुन: मृतक को पकड़ लिया। यदि उसने उसको पकड़ा नहीं होता, शायद पीड़ित भागने में सफल होता और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध नहीं हो सकता था। किंतु चूँकि इस अपीलार्थी सं॰ 2 ने गिरीश हंसदा को पकड़ लिया, अपीलार्थी सं॰ 1 ने उस पर आगे उपहति कारित किया।

(c) इस अपीलार्थी सं॰ 2 द्वारा पीड़ित का पीछा किया जाना और दोबारा उसको पकड़ना उसे मृतक की हत्या का दायी बनाता है क्योंकि वह भी अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ सामान्य आशय शेयर कर रहा था।

6. अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए हम हत्या के अपराध को हत्या की कोटि में नहीं आनेवाले आपराधिक मानव वध के अपराध में संपरिवर्तित करके इस अपीलार्थी सं॰ 2 को लाभ देने का कारण नहीं देखते हैं। चिकित्सीय साक्ष्य के मुताबिक अनेक उपहतियाँ हैं। मृतक के शरीर पर आधा दर्जन कटने का जख्म हैं, कुछ अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा अपीलार्थी सं॰ 1 के घर में कारित किए गए हैं और तत्पश्चात दोनों अपीलार्थीगण ने मृतक का पीछा किया और जब वह गली में था, पुन: वार किए गए थे जिस कारण पीड़ित बेहोश हो गया और जब उसे अस्पताल लाया गया था, उसे मृत घोषित किया गया था। अभिलेख पर मौजूद इन साक्ष्यों को देखते हुए हम अपीलार्थी सं॰ 2 को कोई लाभ देने का कारण नहीं देखते हैं और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए इन दोनों अपीलार्थीगण को दंडित करने के लिए अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विद्वान विचारण न्यायालय ने गलती नहीं किया है।

7. अभिलेख पर मौजूद पूर्वोक्त साक्ष्य एवं न्यायिक उद्घोषणा के समेकित प्रभाव के कारण अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे मृतक की हत्या का अपराध सिद्ध किया है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विद्वान विचारण न्यायालय ने गलती नहीं किया है और हम सत्र मामला सं॰ 30 वर्ष 2001 में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को परिवर्तित करने का कारण नहीं पाते हैं।

8. इस दांडिक अपील में गुणागुण नहीं है जिसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

जिउरा ओराँव

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Civil Review No. 32 of 2013. Decided on 1st April, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 47 नियम 1—पुनर्विलोकन–एल॰ पी॰ ए॰ में पारित आदेश का पुनर्विलोकन प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षकों के रूप में नियुक्ति के लिए याचीगण के मामले से संबंधित नए एवं सदृश तथ्यों के आधार पर इप्सित किया गया है–इस तथ्य की दृष्टि में कि पुनर्विलोकन याची अध्यपेक्षित अर्हता नहीं रखता था, विज्ञापन के निबंधनानुसार नियुक्ति के लिए पुनर्विलोकन याची पात्र नहीं था–यह मानते हुए कि चार उम्मीदवारों की नियुक्ति गलत रूप से की गयी है, यह नियुक्ति इप्सित करने के लिए पुनर्विलोकन याची पर कोई अधिकार प्रदत्त नहीं करता है–पुनर्विलोकन आवेदन खारिज। (पैराएँ 11, 13, 18 एवं 19)

निर्णयज विधि.–2013 (2) JBCJ 599 (HC)—Referred; (2006)3 SCC 330—Relied; 2008 (4) JLJR 184—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. Binod Singh, For the Appellant; Mr. Ram Prakash Singh, For the Resp.-State; Mr. Sanjay Piprawal, For the Resp.-JPSC.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–पुनर्विलोकन याची के मामले से संबंधित नए एवं सदृश तथ्यों की पश्चातवर्ती खोज के आधार पर एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 में पारित दिनांक 8.3.2013 के आदेश के पुनर्विलोकन के लिए वर्तमान पुनर्विलोकन दाखिल किया गया है।

2. इस पुनर्विलोकन याचिका की ओर ले जाने वाले संक्षिप्त तथ्य निम्नलिखित हैं:

झारखंड लोक सेवा आयोग (जे॰ पी॰ एस॰ सी॰) ने प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षकों के पद के लिए पात्र उम्मीदवारों से आवेदन आमंत्रित करते हुए दिनांक 20.4.2007 को विज्ञापन सं॰ 5/2007 के तहत विज्ञापन जारी किया और दिनांक 21.9.2007 को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने यह सूचित करते हुए संशोधित विज्ञापन जारी किया कि उम्मीदवार, जो अपने शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की अंतिम परीक्षा में उपस्थित होने वाले थे अथवा परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे थे, भी प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षक के पद के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा ली जाने वाली परीक्षा में उपस्थित होने के पात्र थे। जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने दिनांक 24.10.2007 को एक अन्य विज्ञापन जारी किया जिसके द्वारा पारा–शिक्षक, जो इंदिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय (इग्नू) से प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा (डी॰ पी॰ ई॰) की पढ़ाई कर रहे थे और जो डी॰ पी॰ ई॰ पाठ्यक्रम की अंतिम परीक्षा में उपस्थित होने वाले थे अथवा उक्त पाठ्यक्रम के परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे थे, को भी प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षक की परीक्षा में उपस्थित होने के लिए पात्र बनाया गया था और फॉर्म जमा करने की अंतिम तिथि दिनांक 2.11.2007 तक बढ़ायी गयी थी। पुनर्विलोकन याची ने उक्त पद के लिए आवेदन दिया और दिनांक 10.8.2008 को ली गयी परीक्षा में उपस्थित हुआ और सफल घोषित किया गया था किंतु प्रशिक्षण प्रमाण पत्र (डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र) नहीं दिए जाने के चलते परिणाम लंबित रखा गया था। पुनर्विलोकन याची दिसंबर 2008 में डी॰ पी॰ ई॰ परीक्षा में उपस्थित हुआ। दिनांक 30.5.2009 को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने परीक्षा का परिणाम प्रकाशित किया जिसमें पुनर्विलोकन याची को सफल घोषित किया गया था किंतु प्रशिक्षण प्रमाण पत्र की गैर–प्रस्तुतीकरण के कारण उसका परिणाम लंबित रखा गया था। पुनर्विलोकन याची का मामला यह है कि परिणाम के प्रकाशन के बाद डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र की प्रस्तुति की अंतिम तिथि दिनांक 30.7.2009 तय की गयी थी और याची ने दिनांक

3.8.2009 को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के कार्यालय में डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया और डी॰ पी॰ ई॰ परीक्षा में उत्तीर्ण होने के प्रमाण पत्र की प्रस्तुति के बावजूद उसके मामले पर विचार नहीं किया गया था।

पुनर्विलोकन याची ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6071/2009 दाखिल किया जिसे दिनांक 17.7.2012 को खारिज कर दिया गया था। तत्पश्चात, पुनर्विलोकन याची ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 दाखिल किया और इसे भी यह अभिनिर्धारित करते हुए कि **मो॰ सज्जाद अली बलाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** 2008 (4) JLJR 184, मामले में दिया गया निर्णय प्रयोज्य नहीं था, दिनांक 8.3.2013 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। इस न्यायालय की खंडपीठ ने आगे अभिनिर्धारित किया कि **मो॰ सज्जाद अली,** 2008 (4) JLJR 184, के उक्त मामले में आवश्यकता केवल डी॰ पी॰ ई॰ पाठ्यक्रम पूरा करने की थी और न कि पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने के प्रमाण पत्र की प्रस्तुति और इसलिए, उक्त मामला पुनर्विलोकन याची के मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं था। अपील की खारिजी के बाद पुनर्विलोकन याची ने दिनांक 12.4.2013 को अध्यक्ष, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰, को निर्णय का पुनर्विलोकन करने का अनुरोध करते हुए अभ्यावेदन दिया। याची ने निर्णय के पुनर्विलोकन के लिए प्रमुख सचिव, मानव संसाधन विभाग, झारखंड सरकार को भी दिनांक 12.4.2013 को आवेदन दिया। याची एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 में पारित आदेश का पुनर्विलोकन इस आधार पर इप्सित करता है कि (i) **मो॰ सज्जाद अली,** 2008 (4) JLJR 184, मामले में दिए गए पूर्णपीठ के निर्णय पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था और (ii) समस्थित उम्मीदवारों, जिन्होंने बढ़ायी गयी तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2009 के काफी बाद दिनांक 1.10.2009 को डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया था, पर विचार किया गया था और उन्हें नियुक्त किया गया था और केवल पुनर्विलोकन याची के मामले पर नियुक्ति के लिए विचार नहीं किया गया था।

3. प्रत्यर्थी–जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने विस्तृत प्रति शपथ पत्र दाखिल किया और कथन किया कि दिनांक 10.8.2008 को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा लिखित परीक्षा संचालित करने के समय पर पुनर्विलोकन याची प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा की परीक्षा में केवल दिसंबर, 2008 में अर्थात् दिनांक 10.11.2008 के बाद उपस्थित हुआ था और उसे डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र दिनांक 31.7.2009 को जारी किया गया था और इस तथ्य की दृष्टि में कि वह डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र/बी॰ एड॰ प्रमाण पत्र की प्रस्तुति के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा नियत अंतिम तिथि अर्थात् दिनांक 10.11.2008 तक अध्यपेक्षित अर्हता नहीं रखता था, पुनर्विलोकन याची नियुक्ति के लिए पात्र नहीं था।

4. हमने पुनर्विलोकन याची के विद्वान अधिवक्ता श्री विनोद सिंह, जी॰ पी॰ II के विद्वान जे॰ सी॰ श्री रामप्रकाश सिंह और प्रत्यर्थी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के अधिवक्ता श्री संजय पिपरवाल को सुना है।

5. पुनर्विलोकन न्यायालय के पास आदेश 47 नियम 1 में प्रयुक्त भाषा द्वारा नियत निश्चयात्मक सीमाओं द्वारा परिसीमित सीमित अधिकारिता है। यह तीन विनिर्दिष्ट आधारों पर पुनर्विलोकन की अनुमति दे सकता है अर्थात् (i) साक्ष्य के नए एवं महत्वपूर्ण मामले की खोज जो सम्यक तत्परता के प्रयोग के बाद आवेदक की जानकारी में नहीं था अथवा उस समय पर प्रस्तुत नहीं किया जा सकता था जब डिक्री पारित किया गया था अथवा आदेश पारित किया गया था; (ii) अभिलेख पर प्रकट गलती; अथवा (iii) किसी अन्य पर्याप्त कारण से।

6. अभिलेख पर प्रकट गलती को ऐसा प्रकट गलती होना होगा जिसका पता दोनों पक्षों द्वारा लंबा –चौड़ा तर्क किए बिना एक निगाह में लगाया जा सकता है। पुनर्विलोकन कार्यवाही अपील के रूप की कार्यवाही नहीं है और इसे कठोरतापूर्वक सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 47 नियम 1 के विस्तार एवं परिधि तक सीमित करना होगा। साक्ष्य अथवा सामग्री का पुनर्आकलन अनुज्ञेय नहीं है। ''पुनर्विलोकन'' किसी रूप में ''छद्मावरण में अपील'' नहीं है।

7. पुनर्विलोकन याची के विद्वान अधिवक्ता श्री विनोद सिंह ने प्रतिवाद किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश और यह न्यायालय अधिमूल्यन करने में विफल रहे कि विज्ञापन के मुताबिक उम्मीदवारों, जिन्होंने डी॰ पी॰ ई॰ पाठ्यक्रम पूरा किया है और परीक्षा में उपस्थित होने वाले थे, को प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षकों के पद के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा ली गयी परीक्षा में उपस्थित होने की अनुमति दी गयी थी और न्यायालय इसका अधिमूल्यन करने में विफल रहा कि प्रश्नगत परीक्षा में उपस्थित होने की एकमात्र पात्रता ''प्रशिक्षण'' था और पुनर्विलोकन याची ने पहले ही अपना डी॰ पी॰ ई॰ पाठ्यक्रम पूरा कर लिया था और न्यायालय ने इस पहलू को ध्यान में नहीं लिया था। आगे यह निवेदन किया गया था कि विद्वान एकल न्यायाधीश और यह न्यायालय **मो॰ सज्जाद अली**, 2008 (4) JLJR 184, मामले में अधिकथित विधि को विचार में लेने में विफल रहे और चूँकि उक्त निर्णय की प्रयोज्यता पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था, एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 में पारित दिनांक 8.3.2013 का निर्णय विधि की गंभीर गलती से पीड़ित है जिसका पुनर्विलोकन करने की आवश्यकता है।

8. प्रत्यर्थी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री संजय पिपरवाल ने निवेदन किया कि परीक्षा की तिथि पर पुनर्विलोकन याची विज्ञापन के निबंधनानुसार नियुक्ति के लिए पात्र नहीं था क्योंकि पुनर्विलोकन याची शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र/ बी॰ एड॰ प्रमाणपत्र के लिए पात्र नहीं था क्योंकि पुन विलोकन याची शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र/बी॰ एड॰ प्रमाण पत्र की प्रस्तुति के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा नियत अंतिम तिथि अर्थात् दिनांक 10.11.2008 तक अध्यपेक्षित अर्हता नहीं रखता था और न्यायालय ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया कि पुनर्विलोकन याची का मामला विचार किए जाने योग्य नहीं था। जहाँ तक **मो॰ सज्जाद अली**, 2008 (4) JLJR 184, मामले का संबंध है, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एकमात्र आवश्यकता ''शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम पूरा करना'' था जबकि पुनर्विलोकन याची के चयन के संबंध में आवश्यकता न केवल शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम पूरा करना था बल्कि ''शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने के प्रमाण पत्र की प्रस्तुति'' भी थी और इस न्यायालय की खंडपीठ ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया कि **मो॰ सज्जाद अली**, 2008 (4) JLJR 184, मामला प्रयोज्य नहीं है।

9. मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार से दिनांक 6.3.2007 के तलब के अनुसरण में जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने झारखंड राज्य में प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति के लिए चयन प्रक्रिया आरंभ किया। नियुक्ति नियमावली, 2002 का नियम 2 (ख) और संशोधित नियमावली, 2003 को आगे भी राज्य सरकार द्वारा संशोधित किया गया था। जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने झारखंड राज्य में प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षकों के पद के लिए पात्र उम्मीदवारों से आवेदन आमंत्रित करते हुए दिनांक 20.4.2007 को विज्ञापन सं॰ 5/2007 जारी किया। दिनांक 14.8.2007 के अधिसूचना सं॰ 8/MUI-296/03/691 के तहत राज्य सरकार ने पुनः नियुक्ति नियमावली के नियम 2 (ख) को संशोधित किया। राज्य सरकार द्वारा पूर्वोक्त नियुक्ति नियमावली के संशोधन के बाद जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने आवेदन फॉर्म जमा करने की अंतिम तिथि दिनांक 27.10.2007 तक बढ़ाया और उस प्रभाव का भूल सुधार भी जारी किया। उक्त भूल सुधार के खंड 1 और खंड 4, जो इस मामले के लिए प्रासंगिक हैं, निम्नलिखित हैं:–

"[kM 1.

o l mEehnokjk] ftUgku f'k{kd çf'k{k.k d fucèkuk ,o 'krk dk ifji.k fd;k g tlk io çdkf'kr foKkiu l0 5/07 [ik= (ch)] e mfYyf[kr g vkj f'k{kd çf'k{k.k ijh{kk e mifLFkr gku oky g] dk f'k{kd Hkjrh d fy, lpkfyr dh tkuokyh ijh{kk d fy, vkonu Qke nkf[ky dju dh vuefr nh tk,xh fdr ,l mEehnokjk dk ifj.kke d çdk'ku d fy, vk;kx }kjk fu;r le; d igy viu f'k{kd çf'k{k.k ifj.kke dk nkf[ky djuk gkxkA

[kM 4.

*, l mEehnokjk dk vko';drk >kj[kM ykd lok vk;kx }kjk igy çdkf'kr f'k{kdk dh fu;fDr d fy, çfr;kfxrk ijh{kk lpkfyr dju d ckn rhu ekg d Hkhrj çf'k{k.k e mÙkh.k gku dk çek.k i= vk;kx d ikl nkf[ky dju gkxk vU;Fkk vu'kl ugh dh tk,xhA***

10. दिनांक 21.9.2007 को पूर्वोक्त भूल सुधार जारी करने के बाद मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड सरकार ने दिनांक 24.10.2007 के पत्र के तहत उन पैरा-शिक्षकों, जिन्होंने इग्नू, राँची से प्राथमिक शिक्षा प्रशिक्षण में डिप्लोमा पूरा किया है और जिन्हें केवल परीक्षा में उपस्थित होना था, को अपनी उम्मीदवारी पर विचार किए जाने के लिए जे० पी० एस० सी० के समक्ष अपना आवेदन प्रस्तुत करने की अनुमति दी गयी थी। तद्नुसार, जे० पी० एस० सी० ने पुनः भूल सुधार जारी किया और उन उम्मीदवारों द्वारा आवेदन फॉर्म प्रस्तुत करने की तिथि को दिनांक 12.11.2007 तक बढ़ाया।

11. पूर्वोक्त खंड 1 के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि उम्मीदवारों, जिन्होंने पहले ही शिक्षक प्रशिक्षण सत्र पूरा किया है और जिन्हें केवल शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा में उपस्थित होना था, जे० पी० एस० सी० द्वारा संचालित परीक्षा में उपस्थित हो सकते थे किंतु वे परिणाम के प्रकाशन के पहले जे० पी० एस० सी० द्वारा नियत तिथि के तीन माह के भीतर जे० पी० एस० सी० के समक्ष शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र दाखिल करेंगे। दिनांक 21.9.2007 के भूल सुधार के खंड 4 से यह भी स्पष्ट है कि उन उम्मीदवारों को लिखित परीक्षा की तिथि से तीन माह के भीतर शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र/बी० एड० प्रमाण पत्र दाखिल करना होगा। पुनर्विलोकन याची दिनांक 10.8.2008 को ली गयी लिखित परीक्षा में उपस्थित हुआ और उसे तीन माह के भीतर अर्थात् दिनांक 10.11.2008 तक अपना शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र/बी० एड० प्रमाण पत्र दिनांक 21.9.2007 के भूल सुधार के खंड 4 के आलोक में दाखिल करने की आवश्यकता थी ताकि जे० पी० एस० सी० द्वारा उसकी उम्मीदवारी पर विचार किया जा सके। स्वीकृत रूप से, पुनर्विलोकन याची इग्नू से प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा की परीक्षा में उपस्थित हुआ था और उक्त पाठ्यक्रम की परीक्षा दिसंबर, 2008 में ली गयी थी। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि दिनांक 10.8.2008 को जे० पी० एस० सी० द्वारा लिखित परीक्षा संचालित किए जाने के समय पर पुनर्विलोकन याची प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा की परीक्षा में उपस्थित तक नहीं हुआ था और कि वह बाद में प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा में उपस्थित हुआ जिसे दिसंबर, 2008 में संचालित किया गया था। इस प्रकार, जैसा विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा और इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा भी अभिनिर्धारित किया गया है, इस तथ्य की दृष्टि में कि पुनर्विलोकन याची जे० पी० एस० सी० द्वारा संचालित परीक्षा की तिथि पर अर्थात् दिनांक 10.8.2008 पर अथवा जे० पी० एस० सी० द्वारा नियत डी० पी० ई० प्रमाण पत्र/बी० एड० प्रमाण पत्र की प्रस्तुति की कट-ऑफ-तिथि पर अर्थात् दिनांक 10.11.2008 पर अध्यपेक्षित अर्हता नहीं रखता था, पुनर्विलोकन याची विज्ञापन के निबंधनानुसार नियुक्ति के लिए पात्र नहीं था।

12. उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन के बाद जे० पी० एस० सी० ने नियुक्ति पत्रों को जारी किए जाने के पहले उम्मीदवारों के प्रमाण पत्रों को सत्यापित करने की शर्त के साथ दिनांक 6.6.2009 को प्राथमिक प्रशिक्षित शिक्षकों के पद पर नियुक्ति के लिए सफल उम्मीदवारों के नामों की अनुशंसित किया। अनेक उम्मीदवारों ने अपना शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र/बी० एड० प्रमाण पत्र दाखिल नहीं किया है और उन उम्मीदवारों को अवसर प्रदान करने के लिए जे० पी० एस० सी० ने उनको दिनांक 30.7.2009 तक जे० पी० एस० सी० के समक्ष शिक्षक प्रशिक्षण प्रमाण पत्र/बी० एड० प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। अनेक उम्मीदवारों ने बढ़ायी गयी तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2009 तक अनुशंसा के लिए अपनी उम्मीदवारी पर विचार किए जाने के लिए जे० पी० एस० सी० के समक्ष अपना बी० एड० प्रमाणपत्र दाखिल

किया। पुनर्विलोकन याची, जो दिसंबर, 2008 में परीक्षा में उपस्थित हुआ, ने उक्त कट-ऑफ तिथि के बाद दिनांक 3.8.2009 को डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया। यह स्पष्ट है कि जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा संचालित तिथि पर न तो पुनर्विलोकन याची अध्यपेक्षित अर्हता रखता था और न ही पुनर्विलोकन याची ने कट ऑफ तिथि अर्थात् दिनांक 10.11.2008 के पहले अथवा बढ़ायी गयी कट-ऑफ तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2009 तक डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया। इन पहलूओं पर विचार करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश और इस न्यायालय की खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि पुनर्विलोकन याची अध्यपेक्षित अर्हता नहीं रखता था और इसलिए, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा उसकी उम्मीदवारी पर विचार नहीं किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश का निष्कर्ष, जिसे खंडपीठ द्वारा संपुष्ट किया गया था, आदेश के पुनर्विलोकन को आवश्यक बनाते हुए अभिलेख पर प्रकट गलती से पीड़ित नहीं है।

13. पुनर्विलोकन याची दिनांक 8.3.2013 के आदेश का पुनर्विलोकन इस आधार पर इप्सित करता है कि **मो॰ सज्जाद अली,** 2008 (4)JLJR 184, मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार याची के मामले को आच्छादित करता है किंतु, खंडपीठ ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47 वर्ष 2013 खारिज करते हुए उक्त मामले की प्रयोज्यता पर समुचित रूप से विचार नहीं किया है। यह प्रतिवाद स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है। **''सज्जाद अली''** मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष विवाद्यक यह था कि क्या उम्मीदवारों, जिन्हें सफल घोषित किया गया था और प्राथमिक शिक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए चयनित किया गया था, को सही प्रकार से इस आधार पर नियुक्ति देने से इनकार किया गया था कि वे उम्मीदवार आवेदन की प्रस्तुति की अंतिम तिथि तक शिक्षक प्रशिक्षण अर्हता नहीं रखते थे और क्या झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा जारी विज्ञापन के निबंधनानुसार एकमात्र आवश्यकता शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम पूरा करना था। झारखंड प्राथमिक विद्यालय शिक्षक नियुक्ति नियमावली, 2002 के नियम 2 (ख) और नियम 4 और झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा जारी विज्ञापन को ध्यान में लेते हुए खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि आवेदन दाखिल करने के पहले शिक्षक प्रशिक्षण पूरा कर चुके उम्मीदवार शिक्षकों के पद के लिए आवेदन देने के पात्र थे। यह भी पाया गया था कि उम्मीदवार पहले ही शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा में उपस्थित हुए थे और उनको नियुक्ति पत्र जारी किए जाने के पहले शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा में उत्तीर्ण हुए थे और मामले के ऐसे दृष्टिकोण में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उम्मीदवार बी॰ एड॰ प्रशिक्षण परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर सहायक शिक्षक के पद पर नियुक्ति के लिए पात्र थे। वर्तमान मामले में, स्वयं विज्ञापन में उल्लिखित किया गया था कि उम्मीदवार, जिन्होंने शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा पूरा कर लिया है और जिसके लिए परीक्षा कट-ऑफ तिथि के पहले ली गयी थी, सहायक शिक्षक के पद के लिए आवेदन देने के पात्र थे। पुनर्विलोकन याची को दिनांक 21.9.2007 के भूल सुधार के खंड 1 और खंड 4 की आवश्यकता के मुताबिक झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा नियत तिथि पर अथवा इसके पहले शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने की आवश्यकता थी। प्रमाण पत्र दिनांक 10.11.2008 को अथवा इसके पहले दाखिल किया जाना था जिसे पुनर्विलोकन याची ने समय पर दाखिल नहीं किया था। इस प्रकार, **''मो॰ सज्जाद अली'',** 2008 (4) JLJR 184, मामले का निर्णयाधार पुनर्विलोकन याची के मामले पर प्रयोज्य नहीं है। हम एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47 वर्ष 2013 में पारित दिनांक 8.3.2013 के निर्णय में अभिलेख पर कोई प्रकट गलती नहीं पाते हैं।

14. पुनर्विलोकन याची की ओर से यह प्रतिवाद किया गया था कि उम्मीदवारों अर्थात् अमित कुमार दास, अनिल कुमार रवानी, ठाकुर प्रसाद रवानी और अंग्रेज कुमार मंडल ने कट-ऑफ तिथि अर्थात् दिनांक

10.11.2008 के बाद और बढ़ायी गयी तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2009 के भी परे दिनांक 1.10.2009 को प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया है और जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा उनकी अनुशंसा की गयी है और ऐसा होने के चलते उसके मामले पर विचार नहीं करने में जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा पुनर्विलोकन याची के मामले में भेदभाव किया गया है। आर॰ टी॰ आई॰ अधिनियम के माध्यम से प्राप्त किए गए डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्रों की प्रतियों के प्रति हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए पुनर्विलोकन याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अमित कुमार दास और ठाकुर प्रसाद रवानी के प्रमाण पत्रों को दिनांक 20.1.2009 को जारी किया गया था और इन्हें जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के कार्यालय में दिनांक 1.10.2009 को जमा किया गया था जो बढ़ायी गयी तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2009 के काफी परे है जबकि पुनर्विलोकन याची ने दिनांक 3.8.2009 को अपना डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र दाखिल किया है और ऐसा होने के चलते जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ प्राथमिक शिक्षक के रूप में पुनर्विलोकन याची का नाम अनुशंसित नहीं करने में न्यायोचित नहीं था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उपलब्ध पश्चातवर्ती सामग्रियों के आधार पर एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 में पारित दिनांक 8.3.2013 के निर्णय का पुनर्विलोकन करने की आवश्यकता है।

15. प्रत्यर्थी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चार उम्मीदवार स्वयं जून/अगस्त, 2008 में प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं जबकि पुनर्विलोकन याची दिनांक 10.11.2008 को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ परीक्षा के काफी बाद दिसंबर, 2008 में प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा परीक्षा में उपस्थित हुआ और इसलिए, पुनर्विलोकन याची का मामला उन उम्मीदवारों के मामले पर आधारित नहीं है।

16. पुनर्विलोकन याची की शिकायत कि उसके साथ भेदभाव किया गया था पर विचार करने के लिए हम लाभदायी रूप से चार उम्मीदवारों के विवरणों और डी॰ पी॰ ई॰ परीक्षा में उनकी उपस्थिति की तिथि और डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्रों को जारी तथा प्रस्तुत किए जाने की तिथियों को निर्दिष्ट कर सकते हैं जो निम्नलिखित हैं:

नाम	डी॰ पी॰ ई॰ परीक्षा में उपस्थिति	डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र जारी करने की तिथि	डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने की तिथि
अमित कुमार दास	जून, 2008	20.1.2009	1.10.2009
अनिल कुमार रवानी	जून, 2008	9.1.2009	1.10.2009
ठाकुर प्रसाद रवानी	जून, 2008	20.1.2009	1.10.2009
अंग्रेज कुमार मंडल	जून, 2008	31.8.2008	.....

उक्त के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि उक्त चार उम्मीदवार जून, 2008 में प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा परीक्षा में उपस्थित हुए, दिनांक 10.11.2008 को ली गयी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ परीक्षा की तिथि के काफी पहले, किंतु पुनर्विलोकन याची केवल दिसंबर, 2008 में प्राथमिक शिक्षा डिप्लोमा परीक्षा में उपस्थित हुआ, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ परीक्षा के बाद, और इसलिए, पुनर्विलोकन याची प्रतिवाद नहीं कर सकता है कि वह पूर्वोक्त चार उम्मीदवारों की तरह समस्थित है और कि उसके साथ भेदभाव किया गया है।

17. पुनर्विलोकन याची द्वारा किया गया प्रतिवाद यह है कि चार उम्मीदवारों, जिनके नामों की अनुशंसा की गयी है, ने बढ़ायी गयी तिथि अर्थात् दिनांक 30.7.2009 के काफी बाद दिनांक 1.10.2009 को अपना डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र दाखिल किया है। निश्चय ही, उक्त समस्त उम्मीदवारों ने दिनांक 1.10.2009 को अपना डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्र दाखिल किया है। चूँकि उन उम्मीदवारों का चयन पहले ही कर लिया गया था, शायद जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने दिनांक 1.10.2009 को उन उम्मीदवारों द्वारा दाखिल अनंतिम डी॰ पी॰ ई॰ प्रमाण पत्रों को प्राप्त करना चुना था। हमारा दृष्टिकोण है कि यह किसी भेदभाव के तुल्य नहीं है।

18. यह मानते हुए कि उन चार उम्मीदवारों की नियुक्ति गलत रूप से की गयी है, वह नियुक्ति इप्सित करने के लिए पुनर्विलोकन याची पर कोई अधिकार प्रदत्त नहीं करता है। **उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य बनाम राजकुमार शर्मा एवं अन्य, (2006)3 SCC 330** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यदि कोई नियुक्ति गलती से अथवा गलत रूप से की गयी है, वह किसी अन्य व्यक्ति पर कोई अधिकार प्रदत्त नहीं करती है और अनुच्छेद 14 नकारात्मक समानता परिकल्पित नहीं करता है और यदि राज्य ने गलती की है इसे उसी गलती के स्थायी बनाने के लिए मजबूत नहीं किया जा सकता है। उसके पैरा 15 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"15. Hkyk gh dN ekeyk e fu;fDr xyrh l vFkok xyr :i l dh x;h g] og fdlh vU; 0;fDr ij dkb vfèkdkj çnÙk ugh djrk gA lfoèkku dk vuPNn 14 udkjkRed lekurk ifjdfYir ugh djrk g vkj ;fn jkT; u xyrh fd;k g] bl ml xyrh dk LFkk;h cuku d fy, etcj ugh fd;k tk ldrk gA (n[k % Lug çHkk cuke m0 ç0 jkT; (1996)7 SCC 426; lfpo] t;ij fodkl çkfèkdj.k cuke nkyr ey tu] (1997)1 SCC 35; gfj;k.kk jkT; cuke jkedekj eu] (1997)3 SCC 321; Qjhnkckn lh0 Vh0 Ldu lVj cuke Mh0 th0] LokLF; lok] (1997)7 SCC 752; tkyèkj lèkkj U;kl cuke lij.k flg] (1999)3 SCC 494; itkc jkT; cuke Mk0 jktho ljoy] (1999)9 SCC 240; ;kx'k dekj cuke ,u0 lh0 Vh0 fnYyh dh ljdkj] (2003)3 SCC 548; Hkkjr l?k cuke bVju'kuy VfMx d0] (2003)5 SCC 437; vkj d"V fuokjd xg fuek.k lgdkjh lLFkk e;kfnr cuke vè;{k] bnkj fodkl çkfèkdj.k] (2006)2 SCC 604)"

19. एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 में खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 8.3.2013 का आदेश अभिलेख पर किसी प्रकट गलती से पीड़ित नहीं है जो आदेश का पुनर्विलोकन आवश्यक बनाता हो। पुनर्विलोकन याची द्वारा विश्वास की गयी नयी सामग्री भी एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 47/2013 में पारित दिनांक 8.3.2013 के आदेश का पुनर्विलोकन आवश्यक नहीं बनाता है। इस प्रकार, यह पुनर्विलोकन आवेदन खारिज किए जाने का दायी है।

परिणामस्वरुप, यह पुनर्विलोकन आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

श्रीमती कमला गंगोली एवं अन्य

cuke

रामलखन सिंह यादव महाविद्यालय, राँची

Civil Revision No. 32 of 2011. Decided on 29th April, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 7 नियम 11 (d)—वाद पत्र का अस्वीकरण–संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद–उप-न्यायाधीश ने विस्तारपूर्वक समस्त बिंदुओं पर चर्चा किया है और सामग्री पर विचार करने के बाद आदेश 7 नियम 11 (d) के अधीन आवेदन अस्वीकार करते हुए तार्किक आदेश पारित किया–आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं हैं–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.–(2003)1 SCC 557—Relied; (2004)3 SCC 137; (2005)7 SCC 510—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Rajan Raj, Rohit, Ganesh Pathak, For the Appellants; M/s Anup Kr. Mehta, Sharad Kaushal, For the Plaintiff/Opp. Party.

आदेश

यह पुनरीक्षण आवेदन अभिधान वाद सं॰ 19 वर्ष 2008 में विद्वान उप न्यायाधीश VIII, राँची द्वारा पारित दिनांक 17.8.2011 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याचीगण द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 (d) के अधीन दाखिल दिनांक 12.5.2010 की याचिका अस्वीकार कर दिया गया है।

2. यह निवेदन किया गया है कि विरोधी पक्षकार ने पक्षों के बीच अभिकथित रूप से निष्पादित दिनांक 11.11.1988 के करार के संबंध में संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए दिनांक 14.1.2008 को वाद दाखिल किया है और यह प्रकट है कि विरोधी पक्षकार द्वारा दाखिल वाद समय वर्जित है। आगे प्रतिवाद किया गया है कि पूर्वोक्त करार जिसे पक्षों के बीच निष्पादित किया गया था रद्द हो गया क्योंकि विरोधी पक्षकार उक्त करार के अधीन अपनी बाध्यता का उन्मोचन करने में विफल रहा और इसे विरोधी पक्षकार को सम्यक रूप से सूचित किया गया था। चूँकि वादी द्वारा दाखिल वाद के लिए वाद हेतुक नहीं है, विरोधी पक्षकार द्वारा दाखिल वाद पत्र अस्वीकार किए जाने का दायी है किंतु विद्वान उप न्यायाधीश ने प्रावधान का गलत अर्थ लगाया और आक्षेपित आदेश में दिए गए कारण मान्य नहीं हैं। याची को एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 430 वर्ष 1999 (R) के लंबित रहने के दौरान यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया था और इसलिए विरोधी पक्षकार को अभिकथित करार को प्रवर्तित करने के लिए सहारा लेने से अवरुद्ध नहीं किया गया था।

3. दूसरी ओर, विरोधी पक्षकार के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने इस तर्क का जोरदार विरोध किया है और निवेदन किया है कि उक्त करार के निष्पादन के बाद याचीगण यू॰ एल॰ सी॰ केस सं॰ 12 वर्ष 1976 लड़ रहे थे जो उपायुक्त, राँची के समक्ष लंबित था और मामला उच्च न्यायालय तक गया था और अंततः एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 430 वर्ष 1999 (R) के तहत निपटाया गया था। यह निवेदन किया गया है कि याचीगण ने पटना उच्च न्यायालय (रांची पीठ) के समक्ष सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 3347 वर्ष 1998 (R) दाखिल किया है जिसमें विरोधी पक्षकार उपस्थित हुआ है और उक्त रिट आवेदन का प्रतिवाद किया है। तत्पश्चात, विरोधी पक्षकार एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 430 वर्ष 1999 (R) में भी उपस्थित हुआ था जिसमें यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया था और याचीगण को भूमि अंतरित करने से अवरुद्ध किया गया था। यही कारण था कि विरोधी पक्षकार ने संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए कोई वाद दाखिल नहीं किया था। इस न्यायालय ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 430 वर्ष 1999 (R) निपटाते हुए संप्रेक्षित किया है:–

> *^^pfd ;g dFku fd;k x;k g fd egkfo|ky; çkfèkdkjh u igy gh foØ; djkj fd;k g] lefpr Qkje e vihykFkhx.k d fo#) lefpr dk;okgh vkjHk djd foØ; d fy, mDr djkj d fofufn"V ikyu d lcèk e miyCèk vU; mipkjk dk voyc yu dh NV egkfo|ky; çkfèkdkjh dk gA***

4. विरोधी पक्षकार ने उक्त आदेश में किए गए संप्रेक्षण की दृष्टि में अभिधान वाद सं॰ 19 वर्ष 2008 दाखिल किया जिसमें याचीगण ने आदेश VII नियम 11 (d) के अधीन याचिका दाखिल किया जिसे समुचित कारण के साथ अस्वीकार कर दिया गया और वह आदेश किसी अवैधता या अशुद्धता से पीड़ित नहीं है और इसलिए, इस पुनरीक्षण में गुणागुण नहीं है।

5. विद्वान अधिवक्ता ने **सलीम भाई एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2003)1 SCC 557; सोपन सुखदेव सेबल एवं अन्य बनाम सहायक पूर्त्त कार्य आयुक्त एवं अन्य, (2004)3 SCC 137; पोपट एवं कोटेचा प्रोपर्टी बनाम भारतीय स्टेट बैंक स्टॉफ संघ, (2005)7 SCC 510** मामले में निर्णयों पर विश्वास किया है।

6. उन निर्णयों को निर्दिष्ट करते हुए यह प्रतिवाद किया गया है कि वाद पत्र के अस्वीकरण के प्रयोजन से न्यायालय द्वारा वाद पत्र में किए गए प्रकथनों पर विचार किया जाना है। लिखित कथन में किए गए बचाव अथवा उसमें किए गए अभिवचनों पर सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VII नियम 11 (d) के अधीन वादपत्र अस्वीकार करने के प्रयोजन से विचार करने की उम्मीद नहीं की जाती है।

7. मैंने अपने समक्ष प्रस्तुत आक्षेपित निर्णय और सामग्री तथा **सलीम भाई एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2003)1 SCC 557 (ऊपर)** के मामले में निर्णय का परिशीलन किया है। पैरा 9 में स्पष्टत: संप्रेक्षित किया गया है:–

> *^^fopkj.k U;k;ky; okn d fdlh pj.k ij okni=nt dju d igy vFkok fopkj.k d lekiu d igy fdlh Hkh le; ij çfroknh dk leu tkjh dju d ckn lh0 ih0 lh0 d vkn'k VII fu;e 11 d vèkhu viuh 'kfDr dk ç;kx dj ldrk gA lh0 ih0 lh0 d vkn'k 7 d fu;e 11 d [kMk (a) vkj (d) d vèkhu vkonu fofuf'pr dju d ç;ktu l okn i=e fd, x, çdFku fudV :i l lc) g(fyf[kr dFku e çfroknh }kjk fd, x, vfHkopu ml pj.k ij fcYdy vçklfxd gkxA vr% lh0 ih0 lh0 d vkn'k 7 fu;e 11 d vèkhu vkonu fofuf'pr fd, fcuk fyf[kr dFku nkf[ky dju dk fun'k fopkj.k U;k;ky; }kjk vfèkdkfjrk d ç;kx dk Nu okyk çfØ;kRed vfu;ferrk d vykok dN vkj ugh gk ldrk gA***

ऊपर निर्दिष्ट अन्य निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस बिंदु पर विचार किया गया है।

8. विद्वान उप न्यायाधीश ने समस्त बिंदुओं पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है कि और सामग्रियों पर विचार करने के बाद तार्किक आदेश पारित किया है। मैं नहीं पाता हूँ कि आक्षेपित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं है जिसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

नरेन्द्र मोहन सिंह एवं एक अन्य

cuke

प्रवर्तन निदेशालय, राँची एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 2686 of 2013. Decided on 22rd March, 2014.

मनी लाउंड्रिंग निवारण अधिनियम, 2002—धारा 3—कोई व्यक्ति, जो स्वयं को अपराध के आगम से संबंधित किसी प्रक्रिया अथवा गतिविधि में प्रत्यक्षत: अथवा अप्रत्यक्षत: अंतर्ग्रस्त करता है और इसे अकलंकित धन के रूप में प्रक्षेपित करता है, धारा 3 के अधीन अच्छी तरह अभियोजित किया जा सकता है–यह वह तिथि होगी जब किसी व्यक्ति को अपराध के आगम से संबंधित किसी प्रक्रिया अथवा गतिविधि में अंतर्ग्रस्त और इसे अकलंकित संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित करता पाया गया है, जो धारा 3 के अधीन अभियोजन के प्रयोजन से प्रासंगिक होगी और न कि वह तिथि जब अनुसूचित अपराध किया गया था। (पैरा 9)

निर्णयज विधि.–W.P. (Cri) No. 325 of 2010; AIR 1984 SC 464—Relied; (2013)5 SCC 111; (2008)8 SCC 205; (2011)3 SCC 581; (2011)10 SCC 235—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Harin P. Raval, Anil Kumar, Sameer Saurabh, Anando Mukherjee, For the Petitioners; Mr. A.K. Das, For the E.D..

आदेश

दिनांक 1.7.2009 को मधु कोड़ा एवं अन्य के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया गया था जिसे मामला सं॰ 1 वर्ष 2009 के रूप में दर्ज किया गया था, जिसमें अन्य के साथ यह अभिकथित किया गया था कि कमलेश कुमार सिंह, जिन्होंने मंत्री, जल संसाधन, उत्पाद शुल्क, सिविल एवं खाद्य आपूर्ति के विभागों का पद संभाला था, ने भ्रष्ट या अवैध साधनों द्वारा अपनी आय के ज्ञात स्रोत के अननुपातिक संपत्ति जमा किया था। उस परिवाद को इसके संस्थापन एवं अन्वेषण के लिए निगरानी ब्यूरो, राँची के समक्ष भेजा गया था। निगरानी ने मामले को निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 9 वर्ष 2009 के रूप में संस्थित किया और मामले के अन्वेषण के बाद दिनांक 28.1.2010 को कमलेश कुमार सिंह सहित अभियुक्तगण के विरुद्ध इस आरोप पर आरोप-पत्र दाखिल किया कि कमलेश कुमार सिंह ने 1,75,15,918/- रुपयों के मूल्य की चल-अचल संपत्तियों को अर्जित किया है जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत के अननुपातिक है और तद्द्वारा यह अभिकथित किया गया था कि उसने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 420, 423, 424, 465 और 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 7, 10, 11 और 13 (2) सह-पठित धारा 13 (e) के अधीन भी दंडनीय अपराध किया है।

2. बाद में, इस न्यायालय ने डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 4700 वर्ष 2008 में सी॰ बी॰ आई॰ को निगरानी केस सं॰ 9 वर्ष 2009 का आगे का अन्वेषण करने का निर्देश देते हुए दिनांक 4.8.2011 को आदेश पारित किया। इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुपालन में, सी॰ बी॰ आई॰ ने मामले को पुनः आर॰ सी॰ केस सं॰ 5 (A)/2010/AHD राँची के रूप में पुनः दर्ज किया। अन्वेषण पूरा करने पर, दिनांक 26.3.2012 को कमलेश कुमार सिंह सहित अभियुक्तगण के विरुद्ध इस आरोप पर आरोप पत्र दाखिल किया गया था कि उसने मार्च, 2005 से जुलाई, 2009 तक की अवधि के दौरान 5,46,07,597/- रुपयों की आस्तियों को अर्जित किया है जो उसकी आय के ज्ञात स्रोत के अननुपातिक है। आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के पहले प्रवर्तन निदेशालय ने अभियुक्तगण के विरुद्ध ई॰ सी॰ आई॰ आर॰ मामला दर्ज किया था। मामले के अन्वेषण के बाद, दिनांक 14.2.2011 को मनी लाउंड्रिंग निवारण अधिनियम, 2002 (इसमें इसके बाद पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट) की धारा 45 के अधीन कमलेश कुमार सिंह के विरुद्ध परिवाद दाखिल किया गया था। सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के बाद, जब सी॰ बी॰ आई॰ के अन्वेषण में अतिरिक्त तथ्य प्रकाश में आए, प्रवर्तन निदेशालय ने उक्त ई॰ सी॰ आई॰ आर॰ मामले में आगे मामले का अन्वेषण किया जिसके द्वारा इन याचीगण और अन्य अभियुक्तगण की अपराधिता पायी गयी थी और, इसलिए, दिनांक 12.8.2013 को पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 45 के अधीन विशेष न्यायालय के समक्ष इस अभिकथन पर परिवाद दाखिल किया गया था कि प्रवर्तन निदेशालय द्वारा किए गए अन्वेषण के दौरान जब यह पाया गया था कि सूर्य सोनल सिंह, पुत्र कमलेश कुमार सिंह, ने दावा किया था कि उसने अंकिता सिंह (याची सं॰ 2), नरेन्द्र मोहन सिंह (याची सं॰ 2) की पत्नी, से कर्ज लेने के बाद एक करोड़ रुपयों की राशि में से कतिपय संपत्तियों को अर्जित किया था, उसको पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 50 के अधीन समन जारी किया गया था। उसने समन का प्रत्युत्तर दिया और बयान दिया कि उसने अपनी बहन अंकिता सिंह से एक करोड़ रुपया कर्ज लिया था जिसका उपयोग विपुल ट्रेड सेन्टर, गुड़गाँव में संपत्तियों को अर्जित करने के लिए किया गया था। उस पर, श्रीमती अंकिता सिंह को भी नोटिस दिया गया था जिसने संपुष्ट किया कि उसने क्रमशः दिनांक 22.7.2008 और दिनांक 28.8.2008 को 50 लाख रुपयों की प्रत्येक दो समान किश्त में दो चेकों के तहत अपने भाई सूर्य सोनल सिंह को अपने पति नरेन्द्र मोहन सिंह (याची सं॰ 1) से कर्ज लेने के बाद एक करोड़ रुपया कर्ज दिया था। नरेन्द्र मोहन सिंह ने भी नोटिस दिए जाने पर प्रत्युत्तर दिया और प्रकट किया कि उसने अपनी पत्नी अंकिता सिंह (याची सं॰ 2) को एक करोड़ रुपया कर्ज दिया था।

किंतु उनके द्वारा दाखिल आयकर रिटर्न (आई॰ टी॰ आर॰) परिलक्षित नहीं करता था कि नरेन्द्र मोहन सिंह ने अपनी पत्नी को कर्ज दिया था जिसने बदले में अपने भाई सूर्य सोनल सिंह को कर्ज के रूप में इसे दिया था। आगे यह अभिकथित किया गया है कि यद्यपि नरेन्द्र मोहन सिंह ने प्रवर्तन निदेशालय के प्राधिकारी के समक्ष दावा किया था कि उसने अनेक पक्षों से कर्ज/अग्रिम लिया था किंतु उसने प्रवर्तन निदेशालय के समक्ष उन पक्षों का नाम प्रकट कभी नहीं किया था। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि पूर्वोक्त समस्त तीनों व्यक्तियों ने झूठा अभिवचन किया है कि गुड़गाँव में संपत्तियाँ सूर्य सोनल सिंह द्वारा कर्ज पर ली गयी राशि से अर्जित की गयी थी बल्कि संपत्तियाँ उसके पिता कमलेश कुमार सिंह द्वारा अनुसूचित अपराध करके उत्पन्न किए गए अपराध के आगम के माध्यम से अर्जित की गयी थी।

न्यायालय ने प्रथम दृष्टया मामला बनता पाने पर ई॰ सी॰ आई॰ आर॰/02/Pat/2009/AD (B) में पारित दिनांक 12.8.2013 के आदेश के तहत इन दोनों याचीगण अर्थात् नरेन्द्र मोहन सिंह और उसकी पत्नी अंकिता सिंह के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया। वह आदेश चुनौती के अधीन है।

3. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री रावल निवेदन करते हैं कि मनी लाउंड्रिंग का अपराध स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि आरोपित व्यक्ति ने अपराध के आगम से संबंधित किसी प्रक्रिया अथवा गतिविधि में प्रत्यक्षत: अथवा अप्रत्यक्षत: लिप्त होने अथवा जानते हुए सहायता करने अथवा जानते हुए पक्ष होने अथवा वास्तविक रूप से अंतर्ग्रस्त होने का प्रयास किया। जबकि पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 2 (u) के निबंधनानुसार अपराध के आगम का अर्थ है अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक गतिविधि के परिणामस्वरुप प्रत्यक्षत: अथवा अप्रत्यक्षत: प्राप्त की गयी संपत्ति और पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 2 (1) (y) के अधीन दी गयी परिभाषा के निबंधनानुसार अनुसूचित अपराध का अर्थ अनुसूची के भाग A, भाग B और भाग C के अधीन अपराध हुआ करता है, किंतु याचीगण के विरुद्ध अकलंकित धन के रूप में एक करोड़ रुपयों की राशि प्रक्षेपित करने का अभिकथन सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा दाखिल आरोप-पत्र का विषय वस्तु कभी नहीं है और, इसलिए, याचीगण के विरुद्ध पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन कोई अभियोजन पोषणीय नहीं होगा क्योंकि किसी व्यक्ति को पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम के अधीन अभियोजित करने के लिए पूर्वशर्त यह है कि व्यक्ति को अपराध के आगम से संबंधित प्रक्रिया अथवा गतिविधि में स्वयं को अंतर्ग्रस्त करना चाहिए और अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक गतिविधि के परिणामस्वरुप अपराध का आगम प्राप्त किया जाए। किंतु, यहाँ वर्तमान मामले में जैसा ऊपर कथन किया गया है, आरोप जिस पर पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम के अधीन संज्ञान लिया गया है, वह आरोपों का भाग निर्मित नहीं करता है जिस पर सी॰ बी॰ आई॰ ने आरोप-पत्र दाखिल किया है।

इस संबंध में, आगे निवेदन यह है कि दो संव्यवहार, जिन्हें धारा 13 के अधीन 50 लाख रुपया प्रत्येक का कमलेश कुमार सिंह द्वारा किए गए अपराध का आगम कहा जाता है, दिनांक 22.7.2008 और दिनांक 28.8.2008 को किए गए थे जिन तिथि पर अंकिता सिंह द्वारा अपने पति नरेन्द्र मोहन सिंह से 50 लाख रुपयों और पुन: 50 लाख रुपयों का कर्ज लेकर इसे अपने भाई सूर्य सोनल सिंह को कर्ज के रूप में दिया किंतु भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 दिनांक 1.6.2009 के प्रभाव से वर्ष 2009 में किए गए संशोधन के फलस्वरुप अनुसूचित अपराध के रूप में जोड़ी गयी है और, तद्द्वारा, यह स्पष्ट है कि उन दोनों संव्यवहारों को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 को अनुसूचित अपराध के रूप में जोड़े जाने के पहले किया गया था और तद्द्वारा उन संव्यवहारों को भले ही अपराध के आगम के रूप में लिया जाता है, उन्हें अनुसूचित अपराध से उत्पन्न हुआ नहीं कहा जा सकता है और, इसलिए, केवल इस आधार पर पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम के अधीन अभियोजन पोषित नहीं किया जा सकता है और, तद्द्वारा, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

इस संबंध में, आगे यह निवेदन किया गया है कि संशोधित अधिनियम जिसके द्वारा धारा 13 सम्मिलित किया गया था का भूतलक्षी प्रभाव नहीं हो सकता है क्योंकि संविधि जो सारवान अधिकारों को प्रभावित करती है को सदैव प्रवर्तन में भविष्यलक्षी उपधारित किया जाता है जब तक इसे अभिव्यक्त रूप से अथवा आवश्यक आशय द्वारा भूतलक्षी नहीं बनाया जाता है। इस संबंध में, विद्वान वरीय अधिवक्ता ने **''आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम चौधरी गांधी,'' (2013)5 SCC 111,** और **''रितेश अग्रवाल एवं एक अन्य बनाम भारत का प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड एवं अन्य,'' (2008)8 SCC 205,** मामलों में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

तर्क का दूसरा चरण यह है कि प्रवर्तन निदेशालय ने याची सं॰ 2 द्वारा अपने भाई सूर्य सोनल सिंह को कर्ज के रूप में दिए गए एक करोड़ रुपयों के संव्यवहारों के संबंध में अनंतिम कुर्की के लिए दिनांक 24.7.2013 को आदेश पारित किया था। इसकी संपुष्टि के लिए मनी लाउंड्रिंग अधिनियम, 2002 के प्रावधानों के अधीन न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के समक्ष परिवाद दाखिल किया गया था। विद्वान न्यायनिर्णयन प्राधिकारी ने मामले पर पूरा विचार करने के बाद दर्ज किया कि एक करोड़ रुपयों की राशि वैध धन है और अपराध के आगम से संबंधित नहीं है और, तद्द्वारा, प्रवर्तन निदेशालय का संपूर्ण मामला कि याचीगण ने कमलेश कुमार सिंह द्वारा अनुसूचित अपराध करके उत्पन्न किए गए अपराध के आगम को अकलंकित धन के रूप में प्रक्षेपित करके इससे संबंधित प्रक्रिया में स्वयं को लिप्त किया है, आधारहीन बन जाता है और तद्द्वारा **''राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं एक अन्य, (2011)3 SCC 581,** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में अभिखंडित किए जाने का दायी है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973 की धारा 9 (1) (f) (i) और धारा 8 (2) सह-पठित धारा 64 (2) के प्रावधानों का उल्लंघन करने के लिए श्री राधेश्याम केजरीवाल के विरुद्ध आरोपों को संपोषित नहीं किया जा सकता है। न्याय निर्णयन कार्यवाही में प्रवर्तन निदेशालय द्वारा दिए गए निर्देश की दृष्टि में अधिनियम के किसी प्रावधान का उल्लंघन नहीं हुआ है। इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रवर्तन निदेशालय को दांडिक अभियोजन जारी रखने की अनुमति देना अन्यायोचित और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

4. संयोगवश, यह निवेदन भी किया गया था कि पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम, 2000 की धारा 44 (1) (b) में अंतर्विष्ट प्रावधान इस निमित्त प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा किए गए परिवाद पर धारा 3 के अधीन अपराध का संज्ञान लेने के लिए विशेष न्यायालय को सशक्त बनाती है और साथ ही पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम, 2002 की धारा 45 का परन्तुक प्रावधानित करता है कि विशेष न्यायालय उसमें विहित प्राधिकारी द्वारा लिखित में दिए गए परिवाद के सिवाए धारा 4 के अधीन दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान नहीं लेगा और तद्द्वारा जब दोनों प्रावधान अनुबंधित करते हैं कि केवल एक 'परिवाद' पर संज्ञान लिया जा सकता है, एक से अधिक परिवाद, होने का अनुध्यान प्रतीत नहीं होता है और तद्द्वारा पूरक परिवाद के रूप में अभियोजन आरंभ करने की कोई गुंजाइश प्रतीत नहीं होती है। चूँकि, पूरक परिवाद पर अपराध का संज्ञान लिया गया है, उक्त आदेश को विधि की दृष्टि में संपोषणीय अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है।

5. इसके विरुद्ध, प्रवर्तन निदेशालय के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दास निवेदन करते हैं कि आरंभ में पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 45 के अधीन कमलेश कुमार सिंह के विरुद्ध परिवाद दर्ज किया गया था जब उसे अपराध के आगम को अकलंकित संपत्तियों के रूप में प्रक्षेपित करता पाया गया था किंतु सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के बाद कतिपय नए तथ्य प्रकाश में

आए कि कमलेश कुमार सिंह के पुत्र सूर्य सोनल सिंह ने अग्रिम आदि के रूप में वैध स्रोतों से संपत्ति अर्जित करने का दावा किया था, उसे पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 50 के अधीन नोटिस दिया गया था जिसके प्रति उसने प्रत्युत्तर दिया था जिसमें उसने विपुल ट्रेड सेन्टर, गुड़गाँव में संपत्ति अर्जित करने के लिए अपनी बहन अंकिता सिंह से एक करोड़ रुपया कर्ज लेकर धन उगाहने का दावा किया। जब अंकिता सिंह को नोटिस दिया गया था, उसने प्रकट किया कि धन, जिसे उसके भाई को दिया गया था, उसके पति नरेन्द्र मोहन सिंह (याची सं॰ 1) से लिया गया था। जब नरेन्द्र मोहन सिंह से इस बिंदु पर प्रश्न पूछा गया था, उसने स्वीकार किया कि उसने कुछ व्यक्तियों से कर्ज लेने के बाद अपनी पत्नी को धन दिया था किंतु समय के उस बिंदु पर उसने उन व्यक्तियों का नाम कभी नहीं प्रकट किया। जिनसे उसने कर्ज लिया था। इसके अतिरिक्त, समस्त तीन व्यक्तियों द्वारा दाखिल आयकर रिटर्न ने उन संव्यवहारों को कभी नहीं परिलक्षित किया और, तद्द्वारा, उनके अभिवचनों को सत्य स्वीकार नहीं किया गया था।

इस संबंध में, आगे यह निवेदन किया गया था कि अब याचीगण बैलेंसशीट जैसे कतिपय दस्तावेजों के आधार पर यह अभिवचन कर रहे हैं कि वे दस्तावेजों उक्त तथ्य को परिलक्षित करते हैं जिसे उन व्यक्तियों की ओर से प्रस्तुत किया गया है किंतु उन दस्तावेजों को पश्चात विचार के उत्पाद के रूप में कहा जा सकता है क्योंकि उनके द्वारा दाखिल आई॰ टी॰ आर॰ जिसे प्रवर्तन निदेशालय के प्राधिकारी द्वारा आयकर प्राधिकारी से प्राप्त किया गया है ने उन संव्यवहारों के बारे में कभी परिलक्षित नहीं किया है और कि याचीगण की ओर से नया अभिवचन किया गया है, जिसे बयान देते समय कभी नहीं किया गया था, कि उसने भवेश मेटल प्राईवेट लिमिटेड और मेसर्स डायनामिक्स रियलिटी से कर्ज लिया था किंतु सत्यापन पर याची सं॰ 1 द्वारा किया गया दावा झूठा पाया गया है। इन परिस्थितियों के अधीन, पूरक परिवाद दाखिल किया गया है और इसका दाखिला पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम के अधीन अथवा दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन कभी प्रतिषिद्ध नहीं किया गया है।

6. आगे, यह निवेदन किया गया था कि पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 3 में अंतर्विष्ट प्रावधान अनुबंधित नहीं करते हैं कि केवल तब जब कोई अनुसूचित अपराध के विशेषत: भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 जब इसे संशोधन के रूप में संविधि में सम्मिलित किया गया था के अधीन अपराध करता है, व्यक्ति द्वारा अपराध के आगम का प्रक्षेपण अभियोजित किए जाने का दायी होगा, बल्कि मनी लाउंड्रिंग का अपराध उस तिथि पर किया जाता है जब अपराध के आगम को अकलंकित संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित किया जा रहा है जिस प्रतिपादना को इस न्यायालय द्वारा **''हरिनारायण राय बनाम भारत संघ एवं अन्य, [डब्ल्यू॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 325 वर्ष 2010]"** मामले में अधिकथित किया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने अपना आधार पुख्ता करने के लिए **''सज्जन सिंह बनाम पंजाब राज्य, AIR 1964 SC 464** और **भारत संघ बनाम हसन अली खान एवं एक अन्य, (2011)10 SCC 235,** मामलों में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि आवेदन गुणागुण रहित है और, इसलिए, यह अभिखंडित किए जाने योग्य है।

7. चूँकि, अभियोजन के मामले के मुताबिक, एक करोड़ रुपयों का संव्यवहार दिनांक 22.7.2008 और दिनांक 28.8.2008 को हुआ जब याची सं॰ 2 ने अपने पति याची सं॰ 1 से उक्त राशि का कर्ज लेने के बाद इसे अपने भाई सूर्य सोनल सिंह, पुत्र कमलेश कुमार सिंह जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (1) (e) के अधीन दर्ज मामले के अभियुक्तों में से एक है, को कर्ज के रूप में दिया, याचीगण की ओर से निवेदन किया जा रहा है कि उक्त संव्यवहार को अपराध के आगम के प्रक्षेपण के रूप में

नहीं लिया जा सकता है क्योंकि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 के अधीन अपराध दिनांक 1.6.2009 के प्रभाव से अनुसूचित अपराध के रूप में जोड़ा गया था जब संशोधन अधिनियम प्रभाव में आया।

दूसरी ओर, प्रवर्तन निदेशालय की ओर से अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन व्यक्ति को अभियोजित करने के प्रयोजन से लाउंड्रिंग की तिथि प्रासंगिक होगी और न कि वह तिथि जब अनुसूचित अपराध किया गया है।

8. निवेदनों का अधिमूल्यन करने के लिए पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धाराओं 3, 2 (u) और 2 (v) में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जो क्रमश: मनी लाउंड्रिंग के अपराध पर विचार करती है और अपराध का आगम एवं संपत्ति को परिभाषित करती है जो निम्नलिखित है:–

^^3. **euh ykmfMx dk vijkèk-**&tk dkb Hkh vijkèk d vkxe l tMh ;k bl vdyfdr lifÙk d rkj ij i{kfir dju okyh fdlh ifØ;k xfrfofèk e okLro e 'kkfey gkrk g ;k tkuc>dj lgk;rk djrk g ;k tkuc>dj ble Hkkx yrk g ;k iR;{kr% ;k viR;{kr% ble 'kkfey gku dk i;kl djrk g og euh ykmfMx d vijkèk dk nk"kh gkxkA

2(u) ^^vijkèk d vkxe** l vfHkir g fdlh vulfpr vijkèk l lcfèkr nkf.Md xfrfofèk d QyLo:i fdlh 0;fDr }kjk iR;{kr% ;k viR;{kr% iklr ;k vfHkiklr dh x;h dkb lifÙk ;k ,lh lifÙk dk eY;(

2(v) ^^lifÙk** l vfHkir g fdlh Hkh idkj dh dkb lifÙk ;k vkfLr pkg og eÙk gk ;k veÙk] py gk ;k vpy] n';eku gk ;k vn';eku vkj ble 'kkfey g ,lh lifÙk ;k vkfLr ij vfHkèkku ;k fgr n'kku oky foy[k ;k fy[kr] tgk dgh Hkh LFkkfir fd; tk;A**

9. आगे, यह कथन किया जाए कि पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम, 2002 की अनुसूची के भाग B में मनी लाउंड्रिंग संशोधन अधिनियम, 2009 द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 सम्मिलित की गयी थी जो दिनांक 1.6.2009 के प्रभाव से प्रभाव में आयी। धाराओं 3, 2 (u) और 2 (v) में अंतर्विष्ट प्रावधान के पठन से यह प्रतीत होगा कि कोई व्यक्ति जो अपराध के आगम से संबंधित किसी प्रक्रिया अथवा गतिविधि में स्वयं को प्रत्यक्षत: अथवा अप्रत्यक्षत: अंतर्ग्रस्त करता है और इसे अकलंकित धन के रूप में प्रक्षेपित करता है, को बिल्कुल धारा 3 के अधीन अभियोजित किया जा सकता है। अत:, वह तिथि जब किसी व्यक्ति को अपराध के आगम से संबंधित किसी प्रक्रिया अथवा गतिविधि में अंतर्ग्रस्त पाया गया है और इसे अकलंकित संपत्ति के रूप में प्रक्षेपित किया गया है, पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन अभियोजन के प्रयोजन से प्रासंगिक होगी और न कि वह तिथि जब अनुसूचित अपराध किया गया था। **''हरि नारायण राय बनाम भारत संघ एवं अन्य (ऊपर)** में इस न्यायालय द्वारा इस प्रतिपादना को अधिकथित किया गया है।

10. आगे, इस संबंध में, **सज्जन सिंह बनाम पंजाब राज्य (ऊपर)** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें अपीलार्थी का भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 5 के अधीन आरोपों के लिए विचारण किया गया था, जब अपीलार्थी द्वारा अर्जित आस्तियों को उसकी आय के ज्ञात स्रोत के अननुपातिक पाया गया था, दृष्टिकोण जिसे अपनाया गया था, यह है कि संपत्ति जिसे उसकी आय के ज्ञात स्रोत के अननुपातिक माना गया था, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 5 (3) को धारा 5 में सम्मिलित करने के पहले अर्जित किया गया था और तद्द्वारा वह भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 5 के अधीन अभियोजित किए जाने का दायी नहीं है। माननीय न्यायाधीशों द्वारा पैरा 15 में दिए गए कारण से प्रतिवाद अस्वीकार किया गया था, जो निम्नलिखित है:–

*"15. ;g Hkh mfYyf[kr fd;k tk ldrk g fd ;fn vfèkfu;e vkjHk gku dh frfFk d igy vftr èkuh; llkèkuk vFkok lifÙk dk èkkjk 5 dh mièkkjk (3) ykx dju e [kkrk d ckgj NkM fn;k tkrk g] vk; dh çkflr] ftld fo#) vuikr ij fopkj fd;k tkuk g] dk vfèkfu;e d ckn dh vofèk rd lhfer djuk mfpr vkj ;fDr;Dr gkxkA idVr% ;g fofp= vkj fo"ke voLFkk dh vkj y tk,xk tk fdlh :i e Lo; vfHk;Dr d çfr lrk"ktud vFkok ennxkj ugh gkxkA D;kfd vfèkfu;e d vkjHk gku d io d o"kk d nkjku çkIr dh x;h vk; u vfèkfu;e d vkjHk gku d ckn lifÙk d vtu e enn fd;k gkxkA ge fdlh Hkh fcn l ekey dk n[k] ge ;g Li"V çrhr gkrk g fd vfHk;Drx.k vFkok mldh vkj l fdlh vU; 0;fDr d dCt e èkuh; llkèku vkj lifÙk dk èkkjk 5 dh mièkkjk (3) d ç;ktu l fopkj e fy;k tkuk gkxk fd D;k bUg vfèkfu;e d çHkko e vku d igy vFkok ckn e vftr fd;k x;k FkkA***

11. इसके अतिरिक्त, मामले के तथ्य उस निवेदन को न्यायोचित नहीं ठहराते हैं जिसे याचीगण की ओर से किया गया है। यह कथन किया जाए कि सी॰ बी॰ आई॰ का मामला यह है कि कमलेश कुमार सिंह ने मार्च, 2005 और जुलाई, 2009 के बीच 5,46,07,597/- रुपयों के मूल्य की आस्तियों को अर्जित किया था जबकि धारा 13, जैसा ऊपर कथन किया गया है, दिनांक 1.6.2009 के प्रभाव से अनुसूचित अपराध में सम्मिलित की गयी थी। अतः, अनुसूचित अपराध से संबंधित दांडिक गतिविधि के परिणामस्वरुप प्राप्त की गयी संपत्ति को आसानी से अपराध के आगम के रूप में माना जा सकता है। याचीगण को वर्ष 2008 में अपराध के आगम की उस प्रक्रिया अथवा गतिविधि में स्वयं को अंतर्ग्रस्त करता पाया गया है जब उन्हें सूर्य सोनल सिंह को धन देता हुआ बताया जाता है जिसे वर्ष 2008 से 2012 तक अपराध के आगम से संबंधित गतिविधि में अंतर्ग्रस्त पाया गया है जब उसने गुड़गाँव में रियल एस्टेट में अपराध का आगम निवेशित किया किंतु उन सबों को इसे अनुसूचित अपराध के रूप में धारा 13 में सम्मिलित किए जाने के काफी बाद इसे अकलंकित धन के रूप में प्रक्षेपित करता पाया गया है। इसके अतिरिक्त, यह पाया जा सकता है कि वर्ष 2008 से आरंभ होकर वर्ष 2012 तक अपराध के आगम का अंतर्सबंधित संव्यवहार हुआ था। यदि अभियोजन ने सूर्य सोनल सिंह को स्वयं को अपराध के आगम की गतिविधि अथवा प्रक्रिया में स्वयं को अंतर्ग्रस्त करता पाया है, याची सं॰ 1, 2 और सूर्य सोनल सिंह के बीच हुआ कोई संव्यवहार पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 23 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार अंतर–संबंधित संव्यवहार उपधारित किया जाएगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"23. **vrlcfèkr l0;ogkj e mièkkj.kk–***&tgk euh ykmfMx e nk ;k nk l vfèkd vrlcfèkr l0;ogkj 'kkfey g ,o ,d ;k ,d l vfèkd l0;ogkj euh ykmfMx e fylr fl) gkrk g ;k gkr g rc èkkjk 8 d vèkhu U;k;fu.k;u ;k vfèkgj.k d i;ktuk l tc rd fd U;k; fu.k; ikfèkdkjh dk vU;Fkk lekèkku u djk fn;k tk;] ;g miènkfjr fd;k tk;xk fd 'k"k l0;ogkj ,l vrlcfèkr l0;ogkj dk Hkkx fufer djr gA***

12. इन परिस्थितियों के अधीन, निवेदन जिसे याचीगण की ओर से किया गया था कि वर्ष 2008 में याचीगण द्वारा किया गया संव्यवहार पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन अभियोजन का विषयवस्तु नहीं है, स्वीकार करने योग्य नहीं है।

13. मामले में आगे जाते हुए यह कथन किया जाए कि न्याय निर्णयन प्राधिकारी ने उक्त संव्यवहारों के माध्यम से अर्जित संपत्तियों की कुर्की से संबंधित मामले का न्यायनिर्णयन करते हुए यह अभिनिर्धारित

किया है कि एक करोड़ रुपया वैध धन है और अपराध के आगम से संबंधित नहीं है। ऐसी संभावना में, विद्वान वरीय अधिवक्ता ने **''राधेश्याम केजरीवाल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं एक अन्य'' (ऊपर)** में मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए अभियोजन का अभिखंडन इप्सित किया है।

यह सत्य है कि माननीय न्यायाधीशों ने ''राधेश्याम केजरीवाल'' मामले में अभिनिर्धारित किया है कि यदि न्याय निर्णयन प्राधिकारी पाता है कि अधिनियम के किसी प्रावधान का उल्लंघन नहीं हुआ है। प्रवर्तन निदेशालय को अभियोजन जारी रखने की अनुमति देना अन्यायोचित और न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। माननीय न्यायाधीशों ने पैरा 38 उपखंड (vi) - (vii) और 39 में निम्नलिखित प्रतिपादित किया है:–

"38. bu fu.k;k l dk<dj fudky x, fu.k;kèkkj dk ekV rkj ij fuEufyf[kr :i e dfFkr fd;k tk ldrk gA

(i) (v) .....

(vi) ln'k mYy?ku d fy, fopkj.k dk lkeuk dju oky 0;fDr d i{k e U;k; fu.k;u dk;okgh dk fu"d"k&fu"d"k dh çÑfr ij fuHkj djxkA ;fn U;k;fu.k;u dk;okgh e foefDr rduhdh vkèkkj ij g vkj u fd x.kkx.k ij] vfHk;ktu tkjh jg ldrk g(vkj

(vii) fdr x.kkx.k ij foefDr d ekey e tgk vfHkdFku dk lik"k.kh; fcYdy ugh ik;k x;k g vkj 0;fDr dk funk"k vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g] rF;k ,o ifjfLFkfr;k d mlh lox ij nkfMd vfHk;ktu dk tkjh jgu dh vuefr ugh nh tk ldrh g ft ldk j[kkfdr dju okyk fl)kr nkfMd ekeyk e çek.k dk mPprj Lrj gA

*39. vr%] gekj er e] ekinM ;g fu.k; djuk gkxk fd D;k U;k;fu.k;u dk;okgh e vkj vfHk;ktu dk;okgh e Hkh vfHkdFku ln'k g vkj U;k;fu.k;u dk;okgh e lcfèkr 0;fDr dh foefDr x.kkx.k ij dh xb gA ;fn bl x.kkx.k ij ik;k tkrk g fd U;k; fu.k;u dk;okgh e vfèkfu;e d çkoèkkuk dk mYy?ku ugh gvk g] lcfèkr 0;fDr dk fopkj.k U;k;ky; dh çfØ;k dk n#i;kx gA***

14. न्यायनिर्णयन प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश के परिशीलन से, जैसा पूरक प्रतिशपथ पत्र के प्रति याचीगण के उत्तर के परिशिष्ट 9 में अंतर्विष्ट है, यह प्रतीत होता है कि न्याय-निर्णय प्राधिकारी इस कारण इस निष्कर्ष पर आए कि सी॰ बी॰ आई॰ ने मामले का अन्वेषण करने पर याची सं॰ 1, 2 और सूर्य सोनल सिंह के बीच हुए एक करोड़ रुपए के संव्यवहार में कोई अवैधता अथवा अनियमितता नहीं पाया था और उक्त संव्यवहार आयकर रिटर्न और उन व्यक्तियों के बैलेंसशीट से परिलक्षित होता है किंतु प्रवर्तन निदेशालय का मामला जैसा यहाँ बनाया गया है भिन्न है जिसमें प्रवर्तन निदेशालय का दृष्टिकोण है कि जब प्रवर्तन निदेशालय ने सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा किए गए अन्वेषण के बाद पाया था कि इन याचीगण और सूर्य सोनल सिंह की अंतर्ग्रस्तता हो सकती है, पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 50 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार नोटिस जारी किया जिसके प्रत्युत्तर में याची सं॰ 2 द्वारा यह कथन किया गया है कि उसने पति याची सं॰ 1 से कर्ज लिया था और इसे कर्ज के रूप में अपने भाई को दिया था। याची सं॰ 2 ने यह भी स्वीकार किया कि उसने कर्ज लेने के बाद अपनी पत्नी के खाता में उक्त राशि अंतरित किया

किंतु समय के उस बिंदु पर उसने कभी प्रकट नहीं किया कि उसने किससे कर्ज लिया था। किंतु, इस मामले की कार्यवाही के दौरान पक्षों के नाम प्रकट किए गए हैं जिनसे कर्ज लिया गया था। उनके दावा से संतुष्ट होने के लिए जब याचीगण और सूर्य सोनल सिंह को आई॰ टी॰ आर॰ प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था, उन्होंने इन्हें प्रस्तुत किया किंतु किसी याचीगण अथवा सूर्य सोनल सिंह के मामले में उनके आई॰ टी॰ आर॰ से पूर्वोक्त संव्यवहारों का तथ्य परिलक्षित नहीं होता है। किंतु बाद में यह कहा गया है कि बैलेंसशीट दाखिल किया गया था जिसमें कर्ज के लेन-देन का उक्त संव्यवहार दर्शाया गया है और परिस्थितियों के अधीन जब आरंभ में उनके द्वारा आई॰ टी॰ आर॰ में उन्होंने उक्त संव्यवहार को प्रकट नहीं किया था किंतु बाद में दाखिल आई॰ टी॰ आर॰ में उक्त संव्यवहार का सम्मिलन और बैलेंसशीट भी प्रवर्तन निदेशालय के मामले के मुताबिक संदेहपूर्ण दस्तावेज बन जाता है जिन दस्तावेजों पर न्यायनिर्णय प्राधिकारी ने अपना विश्वास स्थापित किया है।

15. प्रवर्तन निदेशालय का आगे मामला यह प्रतीत होता है कि जब याची सं॰ 1 द्वारा दावा किया गया था कि उसने मेसर्स भवेश मेटल और मेसर्स केतन मेटल से कर्ज लिया था, उन फर्मों द्वारा दाखिल दस्तावेज ने याची सं॰ 1 को दिए गए किसी कर्ज को कभी नहीं प्रकट किया। किंतु, बाद में याची सं॰ 1 को कर्ज दिया जाना दर्शाते हुए कुछ दस्तावेज प्रस्तुत किए गए थे किंतु वे दस्तावेज प्रवर्तन निदेशालय के मामले की दृष्टि में बिल्कुल संदेहपूर्ण बन जाते हैं। उस स्थिति में, न्याय निर्णय प्राधिकारी द्वारा दर्ज कोई निष्कर्ष बाध्यकारी नहीं होगा और तद्द्वारा न्यायनिर्णय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश का प्रवर्तन निदेशालय के मामले पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं होगा जिसमें पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धारा 3 के अधीन अपराध की कारिता के लिए याचीगण को अभियोजित किया जा रहा है।

16. मामले में आगे जाते हुए, यह कथन किया जाए कि पूरक परिवाद की पोषणीयता इस आधार पर प्रश्न उठाया गया है कि पी॰ एम॰ एल॰ अधिनियम की धाराओं 44 (1) (b) और 45 में अंतर्विष्ट प्रावधान 'एक परिवाद' को निर्दिष्ट करते हैं। भले ही 'एक परिवाद' के प्रति ऐसा निर्देश है, यह पूरक परिवाद दाखिल किया जाना कभी नहीं रोकता है क्योंकि परिवाद का निर्देश उन प्रावधानों में इस संदर्भ में किया गया है कि जब कभी प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा परिवाद दाखिल किया जाता है, न्यायालय इसका संज्ञान ले सकता है।

17. हमने पहले ही उन परिस्थितियों को ध्यान में लिया है जिनके अधीन पूरक परिवाद दर्ज किया गया है। ऐसी स्थिति में, यह कहा जा सकता है कि इसे उसी तरीके से दर्ज किया गया है जिस तरीके से पुलिस मामले में पूरक आरोप-पत्र दाखिल किया जाता है। यदि ऐसा निर्बंधित अर्थ, जैसा लगाना इप्सित किया गया है, स्वीकार किया जाता है तब परिणाम यह होगा कि भले ही परिवाद दाखिल किए जाने के बाद किसी अन्य व्यक्ति की अपराधिता अन्वेषण के दौरान पायी जाती है, उसे अभियोजित नहीं किया जाएगा। यह विधानमंडल का आशय कभी नहीं हो सकता है।

18. इस प्रकार, ऊपर चर्चा किए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर मैं संज्ञान लेने वाले आदेश में कोई अवैधता नहीं पाता हूँ और, इसलिए, यह आवेदन खारिज किया जाता है।

इस आदेश से अलग होने के पहले यह कथन किया जाए कि इस मामले के निपटान के प्रयोजन से दर्ज किया गया कोई निष्कर्ष मामले के गुणागुण के प्रति प्रतिकूल नहीं हो सकता है।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

सुश्री चित्रा मित्रा उर्फ तुलु मित्रा एवं अन्य

cuke

श्रीमती बंदना मित्रा एवं अन्य

Misc. Appeal No. 230 of 2010. Decided on 16th April, 2014.

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925—धारा 276—वसीयत का प्रोबेट–वसीयतकर्ता ने कोई कारण दिए बिना अपने द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति को विरासत में पाने से अपनी पुत्रियों को वर्जित कर दिया था–यह संदेहपूर्ण परिस्थिति है जिसका संतोषजनक स्पष्टीकरण देने में प्रत्यर्थीगण विफल रहे हैं–यदि वसीयत के निष्पादन के इर्द-गिर्द संदेहपूर्ण परिस्थितियाँ हैं, प्रतिपादक को तर्कपूर्ण एवं संतोषजनक साक्ष्य देकर इसे हटाना होगा–यह आवश्यकता कि वसीयतकर्ता ने व्ययन की प्रकृति और प्रभाव को समझा, परिपूर्ण की गयी प्रतीत नहीं होती है–इसके अतिरिक्त, वसीयत प्रस्तुत करने में विलंब भी संदेहपूर्ण परिस्थिति है–वाद डिक्री करने वाला आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 19, 20, 21, 22 एवं 23)

निर्णयज विधि.–2002 (1) JLJR 324; AIR 2006 SC 786; AIR 2006 SC 1975; 2011 (1) JCR 36—Distinguished; AIR 2002 Delhi 20; (2005)1 SCC 280; AIR 1977 SC 63; (2003)2 SCC 91; AIR 1990 SC 2103; (2003)6 SCC 90; (2005)2 SCC 784—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Shri Srijit Chaudhary, For the Appellants; Mr. Atanu Banerjee, For the Respondents.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–यह अपील प्रोबेट केस सं॰ 1 वर्ष 2004/अभिधान वाद सं॰ 7 वर्ष 2004 के संबंध में विद्वान प्रथम अपर जिला न्यायाधीश, गिरिडीह द्वारा पारित दिनांक 20.8.2010 के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान जिला न्यायाधीश ने वादीगण/प्रत्यर्थीगण के पत्र में वाद डिक्री किया है और प्रश्नगत वसीयत को प्रोबेट करने का आदेश दिया है।

2. श्रीमती बंदना मित्रा और दिलीप कुमार मित्रा ने स्वर्गीय धीरेन्द्र नाथ मित्रा की पत्नी आशा रानी मित्रा द्वारा सृजित दिनांक 3.6.1995 के वसीयत के विरुद्ध प्रोबेट के प्रदान के लिए आवेदन दाखिल किया जिसके द्वारा वसीयतकर्ता ने वाद पत्र की अनुसूची A में वर्णित जिला गिरिडीह के अंतर्गत अपने कब्जा एवं स्वामित्व वाली संपत्ति को बंदना मित्रा के पक्ष में वसीयत किया था जबकि वाद पत्र की अनुसूची B में वर्णित मेन रोड, बेलिया घाट, कोलकाता, पश्चिम बंगाल पर अवस्थित भूमि एवं भवन को दिलीप कुमार मित्रा के पक्ष में वसीयत किया है।

3. संक्षेप में, तथ्य ये हैं कि स्वर्गीय धीरेन्द्र नाथ मित्रा की विधवा स्वर्गीय आशा रानी मित्रा और उसकी गोतनी किरण बाला मित्रा ने बरगंदा मौजा मकरपुर थाना सं॰ 95, गिरीडीह टाऊन के गिरीडीह बेंगाबन्द पथ के बगल में अवस्थित गिरीडीह नगरपालिका के धृति सं॰ 186 (पुराना) 253 (नया) वार्ड सं॰ 1 (पुराना) वार्ड सं॰ 2 (नया) वाले पक्का घर से गठित चार दीवारी से घिरी मानक माप द्वारा 3 बीघा 11 कट्ठा 4 धूर भूमि अर्जित किया था। बँटवारा वाद सं॰ 24 वर्ष 1978 में तैयार की गयी अंतिम डिक्री की दृष्टि में आशा रानी मित्रा को याचिका की अनुसूची A में पूर्णत: वर्णित पृथक चार दीवारी के साथ आवासीय भवन और अन्य संरचनाओं, वृक्षों, बगीचों, कुँओं आदि के भाग के ऊपर दो खंडों में 1 बीघा 15 कट्ठा 12 धूर आवंटित किया गया था जिसे उसने अर्जित किया और जिसके शांतिपूर्ण कब्जा का आनंद ले रही थी। आशा रानी मित्रा याचिका की अनुसूची B में पूर्णत: वर्णित बेलिया घाट मेन रोड, कोलकाता

के गृह सं॰ 45/एच॰/14 वाले शयन कक्षों, रसोई, भंडार कोष्ठों, स्नानगृह, शौचालय और आंगन, आदि से गठित जी॰ आई॰ शीट से ढकी छत के साथ मानक माप के 2.75 कट्ठा माप वाले अविभाजित भूमि में भी आधे हिस्से की स्वामी थी और इस पर काबिज थी। आशा रानी मित्रा का दिलीप कुमार मित्रा नामक पुत्र था जो श्रीमती बंदना मित्र (याची) के साथ विवाहित था। आशा रानी मित्रा की चित्रा मित्रा, शिप्रा मित्रा, दीप्ति मित्रा, तृप्ति मित्रा और शुब्रा मित्रा नामक पाँच, पुत्रियाँ भी थी।

4. आशा रानी मित्रा ने अपने स्वस्थ शरीर एवं मन से दिनांक 3.6.1995 का अंतिम वसीयत निष्पादित किया और अनुसूची A में वर्णित संपत्ति को याची सं॰ 1 के पक्ष में वसीयत किया और इसी प्रकार से अनुसूची B संपत्ति को याची सं॰ 2 के पक्ष में वसीयत किया। अपनी दो पुत्रियों अर्थात् तृप्ति देव एवं शिप्रा मित्रा और दो अन्य गवाहों अर्थात् अजय कुमार डे एवं राजेश कुमार सिन्हा की उपस्थिति में वसीयताकर्ता द्वारा वसीयत पर हस्ताक्षर किया गया था और इसे निष्पादित किया गया था। दिनांक 26.5.1998 को आशा रानी का देहावसान हुआ और दिनांक 9.3.2004 को वसीयत प्रोबेट के लिए प्रस्तुत किया गया था जिसके लिए प्रोबेट केस सं॰ 1 वर्ष 2004 दर्ज किया गया था। उक्त याचिका में आशा रानी मित्रा की समस्त पाँचों पुत्रियों को प्रतिवादीगण के रूप में अभियोजित किया गया था।

5. नोटिस तामील किए जाने के बाद अपीलार्थीगण और प्रोफॉर्मा प्रत्यर्थी सं॰ 3 जो प्रोबेट केस सं॰ 1 वर्ष 2004 में प्रतिवादीगण थे उपस्थित हुए और प्रोबेट दिए जाने के विरुद्ध अपनी आपत्ति दाखिल किया जिसके परिणामस्वरुप प्रोबेट केस सं॰ 1 वर्ष 2004 अभिधान वाद सं॰ 7 वर्ष 2004 में संपरिवर्तित किया गया था। प्रतिवादी सं॰ 1, 2 और 4 ने दिनांक 11.6.2004 को अपना लिखित कथन दाखिल किया था जिसे प्रतिवादी सं॰ 3 और 5 द्वारा दिनांक 1.9.2004 को अपनाया गया था।

6. प्रतिवादीगण ने वसीयत के निष्पादन से इनकार किया है और प्रतिवाद किया है कि आशा रानी मित्रा ने दिनांक 3.6.1995 का कोई वसीयत अपने पीछे नहीं छोड़ा था जैसा याचीगण/प्रत्यर्थीगण द्वारा अभिकथित किया गया है। वस्तुत: आशा रानी मित्रा, शिप्रा मित्रा और तृप्ति देव का सादे पन्नों पर हस्ताक्षर दिलीप कुमार मित्रा द्वारा प्राप्त किया गया था जो बँटवारा वाद सं॰ 24 वर्ष 1978 और अभिधान वाद सं॰ 16 वर्ष 1986 में पैरवी कर रहा था। शिप्रा मित्रा और तृप्ति देव ने अनुप्रमाणित गवाहों के रूप में किसी वसीयत पर कोई हस्ताक्षर कभी नहीं किया था और सादे पन्नों, जिन पर आशा रानी मित्रा, शिप्रा मित्रा और तृप्ति देव का हस्ताक्षर लिया गया था, को याचीगण द्वारा प्रस्तुत वसीयत के रूप में संपरिवर्तित किया गया है। लिखित कथन में आगे प्रकथन किए गए हैं कि वसीयतकर्ता बीमार पड़ी थी और वह शय्याग्रस्त थी और कोई वसीयत बनाने की अवस्था में नहीं थी। दिनांक 3.6.1995 का अभिकथित वसीयत और कुछ नहीं बल्कि संपत्ति हड़पने के लिए सृजित कूटरचित दस्तावेज है। विद्वान अधिवक्ता ने AIR 1995, पृष्ठ 201, पैरा 6, 8, 17, 18 और 27 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है। प्रतिवादीगण ने विनिर्दिष्ट मामला बनाया है कि आशा रानी मित्रा की मृत्यु के बाद उन्होंने बँटवारा वाद सं॰ 56 वर्ष 2003 दाखिल किया जिसमें उनका भाई दिलीप कुमार मित्रा प्रतिवादी है। संपूर्ण संपत्ति हड़पने के लिए वकीलों से सलाह करने के बाद अभिकथित वसीयत सृजित किया गया है। बँटवारा वाद सं॰ 56 वर्ष 2003 में प्रत्येक पुत्री ने आशा रानी मित्रा द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति में 1/6 हिस्से का दावा किया।

7. अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए थे:–

(I) D;k çkcV d fy, oreku ekeyk ik"k.kh; g

(II) D;k cnuk fe=k vkj fnyhi dekj fe=k d i{k e fnukd 3.6.95 dk olh;r vk'kk jkuh fe=k }kjk fu"ikfnr fd;k x;k Fkk

(III) D;k çkIfxd frfFk 3.6.95 dk vk'kk jkuh fe=k LoLFk fnekx okyh efgyk Fkh vkj olh;r fu"ikfnr dju d fy, l{ke Fkh

(IV) D;k fnukd 3.6.95 dk olh;r okLrfod g

(V) D;k oknhx.k@;kphx.k fnukd 3.6.95 d olh;r d çkcV d gdnkj g

(VI) oknhx.k@;kphx.k fdl vurk"k@fdu vurk"kk d gdnkj g

8. पक्षों ने अपने अपने दावा के समर्थन में मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य दोनों दिया है और साक्ष्य तथा अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों पर विचार करने के बाद विद्वान विचारण न्यायालय स्वर्गीय आशा रानी मित्रा द्वारा निष्पादित दिनांक 3.6.95 के वसीयत के विरुद्ध प्रोबेट प्रदान किया है और तद्नुसार प्रत्यर्थी सं॰ 1 और 2/वादीगण के पक्ष में वाद डिक्री किया गया था। अत: अपील की गयी है।

9. अपीलार्थीगण ने आक्षेपित निर्णय का विरोध किया है और निवेदन किया है कि दिनांक 3.6.1995 को स्वर्गीय आशा रानी मित्रा ने किसी वसीयत पर हस्ताक्षर नहीं किया था और इसे निष्पादित नहीं किया था जिसके द्वारा उसने वादपत्र की अनुसूची A में वर्णित गिरीडीह अवस्थित स्व अर्जित संपत्ति को प्रत्यर्थी बंदना मित्रा के पक्ष में वसीयत किया था और इसी प्रकार उसने प्रोबेट आवेदन की अनुसूची B में पूर्णत: वर्णित कोलकाता अवस्थित संपत्ति में अपने आधे और अविभाजित हिस्से को प्रत्यर्थी दिलीप कुमार मित्रा के पक्ष में वसीयत नहीं किया था। ऐसा कोई वसीयत शिप्रा मित्रा और तृप्ति देव की उपस्थिति में निष्पादित कभी नहीं किया गया था। अभिकथित वसीयत स्वर्गीय आशा रानी मित्रा द्वारा छोड़ी गयी संपूर्ण संपत्ति को हड़पने के लिए प्रत्यर्थीगण द्वारा सृजित किया गया है। अ॰ सा॰ 1 अजय कुमार डे और अ॰ सा॰ 3 राजेश कुमार सिन्हा वसीयतकर्ता आशा रानी मित्रा द्वारा दिनांक 3.6.1995 को अभिकथित रूप से निष्पादित किसी वसीयत के निष्पादन के गवाह कभी नहीं थे। चूँकि अपीलार्थीगण ने स्वर्गीय आशा रानी मित्रा द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति का बँटवारा इप्सित किया है, प्रत्यर्थीगण ने वसीयत के रूप में इसे प्रकट करते हुए दस्तावेज गढ़ा है और अ॰ सा॰ 1 अजय कुमार डे और अ॰ सा॰ 3 राजेश कुमार सिन्हा को अनुप्रमाणक साक्षी घोषित करते हुए उनके हस्ताक्षरों को प्राप्त करने के लिए छल साधन किया है। दस्तावेज के कोरे परिशीलन से यह प्रकट है कि अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 3 का हस्ताक्षर बाद के चरण पर प्राप्त किया गया है और उनका अभिकथित वसीयत के अनुप्रमाणन के साथ कोई लेना देना नहीं है। वे दिलीप कुमार मित्रा के घनिष्ठ मित्र हैं और परिवार के साथ उनकी जान-पहचान नहीं थी।

10. विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थीगण की ओर से परीक्षण किए गए गवाहों के साक्ष्य को निर्दिष्ट किया है और निवेदन किया है कि उनके साक्ष्य के अनुसार, अभिकथित वसीयत आशा रानी मित्रा की मृत्यु के बाद 3-4 माह के भीतर उनके कब्जे में आया और इसे किसी को प्रकट नहीं किया गया था। अभिकथित वसीयत प्रोबेट के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया था और केवल संपत्ति के बँटवारा के लिए अपीलार्थीगण द्वारा वाद दाखिल किए जाने के बाद अभिकथित वसीयत का निष्पादन ध्यान में लाया गया है। प्रोबेट के लिए अभिकथित वसीयत की प्रस्तुति में विलंब संदेहपूर्ण परिस्थिति है जिसे हटाने में प्रत्यर्थीगण विफल रहे हैं।

11. आगे यह तर्क किया गया है कि प्रत्यर्थीगण उस वकील का नाम प्रकट करने में विफल रहे हैं जिसने वसीयतकर्ता के अनुदेश पर अभिकथित वसीयत का प्रारुप तैयार किया था। ऐसा कोई ड्राफ्ट जिसके आधार पर वसीयत टंकित किया गया था, अभिलेख पर नहीं लाया गया है, टंकक का परीक्षण भी नहीं किया गया है। इस संदर्भ में यह इंगित किया गया है कि आशा रानी मित्रा गिरीडीह के वकीलों को जानती थी और बँटवारा वाद सं॰ 24 वर्ष 1978 और अभिधान वाद सं॰ 16 वर्ष 1986 के संबंध में पैरवी करने के लिए उनसे मुलाकात करती थी। परिस्थिति कि क्या आशा रानी मित्रा ने गिरीडीह के वकीलों द्वारा वसीयत प्रारूप तैयार करवाने के बजाए हजारीबाग के वकील द्वारा इसका प्रारूप तैयार करवाना चुना

था, स्पष्ट नहीं किया गया है। यह भी उपदर्शित नहीं किया गया है कि कब ऐसे वसीयत का प्रारूप हजारीबाग के वकील द्वारा तैयार किया गया था और क्यों नहीं इसे स्वयं हजारीबाग में टंकित किया गया था। यह स्वीकृत मामला है कि आशा रानी मित्रा इतनी साक्षर नहीं थी कि वह अंग्रेजी में लिखे गए वसीयत की विषय वस्तु को समझ सकती थी। अत: प्रत्यर्थीगण यह सिद्ध करने में विफल रहे हैं कि वसीयतकर्ता ने उसमें दिए गए विवरण को समझने के बाद अभिकथित वसीयत पर हस्ताक्षर किया था। विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने ऐसे तथ्य को अनदेखा करके वसीयत को वास्तविक स्वीकार करने में गलती किया है।

12. अभिकथित वसीयत के अनुसार, वसीयतकर्ता ने अपनी पुत्रियों को अपने द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति को विरासत में पाने से अपवर्जित कर दिया था किंतु इसका कारण नहीं दिया गया था। कारणों की तो बात ही दूर, यह भी अभिकथित वसीयत में उल्लिखित नहीं किया गया है कि आशा रानी मित्रा की पाँच पुत्रियाँ थी। तर्क की खातिर यदि इसे सही स्वीकार किया जाता है कि वसीयतकर्ता अपनी एक पुत्री सुत्र मित्रा से प्रसन्न नहीं थी जिसने अपनी पसन्द के व्यक्ति के साथ विवाह किया था और वह संपत्ति में उसके लिए कोई व्यवस्था करने की इच्छुक नहीं थी, वसीयत शेष चार पुत्रियों के बारे में बिल्कुल मौन है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य उपदर्शित करता है कि वसीयतकर्ता की मृत्यु के समय दो पुत्रियाँ उपस्थित थी और उनकी उपस्थिति पर्याप्त रूप से सुझाती है कि उन्हें अपनी माता के प्रति स्नेह-सम्मान था। वसीयत पुत्रियों को विरासतहीन करने पर मौन है और यह भी प्रत्यर्थीगण द्वारा स्पष्ट की जाने वाली संदेहपूर्ण परिस्थिति है जिसे संतोषपूर्वक स्पष्ट करने में वे विफल रहे हैं।

13. विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क किया है कि अ० सा० 1 और अ० सा० 3 का अभिसाक्ष्य महत्वपूर्ण बिंदुओं पर एक-दूसरे का विरोधी है। उन्होंने संगत रूप से कथन नहीं किया है कि कब वसीयत का प्रारुप तैयार किया गया था, तब इसे टंकित किया गया था और किस प्रकार उन्होंने अभिकथित वसीयत के निष्पादन के समय पर अपना हस्ताक्षर किया था। प्रदर्शों G और G/1, बँटवारा वाद सं० 24 वर्ष 1978 के संबंध में दाखिल याचिकाएँ, को निर्दिष्ट करके यह निवेदन किया गया था कि आवेदन के नीचे और सत्यापन के नीचे आशा रानी मित्रा के हस्ताक्षर अभिकथित वसीयत के अंतिम पृष्ठ पर किए गए हस्ताक्षर के समरुप हैं। दिलीप कुमार मित्रा ने उन याचिकाओं को शपथ पत्रित भी किया है जो प्रकट है किंतु वह कहता है कि वह उस मामले में पैरवी कभी नहीं कर रहा था बल्कि स्वयं वसीयतकर्ता पैरवी कर रही थी। यह स्पष्ट करना प्रत्यर्थी दिलीप कुमार मित्रा का काम है कि उसने शपथ लेने के बाद गलत बयान क्यों दिया था। प्रत्यर्थी का यह आचरण दर्शाता है कि वह शुद्ध हृदय से नहीं आया है और अभिकथित वसीयत संदेहपूर्ण परिस्थितियों के आवरण में है जो अस्पष्टीकृत बना रहा और इसलिए विद्वान अपर जिला न्यायाधीश का निष्कर्ष गलत है और अपास्त किए जाने का दायी हैं। प्रत्यर्थीगण ने उस बीमारी को भी छुपाने का प्रयास किया है जिससे वसीयतकर्ता पीड़ित थी। मृत्यु प्रमाण पत्र उपदर्शित करता है कि आशा रानी मित्रा की मृत्यु कैंसर के कारण हुई। वसीयतकर्ता वर्ष 1992 के बाद अच्छे स्वास्थ्य एवं सही मानसिक दशा में नहीं थी और इस तथ्य को परिवार के सदस्यों द्वारा एक-दूसरे को लिखे गए पत्रों से एकत्रित किया जा सकता था और उन पत्रों को प्रदर्श A और A/1 के रूप में चिन्हित किया गया है। अभिकथित वसीयत किसी डॉक्टर की उपस्थिति में निष्पादित नहीं किया गया था यद्यपि डॉ० बी० बी० सरकार परिवार के डॉक्टर थे और आया-जाया करते थे। उसके विपरीत डॉ० बी० बी० सरकार ने प्रमाण पत्र दिया है कि आशा रानी मित्रा का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था और प्रमाण पत्र प्रदर्श C है। यह भी अभिकथित वसीयत के निष्पादन की वास्तविकता के विरुद्ध संदेह सृजित करता है।

14. ऊपर उपदर्शित संदेहपूर्ण परिस्थिति के बिंदु पर विद्वान अधिवक्ता ने (i) **AIR 2002 Delhi पृष्ठ 20** पैरा 98, 101, 103, 118, 145 और 146 और (ii) **(2005)1 SCC पृष्ठ 280** पैरा 16, 18,

19 और 20 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है। अनुप्रमाणन और निष्पादन के बिंदु पर उन्होंने **AIR 1977 Supreme Court पृष्ठ 63** पैरा 8; **(2005)8 SCC पृष्ठ 67 पैरा 22; (2003)2 SCC पृष्ठ 91** पैरा 5 से 11 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

वसीयतकर्ता के आशय के बिंदु पर विश्वास किए गए निर्णय **AIR 1990 Supreme Court 2103** पैरा 8; (b) **(2003)6 SCC पृष्ठ 98** पैरा 98 और (C) **(2005)2 SCC पृष्ठ 784** पैरा 11, 14, 15 है।

15. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण/वादीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वसीयतकर्ता द्वारा अच्छे स्वास्थ्य एवं सही मानसिक दशा में वसीयत निष्पादित किया गया था और उसने उसमें की गयी घोषणा को समझने के बाद इस पर हस्ताक्षर किया था। गवाहों में से एक शिप्रा मित्रा द्वारा वसीयत की विषय वस्तु को वसीयतकर्ता को स्पष्ट किया गया था और इसे सही समझने के बाद उसने अनुप्रमाणक साक्षी की उपस्थिति में अपना हस्ताक्षर किया था। चार अनुप्रमाणक गवाहों में से अ॰ सा॰ 1 अजय कुमार डे और अ॰ सा॰ 3 राजेश कुमार सिन्हा का परीक्षण किया गया है और उन्होंने स्पष्टत: कथन किया है कि आशा रानी मित्रा ने उनसे शाम में उसके घर में उपस्थित रहने का अनुरोध किया था और अनुरोध पर विचार करते हुए वे आशा रानी मित्रा के घर गए जहाँ उनकी उपस्थिति में आशा रानी मित्रा द्वारा वसीयत पर हस्ताक्षर किया गया था और इसे निष्पादित किया गया था। उन्होंने अनुप्रमाणक साक्षी के तौर पर वसीयत पर हस्ताक्षर भी किया था। उन्होंने विधि के अनुरूप वसीयत को सिद्ध किया है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 की अनुरुप वसीयत को सिद्ध किया है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 की आवश्यकता का पूर्णत: अनुपालन किया गया है और दस्तावेज को अच्छी तरह सिद्ध किया गया है जैसा साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 के अधीन आवश्यक है। उक्त वसीयत के निष्पादन के विरुद्ध संदेह करने के लिए अपीलार्थीगण के पास कारण नहीं है। प्रतिपादक को सिद्ध करना है कि वसीयत निष्पादित किया गया था जैसा भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 के अधीन आवश्यक है जिसे उन्होंने पूरा किया था एवं अनुप्रमाणक गवाहों में से दो की परीक्षा करके साक्ष्य अधिनियम की धारा 68 की आवश्यकता परिपूर्ण की गयी थी। यदि अपीलार्थीगण ने इसे कूटरचित घोषित करते हुए वसीयत को चुनौती दिया है, इसे सिद्ध करने का भार उन पर हैं और यह कहना अनावश्यक है कि वे इस संबंध में अपने भार का उन्मोचन करने में बुरी तरह विफल रहे हैं। विद्वान अधिवक्ता ने 2002 (1) JLJR 324 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है। अपीलार्थीगण में से दो अर्थात् शिप्रा मित्रा और तृप्ति देव ने वसीयत पर अंकित तिथि के साथ अपने हस्ताक्षरों से इनकार नहीं किया है। उन्होंने वसीयत के निष्पादन का समर्थन केवल इसलिए नहीं किया है क्योंकि अपनी माता आशा रानी मित्रा की मृत्यु के बाद संपत्ति पाने का लालच उनके दिमाग में आया है। यह तर्कपूर्ण स्पष्टीकरण है कि उन्होंने वसीयत के निष्पादन का समर्थन क्यों नहीं किया था। ऐसे निर्णय हैं कि वसीयत में उत्तराधिकार से वंचित किया जाना मात्र संदेहपूर्ण परिस्थिति नहीं है और संपत्ति में हिस्सा पाने से विधिक उत्तराधिकारियों को अपवर्जित करने के अनेक कारण हो सकते हैं। इसी प्रकार, प्रोबेट के लिए वसीयत की प्रस्तुति में विलंब संदेहपूर्ण परिस्थिति नहीं है। यह स्वीकृत स्थिति है कि प्रत्यर्थीगण वसीयतकर्ता के जीवन काल से संपत्ति पर काबिज थे और उसकी मृत्यु के बाद कोई रूकावट के बिना इसका शांतिपूर्वक आनन्द ले रहे थे। जब वर्ष 2003 में अपीलार्थीगण द्वारा बँटवारा वाद दाखिल किया गया था, प्रत्यर्थीगण ने अपने अधिवक्ता को उक्त वसीयत का निष्पादन प्रकट किया और सलाह पाने के बाद वसीयत प्रोबेट करने के लिए आवेदन दाखिल किया गया था। इस संदर्भ में अधिवक्ता ने **AIR 2006 Supreme Court 786** पैरा 8 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

16. यह प्रतिवाद किया गया था कि वसीयत लिखित लिखत होता है जिसके द्वारा वसीयतकर्ता अपनी अंतिम इच्छा घोषित करता है कि किस प्रकार उसके द्वारा अर्जित संपत्ति उसकी मृत्यु के बाद किसी व्यक्ति द्वारा प्रबंधित की जाएगी, उत्तराधिकार में प्राप्त की जाएगी, न्यागत अथवा प्राप्त की जाएगी। न्यायालय

वसीयतकर्ता की अंतिम इच्छा अथवा आशय के स्थान पर अपना मत प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है। इस संदर्भ में विद्वान अधिवक्ता ने **AIR 2006 पृष्ठ 1975** पैरा 75 से 78 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

17. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया है कि विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने सही प्रकार से वसीयत की वास्तविकता स्वीकार किया है। वसीयतकर्ता ने वसीयत के प्रत्येक पृष्ठ पर और दस्तावेज के नीचे हस्ताक्षर किया था। केवल इसलिए कि अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 3 के हस्ताक्षर क्रमवार नहीं किए गए हैं, यह वसीयत अस्वीकार करने का आधार नहीं हैं। विद्वान अधिवक्ता ने **2011 (1) JCR 36** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

18. मैंने पक्षों के अभिवचनों, अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों एवं साक्ष्य तथा आक्षेपित निर्णय का परिशीलन किया है। यह सुस्थापित विधि है कि वसीयत को अन्य दस्तावेजों की तरह विधि अनुरूप सिद्ध किया जाना होता है और न्यायालय को इसी तरीके से जाँच में अग्रसर होना होगा। प्रतिपादक को संतोषजनक साक्ष्य द्वारा यह दर्शाने के लिए कहा जाएगा कि वसीयतकर्ता द्वारा वसीयत पर हस्ताक्षर किया गया था, कि प्रासंगिक समय पर वसीयतकर्ता सही मानसिक दशा में था, कि उसने व्ययन के प्रकृति एवं प्रभाव को समझा था और अपनी स्वतंत्र इच्छा से दस्तावेज पर हस्ताक्षर किया था। अतः वसीयत के प्रतिपादक को संदेहपूर्ण परिस्थितियों को समाप्त करके इसके सम्यक एवं वैध निष्पादन को सिद्ध करना होगा। यदि वसीयत के निष्पादन को घेरने वाली संदेहपूर्ण परिस्थितियाँ हैं, प्रतिपादक को तर्कपूर्ण एवं संतोषजनक साक्ष्य द्वारा इसको हटाना होगा। क्या वसीयत वास्तविक है या नहीं, इसे प्रत्येक मामले के तथ्यों पर विनिश्चित करना होगा। यह विनिश्चित करने के लिए कोई गणितीय समीकरण नहीं है कि वसीयत वास्तविक है या नहीं। वसीयत की प्रामाणिकता इसके निष्पादन को घेरने वाली परिस्थितियों और इसकी वास्तविकता के संबंध में दिए गए साक्ष्य की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। मानव का स्वाभाविक आचरण अपना जीवन सुगमतापूर्वक व्यतीत करने के लिए और अपना भावी जीवन सुरक्षित करने के लिए संपत्ति अर्जित करना हैं। वे अपनी संतानों, संबंधियों और मित्रों की तुलना में संपत्ति से अधिक जुड़ते हैं। इस प्रकार अर्जित संपत्ति के संरक्षण के लिए वह न केवल अपने जीवनकाल के दौरान सर्वोत्तम प्रयास करता है बल्कि यह व्यवस्था करने का प्रयास भी करता है कि उसकी मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति का दुरुपयोग नहीं किया जाए। जो मैं कहना चाहता हूँ उसका अर्थ यह है कि यदि संततियाँ संपत्ति विरासत में पाने के लिए सक्षम नहीं है, वह वसीयत निष्पादित करके अथवा दान के रूप में सही हाथों में संपत्ति अंतरित करके विशेष व्यवस्था करता है। वसीयत इस प्रकार का दस्तावेज है जिसके द्वारा वसीयतकर्ता अपनी संपत्ति की वसीयत की अंतिम इच्छा अभिव्यक्त करता है, अतः न्यायालय को अधिक सतर्क, सावधान और जिम्मेदार होना चाहिए जब प्रोबेट के प्रदान के लिए अथवा प्रशासन-पत्र के लिए ऐसा वसीयत प्रस्तुत किया जाता है। न्यायालय को उन परिस्थितियों की कल्पना करनी होगी जिनके अधीन वसीयत निष्पादित किया गया था और यदि परिस्थितियाँ संदेह से मुक्त नहीं हैं, प्रतिपादक को तर्कपूर्ण एवं विश्वासोत्पादक स्पष्टीकरण देकर उन संदेहास्पद परिस्थितियों को दूर करने के लिए कहा जाएगा।

19. अब, वर्तमान मामले की परिस्थितियों पर आते हुए। यह कथन किया गया है कि वसीयतकर्ता ने हजारीबाग के वकील द्वारा वसीयत का प्रारुप तैयार करवाया था किंतु इसे गिरीडीह में टंकक द्वारा टंकित किया गया था। प्रतिपादक अथवा गवाह यह स्पष्ट करने में विफल रहे हैं कि किस प्रकार और कब वसीयतकर्ता वसीयत का प्रारूप तैयार करवाने के लिए अधिवक्ता के साथ परामर्श करने के लिए हजारीबाग गयी थी। वकील जिसने वसीयत का प्रारुप तैयार किया था का नाम प्रतिपादकों द्वारा परीक्षित किसी गवाह द्वारा प्रकट नहीं किया गया हैं। वसीयत के प्रारुप की प्रति को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। टंकक जिसने वसीयत टंकित किया था प्रतिवाद का समर्थन करने के लिए आगे नहीं

आया था। इस प्रकार, यह संदेहपूर्ण परिस्थिति है कि क्यों वसीयतकर्ता स्वयं हजारीबाग में वसीयत टंकित नहीं करवा सकी थी। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य आगे उपदर्शित करते हैं कि वसीयतकर्ता की गिरीडीह के वकीलों के साथ जान-पहचान थी क्योंकि वह बँटवारा वाद लड़ रही थी जो तब सिविल न्यायालय, गिरीडीह में लंबित था। इस संदर्भ में, साक्ष्य को आगे दोहराना आवश्यक है कि वसीयतकर्ता इतनी साक्षर नहीं थी और अंग्रेजी भाषा समझने में सक्षम नहीं थी। प्रोबेट के लिए प्रस्तुत वसीयत का प्रारुप अंग्रेजी में है और इसलिए, यह उसकी समझ के भीतर नहीं था। अ० सा० 1 और अ० सा० 3 ने कथन किया है कि गवाह शिप्रा मित्रा द्वारा वसीयतकर्ता को वसीयत की विषय वस्तु को पढ़कर सुनाया और स्पष्ट किया गया था किंतु शिप्रा मित्रा ने वसीयत के निष्पादन का समर्थन नहीं किया है बल्कि इसे चुनौती दिया है और अभिसाक्ष्य दिया है कि उसकी माता आशा रानी मित्रा द्वारा उस तिथि पर कोई ऐसा वसीयत सृजित नहीं किया गया था। अतः, आवश्यकता कि वसीयतकर्ता ने व्ययन की प्रकृति और प्रभाव को समझा था, परिपूर्ण किया गया प्रतीत नहीं होता है। अपने मुख्य परीक्षण के पैरा 8 में अ० सा० 1 ने कथन किया है कि वसीयतकर्ता अपनी पुत्री तृप्ति मित्रा के साथ वसीयत का प्रारुप लिए हुए दिनांक 3.6.1995 को आयी थी और वे सब सिविल न्यायालय गए थे और वासुदेव ओराँव द्वारा इसे टंकित करवाया था। उसे पुनः शाम में आने के लिए कहा गया था और वसीयत के निष्पादन के समय पर दो पुत्रियाँ अर्थात शिप्रा मित्रा और तृप्ति देब घर में उपस्थित थी। तृप्ति मित्रा ने अ० सा० 1 के प्रतिवाद का समर्थन नहीं किया था कि वह कभी भी अपनी माता के साथ वसीयत का प्रारुप टंकित करवाने के लिए उनके साथ चलने का अनुरोध करने के लिए इस गवाह के स्थान पर गयी थी। इन दोनों पुत्रियों ने समर्थन नहीं किया था कि ऐसा कोई वसीयत उनकी माता आशा रानी मित्रा द्वारा तैयार करवाया गया था और हस्ताक्षर किया गया था। इन परिस्थितियों में, अ० सा० 1 और अ० सा० 3 का साक्ष्य तृप्ति देब और शिप्रा मित्रा द्वारा खंडित किया जाता है। वकील जिसने अभिकथित वसीयत का प्रारुप तैयार किया, का नाम अज्ञात है, कोई ड्राफ्ट जिसके आधार पर अभिकथित वसीयत टंकित किया गया था उपलब्ध नहीं है, टंकक का परीक्षण नहीं किया गया है, वसीयतकर्ता अंग्रेजी भाषा पढ़ने और समझने में अक्षम थी, शिप्रा मित्रा जिसे वसीयतकर्ता को वसीयत पढ़ कर सुनाने और स्पष्ट करने के लिए अभिकथित किया गया है ने अ० सा० 1 और अ० सा० 3 के इस विवरण का समर्थन नहीं किया है, तृप्ति देब अपनी माता आशा रानी मित्रा के साथ वसीयत अनुप्रमाणित करने के लिए अपने घर आने का अनुरोध करने के लिए अ० सा० 1 के घर गयी थी, तृप्ति देब के साक्ष्य से समर्थन नहीं पाता है, क्यों गिरीडीह के किसी अधिवक्ता द्वारा वसीयत का प्रारुप तैयार नहीं किया गया था जिनसे वसीयतकर्ता मिलती थी, यह भी अभिकथित वसीयत के निष्पादन के संबंध में गंभीर संदेह सृजित करता है। ऊपर उपदर्शित परिस्थितियों में से सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिस्थिति कि वसीयत के विषय वस्तु को वसीयतकर्ता को पढ़ कर सुनाया गया था और स्पष्ट किया गया था, शिप्रा मित्र द्वारा असिद्ध किया गया है क्योंकि उसने अ० सा० 1 और अ० सा० 3 के ऐसे बयान का समर्थन नहीं किया था। यदि ऐसा था, व्ययन की प्रकृति और प्रभाव निश्चय ही वसीयतकर्ता की समझदारी के अंतर्गत नहीं था।

20. प्रतिपादक द्वारा प्रस्तुत और परीक्षित गवाहों ने कथन किया है कि वसीयतकर्ता का अपनी पुत्रियों (अपीलार्थीगण) के साथ सौहाद्रपूर्ण संबंध नहीं था और यही कारण था कि उन्हें उत्तराधिकार से वंचित किया गया था। यदि ऐसा था, अभिकथित वसीयत उनकी उपस्थिति में तैयार नहीं किया जा सकता था और उन्हें ऐसे वसीयत का गवाह नहीं बनाया जाना चाहिए था। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य सुझाते हैं कि वसीयतकर्ता अपनी एक पुत्री शुव्रा मित्रा से प्रसन्न नहीं थी जिसने अपनी पसन्द के लड़के के साथ विवाह किया था और वह पृथक रूप से रह रही थी। केवल यही नहीं, उसने वसीयतकर्ता के जीवनकाल के दौरान संपत्ति के बँटवारा के लिए वाद भी दाखिल किया था किंतु तथ्य बना रहता है कि अन्य चार पुत्रियाँ जो अपीलार्थीगण हैं, अपनी माता का बचाव कर रही थी और उस मामले में उठाए गए कदम भी सुझाते हैं कि वे अपनी माता के समर्थन में थी। एक पुत्री चित्रा अविवाहित थी और वह अपनी माता (वसीयतकर्ता)

के साथ रह रही थी। अ० सा० 1 और अ० सा० 3 का बयान यह भी उपदर्शित करता है कि पुत्रियाँ अभिकथित वसीयत तैयार किए जाने के समय उपस्थित थीं और वे तब भी उपस्थित थी जब वसीयतकर्ता ने अपनी अंतिम साँस ली। बहनों और उनके बच्चों के बीच हुआ पत्र व्यवहार भी यह सुझाता है कि वे सदैव वसीयतकर्ता की बीमारी के बारे में चिंता करती थीं। ये साक्ष्य और दस्तावेज प्रतिपादक के विवरण को खंडित करते हैं कि पुत्रियों को इसलिए उत्तराधिकार से वंचित किया गया था क्योंकि वसीयतकर्ता का उनके साथ अच्छा संबंध नहीं था। इस संदर्भ में आगे महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि अभिकथित वसीयत का विषय वस्तु किसी पुत्री के अस्तित्व के बारे में बिल्कुल मौन है और तब संपत्ति में अपना हिस्सा पाने से उनको अपवर्जित करने के कारणों के बारे में क्या कहा जाए। पुन: मानव के स्वाभाविक आचरण को ध्यान में लिया जाना है। यदि माता या पिता अपनी मृत्यु के बाद संपत्ति में हिस्सा पाने से अपनी संतानों को अपवर्जित करने जा रहे हैं और कोई वसीयत जिसके द्वारा संतानों से भिन्न किसी तीसरे व्यक्ति अथवा संबंधी के पक्ष में संपत्ति वसीयत की जा रही है, वह अपनी संपत्ति का व्ययन, यदि ऐसा चाहा गया है, अपनी संतानों जिन्हें उत्तराधिकार विहीन किया गया है से ऐसा व्ययन छुपाकर करेगा। वर्तमान मामले में ये तथ्य एवं तर्क अनुपस्थित हैं और यह भी वसीयत की वास्तविकता के विरुद्ध मजबूत संदेहपूर्ण परिस्थिति है। वसीयत प्रदर्श 1 के रूप में चिन्हित किया गया है जिसमें क्रमांक 1 और 2 शीर्षक गवाहों के अंतर्गत टंकित किया गया है। तृप्ति देब एवं शिप्रा मित्रा के हस्ताक्षर क्रमश: क्रमांक 1 और 2 पर अंकित हैं। वसीयत में क्रमांक 3 अथवा 4 टंकित नहीं किया गया है बल्कि क्रमांक 3 और 4 क्रमश: क्रमांक 1 और 2 के बगल में स्याही से लिखा गया है। अ० सा० 1 अजय कुमार देब और अ० सा० 3 राजेश कुमार सिन्हा ने वसीयत के नीचे क्रमांक 3 और 4 पर हस्ताक्षर किया है। वसीयतकर्ता के दो हस्ताक्षर वसीयत के अंतिम पृष्ठ पर अंकित हैं और वसीयतकर्ता के दो हस्ताक्षर विल के अंतिम पृष्ठ पर अंकित हैं और वसीयतकर्ता के दोनों हस्ताक्षरों के बीच तिथि अर्थात् दिनांक 3.6.95 दी गयी है और शब्द 'निष्पादित' स्याही में लिखा गया है और टंकित भी किया गया है। वसीयतकर्ता के दूसरे हस्ताक्षर के नीचे कुछ भी नहीं है। यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि वसीयतकर्ता ने वसीयत के अंतिम पृष्ठ पर एक के बाद दूसरा अपने दो हस्ताक्षर क्यों किया था। अनुप्रमाणक साक्षियों ने कहा है कि उन सबों ने वसीयत पर अपना हस्ताक्षर करने के लिए एक कलम का उपयोग किया था किंतु हस्ताक्षरों के कोरे परिशीलन से यह प्रकट है कि विभिन्न कलम एवं विभिन्न स्याही द्वारा हस्ताक्षर किया गया था। तृप्ति देब एवं शिप्रा मित्रा के हस्ताक्षर को उपदर्शित करने वाली स्याही वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर में प्रयुक्त स्थायी से भिन्न प्रतीत होती है। अजय कुमार डे का हस्ताक्षर भी भिन्न स्याही वाले भिन्न कलम द्वारा हस्ताक्षरित प्रतीत होता है। उक्त के अतिरिक्त, राजेश कुमार सिन्हा का हस्ताक्षर उपदर्शित कर रहा है कि काली स्याही वाले कलम का उपयोग किया गया था। इसमें कोई वर्जना नहीं है कि वसीयत पर अपना हस्ताक्षर करने के लिए वसीयतकर्ता एवं गवाहों द्वारा एक और उसी कलम का उपयोग नहीं किया जा सकता है और यह संदेहपूर्ण परिस्थिति नहीं हो सकती थी। वर्तमान मामले में, गवाहों ने कहा है कि उन्होंने वसीयत पर हस्ताक्षर करने के लिए एक और उसी कलम का उपयोग किया था किंतु वसीयत पर अंकित हस्ताक्षरों के परिशीलन से यह प्रकट है कि वसीयत पर हस्ताक्षर करने के लिए भिन्न स्याही वाला भिन्न कलम उपयोग किया गया था। यह दर्शाता है कि वसीयत के निष्पादन के समय पर अन्य अनुप्रमाणक साक्षी उपस्थित नहीं थे अथवा वे झूठ बोल रहे हैं और प्रतिपादक शुद्ध हृदय से नहीं आया है।

21. यह सुनिश्चित विधि है कि इसके प्रोबेट के लिए अथवा प्रशासन पत्र के प्रदान के लिए वसीयत प्रस्तुत करने पर परिसीमा नहीं है पर वसीयत प्रस्तुत करने में विलंब कभी-कभार संदेहपूर्ण बन जाता है। वर्तमान मामले में अ० सा० 2 का साक्ष्य अत्यन्त स्पष्ट है कि उसने अपनी सास (वसीयतकर्ता) की मृत्यु के बाद 3-4 माह के भीतर वसीयत पाया था। समय के प्रासंगिक बिंदु पर प्रतिपादकों का अपीलार्थीगण

के साथ संबंध कटु नहीं था। प्रतिपादक इसका तर्कपूर्ण स्पष्टीकरण देने में विफल रहे हैं कि वसीयत का अस्तित्व अपीलार्थीगण को क्यों नहीं प्रकट किया गया था जब यह अ॰ सा॰ 2 के हाथ में आया था। यदि दो पुत्रियों अर्थात् शिप्रा मित्रा और तृप्ति देब की उपस्थिति में कोई वसीयत निष्पादित किया गया था और यदि वे जानती थीं कि उन्हें उत्तराधिकार से वंचित किया गया है और उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक वसीयतकर्ता की अंतिम इच्छा को स्वीकार किया था, उन्हें स्वयं वसीयतकर्ता की मृत्यु के तुरन्त बाद वसीयत के अस्तित्व के बारे में प्रकट करना चाहिए था किंतु ऐसा नहीं था। एक दूसरी स्थिति लें कि अभिकथित वसीयत उन दोनों पुत्रियों की उपस्थिति में तैयार किया गया था किंतु वे उसमें किए गए व्ययन से प्रसन्न नहीं थी और वे वसीयतकर्ता के जीवनकाल के दौरान ऐसे व्ययन के विरुद्ध अपना मुँह बंद रखने के लिए बाध्य थीं, तब पुत्रियों का स्वाभाविक आचरण यह होगा कि उन्हें वसीयतकर्ता की मृत्यु के तुरन्त बाद बँटवारा के लिए वाद दाखिल करना चाहिए था किंतु ऐसा नहीं है क्योंकि उनके द्वारा बँटवारा के लिए वाद वर्ष 2003 में अर्थात् वसीयतकर्ता की मृत्यु के पाँच वर्ष बाद दाखिल किया गया है। प्रतिपादकों ने आगे स्वीकार किया है कि उन्होंने उक्त बँटवारा वाद दाखिल किए जाने के बाद अभिकथित वसीयत के अस्तित्व के बारे में प्रकट किया था। अत: वर्तमान मामले में वसीयत प्रस्तुत करने में विलंब निश्चय ही संदेहपूर्ण परिस्थिति है।

22. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थीगण ने वसीयत को चुनौती दिया है और कहा है कि यह कूटरचित है और वे इस संबंध में भार का उन्मोचन करने में विफल रहे हैं। अभिलेख पर मौजूद दस्तावेज और साक्ष्य दर्शाते हैं कि अभिधान बँटवारा वाद सं॰ 24 वर्ष 1978 और 16 वर्ष 1986 में प्रत्यर्थी दिलीप कुमार मित्रा पैरवी कर रहा था किंतु उसने इस तथ्य को छुपाने का प्रयास किया है और अभिसाक्ष्य दिया है कि उसकी माता आशा रानी मित्रा पैरवी कर रही थी। उन मामलों में आशा रानी मित्रा द्वारा दाखिल याचिकाओं पर आशा रानी मित्रा द्वारा हस्ताक्षर किया गया था किंतु सत्यापन दिलीप कुमार मित्रा द्वारा किया गया था जो दर्शाता है कि वह उन मामलों में पैरवी कर रहा था। अपीलार्थीगण तृप्ति देब एवं शिप्रा मित्रा ने कहा है कि अनेक अवसरों पर दिलीप कुमार मित्रा ने सादे पन्नों पर उनका हस्ताक्षर प्राप्त किया था और इसी प्रकार सादे पन्नों पर आशा रानी मित्रा का हस्ताक्षर भी उन मामलों में पैरवी करने के लिए प्राप्त किया गया था। उन्होंने कहा है कि सादे पन्नों जिन पर हस्ताक्षर प्राप्त किए गए थे को बाद में अभिकथित वसीयत के रूप में संपरिवर्तित कर दिया गया है और उसके अनुसार इसे प्रतिपादकों द्वारा गढ़ा गया था। पूर्ववर्ती पैराग्राफों में मैंने विस्तारपूर्वक उन संदेहपूर्ण परिस्थितियों को प्रकाशमान किया है जिनसे वसीयत का निष्पादन घिरा हुआ है। यह भी उपदर्शित किया गया है कि वसीयत के प्रतिपादकों को वसीयत के निष्पादन के विरुद्ध सामने आने वाली समस्त संदेहपूर्ण परिस्थितियों को तर्कपूर्ण स्पष्टीकरण द्वारा दूर करना होगा किंतु प्रतिपादक ऐसा करने में विफल रहे हैं। ऊपर की गयी चर्चा एवं कारणों से मेरा मत है कि प्रतिपादक अपने ऊपर डाले गए इस भार का उन्मोचन करने में विफल रहे हैं।

23. अब, प्रत्यर्थीगण द्वारा उद्धृत निर्णयों पर आते हुए। मैं केवल यह कहना चाहूँगा कि तथ्य और परिस्थितियाँ जिन्हें पूर्ववर्ती पैराग्राफों में उपदर्शित किया गया है और जिन पर चर्चा की गयी है और जो वर्तमान मामले में सामने आ रही हैं, उन मामलों में उपलब्ध नहीं हैं। अत:, मैं नहीं समझता हूँ कि प्रत्यर्थीगण द्वारा विश्वास की गयी निर्णयज विधियाँ उनकी कोई मदद करती है और सुभिन्न किए जाने के लिए उनके प्रति निर्देश और चर्चा की आवश्यकता है।

24. परिणामस्वरुप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है। प्रोबेट केस सं॰ 1 वर्ष 2004/अभिधान वाद सं॰ 7 वर्ष 2004 के संबंध में विद्वान प्रथम अपर जिला न्यायाधीश, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 20.8.2010 का आक्षेपित निर्णय एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

25. अंतरिम आदेश, यदि हों, रिक्त किए जाएँगे।

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

दिलीप भूइयाँ

cuke

सेंट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

W.P.(S) No. 667 of 2009. Decided on 16th January, 2014.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन।

सेवा विधि–बर्खास्तगी–अनुकंपा के आधार पर याची को लेडी कॉंस्टेबल के रूप में नियुक्त किया गया था और कतिपय अभिकथनों पर सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था–दाखिल की गयी अपील भी अस्वीकार कर दी गयी थी–याची को दांडिक कार्यवाही में दोषमुक्त किया गया था–जब याची को दांडिक कार्यवाही में दोषमुक्त किया गया था, विभागीय कार्यवाही में पारित बर्खास्तगी का आदेश अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–(2006)5 SCC 446—Followed; (2011)4 SCC 584;(2007)9 SCC 755; (2006)5 SCC 446; (2006)5 SCC 88; (2005)7 SCC 764; (2008) 4 SCC 1; (1996)6 SCC 417—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Atanu Banerjee, D.C. Mishra, Amit Keshri, For the Petitioner; Mr. Ananda Sen, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याची को दिनांक 28.1.1989 को नियुक्त किया गया था और प्रासंगिक समय पर याची मजदूर सी॰ II के रूप में कार्यरत था। दिनांक 6.9.2000 की घटना में सेन्ट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड के सुरक्षा प्रहरी द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गयी थी और अज्ञात के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अधीन गोमिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 91 वर्ष 2000 दर्ज किया गया था। दिनांक 19.1.2001 को याची को निलंबित किया गया था और उस पर आरोप मेमो तामील किया गया था। दिनांक 24.2.2001 को याची पर संशोधित आरोप मेमो तामील किया गया था। मामले की जाँच की गयी थी और दिनांक 7.8.2001 की जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। दिनांक 19.10.2001 को याची को द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। दिनांक 5.4.2002 के अंतिम आदेश द्वारा याची को सेवा से बर्खास्त किया गया था। याची द्वारा दाखिल अपील दिनांक 11.9.2002 के आदेश द्वारा खारिज की गयी थी। यद्यपि दांडिक मामले में याची को आरोप-पत्रित किया गया था और उसका विचारण किया गया था, उसे दिनांक 20.12.2005 के आदेश द्वारा दांडिक आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया था और इसलिए, याची सेवा से बर्खास्तगी का आदेश प्रतिसंहृत करवाने के लिए दिनांक 17.2.2006 को प्रत्यर्थी प्राधिकारी के पास गया। चूँकि याची का अभ्यावेदन प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित नहीं किया गया था, याची ने इस न्यायालय के समक्ष डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4108 वर्ष 2006 दाखिल किया जिसे याची के अभ्यावेदन पर आदेश पारित करने का निर्देश अपीलीय प्राधिकारी को देते हुए दिनांक 5.2.2008 के आदेश द्वारा निपटाया गया था। दिनांक 9.9.2008 के आदेश द्वारा अपीलीय प्राधिकारी ने दिनांक 11.9.2002 का आदेश अभिपुष्ट किया है जिसके द्वारा याची द्वारा दाखिल अपील अस्वीकार कर दी गयी थी।

3. यह अभिवचन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है कि चूँकि दांडिक मामले में कार्यवाही और विभागीय कार्यवाही भिन्न हैं, दांडिक मामले में दोषमुक्ति विभागीय कार्यवाही में अधिरोपित दंड में हस्तक्षेप करने का आधार नहीं हो सकता है। प्रतिशपथ पत्र के प्रासंगिक अंश को नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"12. fd ;g dFku fd;k tkrk g fd ;kph }kjk Lokx ok'kjh d n'kkfyx lykUV l dl;Vj dh pkjh dju ij vkj fnukd 13.9.2000 dk ifyl }kjk fxj¶rkj fd, tku ij ml fnukd 15/24.2.2001 dk vkjki&i= l0 6935 tkjh fd;k x;k Fkk tk fnukd 19.1.2001 d io vkjki&i= l0 6320 dk Hky lèkkj FkkA ;g dFku fd;k x;k g fd çR;Fkh l0 1 diuh d çek.k if=r LFkk;h vkn'k d vèkhu vopkj d ÑR;k d fy, ijk 26.1 d vèkhu vopkj vfHkdfFkr fd;k x;k Fkk ftldk iBu fuEufyf[kr g%

"26.1 fu;kDrk d 0;olk; vFkok lifÙk d lcèk e pkjh] diV ;k xj bekunkjh**

;g dFku fd;k x;k g fd mDr vkjki&i= }kjk ;kph dk fnukd 19.1.2001 d çHkko l fuycu d vèkhu Hkh fd;k x;k FkkA

----

15. fd ;g dFku fd;k tkrk g fd ;g fu"df"kr djr g, fd ;kph Jh fnyhi Hkb;k d fo#) yxk, x, vkjkik dk ;fDr;Dr :i l fl) fd;k x;k g] tkp vfèkdkjh u fnukd 7.8.2001 dk fjikV çLrr fd;kA

16. fd ;g dFku fd;k tkrk g fd tkp fjikV l ;g çrhr gkxk fd tkp vfèkdkjh u çcèkd d ekey@c;ku ij vkj çfroknh d ekey@c;ku ij Hkh vkj vfHk;Dr etnj@;kph }kjk çLrr nLrkoth lk{; ij fo'okl djr g, lçf{kr fd;k fd ;g vR;Ur Li"V çrhr gkrk g fd lykUV l ihO lhO dh pkjh gb Fkh] fd ihO lhO vijkèkh cky'oj jfonkl d ?kj d fudV l cjken fd;k x;k Fkk vkj ckn e ml fxj¶rkj fd;k x;k Fkk vkj Jh cky'oj jfonkl d c;ku ij Jh fnyhi Hkb;k dk fxj¶rkj fd;k x;k Fkk] fd vfHk;Dr dedkj@;kph u ifj;ktuk vfèkdkjh] ojh; dkfed vfèkdkjh vkj Lokx ok'kjh d lc bLiDVj dh mifLFkfr e viuh vrxLrrk dh lLohÑfr dh vkj ml 4 ekg dh vofèk dk dkjkokl fn;k x;kA

----

19. fd ;g dFku fd;k tkrk g fd fnukd 19.10.2001 d i= }kjk ;kph dk tkp fjikV dh çfr rkehy dh x;h Fkh vkj ftld çfr ;kph u viuk fnukd 24.10.2001 dk mÙkj nkf[ky fd;kA

----

29. fd nkfMd ekey e nk"kefDr d ;kph d vfHkopu d lcèk e ;g dFku fd;k tkrk g fd mldh nk"kefDr fnukd 20.12.2005 dk dh x;h Fkh tcfd lok l c[kkLrxh fnukd 5.4.2002 dk dh x;h Fkh vFkkr nk"kefDr d dkQh igyA ;g dFku fd;k x;k g fd bld vfrfjDr] nkfMd ekey e nk"kefDr foHkkxh; tkp vkjHk fd, tku d çfr otuk ugh gA ;g dFku fd;k tkrk g fd ;g lfuf'pr g fd nkfMd ekey e çek.k dk ekinM ,o Lrj foHkkxh; dk;okgh l fHkUu gkrk gA ;g dFku fd;k tkrk g fd nkfMd ekey e çek.k dk Lrj ;fDr;Dr lng d ij çek.k g] tcfd foHkkxh; dk;okgh e çek.k vfèklHkk0;rkvk dh cgyrk gA**

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि चूँकि याची के विरुद्ध आरोप चोरी का है और याची को दांडिक मामले में उक्त आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया है, याची बर्खास्तगी की तिथि से सेवा में पुनर्बहाली का हकदार है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि विभागीय

जाँच के दौरान विभाग द्वारा केवल दो गवाहों का परीक्षण किया गया था और दोनों गवाह औपचारिक गवाह हैं। इन दोनों गवाहों का परीक्षण दांडिक मामले में भी किया गया था और चूँकि, दांडिक मामले में याची को आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है, सेवा से बर्खास्तगी का दंड वापस लिए जाने का दायी है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने **(2007)9 SCC 755, (2006)5 SCC 446, (2006)5 SCC 88, (2005)7 SCC 764, (2008)4 SCC 1** और **(1986)6 SCC 417** में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर विश्वास किया है।

5. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आनंद सेन ने निवेदन किया है कि याची सेवा से बर्खास्त किए जाने के छह वर्ष बाद इस न्यायालय के पास आया है। वह सेवा से बर्खास्तगी के आदेश को चुनौती देते हुए न्यायालय के पास नहीं आया था और इसलिए, दांडिक मामले में पश्चातवर्ती दोषमुक्ति सेवा में याची को पुनर्बहाल करने का आधार नहीं हो सकता है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **(2011)4 SCC 584** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

6. दिनांक 15/24.2.2001 के आरोप मेमो का परिशीलन प्रकट करेगा कि याची के विरुद्ध विरचित एकमात्र आरोप का पठन निम्नलिखित है:–

> *^^fd vki lkokx ok'kjh d n'kkfyx lykUV l dl;Vj dh pkjh e vrxLr Fk vkj vkidk fnukd 13.9.2000 dk ifyl }kjk fxj¶rkj fd;k x;k FkkA**
>
> *;fn mDr vkjkik dk fl) fd;k tkrk g] o vu'kklu Hkx dju oky ÑR;k dk xfBr djx vkj çek.kif=r LFkk;h vkn'k d [kM 26.1 d vèkhu vopkj Hkh xfBr djx vkj vU;Fkk Hkh ;g fopkj djr g, fd vopkj D;k g] bldk ;fDr;Dr :i l vFk yxkuk gkxkA**

7. मैं आगे पाता हूँ कि आरोप मेमो में यह कथन किया गया है कि यदि आरोप सिद्ध किया जाता है, यह अनुशासन भंग करने वाला कृत्य गठित करेगा और प्रमाणपत्रित स्थायी आदेश के खंड 26.1 के अधीन अवचार गठित करेगा। विभाग की ओर से परीक्षित गवाहों ने केवल दिनांक 7.9.2000 के परिवाद के विषय वस्तु को अभिपुष्ट किया है। गवाहों में से एक घूरन मियाँ है जिसने पुलिस को परिवाद दाखिल किया था किंतु, परिवाद में उसने याची को अभियुक्त के रूप में नामित नहीं किया है। आरोप के समर्थन में विभाग द्वारा किसी अन्य गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है और इसलिए, दांडिक मामले में याची की दोषमुक्ति प्रासंगिक कारक होगी जिस पर याची के अभ्यावेदन को विनिश्चित करने के लिए विचार किया जाना है। मैं आगे पाता हूँ कि याची ने **''जी॰ एम॰ टैंक बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2006)5 SCC 446,** में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। दिनांक 9.9.2008 के आक्षेपित आदेश से मैं **'जी॰ एम॰ टैंक बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य (ऊपर)''** में दिए गए निर्णय पर विश्वास करते हुए याची द्वारा किए गए अभिवचन के संबंध में अपीलीय प्राधिकारी द्वारा की गयी कोई चर्चा नहीं पाता हूँ। विभागीय कार्यवाही में निष्कर्ष कि आरोप सिद्ध किया गया है, विकृत है क्योंकि गवाह अर्थात् घूरन मियाँ ने लिखित परिवाद में याची को अभियुक्त के रूप में नामित नहीं किया है और इसलिए, विभागीय कार्यवाही में निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जा सका था कि याची कंप्यूटर की चोरी में अंतर्ग्रस्त था। याची के विरुद्ध आरोप चोरी का था और याची को दांडिक मामले में उक्त आरोप से दोषमुक्त किया गया है और चूँकि, विभागीय जाँच के दौरान लाया गया साक्ष्य समरुप है, मेरा दृष्टिकोण है कि याची सेवा में पुनर्बहाली का हकदार है। आगे, चूँकि याची के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही स्वयं नियोक्ता की प्रार्थना पर आरंभ की गयी थी, अत:, याची सेवा में पुनर्बहाली का हकदार होगा।

8. ''जी॰ एम॰ टैंक बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2006)5 SCC 446 में अपचारी कर्मचारी, जिसे सेवा से बर्खास्त किया गया था, दस वर्ष की अवधि के बाद दांडिक मामले में अपनी दोषमुक्ति के बाद न्यायालय के पास आया और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में अपचारी कर्मचारी के अभिवचन को स्वीकार किया:–

^^30. çR;Fkx.k d fy, mifLFkr fo}ku vfèkoDrk }kjk fo'ok l fd, x, fu.k; rF;k ij ,o fofèk ij lfHkU u fd, tku ;kX; gA bl ekey e] foHkkxh; dk;okgh vkj nkfMd ekeyk rF;k d ln'k ,o le#i lox ij vkèkkfjr g vkj vihykFkh d fo#) foHkkxh; ekey e vkjki vkj nkfMd U;k;ky; d le{k vkjki ,d vkj ogh gA ;g lR; g fd foHkkxh; dk;okgh e vkjki vkj nkfMd ekey e vkjki dh çÑfr xHkhj gkrh gA tkp ,o vUo"k.k d nkjku vkj t lk vkjki&i= l ifjyf{kr gkrk g] mld fo#) lxfgr lkexh vkj lk{; d vkèkkj ij vihykFkh d fo#) vkjHk fd, x, ekey dh çÑfr vkj mfYyf[kr dkjd ,d vkj ogh gA nlj 'kCnk e] vkjki] lk{;] xokg vkj ifjfLFkfr ,d vkj ogh gA oreku ekey e] nkfMd ,o foHkkxh; dk;okgh dk igy gh rF;k d mlh lox ij è;ku e fy;k x;k g vFkok çnku fd;k x;k g vFkkr vihykFkh d fuokl LFkku ij dh x;h Nkikekjh] ogk l cjken dh x;h oLr ,A vUo"k.k vfèkdkjh Jh ohO chO jkoy vkj vU; foHkkxh; xokg ,dek= xokg g ftudk ijh{k.k tkp vfèkdkjh }kjk fd;k x;k g tk mud c;kuk ij fo'ok l djd bl fu"d"k ij vk, fd vihykFkh d fo#) vkjkik dk LFkkfir fd;k x;k FkkA nkfMd ekey e mUgh xokgk dk ijh{k.k fd;k x;k Fkk vkj nkfMd U;k;ky; ijh{k.k ij bl fu"d"k ij vk;k fd vfHk;ktu u fdlh ;fDr;Dr lng d ij vihykFkh d fo#) vfHkdfFkr nk"k fl) ugh fd;k g vkj bl fu"d"k d lkFk fd vkjki fl) ugh fd;k x;k g] viuh U;kf;d mn?kk"k.kk }kjk vihykFkh dk nk"keDr dj fn;kA ;g Hkh è;ku e fy;k tkuk g fd U;kf;d mn?kk"k.kk fu;fer fopkj.k d ckn vkj xekxe cgl d ckn dh x;h FkhA bu ifjfLFkfr;k d vèkhu] foHkkxh; dk;okgh e nt fu"d"k dk cu jgu dh vuefr nuk vU;k;kfpr] vufpr vkj neudkjh gkxkA

*31. gekj er e] foHkkxh; dk;okgh e vkj nkfMd dk;okgh e Hkh , l rF; ,o lk{; y'kek= Hkh fHkU u g, fcuk ,d gh Fk] vr% vihykFkh lQy gkuk pkfg,A lfHkUurk ft l lkekU;r% foHkkxh; vkj nkfMd dk;okgh d chp nf"Vdk.k vkj çek.k d Hkkj d vkèkkj ij fl) fd;k tkrk g] oreku ekey ij ç;kT; ugh gkxkA ;|fi ?kjy tkp e nt fu"d"k dk voj U;k;ky;k }kjk oèk ik;k x;k Fkk] tc c[kkLrxh dk pukrh nu okyh dk;okgh d yfcr jgu d nkjku depkjh dk lEekuiod nk"keDr fd;k x;k Fkk] bldk è;ku e yu dh vko';drk g vkj iky ,Fkuh ekey e fn;k x;k fu.k; ykx gkxkA vr%] ge vfHkfuèkkfjr djr g fd vihykFkh }kjk nkf[ky vihy vuKkr fd, tku ;kX; gA***

9. ''कैप्टन एम॰ पॉल एंथोनी बनाम भारत गोल्ड माइंस लि॰ एवं एक अन्य'', (1999)3 SCC 679, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि यदि विभागीय जाँच और दांडिक मामले के दौरान लाया गया साक्ष्य सदृश है, दांडिक आरोपों से दोषमुक्ति पर कर्मचारी विभागीय कार्यवाही में विमुक्ति का हकदार है। वर्तमान मामले में, मैं पाता हूँ कि गवाहों जिनका परीक्षण विभागीय कार्यवाही

के दौरान किया गया था, उन्हीं का परीक्षण दांडिक मामले में भी किया गया था और चूँकि याची के विरुद्ध दांडिक मामला विफल हो गया है, मेरा दृष्टिकोण है कि विभागीय जाँच में पारित याची को सेवा से बर्खास्त करने वाला आदेश हस्तक्षेप किए जाने का दायी है और तद्नुसार, दिनांक 5.4.2002 और दिनांक 9.9.2008 के आदेशों को एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

10. पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efrx.k

सतीश कुमार एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

W.P. (Cr.) No. 268 of 2005. Decided on 25th February, 2014.

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000—धारा 20—किशोरिता लाभ—किशोर अपचारियों का विचारण—किशोर से भिन्न व्यक्तियों के साथ किशोर अपचारियों का विचारण संचालित करना विचारण न्यायालय की ओर से त्रुटि है क्योंकि व्यक्ति जो किशोर नहीं हैं के साथ किशोर अपचारियों का संयुक्त सत्र विचारण संचालित करने के लिए विचारण न्यायालय के पास अधिकारिता की पूर्ण कमी है—आक्षेपित निर्णय अभिखंडित। (पैरा 4)

निर्णयज विधि.—(2005)3 SCC 551; (2009)13 SCC 211; 2008 Cri. LJ 1038—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s. Indrajit Sinha, Rohit Roy, Kaushik Sarkhel, For the Petitioners; M/s. R.R. Mishra, Vijyant Verma, For the Respondents.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.—यह रिट याचिका निम्नलिखित निर्णयों एवं आदेशों के विरुद्ध दाखिल की गयी है:—

(i) l= fopkj.k l0 172 o"k 1989 vkj 172-A o"k 1989 e vij l= U;k;kèk'k] QkLV Vd dkV] ykrgkj }kjk fn, x, fnukd 17/22 tu] 2005 dk fu.k; (fjV ;kfpdk d eek dk ifjf'k"V 1)

(ii) , l0 Vh0 dl l0 172 o"k 1989/fd'kkj fopkj.k l0 97 o"k 2005 e vij e[; U;kf;d nMkfèkdkjh] ykrgkj }kjk ikfjr fnukd 12 tykb] 2005 dk fu.k; (;kfpdk d eek dk ifjf'k"V&2)

(iii) voj lfpo] xg foHkkx] >kj[kM ljdkj d egj ,o gLrk{kj d vèkhu tkjh fnukd 7 Qjojh] 2006 dk eek l0 264 (;kphx.k }kjk nkf[ky ijd 'kiFk i= dk ifjf'k"V)

2. इन याचीगण, जो स्वीकृत रूप से अपराध की कारिता के समय 16 वर्ष की आयु के थे, का विचारण संयुक्त रूप से वयस्क व्यक्तियों के साथ किया गया था और मुख्यत: भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 302/34, 148, 307/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दिनांक 17/22 जून, 2005 के दोषसिद्धि के निर्णय के तहत दोषसिद्ध किया गया था और दंड की मात्रा के लिए मामला किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 20 के अधीन विद्वान किशोर न्याय बोर्ड-सह-अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार को निर्दिष्ट किया गया था। यह निर्णय इस रिट याचिका के मेमो के परिशिष्ट-1 पर है, जिसे मुख्यत: निम्नलिखित आधार पर चुनौती दी गयी है:—

(a) इन रिट याचीगण जो स्वीकृत रूप से घटना की तिथि पर किशोर थे का वयस्क व्यक्तियों के साथ संयुक्त रूप से सत्र विचारण संचालित करने में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार की ओर से अधिकारिता की पूर्ण कमी है। अपराध की कारिता की तिथि पर समस्त याचीगण स्वीकृत रूप से 16 वर्ष से कम आयु के थे और वे पूर्व अधिनियम अर्थात्, किशोर न्याय अधिनियम, 1986 के प्रावधानों के मुताबिक भी किशोर थे और इसलिए, अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार किशोर न्याय अधिनियम, 1986 की धारा 24 के मुताबिक इन किशोर अपचारियों का विचारण संयुक्त रूप से वयस्क व्यक्तियों के साथ संचालित नहीं कर सकते हैं।

(b) किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 18 के मुताबिक किशोर और किसी व्यक्ति जो किशोर नहीं है की संयुक्त कार्यवाही विचारण न्यायालय द्वारा संचालित नहीं की जा सकती है। अधिनियम, 2000 की धारा 20 उन अभियुक्तगण पर प्रयोज्य है जो अधिनियम की धारा 2 (l) में संशोधन, जिसे **प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, (2005)3 SCC 551** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय आधार को अकृत करने के लिए प्रभाव में लाया गया था, के कारण 16 वर्ष से अधिक के किंतु 18 वर्ष से न्यून आयु समूह के थे।

(c) **हरि राम बनाम राजस्थान राज्य एवं एक अन्य, (2009)13 SCC 211** के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय में, जो दिनांक 22 अगस्त, 2006 को अधिनियम, 2000 की धारा 2(l) में संशोधन को प्रभाव में लाने के बाद दिया गया निर्णय है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चूँकि अपीलार्थी अपराध की कारिता के समय 18 वर्ष की आयु से नीचे था, उक्त अधिनियम के प्रावधान उसके मामले में पूरे बल से लागू होंगे।

(d) इन रिट याचीगण को दंड के मात्राकरण के लिए विद्वान किशोर न्यायालय-सह-अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार के पास नहीं भेजा जा सकता है क्योंकि अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा संयुक्त सत्र विचारण संचालित नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह उनकी शक्ति, अधिकारिता एवं प्राधिकार के परे है।

(e) इसके अतिरिक्त, वयस्क व्यक्तियों जिन्हें संयुक्त रूप से दोषसिद्ध किया गया है, ने अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 718 वर्ष 2005 दाखिल किया है जिसे इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिनांक 13 मई, 2009 के निर्णय और आदेश द्वारा अभिखंडित एवं अपास्त किया गया है। (याचीगण द्वारा दाखिल दिनांक 12 जुलाई, 2013 के पूरक शपथ पत्र का परिशिष्ट-4)

(f) याची के अधिवक्ता ने **बबन राय एवं एक अन्य बनाम बिहार राज्य, 2008 Cri LJ 1038** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भी विश्वास किया है और यह निर्णय भी संयुक्त विचारण का था। यद्यपि गैर-किशोर व्यक्तियों के साथ संचालित, किशोर अभियुक्तगण को दोषसिद्ध किया गया था और इस मामले में उनकी दोषसिद्धि मान्य ठहरायी गयी थी, किंतु दंडादेश अपास्त कर दिया गया था क्योंकि निर्णय दिए जाने के समय किशोर अभियुक्त वयस्क अर्थात् लगभग 35 वर्ष की आयु का था। पूर्वोक्त आधारों पर अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को चुनौती दी जा रही है और याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि अब इन याचीगण ने 35 वर्ष से अधिक की आयु प्राप्त कर लिया है।

3. हमने प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि विशेषत: किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 20 की दृष्टि में इन अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करने में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा कोई अवैधता नहीं की गयी है और दंड की मात्रा के लिए उन्हें सही प्रकार से किशोर न्याय बोर्ड, लातेहार को निर्दिष्ट किया गया है। राज्य द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि अधिनियम, 2000 की धारा 20 के मुताबिक किशोरों और उन व्यक्तियों जो किशोरों से भिन्न हैं का विचारण साथ किए जाने के बाद दंड की मात्रा का मामला किशोर न्याय बोर्ड को निर्दिष्ट किया जा सकता है। राज्य के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि इन रिट याचीगण के विरुद्ध किए गए अभिकथन हत्या और व्यक्ति को घायल करने का है और, इसलिए, इन याचीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराएँ 302/34, 148, 307/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, अत:, यह न्यायालय इस रिट याचिका को ग्रहण नहीं कर सकता है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, हम सत्र केस सं॰ 172 वर्ष 1989 और 172A वर्ष 1989 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा दिया गया दिनांक 17/22 जून, 2005 के निर्णय (रिट याचिका के मेमो का परिशिष्ट-1), एस॰ टी॰ केस सं॰ 172 वर्ष 1989/किशोर विचारण सं॰ 97 वर्ष 2005 में अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार द्वारा पारित दिनांक 12 जुलाई, 2005 का निर्णय (रिट याचिका के मेमो का परिशिष्ट-2) और झारखंड सरकार के अवर सचिव, गृह विभाग के मुहर एवं हस्ताक्षर के अधीन जारी दिनांक 7 फरवरी, 2006 के मेमो सं॰ 264 (याचीगण द्वारा दाखिल पूरक शपथ पत्र का परिशिष्ट 3), जहाँ तक इन याचीगण का संबंध है, एतद् द्वारा मुख्यत: निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से अभिखंडित एवं अपास्त करते हैं:–

(I) ;g çrhr gkrk g fd bu ;kphx.k d fo#) vfHkdFku fd'kkj l fHkUu 0;fDr;k d lkFk lkekU; vk'k; vxrj dju e gR;k vkj ,d vU; 0;fDr dk ?kk;y dju d vijkèk d lcèk e g vkj ?kkrd gfFk;kjk l yl gkdj nxk&Qlkn dju dk vfHkdFku Hkh gA ***vfHk;ktu d erkfcd ?kVuk dh frfFk fnukd 23 eb] 1988 gA***

LohÑr :i l] leLr ;kphx.k fd'kkj U;k;ky;&lg&,0 lh0 t0 ,e0 ykrgkj }kjk nkf[ky fnukd 31 tuojh] 2005 dh tkp fjikV d erkfcd vijkèk dh frfFk ij vFkkr fnukd 23 eb] 1988 dk 16 o"k l de vk; d FkA fd'kkj U;k;ky;&lg&vij e[; U;kf;d nMkfèkdkjh] ykrgkj }kjk nh x;h iokDr fjikV dk vij l= U;k;kèkh'k] QkLV Vd dkV] ykrgkj }kjk Lo; fu.k; e Lohdkj fd;k x;k gA bl çdkj] ;g vfookfnr g fd leLr rhu ;kphx.k 16 o"k dh vk; l uhp d Fk vkj vij l= U;k;kèkh'k] QkLV Vd dkV] ykrgkj d le{k bl rF; dk LFkkfir fd;k x;k FkkA

(II) bl çdkj] ç'u tk bl fjV ;kfpdk e mnHkr gkrk g] ;g g fd D;k fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj dk fopkj.k fd'kkj l fHkUu 0;fDr;k d lkFk fd;k tk ldrk gA

bl fook|d d fofuf'pr dju d fy, fd'kkj U;k; vfèkfu;e] 1986 dh èkkjk 24 dk fufn"V djuk vko';d g D;kfd vijkèk dh frfFk ij ;g vfèkfu;e çHkko e FkkA vfèkfu;e] 1986 dh èkkjk 24 dk iBu fuEufyf[kr g%

"24. ***fd'kkj vkj ml 0;fDr dh l;Dr dk;okgh ugh] tk fd'kkj ugh g-****&(1) n.M çfØ;k lfgrk] 1973 dh èkkjk 223 e ;k rRle; çoÙk fdlh vU;*

*fofèk e dN Hkh lekfo"V gksu d ckotn] **fdlh Hkh fd'kkj dk ml 0;fDr d lkFk] tk fd'kkj ugh g] fdlh vijkèk d fy, fopkfjr ;k vkjkfir ugh fd;k tk;xkA***

(2) ;fn ,d fd'kkj ml vijkèk dk vfHk;Dr g] ftld fy, n.M çfØ;k lfgrk] 1973 dh èkkjk 223 d vUrxr ;k rRle; çoÙk fdlh vU; fofèk d vUrxr] ml fd'kkj ;k fdlh 0;fDr dk] tk fd'kkj ugh g] yfdu mi&èkkjk (1) e lekfo"V ifjoh{kk d fy,] ,d lkFk fopkfjr vkj vkjkfir fd;k tkrk g rk ml vijkèk dk çlKku yu okyk e.My fd'kkj vkj vU; 0;fDr d vyx&vyx fopkj.kk d fy, fun'k nxkA　¼tkj Mkyk x;k½

पूर्वोक्त प्रावधान की दृष्टि में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में अंतर्विष्ट किसी चीज के बावजूद व्यक्ति जो अधिनियम, 1986 की धारा 2(h) के मुताबिक किशोर है, के अपराध का विचारण उस व्यक्ति, जो किशोर नहीं है के साथ नहीं किया जा सकता है।

किशोर न्याय अधिनियम, 1986 की धारा 2(h) का पठन निम्नवत है:-

*"2(h) ^^fd'kkj** l vfHkir g **,d yMdk tk lkyg o"k dk ugh gvk g ;k ,d yMdh tk vBkjg o"k dh ugh gbZ gA****　*¼tkj Mkyk x;k½*

इस प्रकार, किशोर का अर्थ है लड़का जिसने 16 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं किया है। याचीगण दावा कर रहे थे कि वे अधिनियम, 1986 की धारा 2(h) के मुताबिक किशोर थे, और इसलिए, किशोर न्यायालय-सह-अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार को जाँच संचालित करने का निर्देश दिया गया था। जाँच संचालित की गयी थी और उक्त अधिकारी द्वारा दिनांक 3 जनवरी, 2005 को रिपोर्ट दिया गया था जिसमें यह रिपोर्ट किया गया है कि ये तीनों याचीगण अपराध की तिथि पर अर्थात् दिनांक 23 मई, 1988 को किशोर थे। यह रिपोर्ट अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा स्वीकार की गयी थी और इसलिए, इन तीनों याचीगण का विचारण उन व्यक्तियों के साथ संचालित नहीं किया जा सकता है जो किशोर से भिन्न हैं। किशोर अपचारियों का विचारण किशोर से भिन्न व्यक्तियों के साथ संचालित किया जाना विद्वान विचारण न्यायालय की ओर से त्रुटि है क्योंकि इन तीनों किशोर अपचारियों का संयुक्त सत्र विचारण उन व्यक्तियों जो किशोर नहीं हैं के साथ संचालित करने के लिए विद्वान विचारण न्यायालय की अधिकारिता में पूर्ण कमी है और इसलिए, सत्र केस सं० 172 वर्ष 1989 और 172A वर्ष 1989 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा दिया गया दिनांक 17/22 जून, 2005 का निर्णय (रिट याचिका के मेमो का परिशिष्ट 1) अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

यह प्रतीत होता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 20 पर विश्वास किया है और उस आधार पर संयुक्त विचारण संचालित किया गया है और इन किशोरों को दोषसिद्ध किया गया है और दंडादेश के निर्धारण के लिए मामला किशोर न्याय बोर्ड-सह-अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार को निर्दिष्ट किया गया है।

त्वरित निर्देश के लिए किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 20 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:-

*^^20. **yfEcr ekeyk d lcèk e fo'k"k çkoèkku-**&bl vfèkfu;e e dN Hkh lekfo"V gksu d ckotn] ml frfFk l] ftl ij ;g vfèkfu;e çoÙk gvk] fdlh {k= e fdlh U;k;ky; e fd'kkj l lcfèkr lHkh yfEcr dk;okfg;k ml U;k;ky; e ml çdkj l pky jgxh] ftl çdkj l ;fn ;g vfèkfu;e ikfjr ugh gvk gkrk vkj ;fn U;k;ky; ikrk g fd fd'kkj u vijkèk dkfjr fd;k g] rk ;g ml fu"d"k*

dk vfHkyf[kr djxk vkj fd'kkj d lcèk e fdlh n.Mkn'k dk ikfjr dju d LFkku ij] fd'kkj dk ckM d ikl Hkt nxk] tk bl vfèkfu;e d çkoèkkuk d vuikyu e ml fd'kkj d lcèk e vkn'kk dk ikfjr djxk] ekuk ;fn ;g ml vfèkfu;e d vUrxr tkp ij lUr"V gk fd fd'kkj u vijkèk dkfjr fd;kA

ijUr e.My vkn'k e mYyf[kr fd; tku oky fdlh i;kIr vkj fo'k"k dkj.k d fy, ekeyk iufoykfdr dj ldrk g vkj ,l fd'kkj d fgr e ;fDr;Dr vkn'k ikfjr dj ldrk gA

Li"Vhdj.k-*&fdlh Hkh U;k;ky; e lHkh yfcr ekeyk e] ftue fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj d lcèk e fopkj.k] fuxjkuh] vihy ;k dkb vU; vkijkfèkd dk;okfg;k 'kkfey gkrh g] ,l fd'kkj dh fd'kkjrk dk fuèkkj.k èkkjk 2 d [k.M (1) dh 'krk e fd;k tk;xk] pkg ;fn fd'kkj bl vfèkfu;e d vkjEHk gku dh frfFk ij ;k ml l igy ,lk gkuk lekIr gkrk gk vkj bl vfèkfu;e d çkoèkku ,l ykx gkx ekuk ;fn mDr çkoèkku lHkh ç;ktuk d fy, vkj lHkh egRoi.k le; ij] tc vfHkdfFkr vijkèk dkfjr fd;k x;k Fkk] çoUk gkrA***

पूर्वोक्त धारा अर्थात् अधिनियम, 2000 की धारा 20 को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने गंभीर गलती किया है क्योंकि अधिनियम, 2000 की धारा 18 का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है।

त्वरित निर्देश के लिए, किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 18 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

^^èkkjk 18. ***fd'kkj vkj ml 0;fDr dh l;Dr dk;okgh ugh] tk fd'kkj ugh g-****&(1) n.M çfØ;k lfgrk] 1973 (1974 dk l0 2) dh èkkjk 223 e ;k rRle; çoUk fdlh vU; fofèk e dN Hkh lekfo"V gku d ckotn]* ***fdlh Hkh fd'kkj dk ml 0;fDr d lkFk] tk fd'kkj ugh g] fdlh vijkèk d fy, fopkfjr ;k vkjkfir ugh fd;k tk,xkA***

(2) ;fn ,d fd'kkj ml vijkèk dk vfHk;Dr g] ftld fy, n.M çfØ;k lfgrk] 1973 (1974 dk l0 2) dh èkkjk 223 d vUrxr ;k rRle; çoUk fdlh vU; fofèk d vUrxr] ml fd'kkj ;k fdlh 0;fDr dk] tk fd'kkj ugh g] yfdu mi&èkkjk (1) e lekfo"V ifjoh{kk d fy,] ,d lkFk fopkfjr vkj vkjkfir fd;k tkrk g rk ml vijkèk dk çlKku yu okyk e.My fd'kkj vkj vU; 0;fDr d vyx&vyx fopkj.kk d fy, fun'k nxkA *¼tkj Mkyk x;k½*

अधिनियम, 2000 की धारा 20 के बेहतर अधिमूल्यन के लिए अधिनियम, 2000 की धारा 2 (l) को समझने की आवश्यकता है, जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"2(l) ^^fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj** l og fd'kkj vfHkçr g] ftl ij vijkèk dkfjr dju dk vfHkdFku g vkj* ***,lk vijkèk dkfjr dju dh frfFk ij vBkjg o"k dh vk;q i.k ugh dh gk(***** *¼tkj Mkyk x;k½*

धारा 2(l) में पूर्वोक्त संशोधन की दृष्टि में, जिसे दिनांक 22 अगस्त, 2006 को प्रभाव में लाया गया है, यह प्रतीत होता है कि वर्ष 1986 के पुराने अधिनियम के अधीन विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर लड़के की आयु अधिनियम, 2000 की धारा 2 (l) के मुताबिक 16 वर्ष से 18 वर्ष तक बढ़ायी गयी थी। अत: अनेक मामले हैं जो उन व्यक्तियों जो 16 वर्ष के ऊपर की आयु और 18 वर्ष से न्यून की आयु के हैं के संबंध में सत्र न्यायालय के समक्ष लंबित हैं। पहले अर्थात् दिनांक 22 अगस्त, 2006 के पहले, उदाहरणस्वरुप, 17 वर्ष के आयु के किसी लड़के का विचारण सत्र न्यायालय द्वारा संचालित

किया जा सकता है यदि सत्र न्यायालय द्वारा संचालित किए जाने के लिए अभियुक्त के विरुद्ध आरोप है। इस सत्र विचारण के लंबित रहने के दौरान धारा 2 (l) को प्रभाव में लाया गया है। इन सत्र विचारणों के संबंध में, अधिनियम, 2000 की धारा 20 प्रयोज्य है क्योंकि आधे रास्ते तक विचारण पहले ही संचालित किया जा चुका था और इसलिए, गवाहों के पुनर्परीक्षण का प्रयोजन नहीं था और इसलिए, अधिनियम, 2000 की धारा 20 सत्र न्यायालय को 16 वर्ष से ऊपर की आयु और 18 वर्ष से न्यून की आयु के व्यक्तियों के संबंध में विचारण जारी रखने की अनुमति देती है। किंतु, वर्तमान मामले के तथ्यों को देखते हुए, ये याचीगण स्वीकृत रूप से अपराध की तिथि पर अर्थात् दिनांक 23 मई, 1988 को 16 वर्ष से कम आयु के थे और जैसा दोनों अधिनियमों, नये और पुराने, अर्थात् किशोर न्याय अधिनियम, 1986 की धारा 24 और किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 की धारा 18 के अधीन प्रावधानित किया गया है, किशोरों और किशोरों से भिन्न व्यक्तियों का संयुक्त विचारण संचालित नहीं किया जा सकता है। उन व्यक्तियों जो किशोर नहीं थे के साथ इन तीनों किशोर अपचारियों का संयुक्त विचारण करके दोषसिद्ध करते हुए अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया था। यह गलत है क्योंकि विद्वान विचारण न्यायालय के पास किशोरों से भिन्न व्यक्तियों के साथ इन तीनों याचीगण जो किशोर अपचारी है का सत्र मामला संचालित करने के लिए शक्ति, अधिकारिता और प्राधिकार नहीं है।

(III) **प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, (2005)3 SCC 551** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैराओं 14, 15, 16 एवं 17 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"14. Jh 'kj.k u èkkjk e nk LFkkuk ij ç;Dr 'kCn ij Hkkjh tkj fn;k vkj çfrokn fd;k fd 'kCn l>krk g fd fd'kkj dh vk; d fofu'p;dj.k d fy, i'kh frFk fxuh tku okyh frFk gkxh D;kfd mldh vk; d lcèk e tkp ml frFk l 'k: gkrh g tc ml U;k;ky; d le{k yk;k tkrk g vkj u fd vU;FkkA ge bl fuonu dk Lohdkj dju e v{ke gA geu igy gh xkj fd;k g fd vipkjh fd'kkj dh ifjHkk"kk dk vFk g fd'kkj ft l ?kVuk dh frFk ij vijkèk djrk ik;k x;k gA ge vfèkfu;e] 1986 dh èkkjk 18 d çkoèkku ij xkj dj ldr gA èkkjk 18 fd'kkjk dh tekur vkj vfHkj{kk çkoèkkfur djrh gA ;g iBu fuEufyf[kr g%

*^^18. **tekur rFkk fd'kkj dh vfHkj{kk-**&(1) tc fdlh tekurh; ;k vtekurh; vijkèk dk vfHk;Dr 0;fDr rFkk çdVr% ,d fd'kkj fxj¶rkj ;k fu:) fd;k tkrk g ;k fd'kkj U;k;ky; d le{k mifLFkr gkrk g ;k yk;k tkrk g , lk 0;fDr nM çfØ;k lfgrk] 1973 (1974 dk l0 2) ;k rRle; çoÙk fdlh vU; fofèk e vrfo"V fdlh pht d ckotn tekur ij çfrHk d lkFk ;k bld fcuk fueDr fd;k tk;xk ij ml fueDr ugh fd;k tk;xk vxj ;g fo'okl dju dk ;fDr;Dr dkj.k çrhr gk fd fuefDr l mld fdlh Kkr vijkèkh d lid e vku dh lHkkouk g ;k ml ufrd [krjk igpk;xk ;k ;g fd mldh fuefDr U;k; d mí';k dk foQy djxhA*

(2) tc fxj¶rkj fd, tku ij , lk 0;fDr Fkku d çHkkjh vfèkdkjh }kjk mi&èkkjk (1) d vèkhu tekur ij fueDr ugh fd;k tkrk g] , lk vfèkdkjh ml ,d lç{k.k xg e ;k ,d ljf{kr LFkku ij ¼tk ,d Fkkuk ;k dkjkxkj u gk½ fofgr jhfr l j[kok;xk tc rd fd ml fdlh fd'kkj U;k;ky; d le{k yk;k ugh tkrkA

*(3) tc ,lk 0;fDr fd'kkj U;k;ky; }kjk mi&èkkjk (1) d vèkhu dkjkxkj Hktu d ctk; tekur ij fueDr ugh fd;k tkrk ;g mld lcèk e tkp d yfEcr jgu d nkjku ,lh vofèk d fy, tk vkn'k e fofufn"V fd;k tk; lç{k.k xg ;k ljf{kr LFkku Hktu dk vkn'k ikfjr djxkA***

15. ;g xkj fd;k tk,xk fd ;g 'kCn bl èkkjk e Hkh ,d l vfèkd LFkkuk ij ç;Dr fd;k x;k gA çk;% vijkèkh vfHkdfFkr vijkèk fd, tku d rjUr ckn fxj¶rkj fd;k tkrk g vFkok dHkh dHkkj ?kVuk LFky ij fxj¶rkj fd;k tkrk gA

16. ;g ; Hkh n'kk,xk fd fd'kkjk dh fxj¶rkjh vkj tekur ij fuefDr vkj vfHkj{kk d fy, fd'kkfjrk d fy, fxuh tku dh frfFk vijkèk dh frfFk g vkj u fd i'kh dh frfFkA

*17. bld vfrfjDr] çR;Fkh d vfèkoDrk }kjk fo'okl dh x;h vfèkfu;e dh èkkjk 32 U;k;ky; e fd'kkj dh i'kh ifjdfYir ugh djrh gA***

पूर्वोक्त निर्णय की दृष्टि में, यह विनिश्चित करने के लिए कि क्या व्यक्ति किशोर है या नहीं, घटना की तिथि बिल्कुल नहीं देखी जानी थी। अधिनियम, 2000 की धारा 2 (I) का संशोधन दिनांक 22 अगस्त 2006 को प्रभाव में लाया गया था और यह परिभाषित करता है कि किशोर वह है जिसने ऐसे अपराध की कारिता की तिथि पर 18 वर्ष की आयु पूरा नहीं किया है। इस प्रकार, धारा 2 (1) में उक्त संशोधन के फलस्वरुप **प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, (2005)3 SCC 551,** में पूर्व निर्णय का प्रभाव इस प्रभाव के साथ अकृत किया गया है कि यह विनिश्चित करने के लिए कि क्या व्यक्ति किशोर है या नहीं, अपराध की कारिता की तिथि कट-ऑफ तिथि के रूप में मानी जाएगी। वर्तमान मामले के तथ्यों में यह कट-ऑफ तिथि दिनांक 23 मई 1988 है।

(IV) **हरिराम बनाम राजस्थान राज्य, (2009)13 SCC 211,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैराग्राफ सं॰ 35, 59, 68, 69 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:-

*^^35. f}rh; fcn ij] 1986 vfèkfu;e dh èkkjk 2 (h) e i#"k fd'kkj dh ifjHkk"kk d fo#) fd'kkj U;k; vfèkfu;e] 2000 dh èkkjk 2 (k) e ^^fd'kkj** dh ifjHkk"kk d lkFk fd'kkj U;k; vfèkfu;e] 2000 dh èkkjkvk 3 vkj 20 d çkoèkkuk ij fopkj dju d ckn çrki flg ekey e cger nf"Vdk.k ;g Fkk fd vfèkfu;e] 1986 d vèkhu fdlh U;k;ky;@çkfèkdkj e vkjHk dh x;h dk;okgh ij vfèkfu;e] 2000 ç;kT; gkxk tk yfcr g tc vfèkfu;e] 2000 çHkko e vk;k vkj 0;fDr u fnukd 1.4.2001 ij 18 o"k dh vk; ijk ugh fd;k FkkA nlj 'kCnk e] i#"k vijkèkh ftld fo#) vfèkfu;e] 1986 d vèkhu vkjHk dh x;h fdlh U;k;ky;@çkfèkdkj e dk;okgh fd;k tk jgk Fkk] u fnukd 1.4.2001 ij 18 o"k dh vk; ijk ugh fd;k Fkk] og fd'kkj U;k; vfèkfu;e] 2000 d çkoèkkuk }kjk 'kkfl r gkxkA*

59. fofèk ftl vc èkkjk 2 (k) d l;Dr iBu ij fuf'pr :i fn;k x;k g] ;g gh fd o leLr 0;fDr tk fnukd 1.4.2001 d igy Hkh vijkèk dh dkfjrk dh frfFk ij 18 o"k l de vk; d Fk dk fd'kkj d :i e ekuk tk,xk Hkyh gh vfèkfu;e d vkjHk gku dh frfFk ij vFkok bld igy mud }kjk 18 o"k dh vk; çkIr dj yu d ckn fd'kkfjrk dk nkok fd;k x;k Fkk vkj o nk"kfl f) fd, tku ij nMkn'k Hkxr jg FkA

68. rnu lkj] fd'kkj ft lu vijkèk dh dkfjrk dh frfFk ij 18 o"k dh vk; ijk ugh fd;k Fkk] fd'kkj U;k; vfèkfu;e] 2000 d ykHkk dk gdnkj Hkh Fkk ekuk vfèkfu;e] 1986 d çoru d nkjku Hkh èkkjk 2 (k) d çkoèkku lno vfLrRo e FkA

69. mDr voLFkk ij vfèkfu;e] 2000 dh èkkjk 20 e ijLFkkfir l'kkèkuk d QyLo#i iu% tkj fn;k x;k Fkk ft ld }kjk ijUrd vkj Li"Vhdj.k èkkjk 20 e tkMk x;k Fkk ft lu bl vkj Hkh Li"V cuk;k fd fopkj.k iujh{k.k] vihy lfgr leLr yfcr ekeyk e vkj fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj d lcèk e fdlh vU; nkfMd dk;okgh e ,l fd'kkj dh fd'kkfjrk dk fofu'p;dj.k vfèkfu;e] 2000 dh èkkjk 2 d [kM (I) d fucèkuku lkj gkxk vkj vfèkfu;e d çkoèkku ykx gkx ekuk ***mDr çkoèkku çHkko e Fk tc vfHkdfFkr vijkèk fd;k x;k FkkA****

iokDr fu.k; dh nf"V e] ft l èkkjk 2 (I) e l'kkèku dk çHkko e yku d ckn fn;k x;k Fkk] ***;g Li"V g fd tk fd'kkj g] mud ekey ij fd'kkj U;k; ckM }kjk fopkj fd;k tkuk gkxkA***

(V) **बबन राय एवं एक अन्य बनाम बिहार राज्य, 2008 Cri. L.J. 1038,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैराग्राफ 5 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"5. tgk rd bu nkuk vihykFkhx.k dh nk"kflf) ft l mPp U;k;ky; }kjk li"V fd;k x;k g dk lcèk g] vihykFkhx.k mPp U;k;ky; d vkn'k e dkb xyrh bfxr dju dh voLFkk e ugh g ft ld }kjk vihykFkhx.k dh nk"kflf) li"V dh x;h gA vk{kfir fu.k; vkj vfHky[k dk ifj'khyu dju ij ge ;g vfHkfuèkkfjr dju dk vkèkkj ugh ikr g fd mPp U;k;ky; vihykFkhx.k dh nk"kflf) ekU; Bgjku e U;k;kfpr ugh FkkA ;g voLFkk gku d ukr gekjk nf"Vdk.k g fd mPp U;k;ky; u vihykFkhx.k dh nk"kflf) ekU; Bgjku e dkb xyrh ugh fd;k gA vc] nMkn'kk d lcèk e ç'u mnHkr gkrk gA ***gekj iokDr fu"d"k dh nf"V e fd ; nkuk vihykFkhx.k ?kVuk dh frfFk ij fd'kkj Fk vkj vc mUgku o;Ldrk çkIr dj fy;k g] mud nMkn'kk dk vkLr djuk vkj mudk fueDr dju dk vkn'k ikfjr djuk U;k;kfpr ,o lehphu gkxk D;kfd mUg fjekM gke ugh Hktk tk ldrk gA*** *¼tkj Mkyk x;k½*

पूर्वोक्त निर्णय में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को मान्य ठहराया और दंड की मात्रा को मुख्यत: इस कारण से अभिखंडित एवं अपास्त कर दिया कि तत्कालीन किशोरों जिन्होंने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मामला विनिश्चित किए जाने तक लगभग 35 वर्ष की आयु प्राप्त कर लिया है, को तीन वर्ष की महत्तम अवधि का दंड देकर कोई अर्थपूर्ण प्रयोजन प्राप्त नहीं किया जाएगा। वर्तमान मामले में भी अपराध दिनांक 23 मई, 1988 का है और किशोर न्यायालय-सह-अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार द्वारा दी गयी दिनांक 31 जनवरी, 2005 के रिपोर्ट के मुताबिक ये याचीगण अपराध की कारिता की तिथि पर 16 वर्ष से कम आयु के थे और इसलिए, किशोर न्याय अधिनियम, 1986 की धारा 2 (h) के मुताबिक किशोर थे और उन्होंने अब तक 35 वर्ष से अधिक की आयु प्राप्त कर लिया होगा। अत: हम किसी दंड के लिए इस याचिका को किशोर न्याय बोर्ड के पास भेजने के इच्छुक नहीं हैं भले ही इस न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि मान्य ठहरायी गयी है।

5. अत:, पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं की दृष्टि में हम एतद् द्वारा निम्नलिखित को अभिखंडित एवं अपास्त करते है:–

(I) ml lhek rd tgk rd bldk ljkdkj bu fjV ;kfp;k d lkFk g] l= ekeyk l0 172 o"k 1989 vkj 172A o"k 1989 e vij l= U;k;kèkh'k] QkLV Vd dkV] ykrgkj }kjk fn;k x;k 17/22 tu] 2005 dk fu.k; (fjV ;kfpdk d eek dk ifjf'k"V 1)

(II) , l0 Vh0 dl l0 172 o"k 1989/ fd'kkj fopkj.k l0 97 o"k 2005 e vij e[; U;kf;d nMkfèkdkjh ykrgkj }kjk ikfjr fnukd 12 tykb] 2005 dk fu.k; vkj

(III) >kj[kM ljdkj d voj lfpo] xg foHkkx d egj ,o gLrk{kj d vèkhu tkjh fnukd 7 Qjojh] 2006 dk eek l0 264

6. तद्नुसार, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjî ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

अभिजीत हजारीबाग टॉल रोड लिमिटेड

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (C) No. 4202 of 2012. Decided on 10th April, 2014.

(क) भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर अधिनियम, 1996—धारा 3 (1)—भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर नियमावली, 1998—नियम 3—भारत का संविधान—अनुच्छेद 246—धारा 3 (i) एवं नियम 3 के अधिकार को चुनौती—संसद के पास बी० ओ० सी० डब्ल्यू० डब्ल्यू उपकर अधिनियम को अधिनियमित करने की विधायी क्षमता है—बी० ओ० सी० डब्ल्यू० डब्ल्यू० नियमावली का नियम 3 बी० ओ० सी० डब्ल्यू० डब्ल्यू० उपकर अधिनियम और भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 का अधिकारातीत नहीं है और निर्माण की कीमत के 1% की दर पर उपकर का उद्ग्रहण न तो मनमाना है और न ही अत्यधिक—केंद्र सरकार द्वारा जारी दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना सं० एस० ओ० 2899 में मनमानापन नहीं है जिसके द्वारा नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण की कीमत के 1% की दर पर उपकर बी० ओ० सी० डब्ल्यू० (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्त) अधिनियम के प्रयोजन से उद्ग्रहित और संग्रहित किया जाना है—याची कंपनी द्वारा उपगत निर्माण की कीमत के 1% की दर पर उपकर के उद्ग्रहण में मनमानापन अथवा अयुक्तियुक्तता नहीं है—रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 27, 35 एवं 37)

(ख) संविधि की व्याख्या—प्रयोजनात्मक अर्थान्वयन—न्यायालय को अधिनियम के तात्पर्य एवं उद्देश्य को प्रभाव देना होगा—प्रयोजनात्मक अर्थान्वयन का नियम व्याख्या के सिद्धांतों की प्रयोज्यता के अध्यधीन होना चाहिए। (पैरा 33)

निर्णयज विधि.—(2012)1 SCC 101—Followed; (2006) 4 SCC 517—Relied; MANU/DE/7405/2007—Assented. AIR 1957 SC 657; AIR 2000 SC 109—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s Binod Poddar, Darshana Poddar Mishra, Piyus Poddar, For the Appellant; M/s A. Allam, Fahad Allam, For the Resp.-State; M/s Prabhash Kumar, Vishal Kumar Rai, For the Resp.-UOI.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर अधिनियम, 1996 की धारा 3 (1) के अधिकार को चुनौती देते हुए और भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर नियमावली, 1998 के नियम 3 के अधिकार को भी चुनौती देते हुए और अन्य अनुतोषों की प्रार्थना करते हुए याची ने इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

2. याची मेसर्स अभिजीत इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड के इसके अग्रणी सदस्य के रूप में मेसर्स अभिजीत इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड एवं मेसर्स कॉरपोरेट इस्पात एल्वायज लिमिटेड से गठित संकाय है। याची एन॰ एच॰ 33 के निर्माण, प्रचालन, रख-रखाव एवं अंतरण के लिए करार धारक है। एन॰ एच॰ डी॰ पी॰ फेज III परियोजना के अधीन 'डिजाइन, बिल्ट, फिनांस, ऑपरेट एन्ड ट्रांसफर (डी॰ बी॰ एफ॰ ओ॰ टी॰) टॉल आधार पर झारखंड राज्य में एन॰ एच॰ 33 के 0.00 कि॰ मी॰ से 40.500 कि॰ मी॰ तक बरही–हजारीबाग सेक्शन के फोर लेनिंग के लिए भारत के राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण और रियायत पाने वाले के रूप में याची के बीच रियायत करार किया गया था। 0.00 कि॰ मी॰ से 40.500 कि॰ मी॰ तक एन॰ एच॰ 33 के बरही हजारीबाग सेक्शन के फोर-लेनिंग का पूर्वोक्त निर्माण करने के लिए याची को इ॰ पी॰ सी॰ संविदाकार/उप-संविदाकार अर्थात् (i) अभिजीत प्रोजेक्ट्स लिमिटेड संविदाकार, (ii) शाकंबरी निकेतन प्रा॰ लि॰ एवं (iii) यश बिल्डर्स प्रा॰ लि॰ उप-संविदाकार नियुक्त किया गया था।

3. याची का मामला यह है कि 0.00 कि॰ मी॰ से 40.500 कि॰ मी॰ तक एन॰ एच॰ 33 के बरही हजारीबाग सेक्शन के फोर-लेनिंग के पूर्वोक्त निर्माण में इ॰ पी॰ सी॰ ठेकेदार/उप ठेकेदार में अंतर्ग्रस्त श्रम घटक अत्यन्त छोटा है अर्थात् उनके द्वारा उपगत कुल व्यय का लगभग 15-20%। चूँकि ऐसा है, भारत के राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण ने लेखा परीक्षा अधिकारी, सरकारी लेखा परीक्षा टीम, भारत का राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण, नयी दिल्ली के पत्र को संलग्न करते हुए याची कंपनी को दिनांक 9.6.2012 का पत्र जारी किया जिसके द्वारा, अन्य बातों के साथ, याची कंपनी द्वारा उपगत निर्माण व्यय के 1% की दर पर स्रोत पर कटौती करने का निर्णय किया गया था।

4. याची कंपनी द्वारा उपगत व्यय के 1% के दर पर स्रोत पर कटौती करने के लिए जारी ऐसे नोटिस से व्यथित होकर याची ने संसद द्वारा अधिनियमित (i) भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर अधिनियम, 1996 (बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम) की धारा 3 (1) के अधिकार को संसद के विधायी क्षमता से परे होने के नाते चुनौती देते हुए क्योंकि यह शब्द ''निर्माण व्यय'' को परिभाषित किए बिना नियोक्ता द्वारा उपगत'' ''निर्माण व्यय'' पर उपकर का उद्ग्रहण और संग्रहण इप्सित करता है; (ii) यह घोषणा इप्सित करते हुए कि भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर नियमावली, 1998 (बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली) का नियम 3 मूल अधिनियम और भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 का अधिकारातीत है (iii) यह निर्देश इप्सित करते हुए कि निर्माण व्यय में अंतर्ग्रस्त केवल श्रम घटक के बजाए निर्माण व्यय के 2% से परे नहीं किंतु 1% से न्यून नहीं के दर पर उपकर का उद्ग्रहण और संग्रहण मनमाना, अयुक्तियुक्त और अधिहरणकारी है चूँकि श्रम व्यय का तत्व केवल निर्माण के कुल व्यय का लगभग 10-15% है; (iv) केंद्र सरकार द्वारा जारी दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना सं॰ एस॰ ओ॰ 2899 जिसके द्वारा नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय के 1% के दर पर उपकर उद्ग्रहित किया जाना है, के अभिखंडन के लिए और (v) याची कंपनी से याची कंपनी द्वारा उपगत निर्माण व्यय के 1% के दर पर स्रोत पर कटौती करने से, जिसके लिए उनके द्वारा याची कंपनी को दिनांक 9.6.2012 का पत्र जारी किया गया है, भारत के राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण को अवरुद्ध करने के लिए इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

5. रिट याचिका का प्रतिरोध करते हुए झारखंड राज्य ने यह प्रतिवाद करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया कि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम संसद के विधायी क्षमता के बिल्कुल अंतर्गत है और कर्मकारों के लिए कल्याणकारी उपायों के रूप में निर्माण व्यय के 1% के दर पर उपकर उद्ग्रहित किया गया है क्योंकि उक्त अधिनियम भवन एवं अन्य निर्माण कार्य में लगे कर्मकारों के लिए स्वास्थ्य एवं कल्याणकारी उपाय प्रदान करने के लिए आशयित है।

6. भारत संघ ने यह प्रतिवाद करते हुए अपना प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है कि संसद विषय वस्तु के संबंध में विधान अधिनियमित करने के लिए सक्षम है और कि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम के प्रावधानों के अधीन उद्ग्रहित उपकर अनुसूची VII में लिस्ट I, यूनियन लिस्ट की प्रविष्टि 97 सह-पठित लिस्ट III के क्रमांक 23 और 24 पर प्रविष्टि के अधीन आच्छादित उद्ग्रहण है। वास्तविक उद्ग्रहण निर्माण के वास्तविक व्यय पर केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित 1% के परे नहीं है और धारा 3 में निर्माण का वास्तविक व्यय अत्यन्त स्पष्ट है और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 निर्माण व्यय विनिश्चित करने का मापदंड स्पष्ट करता है और निर्माण व्यय की संगणना तर्कपूर्ण है और न कि मनमानी।

7. हमने याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री विनोद पोद्दार और भारत संघ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विशाल कुमार राय के साथ श्री प्रभाष कुमार को सुना है। हमने झारखंड राज्य के लिए उपस्थित विद्वान वरीय एस॰ सी॰ II श्री फरहाद आलम के साथ श्री ए॰ अल्लम को भी सुना है।

8. <u>बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम, 1996 की योजना</u>

बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम, 1996 की लंबी प्रस्तावना इसके प्रयोजन की उपदर्शक है कि अधिनियम भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम, 1996 (बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के अधीन गठित भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण बोर्डों के संसाधनों को बढ़ाने की दृष्टि से नियोक्ताओं द्वारा उपगत निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण एवं संग्रहण प्रावधानित करने के लिए आशयित है।

9. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 2 (d) बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम में अंतर्विष्ट समस्त परिभाषाओं को अपनाती है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 2 (d) का पठन निम्नलिखित है:-

> *"2 (d) ble ç;Dr fdr vifjHkkf"kr vkj Hkou ,o vU; lfUuek.k dedkj (fu;ktu dk fofu;eu ,o lok 'kr) vfèkfu;e] 1996 e ifjHkkf"kr 'kCnk ,o vfHk0;fDr;k dk Øe'k% ml vfèkfu;e e mudk leunf'kr vFk gkxkA***

10. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम की कुछ परिभाषाएँ गौर किए जाने के लिए प्रासंगिक हैं। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम की धारा 2 (1) (d) भवन परिभाषित करती है जिसका पठन निम्नलिखित है:-

> *"2 (1) (d) ^^Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk;** l vfHkçr g Hkouk] xfy;k] lMdk] jyo] Vkeo] ,;j QhYM l] flpkb] ty fudkl h] ckèk vkj uohx'ku dk;] ck< fu;=.k dk; (LVke okVj Mut dk; lfgr)] Åtk dk mRiknu] lpj.k ,o forj.k] okVj oDl (ty forj.k d fy, puyk lfgr)] ry ,o xl bLVky'ku] fo|r ykbu] ok;jyl] jfM;k] Vyhfotu] VyhQku] VyhxkQ vkj fon'k lpkj]*

*ME l] dukY l] tyk'k;] okVj dk l t] ljx] iy] ok;kMDV] ,DokMDV] ikbi ykbU l] Vko l] dfyx Vko l] Vk lfe'ku Vko l vkj ,l vU; dk; dk vFkok bud lcèk e fuek.k] ifjoru] ejEefr] j[k&j[kko vFkok Hktu tlk bl fufeÙk lefpr ljdkj }kjk vfèklpuk }kjk fofufn"V fd;k tk ldrk g fdr tk fdlh Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; lfEefyr ugh djrk g ftud çfr dkj[kkuk vfèkfu;e] 1948 (1948 dk 63) vFkok [kku vfèkfu;e] 1952 (1952 dk 35) d çkoèkku ykx gkr gA***

11. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम की धारा 2 (1) (j) स्थापन को निम्नलिखित रूप से परिभाषित करती है:–

*"2 (1) (j) ^^LFkkiu** l vfHkçr g ljdkj] fdlh fudk; dkjikjV vFkok Qe] 0;fDr vFkok l?k vFkok 0;fDr;k d vU; fudk; dk vFkok bld fu;=.k d vèkhu dkb LFkkiu tk fdlh Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; e Hkou dedkjk dk fu;kftr djrk g vkj Bdnkj d LFkkiu dk lfEefyr djrk g fdr ml 0;fDr dk lfEefyr ugh djrk g tk Lo; viu fuokl LFkku d lcèk e fdlh Hkou vFkok lfUuek.k dk; e ,l dedkjk dk fu;kftr djrk g ftld lfUuek.k dk; dk dy 0;; nl yk[k #i;k l vfèkd ugh gA***

12. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम का अध्याय V भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण बोर्डों का गठन एवं क्रियाकलाप प्रावधानित करता है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम की धारा 24 भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण निधि का गठन एवं इसकी प्रयोज्यता प्रावधानित करती है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम का अध्याय IX नियोक्ता के उत्तरदायित्व (धारा 44), मजदूरी एवं मुआवजा के भुगतान के उत्तरदायित्व (धारा 45), और भवन अथवा अन्य सन्निर्माण कार्य के आरंभ के नोटिस (धारा 46) के संबंध में विशेष प्रावधान बनाता है जो क्षेत्र जहाँ प्रस्तावित भवन अथवा अन्य सन्निर्माण कार्य निष्पादित किया जाना है में अधिकारिता रखने वाले निरीक्षक को किसी भवन अथवा अन्य सन्निर्माण कार्य के आरंभ होने की सूचना जिनका विवरण धारा 46 के अधीन उल्लेख पाता है, का लिखित नोटिस कम से कम 30 दिन पहले भेजने के लिए बाध्य करता है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम की धारा 62 राज्य सरकार को विशेषज्ञ कमिटी से परामर्श करने के बाद अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए नियमों को विरचित करने के लिए सशक्त बनाती है।

13. वर्ष 1996 में बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के अधिनियमन के साथ-साथ संसद ने बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम अधिनियमित किया। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की प्रस्तावना के मुताबिक अधिनियम भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण बोर्डों के संसाधनों को बढ़ाने की दृष्टि से नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण एवं संग्रहण प्रावधानित करने के लिए है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 2 (a) शब्द ''बोर्ड'' को परिभाषित करती है जिसका अभिप्राय बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम की धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन राज्य सरकार द्वारा गठित बोर्ड है।

14. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 3 प्रभारी धारा, का पठन निम्नलिखित है:–

*"3. **midj dk mnxg.k ,o lxg.k-**&(1) Hkou ,o vU; lfUuek.k dedkj (fu;ktu dk fofu;eu ,o lok 'kr) vfèkfu;e] 1996 d ç;ktu l*

fu;kDrk }kjk mixr fuek.k 0;; d nk çfr'kr l ij ugh fdr ,d çfr'kr l U;u ugh d ,l nj ij midj mnxfgr ,o lxfgr fd;k tk,xk tl dn ljdkj vkfèkdkfjd xtV e vfèklpuk }kjk le;≤ ij fofufn"V dj ldrh gA

(2) mièkkjk (1) d vèkhu mnxfgr midj ljdkj vFkok ykd {k= miØe d Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; d lcèk e lkr ij dVkrh vFkok LFkkuh; çkfèkdkjh] tgk ,l LFkkuh; çkfèkdkjh }kjk ,l Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; dk vueknu vko';d g] d ekè;e l vfxe lxg.k lfgr ,l rjhd l vkj ,l le; ij çR;d fu;kDrk l lxfgr fd;k tk,xk tl fofgr fd;k tk ldrk gA

(3) mièkkjk (2) d vèkhu lxfgr midj d vkxe dk Hkxrku lxfgr dh x;h jkf'k d ,d çfr'kr l vufèkd ,l midj d lxg.k 0;; dh dVkrh dju d ckn midj lxfgr dju oky LFkkuh; çkfèkdkjh vFkok jkT; ljdkj }kjk ckM dk fd;k tk,xkA

*(4) mièkkjk (1) vFkok mièkkjk (2) e vrfo"V fdlh pht d ckotn vfxe e ,l midj d Hkxrku lfgr bl vfèkfu;e d vèkhu mnxg.kh; midj dk fd, tku oky vfre fuèkkj.k d vè;èkhu ,d leku nj vFkok njk ij lxfgr fd;k tk ldrk g tl vrxLr Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; d ek=k d vkèkkj ij fofgr fd;k tk ldrk gA***

15. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 4 ''प्रत्येक नियोक्ता'' के लिए विहित तरीके से रिटर्न दाखिल करना आवश्यक बनाती है। धारा 5 भुगतेय उपकर के निर्धारण की प्रक्रिया विहित करती है जबकि धारा 8 उपकर के विलंबित भुगतान की स्थिति में भुगतेय ब्याज प्रावधानित करती है। धारा 9 विनिर्दिष्ट समय के भीतर उपकर के गैर भुगतान के लिए दंड अनुबंधित करती है। नियोक्ता जो धारा 5 के अधीन पारित निर्धारण आदेश से व्यथित है के लिए धारा 11 के अधीन अपील का आंतरिक मेकेनिज्म है।

16. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 14 के अधीन प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में केंद्र सरकार ने बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ नियमावली विरचित किया। इसका नियम 3 उपकर के उद्ग्रहण के प्रयोजन से ''निर्माण व्यय'' परिभाषित करता है जो निम्नलिखित है:–

*"3. **midj dk mnxg.k**&vfèkfu;e dh èkkjk 3 dh mièkkjk (1) d vèkhu midj d mnxg.k d ç;ktu l fuek.k 0;; Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; d lcèk e fu;kDrk }kjk mixr leLr [kp lfEefyr djxk*

&fdr Hkfe dh dher

*&dedkj çfrdj vfèkfu;e] 1923 d vèkhu dedkj vFkok mld ifjokj dk Hkxrku fd;k x;k vFkok Hkxr; evkotk lfEefyr ugh djxkA***

बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 4 सरकारी अथवा लोक क्षेत्र उपक्रम के भवन और अन्य सन्निर्माण कार्य के लिए भुगतान किए गए बिलों से अधिसूचित दरों पर भुगतेय उपकर की कटौती आज्ञापक बनाता है। नियम 5 उस तरीके को विहित करता है जिस तरीके से नियम 4 के अधीन संग्रहित उपकर का आगम ऐसे सरकारी कार्यालय, लोक क्षेत्र उपक्रम, स्थानीय प्राधिकारी अथवा उपकर संग्रहक द्वारा बोर्ड को अंतरित किया जाएगा। निर्धारण अधिकारी की शक्ति एवं निर्धारण का ढंग बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली के नियम 7 से 14 में संगणित किया गया है।

17. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 3 प्रावधानित करती है कि भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम, 1996 के प्रयोजन से नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय के दो प्रतिशत के अनधिक और एक प्रतिशत से अन्यून के ऐसे दर पर उपकर उद्ग्रहित एवं संग्रहित किया जाएगा जैसा केंद्र सरकार समय-समय पर आधिकारिक गजट में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट कर सकती है। केंद्र सरकार ने दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना के तहत नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय के एक प्रतिशत पर उपकर विहित किया है जिसे उद्ग्रहित एवं संग्रहित किया जाना है।

18. प्रतिवादों पर विचार करने के पहले हमें **दीवान चंद बिल्डर्स एन्ड कांट्रैक्टर्स बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2012)1 SCC 101** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट करना होगा जहाँ माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि यह संसद की क्षमता के अंतर्गत है और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम के अधीन उद्ग्रहण भारत के संविधान के अनुसूची VII के सूची I प्रविष्टि 97 के प्रति निर्देश योग्य ''फीस'' है, बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 3 की वैधता को मान्य ठहराया। याची के अनुसार, यद्यपि **दीवानचंद बिल्डर्स एन्ड कॉन्ट्रैक्टर्स, (2012)1 SCC 101** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा धारा 3 की संवैधानिकता को मान्य ठहराया गया है, याची अभी भी भिन्न आधारों पर बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 3 और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली के नियम 3 के अधिकार को चुनौती दे सकता है।

19. <u>Re:—बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम, 1996 विधायी क्षमता के परे है और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम, 1996 की धारा 3 (1) अस्पष्ट होने के नाते विखंडित किए जाने की दायी है।</u>

याची ने यह प्रतिवाद करते हुए बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की प्रभारी धारा अर्थात् धारा 3 (i) को चुनौती दिया कि (i) धारा 3(1) बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम में शब्द ''निर्माण व्यय'' को परिभाषित किए बिना नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण एवं संग्रहण इप्सित करती है, (ii) यद्यपि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 2 (d) बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम में अंतर्विष्ट समस्त परिभाषाओं को अपनाती है, शब्द ''निर्माण व्यय'' को इस अधिनियम में भी परिभाषित नहीं किया गया है; (iii) बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 3 (1) अनुच्छेद 246 (3) और संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची II (राज्य सूची) की प्रविष्टि 66 सह-पठित उसकी प्रविष्टि 54 की अधिकारातीत है क्योंकि किसी भवन अथवा सन्निर्माण कार्य का व्यय आवश्यकत: बोल्डर, बालू, सीमेन्ट, ईंट, मिट्टी, लोहा आदि जैसी वस्तुओं/भवन सामग्रियों की अंतरा-राज्य (राज्य के भीतर) खरीद सम्मिलित करता है और इसलिए, सार में यह उन भवन सामग्रियों की अंतरा राज्य खरीद के मूल्य पर उद्ग्रहित किए जाने के लिए इप्सित फीस है जिसके लिए राज्य सरकार के पास भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची के सूची II (राज्य सूची) की प्रविष्टि 66 सह-पठित उसकी प्रविष्टि 54 और अनुच्छेद 246 (3) की दृष्टि में विधियों को बनाने की अनन्य शक्ति है।

समानांतर स्तंभ में, भारत संघ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभाष कुमार और झारखंड राज्य के लिए उपस्थित विद्वान वरीय एस॰ सी॰ II श्री ए॰ आल्लम ने निवेदन किया कि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम के प्रावधानों के अधीन उद्ग्रहित उपकर सातवीं अनुसूची की सूची I की प्रविष्टि 97 सह-पठित सूची III की प्रविष्टि 23 और 24 के अधीन उद्ग्रहित है और संसद द्वारा अधिनियमित बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम वैध हैं। यह निवेदन किया गया था कि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की वैधता **दीवानचंद बिल्डर्स एन्ड कॉंट्रैक्टर्स, (2012)1 SCC 101** में

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मान्य ठहरायी गयी है और याची आधारों के भिन्न संवर्ग पर संवैधानिक वैधता को चुनौती नहीं दे सकता है।

20. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम को प्रविष्टि 97 सूची I के अधीन संसद द्वारा अधिनियमित किया गया है और प्रविष्टि 97 का पठन निम्नलिखित है:–

> *"97. mu lfp;k e l fdlh e mfYyf[kr ugh fd, x, fdlh dj lfgr lph II vFkok lph III e lxf.kr ugh fd;k x;k dkb vU; ekeykA**

लिस्ट II की प्रविष्टि 54 और प्रविष्टि 66 का पठन निम्नलिखित है:

> *"54. lph I dh ifof"V 92A d ikoèkkuk d vè;èkhu lekpkj i=k l fHkUu oLrvk d foØ; vFkok [kjhn ij djA**

> *"66. bl lph e ekeyk e l fdlh d lcèk e Qhl fdr tk fdlh U;k;ky; e fy, x, Qhl dk lfEefyr ugh djrk gA**

21. सूची II की प्रविष्टि 54 वस्तुओं के विक्रय अथवा खरीद पर कर के संबंध में विधियों को बनाने के लिए राज्य विधानमंडल को सशक्त बनाती है। जब तक वस्तुओं की खरीद पर विधि बनी रहती है। ऐसी विधि अधिनियमित करना राज्य विधानमंडल की सक्षमता के अंतर्गत होगा। राज्य सूची की प्रविष्टि 54 में आने वाले शब्द ''विक्रय'' की व्याख्या इस अर्थ में की जानी है जिस अर्थ में शब्द ''विक्रय'' का माल विक्रय अधिनियम में प्रयुक्त किया गया है। कल्पना की किसी सीमा के अधीन, यह नहीं कहा जा सकता है कि निर्माण गतिविधि मालों के विक्रय खरीद के तुल्य है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की विषय वस्तु भवन एवं सन्निर्माण गतिविधियाँ हैं। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम का सार निर्माण व्यय पर उपकर उद्ग्रहित करना है। उद्देश्य बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के अधीन कल्याण निधि बढ़ाना है और आवश्यक प्रयोजन भवन एवं सन्निर्माण कर्मकारों को लाभ पहुँचाना है। निर्माण कार्य/पथ निर्माण मुख्यत: कर्मकारों एवं मजदूरों को अंतर्ग्रस्त करने वाली गतिविधि है जो तद्द्वारा असंगठित क्षेत्र के सन्निर्माण कर्मकारों को अंतर्ग्रस्त करता है। याची और भारत के राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकरण के बीच संविदात्मक करार का उद्देश्य एन॰ एच॰ 33 को बनाना, ऑपरेट करना, रख रखाव करना और अंतरित करना है। पथ निर्माण में निर्माण सामग्री का उपयोग किया जाता है किंतु काम और सन्निर्माण कर्मकारों के श्रम का लाभ लिए बिना संविदा निष्पादित नहीं की जा सकती है। सन्निर्माण कर्मकारों के श्रम को काम में लगाने वाली संविदा याची की निर्माण गतिविधि अर्थात् एन॰ एच॰ 33 का निर्माण का अखंडित भाग है। यद्यपि सन्निर्माण कार्य/पथ निर्माण निर्माण सामग्रियों की खरीद अंतर्ग्रस्त करता है, वह सन्निर्माण कर्मकारों की अंतर्ग्रस्तता के सार को वापस नहीं लेता है। जैसा पहले इंगित किया गया है, बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम का उद्देश्य पूरे देश में भवन एवं अन्य सन्निर्माण कार्यों में लगे कर्मकारों को सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याणकारी उपायों को प्रदान करने के लिए आशयित है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम का अर्थ सूची II की प्रविष्टि 54 और प्रविष्टि 66 के अधीन आच्छादित कर उद्ग्रहित करने के रूप में लगाना बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम के उद्देश्य को पूरी तरह दरकिनार करना होगा। हम इस प्रतिवाद में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं कि बोल्डर, बालू, सीमेन्ट, ईंट, मिट्टी, लोहा एवं मशीनरी जैसी निर्माण सामग्रियों के उपयोग के कारण ''सन्निर्माण गतिविधि'' मालों की अंतरा-राज्य खरीद को अंतर्ग्रस्त करने वाली सूची II की प्रविष्टि 54 के अधीन आती है और कि प्रविष्टि 97 के अधीन अवशिष्ट शक्ति का अवलंब लेकर उपकर उद्ग्रहित करने की शक्ति संसद को उपलब्ध नहीं होगी।

22. याची के प्रतिवाद कि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम सार में मालों की खरीद पर अथवा विक्रय पर कर है, को विफल होना ही होगा। मात्र इसलिए कि उपकर का उद्ग्रहण निर्माण

व्यय पर उपकर है, यह बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम को मालों के विक्रय पर उपकर को उद्ग्रहण नहीं बना सकता है। सूची II की प्रविष्टि 66 ''इस सूची में किसी अन्य मामले के संबंध में फीस किंतु जो किसी न्यायालय में लिए गए फीस को सम्मिलित नहीं करती है'' पर विचार करती है। सन्निर्माण गतिविधि और सन्निर्माण कर्मकारों का कल्याण सूची II की प्रविष्टियों में से किसी के अधीन नहीं आता है। चूँकि सन्निर्माण गतिविधि सूची II की प्रविष्टियों में से किसी के अधीन नहीं आती है, हम इस प्रतिवाद में गुणागुण नहीं पाते हैं कि ''सन्निर्माण गतिविधि'' सूची II की प्रविष्टि 66 के अधीन आती है।

23. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की संवैधानिकता को मान्य ठहराते हुए और यह अभिनिर्धारित करते हुए कि सातवीं अनुसूची सूची I प्रविष्टि 97 के प्रति निर्देश में यह संसद की विधायी क्षमता के अंतर्गत हैं, **दीवानचंद बिल्डर्स एन्ड कांट्रैक्टर्स, (2012)1 SCC 101** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराओं 17 और 31 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

> *"17. .....ch0 vk0 lh0 MCY;0 vfèkfu;e vkj midj vfèkfu;e u, vkèkkj dk tUe nrk g fd midj dk Hkxrku dju dk nkf;Ro u doy Hkou vFkok LFkkiu d Loeh ij g cfYd ch0 vk0 lh0 MCY;0 vfèkfu;e dh èkkjk 2(1) (i) (iii) d vèkhu ^^Bdnkj }kjk vFkok mld eke;e l] vFkok Bdnkj }kjk vkifr fd, x, Hkou etnjk d fu;ktu }kjk fd, x, Hkou vFkok vU; fuek.k dk; d lcèk e** Bdnkj ij nkf;Ro dk foLrkj.k ;g lfuf'pr dju dh nf"V l g fd ;fn fdlh dkj.k l fuek.k ijk gku d ckn d pj.k ij Hkou d Loeh l midj lxfgr djuk lHko ugh g] bl Bdnkj l oly fd;k tk ldrk gA midj vfèkfu;e ,o midj fu;ekoyh lfuf'pr djrh g fd midj Bdnkjk ftudk Loeh }kjk Hkxrku fd, x, g d fcyk l lkr ij lxfgr fd;k tkrk gA l{ki e] midj dk Hkkj Loeh l Bdnkj dk lØkr fd;k tkrk gA*
>
> ---
>
> *31. ge dkb lng ugh g fd midj vfèkfu;e d mí'; ,o dkj.k dk oDr0; Li"Vr% vko';d ç;ktu of.kr djrk g ftldh çkfIr vfèkfu;eu bfllr djrk g vFkkr ch0 vk0 lh0 MCY;0 vfèkfu;e d vèkhu dY;k.k fufèk c<kukA Hkou ,o vU; lfUuek.k dk;k ij fu;kDrk }kjk mixr fuek.k 0;; ij midj dk mnxg.k Hkou ,o vU; lfUuek.k dedkjk d fy, lkekftd lj{kk ;ktukvk ,o dY;k.kdkjh mik;k dk ykx dju d fy, dY;k.k ckMk d fy, i;kIr fufèk lfuf'pr djuk gA bl çdkj lxfgr dh x;h fufèk dk ch0 vk0 lh0 MCY;0 vfèkfu;e e of.kr fofufn"V mí';k dh vkj funf'kr fd;k tkrk gA vr%] bl U;k;ky; d iokDr fu.k;k e vfèkdfFkr fl)kr dk ykx djr g, ;g Li"V g fd mDr mnxg.k ^Qh l* g vkj u fd ^dj*A mDr fufèk fofufn"V ç;ktuk d ikyu d fy, fofufn"Vr% fofu;kfxr vkj iFkd fd;k tkrk g(bl vke turk d ykHk d fy, ykd jktLo e foyf;r ugh fd;k tkrk g vkj bl çdkj midj vkj ç;ktu ftld fy, bl mnxfgr fd;k x;k g d chp lcèk ;ktuk e rRçfrr dk rRo lr"V djr g, LFkkfir gkrk gA midj vfèkfu;e d bu y{k.kk dk nf"V e j[kr g, fo"k; mnxg.k dk vFk ^Qh l* vkj u fd ^dj* d :i e yxkuk gkxkA bl çdkj] ge fook|d ij mPp U;k;ky; d fu"d"k dk ekU; Bgjkr g vkj vfHki"V djr gA**

24. बिल्डर्स एसोसियेशन ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, MANU/DE/7405/2007, में दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम को अधिनियमित करने की संसद की विधायी क्षमता को इस आधार पर चुनौती दी गयी थी कि निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण सूची II की प्रविष्टि 49 से संबंधित भूमि और भवन पर उद्ग्रहण अथवा कर है।

बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्ते) अधिनियम और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की संवैधानिक वैधता को मान्य ठहराते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय ने पैरा 19 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

> *"19. chO vkO lhO MCY;O vfèkfu;e vkj midj vfèkfu;e dk vfèkfu;fer dju dh lln dh foèkk;h {kerk dk pukrh bld lph ll dh çfof"V 49 l lcfèkr gku d ukr bu lfofèk;k d fo"k; oLr dh ;kph dh le>nkjh ij fVdh gA---------vr% f<Yyu dh lfDr [(1971)2 SCC 779, Hkkjr l?k cuke ,pO ,lO f<Yyu)] dk Lej.k dju d fy, tk lk< rhu n'kdk l T;knk le; l ekU; cuk gvk gA cger dh vkj l fldjh] e[; U;k;kèkh'k] d vx.kh er (4:3) (SCC i"B 791) u fofèk dk fuEufyf[kr :i l Li"V fd;k g%*
>
> *fdlh Hkh ljr e] çfof"V 97 lph l dh 0;k[;k ij tk dN Hkh lng gk ldrk g] vuPNn 248 d 0;kid fucèku }kjk gVk;k x;k gA bl 0;kidre lHko fucèkuk e fojfpr fd;k x;k gA bld fucèkuk ij ,dek= ç'u ;g iNk tk ldrk g% D;k ekeyk foèkku cuk, tku d fy, vFkok lph ll e vFkok lph lll e lfEefyr fd, tku d fy, bfllr fd;k x;k gA vFkok mnxfgr fd, tku d fy, bfllr dj lph ll e vFkok lph lll e mfYyf[kr fd;k x;k g% lph l d ckj e dkb ç'u ugh iNk x;k gA ;fn mÙkj udkjkRed g] rc ;g vulfjr gkrk g fd lln d ikl ml ekey vFkok dj d lcèk e fofèk cuku dh 'kfDr gA**

वर्तमान मामले में, याची यह दर्शाने में विफल रहा है कि निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण सूची II में अथवा सूची III में प्रविष्टियों में से किसी के अधीन आता है। सूची I की प्रविष्टि 97 ''उन सूचियों में से किसी में उल्लिखित नहीं किए गए किसी कर सहित सूची II अथवा सूची III में संगणित नहीं किए गए किसी अन्य मामले ''पर विचार करती है। चूँकि निर्माण गतिविधि को लेकर सूची II अथवा सूची III में कोई तत्सम प्रविष्टि नहीं है, सूची I में अवशिष्ट प्रविष्टि 97 का अवलंब लेकर संसद के पास बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम को अधिनियमित करने की विधायी क्षमता है। हम दिल्ली उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण के साथ पूर्णत: सहमत हैं।

25. याची का प्रतिवाद यह है कि प्रभारी धारा अर्थात् धारा 3 अस्पष्ट है क्योंकि यह बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम में शब्द ''निर्माण व्यय'' को परिभाषित किए बिना नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण एवं संग्रहण इप्सित करता है। जैसा पहले इंगित किया गया है, बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 2 (d) बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्ते) अधिनियम में परिभाषित शब्दों एवं अभिव्यक्तियों को अपनाती है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 उपकर के उद्ग्रहण पर विचार करता है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ नियमावली के नियम 3 का पठन निम्नलिखित है:–

> *"3. **midj dk mnxg.k**&vfèkfu;e dh èkkjk 3 dh mièkkjk (1) d vèkhu midj d mnxg.k d ç;kstu l fuek.k 0;; Hkou vFkok vU; lfUuek.k dk; d lcèk e fu;kDrk }kjk mixr leLr 0;; dk lfEefyr djxk fdr*
>
> *&Hkfe dh dher(*
>
> *&deZdkj çfrdj vfèkfu;e] 1923 d vèkhu deZdkj vFkok mld jDr lcèkh dk Hkxrku fd;k x;k vFkok Hkxr; dkb evkotk lfEefyr ugh djxkA**

26. इस प्रतिवाद में गुणागुण नहीं है कि प्रभारी धारा अर्थात् धारा 3 अस्पष्ट है क्योंकि यह बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम में शब्द ''निर्माण व्यय'' को परिभाषित किए बिना उपकर का उद्ग्रहण इप्सित करती है। प्रभारी धारा के मुताबिक, उपकर को उद्ग्रहण के प्रयोजन से निर्धारित करना होगा और नियम 3 में ''निर्माण व्यय'' की परिभाषा को विचार में लेकर यह किया जा सकता है। धारा 3 प्रभारी प्रावधान भी है और संगणना प्रावधान भी है। अभिव्यक्ति ''निर्माण व्यय'' को नियम 3 में स्पष्ट

किया गया है। यद्यपि प्रभारी धारा अभिव्यक्ति ''निर्माण व्यय'' का उपयोग करती है। इसे नियमावली में स्पष्ट किया गया है। अधिनियम का उद्देश्य पूरा करने के लिए प्रभारी धारा और नियम 3 को साथ-साथ समांगी रूप से पढ़ा जाना चाहिए।

27. बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की योजना उपदर्शित करती है कि अधिनियमों का केंद्र बिंदु भवन एवं सन्निर्माण कर्मकारों का कल्याण एवं अन्य ऐसे कर्मकारों का कल्याण है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम एवं बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम इस प्रकार सामाजिक कल्याण विधान हैं। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकारों का नियोजन एवं सेवा शर्तों को विनियोजित करने के लिए और उनको सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याणकारी उपायों तथा उनके साथ संबंधित अथवा उनके आनुषंगिक अन्य मामलों का प्रावधान करने के लिए आशयित है। हम बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन के विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के उद्देश्यों एवं कारणों के वक्तव्य को लाभप्रद रूप से निर्दिष्ट कर सकते हैं:–

> *^^;g eY;kfdr fd;k x;k g fd n'k e yxHkx 85 yk[k dedkj Hkou ,o vU; lfUuek.k dk; e yx g, gA Hkou ,o vU; lfUuek.k dedkj Hkkjr e vlxfBr etnj d lokfèkd l[;k oky vkj vk?kkr ;kX; [kM gA Hkou ,o vU; lfUuek.k dk; dedkjk d thou ,o vxk d çfr vrfufgr tkf[ke l Hkj gA ;g dk; viuh vkdfLed çÑfr] fu;kDrk ,o depkjh d chp vLFkk;h lcèk] vfuf'pr dk; ?kVk] ey lfoèkkvk dh deh vkj dY;k.kdkjh lfoèkkvk dh vi;kIrrk d y{k.kk l ihfMr gA i;kIr lkfofèkd çkoèkkuk dh vuifLFkfr e n?kVukvk dh l[;k ,o çÑfr d lcèk e vè;if{kr lpuk, Hkh lkeu ugh vkrh gA ,lh lpuk dh vuifLFkfr e] mÙkjnkf;Ro fu;r djuk vFkok lèkkj dkjokb djuk ef'dy gA*

> *2. ;|fi dfri; dnh; vfèkfu;ek d çkoèkku Hkou ,o vU; lfUuek.k dedkjk d çfr ç;kT; g] fQj Hkh] mudh lj{kk] LokLF;] dY;k.k ,o vU; lok 'krk dk fofu;fer dju d fy, lex dnh; foèkku dh vko';drk egl l dh x;h gA***

ऊपर स्पष्ट की गयी परिस्थितियों की दृष्टि में, प्रत्येक राज्य में कल्याण बोर्डों को गठित करना आवश्यक माना गया है ताकि भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकारों के लाभ के लिए सामाजिक सुरक्षा योजनाओं और कल्याणकारी उपायों को प्रदान एवं मॉनिटर किया जा सके। राज्य सरकार द्वारा गठित कल्याण बोर्डों के राजस्व को बढ़ाने की दृष्टि से नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय पर उपकर के उद्ग्रहण एवं संग्रहण को प्रावधानित करने के लिए और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के अधीन संसद ने बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम अधिनियमित किया है। नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण सामाजिक सुरक्षा योजना को लागू करने के लिए कल्याण बोर्डों के लिए निधि बढ़ाना है।

28. Re:– बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली के नियम 3 को और दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना सं॰ एस॰ ओ॰ 2899 के अधिकार को चुनौती

बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन केंद्र सरकार अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए नियम बनाने के लिए सशक्त है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 14 की उपधारा (2) के खंड (a) से (h) उन विषयों को संगणित करती हैं जिनके

संबंध में केंद्र सरकार नियमों को बना सकती है। धारा 14 (2) के खंडों (a) से (h) में संगणित विषय नियमों को बनाने के लिए केंद्र सरकार को प्रदान की गयी शक्ति की उदाहरणात्मक प्रकृति की है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू उपकर नियमावली के नियम 3 के अधिकार को चुनौती देते हुए याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि नियम 3 केंद्र सरकार की सक्षमता एवं शक्ति के परे है और बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 14 मूल अधिनियम की अधिकारातीत है क्योंकि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम शब्द ''निर्माण व्यय'' को परिभाषित करने के लिए केंद्र सरकार को सशक्त नहीं बनाता है और यह बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली के नियम 3 के अधीन ''निर्माण व्यय'' पर उपकर का उद्ग्रहण इप्सित करते हुए केंद्र सरकार द्वारा विधान बनाने के तुल्य है और तद्द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 का उल्लंघन करता है।

29. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 निर्माण व्यय विनिश्चित करने के लिए मापदंड स्पष्ट करता है और निर्माण व्यय की संगणना का उद्ग्रहण के वास्तविक तात्पर्य के साथ संबंध है और निर्माण व्यय की संगणना तार्किक है और न कि मनमानी।

30. विचारार्थ आया प्रश्न यह है कि क्या बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 मूल अधिनियम और भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 के अधिकारातीत है।

31. तमिलनाडू राज्य एवं एक अन्य बनाम पी॰ कृष्णामूर्ति एवं अन्य, (2006)4 SCC 517 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अधीनस्थ विधान की वैधता पर विचार करने के लिए निम्नलिखित परीक्षाओं को अधिकथित किया है:–

^^D;k fu;e li.krk e oèk g

15. vèkhuLFk foèkku dh loèkkfudrk vFkok oèkrk d i{k e mièkkj.kk g vkj tk bl ij vkØe.k djrk g] ml ij bldh voèkrk n'kku dk Hkkj gA ;g Hkh lekU;rk çkIr g fd vèkhuLFk foèkku dk fuEufyf[kr vkèkkjk e l fdlh d vèkhu pukrh nh tk ldrh gh%

(a) vèkhuLFk foèkku cuku d fy, foèkk;h {ke rk dh dehA

(b) Hkkjr d lfoèkku d vèkhu çR;kHkr ey vfèkdkjk dk mYy?kuA

(c) Hkkjr d lfoèkku d fdlh çkoèkku dk mYy?kuA

(d) lfofèk ftld vèkhu bl cuk;k x;k g d çfr lxr gku e foQyrk vFkok lkeF;dkjh vfèkfu;e }kjk çnÙk çkfèkdkj dh lhek d ij tkukA

(e) n'k dh fofèk;k vFkkr fdlh vfèkfu;e d çfr v lxrrkA

(f) Li"V euekuiu@v;fDr;Drrk (ml lhek rd tgk U;k;ky; dg ldrk g fd foèkku eMy dk ,l fu;e cuku dk çkfèkdkj nu dk vk'k; ugh Fkk)

16. vèkhuLFk foèkku dh oèkrk ij fopkj djr g, U;k;ky; dk lkeF;dkjh vfèkfu;e dh çÑfr] mí'; ,o ;ktuk ij vkj ml {k= ij ftld Åij vfèkfu;e d vèkhu 'kfDr çR;k;kftr dh x;h g] fopkj djuk gkxk vkj rc fofuf'pr djuk gkxk fd D;k vèkhuLFk foèkku ey lfofèk d lkFk lxr gA tgk fu;e lfofèk d vkKkid çkoèkku d lkFk çR;{k :i l vlxr g] rc fu'p; gh] U;k;ky; dk VkLd ljy vkj vklku gA fdr tgk çfrokn ;g g fd fu;e dh v lxrrk vFkok vu#irk lkeF;dkjh vfèkfu;e d fdlh fofufn"V çkoèkku d

*çfr fun'k e ugh g cfYd ey vfèkfu;e d mí'; ,o ;ktuk d çfr fun'k e g] U;k;ky; dk voèkrk ?kkf"kr dju d igy lrdrk d lkFk vxlj gkuk gkxkA***

32. उक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए अब हम बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली के नियम 3 के अधिकार पर विचार करें। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 14 (1) के अधीन केंद्र सरकार अधिनियम के प्रावधानों को लागू करने के लिए नियम बनाने के लिए सशक्त है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 14 (2) (h) केंद्र सरकार को ''किसी अन्य मामले में, जिसे विहित किया जाना होगा अथवा विहित किया जा सकता है, नियमों को बनाने में सशक्त बनाती है। इस प्रकार, धारा 14 स्पष्टत: केंद्र सरकार को अधिनियम के प्रयोजन को लागू करने के लिए नियमों को विरचित करने के लिए सशक्त बनाती है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 उपकर के उद्ग्रहण पर विचार करता है और ''निर्माण व्यय'' को स्पष्ट करता है। नियम 3 के मुताबिक, निर्माण व्यय का अर्थ है ''निर्माण व्यय भवन अथवा अन्य सन्निर्माण कार्य के संबंध में नियोक्ता द्वारा उपगत समस्त व्यय को सम्मिलित करेगा किंतु भूमि की कीमत और कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 के अधीन कर्मकार को अथवा उसके रक्त संबंधी को भुगतान किया गया अथवा भुगतेय कोई मुआवजा सम्मिलित नहीं करेगा।''

33. संविधि की व्याख्या का अब यह सुनिश्चित सिद्धांत है कि न्यायालय को अधिनियम के तात्पर्य एवं उद्देश्य को प्रभाव देना होगा। निश्चय ही, प्रयोजनात्मक अर्थान्वयन का नियम व्याख्या के सिद्धांतों की प्रयोज्यता के अध्यधीन होना चाहिए। उपकर निर्माण व्यय के 2% से अनधिक किंतु 1% से अन्यून दर पर उद्ग्रहित किया जाना है। नियम 3 निर्माण व्यय को स्पष्ट करता है। निर्माण व्यय की संगणना वास्तविक भुगतानकर्ता और उपकर के उद्ग्रहण के साथ संबंध रखती है। अत: यह प्रतिवाद नहीं किया जा सकता है कि नियम 3 अधिनियम द्वारा केंद्र सरकार पर प्रदत्त प्राधिकृतकरण की सीमाओं के परे जाता है। सामर्थ्यकारी अधिनियम के उद्देश्य पर विचार करते हुए हमारा दृष्टिकोण है कि नियम 3 मूल अधिनियम के अनुरुप है और मूल अधिनियम तथा भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 का उल्लंघनकारी नहीं है।

34. याची की ओर से तब यह प्रतिवाद किया गया था कि अधिनियम की धारा 3 सह-पठित नियमावली के अधीन निर्माण व्यय में अंतर्ग्रस्त श्रम घटक पर के बजाए निर्माण व्यय के 2% से अनधिक किंतु 1% से अन्यून के दर पर उपकर का उद्ग्रहण और संग्रहण मनमाना और अयुक्तियुक्त, अत्यधिक एवं अधिहरण की प्रकृति का है। याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने **ए॰ वी॰ फर्नांडीज बनाम केरल राज्य, AIR 1957 SC 657;** और **माथूराम अग्रवाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य, AIR 2000 SC 109** पर विश्वास किया है।

35. दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना सं॰ एस॰ ओ॰ 2899 के तहत बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम (1996 का 27) के प्रयोजन से नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय के 1% की दर पर उपकर उद्ग्रहित और संग्रहित किया जाना है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 निर्माण व्यय विनिश्चित करने के लिए मापदंड स्पष्ट करता है। उपकर का घटक निर्माण व्यय में अंत:निर्मित है जिसके लिए ठेकेदार को प्रतिपूर्ति की जाती है। दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना सं॰ एस॰ ओ॰ 2899 बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम की धारा 3 के मुताबिक निर्माण व्यय के 1% के दर पर उपकर के उद्ग्रहण के प्रयोजन से है। एक प्रतिशत की दर पर उपकर का उद्ग्रहण बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के अधीन भवन एवं अन्य सन्निर्माण कर्मकार कल्याण बोर्डों के संसाधन को बढ़ाने के प्रयोजन से है। हमने पहले अभिनिर्धारित किया है कि सन्निर्माण कर्मकारों एवं मजदूरों को काम पर लगाया जाना निर्माण गतिविधि का अखंडित भाग है। चूँकि कार्य एवं श्रम निर्माण गतिविधि के अपृथक्करणीय भाग हैं, श्रम

भाग अपृथक्करणीय है, उपकर निर्माण व्यय पर उद्ग्रहित किया जाता है। औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण के विकास के साथ सरकारी एजेंसियों एवं लोक क्षेत्र उपक्रमों द्वारा किए जा रहे उच्चपथ, एक्सप्रेसवे, फ्लाईओवर और सड़क एवं अन्य आधारभूत संरचनाओं के निर्माण सहित सन्निर्माण गतिविधियों का वाल्यूम बढ़ता जा रहा है। संविधि का मुख्य उद्देश्य सन्निर्माण कर्मकारों के कल्याण के लिए राजस्व बढ़ाना एवं इसलिए, निर्माण व्यय पर 1% की दर पर उपकर उद्ग्रहित किया जाता है। निवेदन कि निर्माण व्यय पर 1% की दर पर उपकर का उद्ग्रहण मनमाना और अत्यधिक है, आधारहीन है और अस्वीकार किए जाने का दायी है।

36. निर्माण व्यय पर उपकर का उद्ग्रहण कल्याण बोर्डों के राजस्व को बढ़ाने के लिए आशयित है। यह संप्रेक्षित करते हुए कि उपकर व्यक्तियों के विनिर्दिष्ट वर्ग के लाभ के लिए आशयित है। **दीवानचंद बिल्डर्स एन्ड कांट्रैक्टर्स, (2012)1 SCC 101** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराओं 28, 29 और 30 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

"28. mDr fopkjk d vkèkkj ij] bl U;k;ky; u fgfxj jkeij ekey] AIR 1961 SC 459 e ml ekey e vk{kfir vfèkfu;e dh ;ktuk dk xgjkb l ijh{k.k fd;k vkj er fn;k fd vfèkfu;e dk çFke ,o e[; mí'; jkT; e [kfut {k=k dk fodkl djuk Fkk vkj viuh [kfut link dk vfèkd çHkkoh ,o foLrkfjr 'kk"k.k e lgk;rk nuk FkkA mnxfgr midj lefdr fufèk dk Hkkx ugh cuk Fkk vkj ml fufeÙk fofu;kx dk fo"k; ugh FkkA ;g vfèkfu;e d ç;ktu dk ykx dju d fy, d.kkfdr fo'k"k fufèk e x;k Fkk vkj bl çdkj bld vfLrRo u ;ktuk e rRçfrr rRo dk lr"V djr g, midj vkj ç;ktu ftld fy, bl mnxfgr fd;k x;k Fkk d chp lg&lcèk LFkkfir fd;k FkkA vfèkfu;e d bu y{k.kk u mnxg.k ij ^dj l lfHkUu ^Qhl* dk pfj= vfdr fd;k FkkA*

29. gky e if'pe cxky jkT; cuke d'kkjke bMLVht fy0 ,o vU;] (2004)10 SCC 201 e bl U;k;ky; dh loèkkfud ihB dk lkeuk dk;yk [kku Hkfe] pk; cxku Hkfe vkj bV d fy, feVVh gVku ij midjk d mnxg.k dh loèkkfud oèkrk dk nh x;h pukrh l gvkA fgfxj jkeij dk;yk d0 fy0] AIR 1961 SC 459 e fu.k; ij fo'okl djr g, vkj0 lh0 ykgkVh] U;k;efr (tlk ekuuh; U;k;kèkh'k rc Fk) u cger dh vkj l ckyr g, fuEufyf[kr 'kCnk e 'kCnk ^dj vkj ^Qhl* d chp lfHkUurk dk Li"V fd;k (dlkjke bMLVht ekeyk] (2004)10 SCC 201) SCC P. 332 ijk 146)*

"146. ....."kCn midj dk lkekU; r% ç;ktu d lkFk dj vFkok pht fo'k"k d fy, vkofVr dj dk x.kkFk crku d fy, ç;Dr fd;k tkrk gA fdr] bldk vFk fuèkkj.k vFkok mnxg.k Hkh gA mnxg.k d lcèk ,o ç;ktu ij fuHkj djr g, midj dj ugh gk ldrk g(;g Qhl Hkh gk ldrk gA ;g vko';d ugh g fd lxfgr Qhl e l nh x;h lok lxfgr Qhl dh jkf'k d lkFk çR;{kr% vuikr e gkuh pkfg,A ;g Hkh leku :i l vko';d ugh g fd lxfgr Qhl e l nh x;h lok ml 0;fDr rd lhfer jguh pkfg, ftll Qhl lxfgr fd;k x;k gA vçR;{k ykHk dh miyCèkrk vkj Qhl d mnxg.k dk Hkkj èkkj.k dju oky 0;fDr;k vkj lxfgr Qhl e l nh x;h lok d chp lkekU; lcèk çHkkfjr Qhl dh oèkrk ekU; Bgjku d fy, i;kIr gA

30. fgfxj jkeiij] AIR 1961 SC 459 e vfèkdfFkr vkj dlkjke bMLVht] (2004)10 SCC 201 e vulfjr ijh{kkvk d vkykd e ;g Li"V g fd mnxg.k d pfj= dk fofuf'pr dju dh lPph ijh{kk] ^dj l ^Qhl* dk j[kkfdr djr g, mnxg.k dk e[; mí'; vkj çkIr fd, tku d fy, vk'kf;r vko';d ç;ktu gA***

37. निम्नलिखित रूप से अपने निष्कर्ष को संक्षिप्त करते हुए:

दीवानचंद बिल्डर्स एन्ड कॉन्ट्रैक्टर्स, (2012)1 SCC 101 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के निर्णयाधार का अनुसरण करते हुए हम अभिनिर्धारित करते हैं कि संसद के पास बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम को अधिनियमित करने की विधायी क्षमता है। बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर नियमावली का नियम 3 बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ डब्ल्यू॰ उपकर अधिनियम और भारत के संविधान के अनुच्छेद 246 के अधिकारातीत नहीं है और निर्माण व्यय पर 1% की दर पर उपकर का उद्ग्रहण मनमाना या अत्यधिक नहीं है। केन्द्र सरकार द्वारा जारी दिनांक 26.9.1996 की अधिसूचना सं॰ एस॰ ओ॰ में मनमानापन नहीं है जिसके द्वारा बी॰ ओ॰ सी॰ डब्ल्यू॰ (नियोजन का विनियमन एवं सेवा शर्तें) अधिनियम के प्रयोजन से नियोक्ता द्वारा उपगत निर्माण व्यय के 1% की दर पर उपकर उद्ग्रहित एवं संग्रहित किया जाना है। याची कंपनी द्वारा उपगत निर्माण व्यय के 1% की दर पर उपकर के उद्ग्रहण में मनमानापन अथवा अयुक्तियुक्तता नहीं है।

परिणामस्वरुप, रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

नित्यानन्द चौधरी एवं एक अन्य

cuke

भारत संघ एवं अन्य

L.P.A. No. 255 of 2007. Decided on 25th April 2014.

सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971—धारा 7—दांडिक किराया का अधिरोपण–अंतरण के बाद अपीलार्थीगण ने अनेक नोटिसों के बावजूद क्वार्टरों को खाली नहीं किया है–अपीलार्थीगण को अप्राधिकृत अधिभोगियों के रूप में घोषित करने वाला आदेश और दाण्डिक किराया का अधिरोपण मान्य ठहराया गया।

(पैराएँ 10 से 12)

अधिवक्तागण.–M/s Dilip Kumar Prasad, Rajendra Lal Das, For the Appellants; M/s Sanjay Kumar Singh, Ashok Singh, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–वर्तमान अपील डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3121 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 11.6.2007 के आदेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसमें दाण्डिक किराया के अधिरोपण के आदेश को बरकरार रखा गया है।

2. दोनों अपीलार्थीगण रक्षा लेखा विभाग में वरीय लेखा परीक्षक हैं। जब वे स्थानीय लेखा परीक्षा कार्यालय, राँची में पदस्थापित थे, उन्हें अपीलार्थी सं॰ 1 और 2 के अनुरोध के आधार पर स्टेशन में पदस्थापित केवल सैन्य बल कर्मियों के लिए आशयित रक्षा समूह वास सुविधा क्रमश: क्वार्टर सं॰ P-16/1 और C/1 प्रत्यर्थीगण द्वारा आवंटित किया गया था। अपीलार्थी सं॰ 1 और 2 क्रमश: दिनांक 30.6.1998 और दिनांक 15.6.1998 जिन तिथियों पर अपीलार्थीगण को क्वार्टरों को खाली करने के लिए मजबूर किया गया था, तक अपने अधिभोग में बने रहे।

3. अपीलार्थीगण का मामला यह है कि अपीलार्थीगण को कतिपय अवधि के लिए राँची से उत्तरपूर्व क्षेत्र/फील्ड क्षेत्र स्थानांतरित किया गया था और उनका स्थानांतरण स्थायी पदस्थापना के रूप में नहीं था और तब भी जब अपीलार्थीगण स्थानान्तरण पर थे, उन्हें गलत रूप से अप्राधिकृत अधिभोगियों के रूप में घोषित किया गया था। चूँकि अपीलार्थीगण स्थानांतरित किए गए थे और वे स्टेशन में नहीं थे, उन्हें अप्राधिकृत अधिभोगी घोषित किया गया था और सार्वजनिक परिसर अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के मुताबिक इसे खाली करने के लिए बेदखली आदेश जारी किया गया था।

4. अपीलार्थीगण ने बेदखली के आदेश के विरुद्ध सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1606 वर्ष 1997 (R) दाखिल किया और दिनांक 20.4.1998 के आदेश द्वारा उक्त बेदखली आदेश स्थगित किया गया था और अपीलार्थीगण को नियमित रूप से मासिक किराया का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। किंतु, अपीलार्थीगण को क्रमश: दिनांक 30.6.1998 और दिनांक 15.6.1998 को बेदखल किया गया था और वर्ष 1999 से वर्ष 2003 तक वेतन बिल से दाण्डिक किराया काटा गया था। तत्पश्चात, अपीलार्थीगण ने यह प्रतिवाद करते हुए डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3121 वर्ष 2002 दाखिल किया कि वे परिपत्र के परिशिष्ट-C के पैराग्राफ (h) में प्रावधानित रियायतों (परिशिष्ट-1) की दृष्टि में दिनांक 1.4.1995 से दिनांक 30.6.1998 तक की अवधि के लिए प्रश्नगत क्वार्टरों के लिए दाण्डिक किराया का भुगतान करने के दायी नहीं थे।

5. पक्षों को सुनने पर विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थीगण द्वारा विश्वास किया गया परिपत्र उनकी सहायता नहीं करता है चूँकि अपीलार्थीगण द्वारा विश्वास किए गए परिपत्र केवल सामान्य/सिविलियन समूह वास सुविधा पर प्रयोज्य है; जबकि प्रश्नगत क्वार्टर केवल सैन्य कर्मियों के लिए आशयित रक्षा समूह वास सुविधा के अधीन हैं और राँची में सामान्य समूह वास-सुविधा नहीं है और प्रश्नगत क्वार्टर राँची में उनके रहने की अवधि के लिए अपीलार्थीगण को अस्थायी रूप से आवंटित किए गए थे और, इसलिए अपीलार्थीगण दाण्डिक किराया का भुगतान करने के दायी है।

6. रिट याचिका की खारिजी से व्यथित होकर अपीलार्थीगण ने इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल किया है।

7. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थीगण राँची में आवंटित क्वार्टरों को अपने पास रखने के लाभ के हकदार हैं जब वे अरुणाचल प्रदेश (उत्तर-पूर्व क्षेत्र) में पदस्थापित थे। विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान अनेक परिपत्रों की ओर आकृष्ट किया है जैसा रिट याचिका के साथ संलग्न परिशिष्ट 5 में अंतर्विष्ट हैं और निवेदन किया है कि उन परिपत्रों-सरकारी आदेशों के पास विधि का सांविधिक बल है और अपीलार्थीगण अरुणाचल प्रदेश (एन॰ ई॰ आर॰) में अपनी पदस्थापना के दौरान दाण्डिक किराया के भुगतान के बिना राँची में उनको आवंटित क्वार्टरों को अपने पास रखने के हकदार हैं। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि परिपत्रों एवं सरकारी आदेशों के पास विधि का सांविधिक बल है और उनका अनुसरण किया जाना बाध्यकारी है और मामले के इस दृष्टि में, सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के प्रावधानों के अधीन आरंभ की गयी कार्यवाही और बेदखली के लिए तथा परिसरों के उपयोग एवं अधिभोग के लिए दाण्डिक किराया की वसूली के लिए उस पर पारित आदेश इन परिपत्रों एवं सरकारी आदेशों के विपरीत हैं और विधि की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है।

अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1606 वर्ष 1997 (R) में पारित दिनांक 20.4.1998 के आदेश की ओर आकृष्ट किया है और निवेदन किया है कि अपीलार्थीगण के मामले पर विचार करने के लिए उक्त रिट याचिका में पारित आदेश के बावजूद प्रत्यर्थीगण-प्राधिकारीगण ने अनेक परिपत्रों-सरकारी आदेशों के अनुरुप अपीलार्थीगण के मामले पर विचार नहीं किया है और बेदखली का आदेश पारित किया है और दाण्डिक किराया की वसूली के लिए आदेश भी जारी किया है।

8. भारत संघ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थीगण द्वारा विश्वास किए गए विभिन्न परिपत्र-सरकारी आदेश केवल सामान्य/सिविलियन समूह वास सुविधा के संबंध में हैं और राँची मिलिट्री स्टेशन के पास ऐसी कोई सामान्य/सिविलियन समूह वास सुविधा नहीं है और, इसलिए दाण्डिक किराया की वसूली का आदेश विधि के अनुरुप है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से रिट याचिका खारिज किया और रिट न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

9. हमने अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परिशीलन किया है।

10. अपीलार्थीगण को राँची में उनकी पदस्थापना की अवधि के लिए सैन्य कर्मियों के लिए आशयित रक्षा समूह वास सुविधा आवंटित की गयी थी। प्रत्यर्थीगण के अनुसार, अपीलार्थीगण को राँची से उनके स्थानांतरण पर इसे खाली करने के अनुबंधित अनुदेश के साथ वास-सुविधा आवंटित की गयी थी। प्रत्यर्थीगण के अनुसार, राँची मिलिट्री स्टेशन में केवल सैन्यकर्मी वास-सुविधा के पात्र हैं और अपीलार्थीगण जो सिविलियन हैं को अस्थायी रूप से वास सुविधा आवंटित की गयी थी चूँकि उस समय पर कोई रक्षाकर्मी इसके लिए प्रतीक्षारत नहीं था। प्रत्यर्थीगण के अनुसार, विनिर्दिष्ट अनुदेश के साथ और राँची से बाहर स्थानांतरित किए जाने पर इसे खाली करने के वचन के साथ और वैकल्पिक वास सुविधा के बारे में पूछे बगैर उन्हें वास सुविधा आवंटित की गयी थी।

11. स्वीकृत रूप से, अपीलार्थीगण को अप्रिल, 1995 में अरुणाचल प्रदेश (एन० ई० आर०) स्थानांतरित किया गया था और उनके वचन के मुताबिक वे अधिभोग में बने रहने के हकदार नहीं है। राँची से बाहर उनकी पदस्थापना पर उक्त वास सुविधा खाली करने में विफलता पर अपीलार्थीगण को इसे खाली करने के लिए कहा गया था और अनेक नोटिसों के बावजूद अपीलार्थीगण ने इसे खाली नहीं किया है और, इसलिए अपीलार्थीगण को सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के प्रावधानों के मुताबिक अप्राधिकृत अधिभोगियों के रूप में घोषित किया गया था और तद्नुसार, अधिनियम की धारा 7 के मुताबिक नुकसान वसूल करने के लिए उनके विरुद्ध कार्रवाई आरंभ की गयी थी।

12. जहाँ तक अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए परिपत्रों का संबंध है, वे परिपत्र केवल सामान्य/सिविलियन समूह वास सुविधा पर प्रयोज्य हैं। वर्तमान मामले में, राँची मिलिट्री स्टेशन के पास कोई सामान्य/सिविलियन समूह वास सुविधा नहीं है और प्रश्नगत वास सुविधा केवल सैन्य कर्मियों के लिए आशयित अनन्य रूप से रक्षा समूह वास सुविधा के लिए है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि उक्त परिपत्रों के प्रावधान प्रयोज्य नहीं हैं और वे परिपत्र अपीलार्थीगण के मददगार नहीं हैं। अपीलार्थीगण को क्वार्टरों के अप्राधिकृत अधिभोगियों के रूप में घोषित करने वाला आदेश और दिनांक 1.4.1995 से दिनांक 30.6.1998 तक परिसरों के उपयोग एवं अधिभोग के लिए दाण्डिक किराया की वसूली का निर्देश देने वाला आदेश सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के प्रावधानों के बिल्कुल अनुरूप है और, इसलिए उस सीमा तक हम विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं।

13. जहाँ तक अधिनियम की धारा 7 (2A) के मुताबिक उपयोग एवं अधिभोग के लिए दाण्डिक/नुकसान के किराया के रूप में भुगतेय राशि का संबंध है, राशि ऐसे दर, जैसा विहित किया जा सकता है किंतु जो ब्याज अधिनियम, 1978 के अर्थ के अंतर्गत ब्याज की वर्तमान दर से अधिक नहीं है, पर सरल ब्याज के साथ भुगतेय होगी।

14. चूँकि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1606 वर्ष 1997 (R) की कार्यवाही में इस न्यायालय द्वारा स्थगन आदेश प्रदान किया गया था जिसके द्वारा प्रत्यर्थीगण को केवल सामान्य मासिक किराया लेने का निर्देश दिया गया था और आगे वर्तमान कार्यवाही अर्थात् डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 3121 वर्ष 2002 में भी इस न्यायालय ने दिनांक 18.2.2003 के आदेश के तहत प्रत्यर्थीगण को दाण्डिक किराया वसूल नहीं करने का निर्देश दिया था किंतु केवल सामान्य मासिक किराया वसूल करने की अनुमति दी गयी थी, हमारा दृष्टिकोण है कि अपीलार्थीगण द्वारा भुगतेय दाण्डिक किराया पर सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 की धारा 7 (2A) के निबंधनानुसार ब्याज अपीलार्थीगण पर उद्ग्रहित नहीं किया जा सकता है।

15. यह गौर करना उपयुक्त है कि अपीलार्थीगण क्रमश: वर्ष 2005 और वर्ष 2006 में पहले ही सेवानिवृत्त हो चुके हैं और भुगतेय शास्तिक किराया की राशि वर्ष 1998 में बकाया हो गयी। यह भी गौर करना उपयुक्त है कि अपीलार्थीगण सं॰ 1 और 2 से क्रमश: 50,000/- रुपयों एवं 51,000/- रुपयों की राशि पहले ही वसूल कर ली गयी है। इन परिस्थितियों में, अधिनियम की धारा 7 (2A) के प्रावधानों के मुताबिक, दिनांक 1.4.1995 से दिनांक 30.6.1998 तक दाण्डिक किराया पर अपीलार्थीगण पर सरल ब्याज उद्ग्रहित नहीं किया जा सकता है।

16. इन तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए, इस उपांतरण के साथ कि प्रत्यर्थीगण सरकारी स्थान (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 की धारा 7 (2A) के निबंधनानुसार कोई ब्याज उद्ग्रहित किए बिना अपीलार्थीगण से पहले ही वसूल कर लिए गए किराया की कटौती करते हुए केवल दाण्डिक किराया वसूल करने के हकदार हैं, विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को अभिपुष्ट करते हुए इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

बालेश्वर सिंह

cuke

झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड एवं अन्य

W.P. (S) No. 262 of 2010. Decided on 30th April, 2014.

झारखंड पेंशन नियमावली, 2000—नियम 43 (b)—पेंशन एवं उपदान का रोका जाना–सेवानिवृत कर्मचारी का पेंशन एवं उपदान केवल नियम 43 (b) के अधीन आरंभ की गयी कार्यवाही में दोष के निष्कर्ष के समापन पर रोका जा सकता है–याची के विरुद्ध नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही आरंभ नहीं की गयी–आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया गया–याची ग्राह्य पेंशन और उपदान का हकदार होगा। (पैराएँ 4 से 7)

निर्णयज विधि.–2007(4) JCR 1 (Jhr.) (FB) 2013 (3) JLJR 537 (SC)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Dhanajay Kr. Pathak, Sweta Rani, For the Petitioner; Mr. R. Krishna, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान याची राँची मुख्यालय में कार्य करते हुए झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड के अधीक्षण अभियन्ता के पद से 31.3.2007 को सेवानिवृत्त हुआ। स्वयं उसकी सेवा निवृत्ति के पहले जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ ने याची के संबंध में किसी कार्यवाही के लंबित रहने और नो ड्यूज प्रमाण पत्र जारी किए जाने के

बारे में बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ से सूचना इप्सित किया। बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ द्वारा दिनांक 12.3.2007 के माध्यम से यह सूचित किया गया था कि याची के विरुद्ध एक लोक परिवाद है जो लंबित है और इस प्रकार याची के विरुद्ध कोई कार्यवाही लंबित नहीं है। संयुक्त सचिव, बी॰ एस॰ ई॰ बी॰, पटना ने दिनांक 2.4.2007 के परिशिष्ट–2 के मुताबिक याची के पक्ष में अन्य के अतिरिक्त अनापत्ति प्रमाण पत्र भी जारी किया। पूर्वोक्त तथ्यों की पृष्ठभूमि में, दिनांक 11.11.2008 के आक्षेपित आदेश द्वारा, प्रत्यर्थी सं॰ 3, लेखा निदेशक, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰, राँची द्वारा जारी परिशिष्ट–5, उपदान के शीर्ष के अधीन याची को देय 3,50,000/- रुपयों की राशि वापस रोक ली गयी है। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं॰ 3, लेखा निदेशक, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰, राँची द्वारा जारी परिशिष्ट–6 के तहत 26,032/- रुपयों की राशि जिसमें 18,032/- रुपए का वेतन आधिक्य तथा 8,000/- रुपए के टी॰ ए॰ अग्रिम शामिल है को भी पेंशन के बकाया से समायोजित किया जाना इप्सित किया गया था। याची के अनुसार, 8,000/- रुपयों का टी॰ ए॰ अग्रिम बाद में याची द्वारा यात्रा भत्ता बिल प्रस्तुत करने के बाद समायोजित किया गया है। अत:, उसकी सेवानिवृत्ति के बाद झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन कोई कार्यवाही आरंभ किए बिना अथवा उसकी सेवा कैरियर के दौरान किसी लंबित विभागीय, कार्यवाही में दोष के निष्कर्ष पर पहुँचे बिना मनमाने रूप से 3,68,032/- रुपयों की राशि याची के पेंशन एवं उपदान से वापस रोक ली गयी है। याची ने निवेदन किया है कि इसलिए, आक्षेपित आदेश **डॉ॰ दूधनाथ पांडे बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2007 (4) JCR 1 (Jhr.) (FB)** के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा दिए गए निर्णय के विपरीत है और यही दृष्टिकोण **झारखंड राज्य एवं अन्य बनाम जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव एवं एक अन्य,** (2013)3 JLJR 537 (SC) के मामले में दिए गए निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया गया है। अत:, आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाना चाहिए और वसूली की गयी राशि को याची के पक्ष में निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाना चाहिए।

3. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ में उसके कार्यरत रहने की अवधि के दौरान यह ध्यान में लिया गया था कि वर्ष 1998 से वर्ष 1999 तक की अवधि के दौरान एक भंडार से दूसरे भंडार तक कतिपय सामग्रियों के अंतरण के संबंध में लगभग 3,48,000/- रु॰ मूल्य की सामग्री कम पायी गयी थी और तत्कालीन बिहार राज्य विद्युत बोर्ड द्वारा याची को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। तत्पश्चात, विद्युत अधीक्षण अभियन्ता ने दिनांक 8.6.2002 के तहत सचिव, जे॰ एस॰ इ॰ बी॰ को पत्र, परिशिष्ट E, अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए जारी किया कि प्रश्नगत सामग्रियों को याची द्वारा अपनी पदस्थापना के पूर्व स्थान से नियमित नहीं किया गया है और उसने स्वयं ही वेतन प्राप्त किया है जो उसकी ओर से अनुशासनहीनता का कृत्य दर्शाता है। अत: उसने 3,48,032/- रुपयों की राशि की वसूली के लिए याची के विरुद्ध अनुशासनिक जाँच की अनुशंसा की। प्रत्यर्थीगण ने कार्यपालक अभियन्ता, बाढ़ और अधीक्षण अभियन्ता, पटना सर्किल के बीच इस प्रभाव का पत्र व्यवहार संलग्न किया है कि उक्त सामग्रियों को नियमित नहीं किया गया था। उन्होंने याची की पदस्थापना की उक्त अवधि के दौरान केंद्रीय भंडार, दीघा से डिविजनल भंडार, बख्तियारपुर को भेजी गयी सामग्रियों के नियमितिकरण के विषय पर संयुक्त सचिव, जे॰ एस॰ ई॰ बी॰ और सचिव, बी॰ एस॰ ई॰ बी॰ के बीच हुए दिनांक 12.3.2008 के पत्र व्यवहार, परिशिष्ट–C, को भी संलग्न किया है। आगे, क्रमश: दिनांक 7.4.2009 और दिनांक 15.5.2009 के दो दस्तावेज, परिशिष्ट–A और B भी याची को कारण बताने के लिए कहते हुए कि उसके विरुद्ध नियम 43 (b) के अधीन कार्यवाही क्यों नहीं आरंभ की जाए, पत्र व्यवहार एवं नोटिस की प्रकृति के हैं।

4. अतः पूर्वोक्त दस्तावेज, जो प्रति शपथ पत्र में अभिलेख पर हैं, का सार प्रकट करता है कि प्रत्यर्थीगण ने वस्तुतः उसकी सेवावधि के दौरान याची के विरुद्ध कोई विभागीय कार्यवाही आरंभ नहीं किया है अथवा जब वह सेवारत था, अभिकथित राशि समायोजित नहीं किया है। उन्होंने प्रश्नगत अवधि के लिए केंद्रीय भंडार, दीघा से डिविजनल भंडार, बख्तियारपुर को आपूर्त्त सामग्रियों में अनियमितताओं के अभिकथित आरोपों पर उसकी सेवानिवृत्ति के बाद नियम 43 (b) के अधीन विभागीय कार्यवाही भी आरंभ नहीं किया है।

5. अतः, सार-संक्षेप में, उसके सेवा कैरियर के दौरान किसी विभागीय कार्यवाही में अवचार के दोष के किसी निष्कर्ष के बिना अथवा उसकी सेवानिवृत्ति के बाद झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन आरंभ की गयी किसी कार्यवाही के बिना याची के उपदान से 3,50,000/- रुपयों की राशि और याची के पेंशन से 18,032/- रुपयों की राशि का वापस रोका जाना **डॉ० दूधनाथ पांडे (ऊपर)** में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा अधिकथित सुनिश्चित विधिक अवस्था, जिसे **झारखंड राज्य एवं अन्य बनाम जितेन्द्र कुमार श्रीवास्तव एवं एक अन्य (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया गया था, की दृष्टि में संपोषणीय नहीं है। सेवानिवृत्त कर्मचारी का पेंशन एवं उपदान केवल उसकी सेवानिवृत्ति के बाद झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 (b) के अधीन आरंभ की गयी विभागीय कार्यवाही में दोष के निष्कर्ष पर अथवा झारखंड पेंशन नियमावली, जो झारखंड राज्य विद्युत बोर्ड के कर्मचारियों पर भी लागू होता है के प्रासंगिक प्रावधान के अधीन दाण्डिक विचारण में रोका जा सकता है।

6. मामले के उस दृष्टिकोण में, प्रत्यर्थीगण की आक्षेपित कार्रवाई विधि की दृष्टि में और तथ्यों पर भी संपोषित नहीं की जा सकती है। तद्नुसार, दिनांक 11.11.2008 के परिशिष्ट-5 के तहत 3,50,000/- रुपयों की उपदान राशि और दिनांक 30.10.2008 के परिशिष्ट-6 के तहत उसके पेंशन से 18,032/- रुपयों की राशि को वापस रोकने का आदेश अभिखंडित किया जाता है।

7. अतः, याची युक्तियुक्त समय के भीतर विधि के अनुरुप ग्राह्य उपदान एवं पेंशन का हकदार होगा।

8. तद्नुसार, यहाँ ऊपर उपदर्शित तरीके से रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

गिरिराज सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cr. M.P. No. 1180 of 2014. Decided on 2nd May, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 73—गिरफ्तारी वारंट—केवल इस तथ्य के कारण कि याची अभियुक्त है और मामले में उसकी आवश्यकता है, किसी आदेश के बिना कि अभियुक्त गिरफ्तारी से बच रहा है, गिरफ्तारी वारंट जारी किए जाने का आदेश दिया गया है—आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया—याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.—M/s Rajiv Ranjan, V.K. Trivedi, S. Gautam, For the Petitioners; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि हरला पी॰ एस॰ केस सं॰ 57 वर्ष 2014 (जी॰ आर॰ सं॰ 563 वर्ष 2014) में विद्वान एस॰ डी॰ जे॰ एम॰, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 23.4.2014 का आदेश, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन याची के विरूद्ध गिरफ्तारी वारंट निर्गत करने का आदेश दिया गया है, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 73 में अंतर्विष्ट प्रावधानों के अनुरूप नहीं है जो अनुबंधित करता है कि गिरफ्तारी वारंट व्यक्तियों के तीन वर्गों अर्थात् (i) फरार दोष सिद्ध, (ii) उद्घोषित अपराधी और (iii) व्यक्ति जो गैर-जमानती अपराध का अभियुक्त है और गिरफ्तारी से बच रहा है, के मामले में जारी किया जा सकता है।

2. केवल इस तथ्य के कारण कि याची अभियुक्त है और मामले में उसकी आवश्यकता है, कोई आदेश हुए बिना कि अभियुक्त गिरफ्तारी से बच रहा है, गिरफ्तारी वारंट जारी करने का आदेश दिया गया है।

3. तद्नुसार, हरला पी॰ एस॰ केस सं॰ 57 वर्ष 2014 (जी॰ आर॰ सं॰ 563 वर्ष 2014) में पारित दिनांक 23.4.2014 का आक्षेपित आदेश, जिसके अधीन गिरफ्तारी वारंट जारी करने का आदेश दिया गया है, एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

4. परिणामस्वरुप, यह याचिका अनुज्ञात की जाती है।

5. इस आदेश की प्रति याची के व्यय पर ''फैक्स'' के माध्यम से संसूचित की जाए।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

प्रदीप कुमार राय एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 2797 of 2006. Decided on 13th March, 2014.

नामांतरण–नामांतरण के मामले में कब्जा का तथ्य महत्वपूर्ण है–नामांतरण के मामले में, राजस्व अधिकारी हक, हिस्सा और कब्जा के अधिकार से संबंधित किसी दावा को विनिश्चित करने के लिए सक्षम नहीं है–हक के वैध अंतरण के फलस्वरुप खरीददार, कब्जा का अधिकार भी अर्जित करता है यदि किसी विनिर्दिष्ट प्रसंविदा अथवा विधि के किसी प्रावधान द्वारा निर्बंधित नहीं किया गया है–किसी विधिक आधार अथवा वैध दस्तावेजों के बिना हक, विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती देने अथवा मौखिक रूप से हिस्से का दावा करने मात्र को अधिकार, हक और कब्जा का गंभीर विवाद होना नहीं कहा जा सकता है।

(पैराएँ 12, 15, 16, 17, 18, 19, 21 एवं 22)

निर्णयज विधि.–2008 (3) PLJR 245—Distinguished.

अधिवक्तागण.–In Person, For the Petitioners; Mr. Vineet Prakash, Mr. R.P. Singh, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–याचीगण ने दिनांक 20.3.2002 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप जंग बहादुर राय से ग्राम सिमरा धाव, पी॰ एस॰, बिरनी, जिला गिरीडीह के खाता सं॰ 57 से संबंधित भूखंड सं॰ 58 की भूमि का दो डिसमिल खरीदा।

2. तत्पश्चात, याचीगण ने अंचलाधिकारी, बिरनी के समक्ष विक्रेता जंग बहादुर राय के स्थान पर अपने नामों के नामांतरण के लिए आवेदन दिया। आवेदन की प्राप्ति पर अंचलाधिकारी, बिरनी ने हलका

कर्मचारी से रिपोर्ट मांगा। आपत्ति आमंत्रित करते हुए सामान्य नोटिस भी जारी किए गए थे। याचीगण के आवेदन के विरुद्ध गिरीश राय एवं रिशी राय द्वारा और विक्रेता जंग बहादुर राय द्वारा भी आपत्तियाँ दाखिल की गयी थी। हलका कर्मचारी और अंचल इंस्पेक्टर ने नामांतरण के लिए याचीगण के नामों की अनुशंसा करते हुए अपने रिपोर्टों को दाखिल किया जैसी प्रार्थना याचीगण द्वारा की गयी थी।

3. अंचलाधिकारी ने आपत्तिकर्ताओं को सुना और रिपोर्ट पर विचार किया और पाया कि हलका कर्मचारी की रिपोर्ट के अनुसार, अन्य भूमि के साथ प्रश्नगत भूमि के संबंध में जमाबंदी याचीगण के विक्रेता जंग बहादुर राय के नाम में चल रही थी जिससे याचीगण ने रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप उक्त भूमि खरीदा था। प्रश्नगत भूमि की खरीद के बाद याचीगण ने चारदीवारी का निर्माण भी किया था और वे उक्त भूमि पर काबिज थे। अंचलाधिकारी ने विक्रेता जंग बहादुर राय से विक्रय विलेख के निष्पादन के बारे में भी पूछा था और उसने निष्पादन स्वीकार किया किंतु कहा कि बाद में उसने उक्त विक्रय विलेख को रद्द करते हुए रद्दकरण विलेख निष्पादित किया था। अन्य आपत्तिकर्ताओं ने विक्रेता जंग बहादुर राय द्वारा बेची/अंतरित की गयी भूमि में हित होने का दावा किया किंतु दावा के समर्थन में कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया था। अंचलाधिकारी ने रिपोर्ट से यह भी पाया कि विक्रेता ने पहले भी अपनी जमाबंदी से कुछ संपत्तियों को बेचा था और खरीददारों के नामों को राजस्व अभिलेख में नामांतरित किया गया था। उक्त स्वीकृत अवस्था पर और अभिलेख पर मौजूद रिपोर्टों पर विचार करते हुए अंचलाधिकारी ने आपत्तियों को अस्वीकार कर दिया और दिनांक 29.11.2002 के अपने आदेश (परिशिष्ट–2) द्वारा याची के नाम में नामांतरण अनुज्ञात किया। तत्पश्चात, आपत्तिकर्ताओं ने विद्वान भू–सुधार उप–समाहर्ता (एल॰ आर॰ डी॰ सी॰), गिरीडीह के समक्ष अपील दाखिल किया जिसे नामांतरण अपील सं॰ 105/02-03 के रूप में दर्ज किया गया था। विद्वान भू–सुधार उप–समाहर्ता, गिरीडीह ने यह संप्रेक्षित करते हुए अपील अनुज्ञात किया कि चूँकि याचीगण के कब्जा के संबंध में आपत्तियाँ हैं, विद्वान अंचलाधिकारी को याचीगण के शांतिपूर्ण कब्जा की अनुपस्थिति में नामांतरण अनुज्ञात नहीं करना चाहिए था और उसकी दृष्टि में विद्वान अंचलाधिकारी द्वारा पारित आदेश वैध नहीं है। विद्वान भू–सुधार उप समाहर्ता, गिरीडीह ने दिनांक 14.6.2003 के अपने आदेश के तहत विद्वान अंचलाधिकारी का आदेश अपास्त कर दिया।

4. तत्पश्चात्, याचीगण ने अपर समाहर्ता, गिरीडिह के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे नामांतरण मामला सं॰ 14/2003-04 के रूप में दर्ज किया गया था। पक्षों को नोटिस दिया गया था और सुना गया था। विद्वान अपर समाहर्ता, गिरीडिह ने अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दर्ज उक्त कारण का समर्थन किया और विद्वान भू–सुधार उप–समाहर्ता, गिरीडीह के आदेश को मान्य ठहराया और दिनांक 22.7.2004 के आदेश (परिशिष्ट–4) द्वारा पुनरीक्षण खारिज कर दिया। तब याचीगण ने विद्वान आयुक्त, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग के समक्ष द्वितीय पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे पुनरीक्षण सं॰ 51/04 के रूप में दर्ज किया गया था। विद्वान आयुक्त, हजारीबाग ने पक्षों को सुना और दिनांक 28.12.2005 के अपने आदेश के तहत यह अभिनिर्धारित करते हुए पुनरीक्षण खारिज कर दिया कि द्वितीय पुनरीक्षण पोषणीय नहीं था और उनके पास द्वितीय पुनरीक्षण ग्रहण करने की अधिकारिता नहीं है।

5. पूर्वोक्त अपीलीय प्राधिकारी, पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश और विद्वान आयुक्त, उत्तर छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग के आदेश से व्यथित होकर याचीगण ने इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

6. याचीगण ने स्वयं तर्क किया और निवेदन किया कि वह और उसका भाई प्रमोद कुमार राय बहुमूल्य प्रतिफल के लिए प्रश्नगत भूमि के सद्भावपूर्ण संयुक्त खरीददार हैं। विक्रेता जंग बहादुर राय ने इस भूमि को 32,000/- रुपयों के लिए बेचने का प्रस्ताव याची को दिया था। इसे स्वीकार करने के पहले उन्होंने अभिलेख से सत्यापित किया और पाया कि उक्त भूमि के संबंध में जमाबंदी उक्त जंग बहादुर राय के नाम में चल रही थी। उसके विक्रेता ने भी उनको आश्वासन दिया कि उक्त संपत्ति उसकी है और इसे अनन्य रूप से उसके नाम में नामांतरित किया गया है, और कि उसने भूमि को अनेक खरीददारों को बेचा/अंतरित किया था और उनके नामों को नामांतरित किया गया है और वे शांतिपूर्ण रूप से काबिज हैं। उक्त अभिलेखों को सत्यापित करने पर और प्रतिफल राशि का भुगतान करने के बाद याची और उसके भाई ने प्रश्नगत भूमि खरीदा और विक्रेता जंग बहादुर राय द्वारा विक्रय विलेख रजिस्टर्ड किया गया था। तत्पश्चात, याचीगण ने विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी (गिरीडीह) के समक्ष नामांतरण के लिए आवेदन दिया। इस बीच, अन्य आपत्तिकर्ताओं की प्रेरणा पर और इस प्रलोभन पर कि वे उच्चतर कीमत पर भूमि खरीद सकते हैं, विक्रेता जंग बहादुर राय ने तत्पश्चात याचीगण के उक्त विक्रय विलेख को रद्द करने के लिए विलेख निष्पादित किया। किंतु, विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी के समक्ष विक्रेता उपस्थित हुआ था और याची तथा उसके भाई के पक्ष में विक्रय विलेख का निष्पादन स्वीकार किया था। उसने आगे निवेदन किया कि जब दिनांक 20.3.2002 के विक्रय विलेख के फलस्वरुप भूमि का हक एवं कब्जा अंतरित किया गया था, रद्दकरण विलेख दर्ज करने का अवसर नहीं था किंतु इसे हितबद्ध आपत्तिकर्ताओं के उकसावा और प्रलोभन पर किया गया था। उसने आगे निवेदन किया कि विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी ने हलका कर्मचारी और अंचल निरीक्षक से रिपोर्ट मांगा था और उन्होंने जाँच के बाद रिपोर्ट दर्ज किया कि अन्य भूमि की जमाबंदी याचीगण के विक्रेता जंग बहादुर राय के नाम में चल रही थी। उक्त हलका कर्मचारी (राजस्व फील्ड स्टाफ) ने स्थल निरीक्षण भी किया और याचीगण द्वारा निर्मित चारदीवारी पाया। उसने आगे निवेदन किया कि आपत्तियाँ जान-बूझकर की गयी थी और द्वेषपूर्ण एवं आधारहीन थीं। विक्रेता द्वारा अपना विक्रय/अंतरण पूरा कर लिए जाने और याचीगण से धन वसूल कर लेने और प्रश्नगत भूमि पर उनके द्वारा चारदीवारी खड़ा कर लेने तक आपत्ति नहीं की गयी थी। वे उसपर शांतिपूर्ण रूप से काबिज थे।

7. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अंचलाधिकारी ने अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों, रिपोर्टों और सामग्रियों के आधार पर याचीगण के पक्ष में नामांतरण के लिए आवेदन अनुज्ञात किया। आदेश पूर्णत: विधिक एवं वैध था। विद्वान अपीलीय प्राधिकारी और पुनरीक्षण प्राधिकारी ने विधिक सिद्धांतों के भ्रांत धारणा के अधीन और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्रियों के विपरीत अवैध रूप से विद्वान अंचलाधिकारी के आदेश को अपास्त कर दिया। वे आदेश पूर्णत: अवैध, मनमाने हैं और अपास्त किए जाने के दायी हैं। विद्वान पुनरीक्षण आयुक्त ने मामले के गुणागुण पर विचार नहीं किया है और पुनरीक्षण इस आधार पर खारिज कर दिया है कि उनके पास द्वितीय पुनरीक्षण ग्रहण एवं विनिश्चित करने की अधिकारिता नहीं है। अत:, याचीगण ने उक्त आदेश को चुनौती देते हुए इस रिट याचिका को दाखिल किया है।

8. प्रत्यर्थी सं॰ 7, 8, 9 और 11 द्वारा रिट याचिका का विरोध किया गया है। प्रत्यर्थी सं॰ 6 की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है।

9. प्रत्यर्थी सं॰ 7, 8, 9 और 11 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश में अवैधता अथवा दुर्बलता नहीं है और उन्होंने सही प्रकार से विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी द्वारा पारित गलत आदेश को अपास्त किया है। स्वीकृत रूप से, याचीगण ने जंग बहादुर राय से भूमि खरीदा है जबकि आपत्तिकर्ता जंग बहादुर राय के गोत्रज हैं जिनका

उक्त संपत्ति में हित एवं हिस्सा है। उस तथ्य को विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी के ध्यान में लाया गया था किंतु उक्त आपत्ति तथा प्रश्नगत भूमि में अपने हित एवं हिस्सा के दावा के बावजूद विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी ने आपत्तियों को अस्वीकार कर दिया है और याचीगण के पक्ष में नामांतरण अनुज्ञात किया है।

10. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि प्रश्नगत भूमि के संबंध में हक एवं हिस्सा के गंभीर विवाद की दृष्टि में अंचलाधिकारी को याचीगण का नामांतरण आवेदन ग्रहण एवं अनुज्ञात करने के बजाए याचीगण को अपना अधिकार, हक घोषित करवाने के लिए सिविल न्यायालय को निर्दिष्ट कर देना चाहिए था और स्वयं इसे विनिश्चित और याचीगण के पक्ष में नामांतरण अनुज्ञात नहीं करना चाहिए था।

11. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **''रामजी प्रसाद सिंह एवं एक अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य''**, 2008 (3) PLJR 245 को निर्दिष्ट किया और इसमें पटना उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया।

12. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि चूँकि विक्रय विलेख की वैधता तथा याचीगण के पक्ष में प्रश्नगत भूमि के विक्रय/अंतरण के संबंध में प्रत्यर्थीगण एवं विक्रेता द्वारा आपत्तियाँ की गयी थीं, उनके कब्जा को शांतिपूर्ण कब्जा नहीं कहा जा सकता है। नामांतरण के मामले में, कब्जा का तथ्य महत्वपूर्ण है और स्वयं कब्जा के तथ्य पर आपत्ति की गयी थी। उसकी दृष्टि में, याचीगण का आवेदन ग्रहणीय एवं पोषणीय नहीं था। विद्वान अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी ने उक्त पहलू पर विचार किया और सही प्रकार से नामांतरण के लिए याची का दावा अस्वीकार कर दिया है। अपीलीय प्राधिकारी एवं पुनरीक्षण प्राधिकारी का आदेश वैध है।

13. मैंने याचीगण और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है। वर्तमान मामले में, तात्विक तथ्य विवादित नहीं हैं। यह स्वीकार किया गया है कि विक्रेता जंग बहादुर राय ने याचीगण के पक्ष में दिनांक 20.3.2002 का विक्रय विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर्ड किया था; भूमि जिसे विक्रेता जंग बहादुर राय द्वारा अंतरित किया गया है, राजस्व अभिलेख में उसके नाम में दर्ज किया गया था; यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं लायी गयी है कि उक्त विक्रेता के सिवाए और किसी का वाद संपत्ति में कोई हिस्सा और हित था, और याचीगण ने भूमि खरीदने के बाद प्रश्नगत भूमि पर चारदीवारी निर्मित किया था।

14. निजी प्रत्यर्थीगण द्वारा यह दावा करते हुए विवाद किया गया है कि उनका भी संपत्ति में हित और हिस्सा है। उक्त आपत्ति सुनी गयी थी, इस पर विचार किया गया था और विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए अस्वीकार कर दिया गया था कि उक्त दावा के समर्थन में उनके समक्ष कोई दस्तावेज नहीं लाया गया था। विक्रेता, जो आपत्तिकर्ताओं में से एक के रूप में जुड़ा, स्वयं अंचलाधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ और याचीगण के पक्ष में दिनांक 20.3.2002 के विक्रय विलेख का निष्पादन स्वीकार किया।

15. नामांतरण के मामले में, राजस्व अधिकारी, हक, हिस्सा एवं कब्जा के अधिकार से संबंधित दावा विनिश्चित करने के लिए सक्षम नहीं है।

16. संपत्ति के अंतरण पर नामांतरण के मामले में प्राधिकारी को यह देखना है कि क्या जमाबंदी विक्रेता अथवा उसके हित पूर्वाधिकारी के नाम में चल रही है और अंतरण अभिधारी अथवा हित

उत्तराधिकारी, जिसका नाम अंतरिती को स्वामित्व एवं कब्जा अंतरित करते हुए राजस्व अभिलेख में चल रहा है, द्वारा प्रथम दृष्टया वैध दस्तावेज के फलस्वरुप अंतरण किया गया है।

17. हक के वैध अंतरण के फलस्वरुप खरीददार भी कब्जा का अधिकार अर्जित करता है यदि इसे किसी विनिर्दिष्ट प्रसंविदा अथवा विधि के किसी प्रावधान द्वारा निर्बंधित नहीं किया गया है।

18. ऐसे मामले में, यदि कोई अंतरिती का कब्जा विवादित करता है, उसे प्राधिकारी के समक्ष स्थापित करना होगा कि उसके पक्ष में हक के अंतरण के बावजूद उक्त अधिकार का प्रयोग नहीं किया गया है।

19. वैध अंतरण के विरुद्ध किसी आधार के बिना की गयी आपत्ति का प्रभाव अंतरिती के विधिक अधिकार को अस्त-व्यस्त करने का नहीं है जो आरंभ से ही विलेख के फलस्वरुप और विधि के प्रवर्तन द्वारा निहित होता है।

20. वर्तमान मामले में, विद्वान भू-सुधार उप-समाहर्ता, गिरीडीह और अपर समाहर्ता, गिरीडीह का संप्रेक्षण कि चूँकि आपतिकर्ताओं ने नामांतरण की प्रार्थना के विरुद्ध आपत्ति किया था, याचीगण को शांतिपूर्ण रूप से काबिज नहीं कहा जा सकता है, बिल्कुल गलत, भ्रामक और अवैध है।

21. ऐसे आधारहीन आपत्ति हक एवं कब्जा के किसी विधिक विवाद्यक को उद्‌भूत नहीं करती है, सिवाए तब जब इसे न्याय निर्णयन के प्रयोजन से सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष उठाया जाता है।

22. किसी विधि का आधार अथवा दस्तावेज के बिना हक, विक्रय विलेख की वैधता को चुनौती देना अथवा मौखिक रूप से हिस्सा का दावा करना मात्र, अधिकार, हक एवं कब्जा का गंभीर विवाद नहीं कहा जा सकता है जैसा प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है।

23. उक्त कारण से, **रामजी प्रसाद सिंह एवं एक अन्य (ऊपर)** मामले में निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों के प्रति प्रासंगिक नहीं है।

24. उक्त चर्चा की दृष्टि में, पुनरीक्षण केस सं॰ 105/02-03 में विद्वान भू-सुधार उप समाहर्ता, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 3.6.2003 का आदेश (परिशिष्ट-3), नामांतरण पुनरीक्षण केस सं॰ 14/2003-04 में विद्वान अपर समाहर्ता, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 22.7.2004 का आदेश और विद्वान आयुक्त, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 28.12.2005 का आदेश भी निरंतरता में अभिखंडित किया जाता है। विद्वान अंचलाधिकारी, बिरनी, गिरीडीह का दिनांक 29.11.2002 का आदेश (परिशिष्ट-2) मान्य ठहराया जाता है।

25. तद्‌नुसार यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

अश्विनी कुमार सिन्हा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 153 of 2013. Decided on 21st April, 2014.

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971—धाराएँ 2(b), 2(c) एवं 12—न्यायालय का अवमान–न्यायालय से तात्विक तथ्य छिपाया जाना–यदि अनुतोष की मंजूरी अथवा इससे इनकार

के लिए तथ्य आवश्यक नहीं है, यह तात्विक तथ्य नहीं होगा–केवल न्यायालय द्वारा पारित आदेश की जानबूझकर की गयी अवज्ञा अथवा न्यायालय को दिए गए वचन का जानबूझकर भंग अवमान के तुल्य होगा–व्यय अधिरोपित करने और अवमान कार्यवाही आरंभ करने का निर्देश देने वाला आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 8, 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.–(2007)6 SCC 120—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Anil Kumar Sinha, Vijay Shankar Prasad, For the Appellant; Mr. S.K. Verma, For the Respondents.

आदेश

वर्तमान अपील डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5035 वर्ष 2012 में पारित दिनांक 25.2.2013 के आदेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी पर 50,000/- रुपयों के व्यय के साथ रिट खारिज कर दिया और अपीलार्थी के विरुद्ध पृथक कार्यवाही द्वारा न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन कार्यवाही आरंभ करने का निर्देश दिया।

2. संक्षिप्त तथ्य:–अपीलार्थी को वर्ष 1985 में अतिरिक्त प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, बोआरीजोर में दैनिक मजदूर के रूप में नियुक्त किया गया था। बाद में, चयन कमिटी ने अन्य के साथ अपीलार्थी के नाम की अनुशंसा पद पर नियुक्ति के लिए किया और अपीलार्थी को दिनांक 31.12.1989 के मेमो सं॰ 1096 के तहत सिविल सर्जन-सह-मुख्य चिकित्सा अधिकारी, गोड्डा द्वारा सर्विलांस मजदूर के तृतीय वर्ग पद पर नियुक्त किया गया था और प्रभारी चिकित्सा अधिकारी, बोआरीजोर, गोड्डा के अधीन पदस्थापित किया गया था।

3. बाद में, दिनांक 25.2.1991 के मेमो सं॰ 310 के तहत सिविल सर्जन-सह-मुख्य चिकित्सा अधिकारी ने अपीलार्थी और 51 अन्य तृतीय एवं चतुर्थ वर्ग कर्मचारियों की सेवा समाप्त कर दिया। सेवा समाप्ति को चुनौती देते हुए अपीलार्थी ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1848 वर्ष 2001 दाखिल किया और इसे दिनांक 20.8.2001 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। उक्त आदेश के विरुद्ध, अपीलार्थी ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 636 वर्ष 2001 दाखिल किया और उक्त लेटर्स पेटेन्ट अपील को खंडपीठ द्वारा दिनांक 14.5.2003 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। अपीलार्थी ने एक अन्य रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2156 वर्ष 2007 दाखिल किया और उक्त रिट याचिका को जोर नहीं दिए जाने के कारण खारिज कर दिया गया था।

4. यह कथन करते हुए कि कुछ अन्य चतुर्थ वर्ग कर्मचारियों, जिनकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी, को सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 2078 वर्ष 1991 में न्यायालय के आदेश द्वारा पुनर्बहाल किए जाने का आदेश दिया गया था और यह प्रतिवाद करते हुए कि अपीलार्थी उन चतुर्थ वर्ग कर्मचारियों की तरह समस्थित है, अपीलार्थी ने रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5035 वर्ष 2012 दाखिल किया है जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया गया था:–

> *"7. .....mlh çkFkuk d lkFk ;kph }kjk nkf[ky fjV ;kfpdk lh0 MCY;0 t0 lh0 l0 1848 o"k 2001 fnukd 20 vxLr] 2001 d vkn'k }kjk [kkfjt dj nh x;h FkhA mDr vkn'k d fo#) ;kph u vihy ,y0 ih0 ,0 l0 636 o"k 2001 nkf[ky fd;k FkkA mDr vihy bl U;k;ky; dh [kMihB }kjk lfopkfjr ,o foLrr fnukd 14 eb] 2003 d vkn'k }kjk [kkfjt dj nh x;h FkhA mDr vkn'k e ;g xkj fd;k x;k Fkk fd lok lekfIr vkn'k dk cpko dju dk volj fn;k x;k Fkk-------*
>
> *9. vfHky[k ij miyC/k rF;k ,o nLrkotk ij fopkj djr g, e ikrk g fd ;kph u mlh çkFkuk ft l fjV ;kfpdk MCY;0 ih0 (,l0) l0 1848 o"k 2011 e igy vLohdkj dj fn;k x;k Fkk d lkFk rkRkod rF; fNikr g, bl fjV ;kfpdk dk nkf[ky fd;k gA mDr vkn'k d fo#) nkf[ky vihy ,y0 ih0 ,0 l0 636*

*o"k 2001 Hkh rkfdd vkn'k }kjk [kkfjt dj nh x;h FkhA vr%] e çR;FkhX.k d fo}ku vfèkoDrk d fuonu e lkj ikrk g fd ;kph dk U;k;ky; d vkn'k dh vkj voKki.k jo;k g vkj og rkfF;d rF; fNiku vkj bl U;k;ky; d le{k n0;in'ku dju dk nk"kh Hkh gA***

5. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

6. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ सिन्हा ने निवेदन किया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2399 वर्ष 2009 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश, जिसके द्वारा अन्य समस्थित व्यक्तियों की प्रार्थना अनुज्ञात की गयी थी और इस न्यायालय द्वारा सेवा समाप्ति आदेश अभिखंडित कर दिया गया था और जिसने वर्तमान रिट याचिका दाखिल किया जाना आवश्यक बनाया, की दृष्टि में अपीलार्थी द्वारा वर्तमान रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5035 वर्ष 2012 दाखिल की गयी थी। रिट याचिका के पैराग्राफ सं॰ 10, 16 और 20 को निर्दिष्ट करते हुए उन्होंने आगे इंगित किया कि अपीलार्थी–रिट याची ने सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1848 वर्ष 2001 और डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2156 वर्ष 2007 दाखिल किया जाना प्रकट किया है और इस प्रकार अपीलार्थी द्वारा सम्यक रूप से प्रकट किया गया था कि अपीलार्थी द्वारा पहले दाखिल की गयी रिट याचिकाओं को इस न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश, जिसके द्वारा अपीलार्थी पर 50,000/- रुपयों का व्यय अधिरोपित किया गया है और न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन पृथक कार्यवाही आरंभ करने का निर्देश आगे दिया गया है, की वैधता को चुनौती देते हुए विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि भले ही विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा यह पाया गया है कि अपीलार्थी ने कुछ तात्विक तथ्य छिपाया है, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन पृथक कार्यवाही आरंभ करने का आदेश नहीं दिया जा सकता था। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि रिट याचिका में अपीलार्थी द्वारा की गयी प्रार्थना की दृष्टि में जिसमें डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2399 वर्ष 2009 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के समरुप आदेश अपीलार्थी द्वारा इप्सित किया गया था और अपीलार्थी द्वारा पहले दाखिल की गयी दो रिट याचिकाओं की खारिजी प्रकट की गयी थी, अपीलार्थी पर 50,000/- रुपयों का व्यय अधिरोपित कर रिट याचिका खारिज नहीं किया जा सकता था।

7. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस॰ के॰ वर्मा ने निवेदन किया है कि उत्तरवर्ती रिट याचिकाओं और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 636 वर्ष 2001 की खारिजी के बाद भी अपीलार्थी ने इस न्यायालय के पास आकर विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग किया और इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन पृथक कार्यवाही आरंभ करने का आदेश देने के अतिरिक्त सही प्रकार से 50,000/- रुपयों का व्यय अधिरोपित किया है।

8. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता की ओर से किए गए निवेदनों का अधिमूल्यन करने पर हमारा दृष्टिकोण है कि यद्यपि अपीलार्थी सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1848 वर्ष 2001 की कार्यवाही में इस न्यायालय के समक्ष हार गया है और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 636 वर्ष 2001 में लेटर्स पेटेन्ट न्यायालय द्वारा रिट याचिका में पारित आदेश अभिपुष्ट किया गया है, अभिलेख पर मौजूद सामग्री से यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने लेटर्स पेटेन्ट अपील की खारिजी प्रकट नहीं किया था। हमारा दृष्टिकोण है कि यह तात्विक तथ्य छिपाने के तुल्य नहीं होगा जो 50,000/- रुपयों के व्यय का अधिरोपण आवश्यक बनाए। **''अरुणिमा बरुआ बनाम भारत संघ एवं अन्य'', (2007)6 SCC 120,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शब्द ''तात्विक तथ्य'' पर चर्चा की गयी है जिसका अर्थ वह तथ्य बताया गया है जिस पर विचार किया जाना और/अथवा विचार नहीं किया जाना तात्विक रूप से मामले के परिणाम को प्रभावित करेगा। **''अरुणिमा बरुआ'' (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि दमन

''तात्विक तथ्य'' का होना होगा। ''तात्विक तथ्य'' का अर्थ होगा वाद के विनिश्चयकरण के लिए आवश्यक तथ्य और इस प्रकार यदि कोई तथ्य अनुतोष के प्रदान अथवा इससे इनकार के लिए आवश्यक नहीं है, यह 'तात्विक तथ्य' नहीं होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"12. ;g io l çpfyr g fd viuh Lofoodh vfèkdkfjrk dk ç;kx dju l budkj dju d fy, U;k;ky; dk l{ke cuku d fy, neu rkfRod rF; dk gkuk gkxkA rkfRod rF; D;k gkxk ftldk neu vihykFkh dk Lofoodh vurk"k çkIr dju l xj&gdnkj cuk,xk] çR;d ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k ij fuHkj djxkA rkfRod rF; okn d fofu'p;dj.k d ç;ktu l rkfRod gkxk] ftldk rkfdd lgifj.kke ;g gkxk fd D;k vurk"k d çnku vFkok bl l budkj d fy, ;g rkfRod FkkA ;fn neu fd;k x;k rF; i{kk d chp okn d fofu'p;dj.k d fy, rkfRod ugh g] U;k;ky; viuh Lofoodh vfèkdkfjrk dk ç;kx dju l budkj ugh dj ldrk gA ;g Hkh io l çpfyr g fd U;k;ky; dh Lofoodh vfèkdkfjrk dk voyc yu oky 0;fDr dk v'k) ân; l U;k;ky; d ikl vku dh vuefr ugh nh tk ldrh gA fdr Hky gh mDr xnxh gVk nh x;h g vkj gkFk LoPN gk x, g] ç'u ;g g fd D;k vurk"k l fQj Hkh budkj fd;k tk,xkA**

9. चूँकि अपीलार्थी ने रिट याचिका सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1848 वर्ष 2001 की खारिजी को प्रकट किया है किंतु एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 636 वर्ष 2001, जिसे सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1848 वर्ष 2001 में पारित आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल किया गया था, की खारिजी प्रकट करने में विफल रहा, हमारा दृष्टिकोण है कि लेटर्स पेटेन्ट अपील की खारिजी के अप्रकटीकरण का मामले के परिणाम पर कोई तात्विक प्रभाव नहीं होगा।

10. हम आगे पाते हैं कि न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 की धारा 2 के अधीन शब्द ''अवमान'' को परिभाषित किया गया है। धारा 2 (b) शब्द ''सिविल अवमान'' को परिभाषित करती है और धारा 2 (c) ''दांडिक अवमान'' को परिभाषित करती है जिनका पठन निम्नलिखित है:–

2. **ifjHkk"kk;–**&(b) ^^flfoy voeku** dk vFk g fdlh U;k;ky; d fdlh fu.k;] fMØh] fun'k] vkn'k] fjV ;k vknf'kdk dh tkuc>dj voKk vFkok fdlh U;k;ky; l fd; x; fdlh opu dk tkuc>dj Hkx(

(c) ^^nkfMd voeku** dk vFk g fdlh fo"k; dk çdk'ku (pkg cky x; ;k vfdr fd; x; 'kCnk }kjk ;k ldrk }kjk ;k n'; #i.kk }kjk vFkok vU;Fkk) ;k fdlh çdkj d vU; dk; dk fd;k tkuk] ftll&

(i) fdlh U;k;ky; d çkfèkdkj ij ykNu yxkrk g ;k ykNu yxku dk çoÙk gkrk g ;k mlI ?kVkrk g ;k mldk ?kVku dk çoÙk gkrk g] vFkok

(ii) fdlh U;kf;d dk;okgh d lE;d vuØe ij çfrdy çHkko Mkyrk g] ;k mle vMpu ink djrk g ;k vMpu ink dju dh çofÙk j[krk g] vFkok

(iii) fdlh vU; jhfr l U;k; ç'kklu e vMpu ink djrk g ;k vMpu ink dju dh çofÙk j[krk g]

11. धारा 2 (b) के अधीन ''सिविल अवमान'' की परिभाषा से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि केवल न्यायालय द्वारा पारित आदेश की जानबूझकर की गयी अवज्ञा अथवा न्यायालय को दिए गए वचन का जानबूझकर भंग अवमान के तुल्य होगा। सिविल अवमान की परिभाषा जैसा न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 की धारा 2 (b) के अधीन परिभाषित किया गया है से यह एकत्रित नहीं किया जा सकता है कि तथ्य का दमन, भले ही यह ''तात्विक तथ्य'' नहीं है, न्यायालय के अवमान के तुल्य होगा और न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन पृथक कार्यवाही का आरंभ किया जाना आवश्यक बनाएगा।

12. पूर्वोक्त की दृष्टि में, यद्यपि हम अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता के प्रतिवाद में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं कि अपीलार्थी को डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2399 वर्ष 2009 में व्यक्तियों को प्रदान किए गए आदेश के समरुप आदेश प्रदान किया जाना चाहिए था, हम इस प्रतिवाद में सार पाते हैं कि अपीलार्थी पर अधिरोपित व्यय न्यायोचित नहीं था और वर्तमान मामले के तथ्यों में विद्वान एकल न्यायाधीश न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन पृथक कार्यवाही आरंभ करने का आदेश नहीं दे सकते थे। तद्नुसार, हम अपीलार्थी पर 50,000/- रुपयों के व्यय के अधिरोपण का आदेश और न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के अधीन पृथक कार्यवाही आरंभ करने के आदेश को अपास्त करते हैं।

13. परिणामस्वरुप, यह लेटर्स पेटेन्ट अपील आंशिक रूप से अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

सिध नाथ मेहरा उर्फ एस॰ एन॰ मेहरा एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से

Cr. M.P. No. 719 of 2011. Decided on 2nd May, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B, 420, 467 एवं 471—भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—संज्ञान–जहाँ संविधि प्रतिनिधिक दायित्व के कारण प्रबंध निदेशक अथवा निदेशक का अभियोजन अनुध्यात करती है, अध्यपेक्षित अभिकथन करना परिवादी की ओर से बाध्यकारी है जो प्रतिनिधिक दायित्व गठित करने वाले प्रावधानों को आकृष्ट करेगी–उसकी सदोषता दर्शाने वाले किसी अभिकथन की अनुपस्थिति में याचीगण को कंपनी अथवा अभियुक्तगण द्वारा किए गए बताए गए अपराध के लिए अभियोजित नहीं किया जा सकता है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 22 से 24)

निर्णयज विधि.–(2008)5 SCC 662; 668—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Rohit Roy, For the Petitioner; Mr. M. Khan, For the C.B.I.

आदेश

अंतर्वर्ती आवेदन सं॰ 2476 वर्ष 2014, जिसमें याची सं॰ 1 के नाम को काटने के लिए, क्योंकि इस मामले के लंबित रहने के दौरान याची सं॰ 1 की मृत्यु हो गयी, याचीगण को अनुमति देने की प्रार्थना की गयी है, पर याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. निवेदन की दृष्टि में, याचिका के मेमो से याची सं॰ 1 का नाम काट दिया जाए।

उस स्थिति में, यह आवेदन केवल याचिका सं॰ 2 तक सीमित रहेगा।

3. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

4. यह आवेदन विद्वान विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 4.2.2011 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 420, 467, 471 के

अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन भी दंडनीय अपराधों का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया है, सहित आर॰ सी॰ सं॰ 19 (A) वर्ष 2009 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

5. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर आने से पहले अभियोजन मामले को ध्यान में लेने की आवश्यकता है।

6. अभियोजन का मामला यह है कि किसी कंपनी अर्थात् मेसर्स कौशल्या इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट कॉरपोरेशन लिमिटेड को परवा-गढ़वा पथ (0 से 30 कि॰ मी॰) मजबूत करने का काम पंचाट किया गया था। करार के अधीन कंपनी को सरकारी तेल कंपनी से बिटुमन उपाप्त करना था। कंपनी मेसर्स कौशल्या आधारभूत संरचना विकास निगम लिमिटेड ने संविदात्मक काम के निष्पादन के लिए सरकारी कंपनी से बिटुमिन की उपाप्ति दर्शाते हुए 59 बीजकों को प्रस्तुत किया। 59 बीजकों में से 26 बीजकों को कूटरचित किया गया पाया गया था किंतु अभियुक्तगण ने अभियंताओं की मौनानुकूलता से 26 बीजकों के अधीन आच्छादित राशि का भुगतान लिया और तद्द्वारा सरकार को 1,03,95,583/- रुपयों की सीमा तक हानि कारित की गयी थी।

7. ऐसे अभिकथन पर, पथ निर्माण विभाग के अनेक अभियंताओं और मेसर्स कौशल्या आधारभूत संरचना विकास निगम लिमिटेड के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था।

8. अन्वेषण पूरा करने के बाद आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिसमें अन्य के साथ याची अर्थात् महेश मेहरा जो कंपनी के निदेशकों में एक हुआ करता है को भी कंपनी के साथ अभियुक्त बनाया गया था। आरोप-पत्र की प्रस्तुति पर दिनांक 4.2.2011 के आदेश के तहत, जो चुनौती के अधीन है, याची और अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध पूर्वोक्तानुसार अपराध का संज्ञान लिया गया था।

9. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सिन्हा निवेदन करते हैं कि कंपनी मेसर्स कौशल्या इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट कॉरपोरेशन लिमिटेड बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज और नेशनल स्टॉक एक्सचेंज के अधीन सूचीबद्ध प्रतिष्ठित कंपनी है और याची निदेशकों में से एक है जिसका काम के निष्पादन के साथ कुछ लेना-देना नहीं है बल्कि कंपनी ने परियोजना के निष्पादन से संबंधित कंपनी का प्रतिनिधित्व करने के लिए किसी नागवन्त पांडे को नामांकित किया था और यह नागवंत पांडे तीन बीजकों को प्रस्तुत करता प्रतीत होता है जिसे कूटरचित बताया गया है और इसके अतिरिक्त शेष बीजकों पर किसी ओम प्रकाश द्वारा हस्ताक्षर किया गया है और नागवन्त पांडे द्वारा दाखिल किया गया है।

10. इस प्रकार, यह अभियोजन का मामला है कि उन बीजकों के आधार पर भुगतान लिए गए थे और तद्द्वारा जो भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष अथवा परिस्थितिजन्य अभिकथन हैं, यह नागवन्त पांडे के विरुद्ध है जिसने अभिकथित रूप से कूटरचित बिलों की प्रस्तुति पर बिल राशि का भुगतान लिया किंतु याची निदेशकों में से एक है और काम के निष्पादन और तब कूटरचित बिलों की प्रस्तुति से संबंधित मामले में उसकी अंतर्ग्रस्तता दर्शाने वाले किसी अभिकथन के बिना याची का अभियोजन बिल्कुल अवैध है।

11. इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची, जो निदेशकों में से एक है, के प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत पर अभियुक्त बनाया गया प्रतीत होता है यद्यपि इस अपराध की प्रकृति में यह सिद्धांत प्रयोज्य कभी नहीं होगा और कि जब तक कंपनी के निदेशक के विरुद्ध अपराध की कारिता

से संबंधित विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है, निदेशक को प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है।

12. इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **एस॰ के॰ अलघ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2008)5 SCC 662** और **मकसूद सैय्यद बनाम गुजरात राज्य, (2008)5 SCC 668,** मामलों में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

13. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि संज्ञान लेने वाला आदेश दोषपूर्ण होने के नाते अभिखंडित किए जाने का दायी है।

14. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री खान प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 9 में दिए गए बयान को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन करते हैं कि अभियन्ताओं एवं कंपनी के बीच हुए करार के मुताबिक पंचाट किए गए काम के निष्पादन के लिए 1245.968 एम॰ टी॰ बिटुमन की उपाप्ति आवश्यक थी किंतु अभियुक्तगण ने अन्य अभियुक्तगण, विशेषत: अभियन्ताओं के साथ षड्यंत्र कर के काम निष्पादित करने के लिए सरकारी तेल कंपनी से बिटुमन की कम मात्रा उपाप्त किया। काम निष्पादित करने के लिए 963.635 एम॰ टी॰ बिटुमन और न कि बिटुमन की कुल मात्रा जो काम के निष्पादन में उपयोग किए जाने के लिए आवश्यक थी की उपाप्ति दर्शाते हुए विभाग के समक्ष 59 बीजकों को प्रस्तुत किया गया था। 59 बीजकों में से 1,08,95,583/- रुपयों के मूल्य वाले बिटुमन की 560.959 एम॰ टी॰ आच्छादित करने वाले 26 बीजकों को कूटरचित पाया गया था। उस तरीके से अभियुक्तगण ने अन्य अभियुक्तगण के साथ षडयंत्र करके सरकार को दोषपूर्ण हानि एवं अभियुक्तगण को दोषपूर्ण तत्सम लाभ कारित किया।

15. पूर्वोक्तानुसार तथ्यों में, यह निवेदन किया गया था कि जब सी॰ बी॰ आई॰ ने अन्वेषण के दौरान इस याची की सदोषता पाया था, संज्ञान लेने वाले आदेश के अभिखंडन की आवश्यकता नहीं है।

16. इसके विरुद्ध याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सिन्हा निवेदन करते हैं कि प्रति शपथ पत्र के पैराग्राफ 9 में जो भी कथन है, वह विनिर्दिष्ट नहीं हैं बल्कि सामान्य प्रकृति का है जबकि विनिर्दिष्ट बयान प्रतिशपथ पत्र के अन्य पैराग्राफों में दिए गए हैं जो दर्शाएगा कि सी॰ बी॰ आई॰ ने अन्वेषण के क्रम में पाया कि किसी नागवंत पांडे को काम जिसे कंपनी को पंचाट किया गया था की देखभाल के लिए कंपनी ने नामांकित किया था और नागवंत पांडे ने तीन बीजकों को प्रस्तुत किया था जिन पर उसके द्वारा हस्ताक्षर किया गया था और इसके अतिरिक्त, ओम प्रकाश द्वारा हस्ताक्षरित अन्य बीजकों को भी नागवंत पांडे द्वारा प्रस्तुत किया गया था और उस स्थिति में याची के विरुद्ध उसकी सदोषता दर्शाने वाला विनिर्दिष्टत: कुछ भी नहीं है और इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

17. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि आरंभ में कंपनी अर्थात् मेसर्स कौशल्या इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट कॉरपोरेशन लिमिटेड और अभियन्ताओं जिन पर कंपनी के साथ दुरभिसंधि करने का संदेह था के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गयी थी और कि कंपनी ने कूटरचित बीजकों के आधार पर धन निकाल कर राजकोष को हानि कारित किया था। किंतु अन्वेषण के दौरान, कंपनी और इसके दो निदेशकों को अभियुक्त बनाया गया था। उनमें से एक की मृत्यु हो गयी है जबकि दूसरा निदेशक याची है किंतु उसका कंपनी को पंचाट किए गए काम के निष्पादन के मामले से कुछ भी लेना-देना प्रतीत नहीं होता है क्योंकि याची का मामला यह है कि कंपनी को पंचाट किए गए काम की देखभाल के लिए किसी नागवंत पांडे को नामांकित किया गया था और इस तथ्य को सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा अन्वेषण के दौरान सही पाया गया है। अभियोजन के आगे

मामले के मुताबिक, नागवंत पांडे ने तीन बीजकों पर हस्ताक्षर करने के बाद इन्हें इनके भुगतान के लिए विभाग के समक्ष प्रस्तुत किया था और शेष बीजकों जिन्हें कूटरचित बताया जाता है, ओम प्रकाश द्वारा हस्ताक्षरित किया गया था किंतु इसे नागवंत पांडे द्वारा प्रस्तुत किया गया था और अभियोजन मामले के मुताबिक नागवंत पांडे ने कूट रचित बीजकों के अधीन आच्छादित राशि का भुगतान लिया था। उस स्थिति में, संपूर्ण सदोषता उक्त अभियुक्त की प्रतीत होती है किंतु सी॰ बी॰ आई॰ ने मात्र इस कारण से याची के विरुद्ध भी आरोप-पत्र दाखिल किया है क्योंकि वह निदेशक हुआ करता है क्योंकि यह पहले ही कथन किया गया है कि यह दर्शाने के लिए कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया गया है कि याची का कंपनी को पंचाट किए गए काम के निष्पादन अथवा कूटरचित बीजकों के आधार पर धन निकालने से संबंधित मामले के साथ कुछ लेना-देना है।

18. इस प्रकार, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या इन परिस्थितियों के अधीन याची को कंपनी द्वारा अभिकथित रूप से किए गए अपराध की कारिता के लिए प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत पर अभियोजित किया जा सकता है।

19. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए मुझे बहुत दूर जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह विवाद्यक पहले ही विनिश्चित किया जा चुका है।

20. इस संबंध में मैं **एस॰ के॰ अलघ बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:-

> *^^pfd LohÑr :i l diuh d uke e Mk¶V fudky x, Fk Hky gh vihykFkh bldk çcèk fun'kd Fkk] ml nM lfgrk dh èkkjk 406 d vèkhu vijkèk djrk gvk ugh dgk tk ldrk gA ;fn vkj tc lfofèk ,lh fofèkd dYiuk vuè;kr djrh g] ;g bld fy, fofufn"Vr% çkoèkkfur djrh gA lfofèk d vèkhu vfèkdfFkr fdlh çkoèkku dh vuifLFkfr e] diuh d fun'kd vFkok depkjh dk Lo; diuh }kjk fd, x, fdlh vijkèk d fy, çfrufèkd :i l nk;h vfHkfuèkkfjr ugh fd;k tk ldrk gA***

21. आगे, **मकसूद सैय्यद बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को ध्यान में लिया जा सकता है जिसमें निम्नलिखित संप्रेक्षित किया गया है:-

> *^^tgk nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 156 (3) vFkok èkkjk 200 d fucèkuku lkj nkf[ky ifjokn ;kfpdk ij vfèkdkfjrk dk ç;kx fd;k tkrk g] nMkfèkdkjh dk viu food dk bLreky dju dh vko';drk gA nM lfgrk] tc diuh vfHk;Dr g] diuh d çcèk fun'kd vFkok fun'kdk dh vkj l çfrufèkd nkf;Ro tkMu d fy, dkb çkoèkku vrfo"V ugh djrh gA fo}ku nMkfèkdkjh Lo; l lgh ç'u iNu e foQy jg vFkkr D;k ifjokn ;kfpdk] Hky gh bl ijh rjg l lgh ekuk tk, vkj bldh li.krk e bl lgh ekuk tk,] bl fu"d"k dh vkj y tk,x fd oreku çR;Fkhx.k fdlh vijkèk d fy, futh :i l nk;h FkA cd dkjikjV fudk; gA çcèk fun'kd vkj fun'kd dk çfrufèkd nkf;Ro mnHkr gkxk c'kr lfofèk e ml fufeÙk dkb çkoèkku fo|eku gkA fufooknr% lfofèk;k dk ,l çfrufèkd nkf;Rok dk fu;r dju oky çkoèkkuk dk vrfo"V djuk gkxkA mDr ç;ktu l Hkh vè;if{kr vfHkdFku] tk çfrufèkd nkf;Ro xfBr dju okyk çkoèkkuk dk vkÑ"V djx] dju d fy, ;g ifjoknh dh vkj l ckè;dkjh gA***

22. इस प्रकार, यह स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी संविधि के अधीन किए गए अपराध की कारिता के लिए प्रबंध निदेशक अथवा निदेशक को प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित

किया जा सकता है यदि वह संविधि वैसा प्रावधानित करती है। उस मामले में भी जहाँ संविधि प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के कारण प्रबंध निदेशक अथवा निदेशक का अभियोजन अनुध्यात करती है, अध्यपेक्षित अभिकथन, जो प्रतिनिधिक दायित्व गठित करने वाले प्रावधानों को आकृष्ट करेंगे, करना परिवादी की ओर से बाध्यकारी है।

23. यह गौर किया जाए कि दंड संहिता, उसके लिए विनिर्दिष्टत: प्रावधानित करने वाले प्रावधानों के सिवाए पक्षकार की ओर से प्रतिनिधिक दायित्व अनुध्यात नहीं करती है यदि उसे अपराध की कारिता के लिए प्रत्यक्षत: आरोपित नहीं किया गया है।

24. इस प्रकार, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि याची को अपराध में उसकी सदोषता दर्शाने वाले किसी अभिकथन की अनुपस्थिति में कंपनी अथवा अन्य अभियुक्तगण द्वारा किए गए बताए गए अपराध के लिए अभियोजित नहीं किया जा सकता है और तद्द्वारा न्यायालय याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता करता प्रतीत होता है और इसलिए, संज्ञान लेने वाला दिनांक 4.2.2011 का आदेश और आर॰ सी॰ सं॰ 19 (A) वर्ष 2009 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जाती है। जहाँ तक याची का संबंध है।

परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

25. यह कहना अनावश्यक है कि कंपनी और अन्य अभियुक्तगण विचारण का सामना करेंगे।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

देवसागर सिंह

cuke

बिहार राज्य एवं अन्य

C.W.J.C. No. 3452 of 1998 (R). Decided on 6th March, 2014.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धाराएँ 46 एवं 71A—पुनर्स्थापन–संपत्ति वर्ष 1938-39 में याची के पिता के विरुद्ध डिक्री के निष्पादन में नीलामी में बेची गयी थी–तत्पश्चात् भूमि काफी पहले वर्ष 1941 में नीलामी-खरीददार द्वारा निष्पादित हुकुमनामा के फलस्वरुप बंदोबस्त की गयी थी–तत्पश्चात्, वर्ष 1975 में रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप भूमि याचीगण को अंतरित की गयी थी और याची तथा उसके भ्रातागण तब से जमीन पर लगातार काबिज हैं–भूमि उनके नामों में नामांतरित भी की गयी है–धारा 46 एवं धारा 71A का उल्लंघन नहीं हुआ है–पुनर्स्थापन के लिए आवेदन भी 40 वर्ष के अयुक्तियुक्त विलंब के बाद दाखिल किया गया है–पुनर्स्थापन का आदेश अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 12 से 15)

अधिवक्तागण.–Mr. Ram Prakash Singh, For the Petitioner; Mr. Vijayant Verma, For the State.

न्यायालय द्वारा.–इस रिट याचिका में याची ने लोहरदगा एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण सं॰ 385/1988 में आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची, प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा पारित दिनांक 25.8.1998 के आदेश (परिशिष्ट-6) के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा विद्वान आयुक्त ने याची का पुनरीक्षण खारिज कर दिया है और एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 20-R-15/80-81 में पारित दिनांक 11.10.1988 के आदेश (परिशिष्ट-4) जिसके द्वारा अपीलीय न्यायालय ने एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 164/79-80 में सब

डिविजनल अधिकारी, लोहरदगा द्वारा पारित दिनांक 21.4.1980 के आदेश (परिशिष्ट 3) के विरुद्ध दाखिल अपील खारिज कर दिया था, को मान्य ठहराया है। याची ने उक्त अपीलीय आदेश (परिशिष्ट 4) और विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी, लोहरदगा द्वारा पारित आदेश (परिशिष्ट 3) के अभिखंडन के लिए भी प्रार्थना किया है।

2. इस रिट याचिका को उद्भूत करने वाले संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 सुखराम महली ने ग्राम चाऊ, पी॰ एस॰ सेनहा, जिला लोहरदगा के खाता सं॰ 34, भूखंड सं॰ 476, क्षेत्रफल 78 डिसमिल की भूमि के पुनर्स्थापन की प्रार्थना करते हुए सब डिविजनल अधिकारी, लोहरदगा के समक्ष छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के प्रावधान के अधीन आवेदन दाखिल किया था। इसे एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 164/1979 के रूप में दर्ज किया गया था।

3. याची उक्त मामले में उपस्थित हुआ था और अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए अपना उत्तर दाखिल किया कि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 46 अथवा किसी अन्य प्रावधान का उल्लंघन नहीं हुआ है क्योंकि प्रश्नगत भूमि केस सं॰ 131 वर्ष 1938-39 में भूमि के विक्रय के प्रमाण पत्र के निष्पादन में नीलामी में बेची गयी थी। समाहरणालय, राँची के नाजिर ने वर्ष 1939 में नीलामी खरीददार, प्रबंधक, मसमानो एनकंबर्ड एस्टेट को भूमि का कब्जा दिया था। उसका विक्रय दिनांक 18.11.1940 के आदेश द्वारा संपुष्ट किया गया था। तत्पश्चात् नीलामी खरीददार ने दिनांक 25.7.1941 के हुकुमनामा के फलस्वरुप किसी अंडू ठाकुर को प्रश्नगत भूमि बंदोबस्त किया था। याची और उसके भाईयों ने वर्ष 1975 में रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप उक्त अंडू ठाकुर से उक्त भूमि खरीदा था। छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 46 अथवा किसी अन्य प्रावधान का उल्लंघन नहीं किया गया है और छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A आकृष्ट नहीं होती है।

4. विद्वान सब-डिविजनल अधिकारी ने उक्त तथ्य तथा विधि का उल्लंघन किए बिना छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के अधीन पुनर्स्थापन आदेश पारित किया।

5. उक्त आदेश के विरुद्ध, याची ने अपर समाहर्ता के समक्ष अपील दाखिल किया था जिसे एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 20R-15/80-81 के रूप में दर्ज किया गया था। विद्वान अपीलीय न्यायालय ने भी आदेश मान्य ठहराया और दिनांक 11.10.1988 के आदेश द्वारा याची की अपील खारिज कर दिया।

6. तत्पश्चात, याची ने आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची के समक्ष पुनरीक्षण-लोहरदगा एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण सं॰ 385/1988 दाखिल किया। विद्वान डिविजनल आयुक्त ने भी पुनर्स्थापन का आदेश मान्य ठहराया किंतु संप्रेक्षित किया कि याची ने प्रतिकूल कब्जा द्वारा अभिधान अर्जित किया है और मुआवजा के भुगतान पर भूमि पुनर्स्थापित की जाए। उस प्रयोजन से, उन्होंने छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के तृतीय परन्तुक के अधीन मुआवजा के विनिश्चयकरण के लिए मामला विद्वान विशेष अधिकारी-सब-डिविजनल अधिकारी के पास वापस भेज दिया।

7. याची ने उक्त आदेशों को इस आधार पर चुनौती दिया है कि छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 46 अथवा किसी अन्य प्रावधान का उल्लंघन नहीं किया गया है और वर्तमान मामले में धारा 71A प्रयोज्य नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रश्नगत भूमि डिक्री के निष्पादन में प्रमाण पत्र कार्यवाही में नीलाम की गयी थी जिसे चुनौती नहीं दी गयी है अथवा विधि के किसी न्यायालय द्वारा कपटपूर्ण अभिनिर्धारित नहीं किया गया है। नीलामी विक्रय सात दशकों से अधिक पहले हुआ। याची पश्चातवर्ती खरीददार है और इस प्रकार धारा 71A के अधीन उसके विरुद्ध कार्यवाही पोषणीय नहीं है।

8. राज्य प्रत्यर्थीगण ने प्रतिशपथ पत्र दाखिल करके रिट याचिका का विरोध किया है।

9. किंतु, समाचार पत्र में विज्ञापन द्वारा नोटिस के तामीले के बावजूद प्रत्यर्थी सं॰ 5 मामले में उपस्थित नहीं हुआ है।

10. यद्यपि प्रतिशपथ पत्र में राज्य ने विद्वान आयुक्त के आदेश का समर्थन किया है, उन्होंने वर्ष 1939-40 के नीलामी विक्रय को विवादित नहीं किया है।

11. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्री पर विचार किया है।

12. स्वीकृत रूप से, संपत्ति काफी पहले वर्ष 1938-39 में याची के पिता रघु चौकीदार के विरुद्ध डिक्री के निष्पादन में नीलामी में बेची गयी थी। तत्पश्चात, भूमि काफी पहले वर्ष 1941 में नीलामी खरीददार–महाप्रबंधक, वार्ड एन्ड एनकंबर्ड एस्टेट द्वारा निष्पादित हुकुमनामा के फलस्वरुप बंदोबस्त की गयी थी। तत्पश्चात से भूमि Settlee (सेटली) अंडू ठाकुर के कब्जा में थी। अंडू ठाकुर के विधिक उत्तराधिकारियों ने उक्त भूमि दिनांक 3.6.1975 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप याची और उसके भाईयों को अंतरित किया। याची और उसके भाई तत्पश्चात से भूमि पर लगातार काबिज हैं। भूमि उनके नामों में नामांतरित भी की गयी है।

13. उक्त की दृष्टि में भूमि को छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 46 अथवा किसी अन्य प्रावधान के उल्लंघन में अंतरित किया गया नहीं कहा जा सकता है अथवा इसे कपटपूर्ण अंतरण नहीं कहा जा सकता है। संव्यवहार वर्ष 1939-40 में हुआ। इस प्रकार, छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A प्रयोज्य नहीं है। इसके अतिरिक्त, पुनर्स्थापन के लिए आवेदन लगभग 40 वर्ष बीतने के बाद अर्थात् अयुक्तियुक्त विलंब के बाद दाखिल किया गया था और उस आधार पर भी छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के अधीन आवेदन पोषणीय नहीं था।

14. विद्वान सब डिविजनल अधिकारी–सह–विशेष अधिकारी, अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, अपीलीय प्राधिकारी–विद्वान अपर समाहर्ता और आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन ने पुनरीक्षण में विधि की उक्त अवस्था का अधिमूल्यन नहीं किया है और बिल्कुल गलत एवं अवैध आदेश पारित किया है।

15. पूर्वोक्त कारणों से, लोहरदगा एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण सं॰ 385/1988 में आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा पारित दिनांक 25.8.1998 का आदेश (परिशिष्ट–6), एस॰ ए॰ आर॰ अपील सं॰ 20R-15/80-81 में विद्वान अपर समाहर्त्ता द्वारा पारित दिनांक 11.10.1988 का आदेश (परिशिष्ट–4) और एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 164/79-80 में सब डिविजनल अधिकारी, लोहरदगा द्वारा पारित दिनांक 21.4.1980 का आदेश (परिशिष्ट–3) अभिखंडित किया जाता है।

16. यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

धीरेन्द्र कुमार सिन्हा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 310 of 2013. Decided on 21st January, 2014.

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971—धारा 19—अपील–अवमान के लिए दंड देने के लिए अपनी अधिकारिता के प्रयोग में पारित केवल उच्च न्यायालय के आदेश के विरुद्ध अंतरा–न्यायालय अपील पोषणीय है–अपील अपोषणीय होने के चलते खारिज की गयी।

(पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Binod Kumar, For the Appellant; Mr. R.R. Mishra, For the Resp.-State; For the Respondent Nos. 2 to 4, Mr. Bhawesh Kumar.

आदेश

यह लेटर्स पेटेन्ट अपील अवमान मामला सं॰ 63 वर्ष 2013 में पारित विद्वान एकल न्यायाधीश के दिनांक 6.8.2013 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसमें और जिसके द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5564 वर्ष 2012 में पारित सेवानिवृत्ति देयों के भुगतान के आदेश का सारवान रूप से अनुपालन किया गया है और अवमान याचिका निपटाते हुए इसे संप्रेक्षित किया गया है। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *^^vr% bu ifjfLFkfr;k e] ;g çrhr gkrk g fd MCY;0 ih0 ,l0 l0 5564 o"k 2012 e ikfjr vijkèk d vèkhu vkn'k dk lkjoku :i l vuikyu fd;k x;k gA ;fn çR;FkhZ@fojkèkh i{kdkj rkfdd vkn'k d erkfcd vko';d Hkxrkuk dk fdLrk e Hkxrku dju e foQy jgrk g] ;kph dk u, vkonu d :i e bl U;k;ky; d è;ku e yku dh NV gkxhA*
>
> *voeku ;kfpdk fuiVk;h tkrh gA***

2. अवमान याचिका के निपटान से व्यथित होकर अपीलार्थी ने इस अंतरा–न्यायालय अपील को दाखिल किया है।

3. श्री भवेश कुमार प्रत्यर्थीगण की ओर से नोटिस स्वीकार करते हैं।

4. हमने उपस्थित होने वाले पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों को सुना है।

5. अवमान याचिका को निपटाते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश ने संप्रेक्षित किया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5564 वर्ष 2012 में पारित दिनांक 9.10.2012 के न्यायालय के आदेश का सारवान रूप से पालन किया गया है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने आगे संप्रेक्षित किया है कि यदि प्रत्यर्थीगण/विरोधी पक्षकार तार्किक आदेश के मुताबिक आवश्यक भुगतानों का किश्तों में भुगतान करने में विफल होते हैं; याची को नए आवेदन के रूप में इसे न्यायालय के ध्यान में लाने की छूट होगी।

6. न्यायालय अवमान अधिनियम की धारा 19 के मुताबिक अवमान के लिए दंड देने के लिए अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालय के किसी निर्णय अथवा आदेश के विरुद्ध अधिकार बतौर अपील की जाएगी। धारा 19 (1) का पठन निम्नलिखित है:–

> *"19. **vihy-**&(1) voekuuk d fy; nM nu d vuh vfèkdkfjrk d ç;kx e fd; x; mPp U;k;ky; d fdlh vkn'k ;k fofu'p; l lkfèkdkj rc vihy gkxh&*
>
> *(a) U;k;ky; d nk l vU;u U;k;kèkh'kk dh U;k;ihB dk gkxh tcfd vkn'k ;k fofu'p; ,d U;k;kèkh'k dk gk]*
>
> *(b) mPpre U;k;ky; dk gkxh tcfd vkn'k ;k fofu'p; fdlh U;k;ihB dk gk%*
>
> *ijUr tc vkn'k ;k fofu'p; fdlh l?k jkT;{k= e U;kf;d vk;Dr d U;k;ky; dk gk rk ,lh vihy mPpre U;k;ky; dk gkxhA***

7. धारा 19 (1) के पठन से यह स्पष्ट है कि केवल अवमान के लिए दंड देने के लिए अधिकारिता के प्रयोग में पारित उच्च न्यायालय के आदेश के विरुद्ध अंतरा–न्यायालय अपील पोषणीय है।

8. विद्वान एकल न्यायाधीश ने संप्रेक्षित किया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5564 वर्ष 2012 में पारित आदेश का सारवान रूप से पालन किया गया है और अवमान के लिए दंड देने के लिए अपनी अधिकारिता के प्रयोग में कोई आदेश पारित नहीं किया गया है। यह अंतरा–न्यायालय अपील पोषणीय नहीं है और वर्तमान अपील पोषणीय नहीं होने के कारण खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

महावीर महतो उर्फ महाबीर महतो एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1194 of 2013. Decided on 1st May, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 306/34 एवं 107—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—आत्महत्या का दुष्प्रेरण–संज्ञान–यदि अभियुक्त ने अभिकथित रूप से 5 लाख रुपयों की मांग किया था और यदि इसको परिपूर्ण नहीं किए जाने के कारण मृतका एवं अन्य को समस्त प्रकार के संकटों में डालने की धमकी दी गयी थी, याचीगण की आपराधिक मनः स्थति नहीं हो सकती थी कि ऐसी धमकी के कारण मृतका आत्महत्या कर लेगी क्योंकि अभिकथित कृत्यों को अभियुक्त द्वारा प्रत्यक्ष अथवा सक्रिय कृत्य नहीं कहा जा सकता है जो मृतका को आत्महत्या करने की ओर ले गया–याचीगण के कृत्यों को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 107 के निबंधनानुसार दुष्प्रेरण का कृत्य नहीं कहा जा सकता है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित।

(पैराएँ 18 से 20)

निर्णयज विधि.–(2011)3 SCC 626—Referred; (2002)2 SCC 619; (2006)9 SCC 794—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajan Raj, For the Petitioners; APP., For the State; Mr. Prabhat Kumar Sinha, For the O.P. No. 2.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन दिनांक 2.1.2013 के आदेश जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 306/34 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान याचीगण के विरुद्ध लिया गया है सहित रामगढ़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 23 वर्ष 2011 (एस॰ टी॰ सं॰ 78 वर्ष 2013) की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

3. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजन राज निवेदन करते हैं कि अभियोजन का मामला यह है कि याची सं॰ 1 की पुत्री का विवाह सूचक के पुत्र के साथ वर्ष 1999 में हुआ। विवाह संबंध से वर्ष 2001 में एक पुत्र का जन्म हुआ। दिनांक 19.7.2005 को याची सं॰ 1 की पुत्री आरती देवी की मृत्यु हो गयी जब वह अपने ससुराल में थी और उसके लिए याची सं॰ 1 द्वारा यू॰ डी॰ केस दर्ज किया गया था। बाद में, याची सं॰ 1 द्वारा एक अन्य मामला दर्ज किया गया था जिसे भारतीय दंड संहिता

की धारा 304B के अधीन दर्ज किया गया था। सूचक के पुत्र की पत्नी की मृत्यु हो गयी थी, सूचक के पुत्र ने वर्ष 2006 में दूसरा विवाह किया।

4. आगे मामला यह है कि दिनांक 25.12.2010 को एफ॰ एस॰ एल॰ रिपोर्ट प्राप्त की गयी थी जिसमें रिपोर्ट किया गया था कि विसरा कुछ जहर अंतर्विष्ट कर रहा था। इस पर, दिनांक 2.2.2011 को सूचक के पुत्र ने अपनी दूसरा पत्नी एवं पुत्री के साथ आत्महत्या कर लिया। इसी दिन पर अर्थात दिनांक 2.2.2011 को प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जिसे भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दर्ज किया गया था।

5. अभियोजन का आगे मामला यह है कि जब मामला आरंभ हुआ, अभियुक्तगण (याचीगण) ने मांग रखना शुरू किया और इसलिए, पंचायती बुलायी गयी थी जिसमें यह विनिश्चित किया गया था कि याचीगण 1,50,000/- रुपयों के भुगतान पर मामले में सुलह कर लेंगे जिसका भुगतान अभिकथित रूप से याचीगण को किया गया था किंतु धन प्राप्त करने के बावजूद याचीगण ने सुलह नहीं किया था बल्कि याचीगण की ओर से और भी पाँच लाख रुपयों की मांग की गयी थी। जब इसका भुगतान नहीं किया गया था, यह अभिकथित किया गया था कि अभियुक्तगण इस प्रभाव की धमकी देने लगे थे कि यदि राशि नहीं दी जाती है, वे याचीगण का जीवन नर्क बना देंगे। चूँकि टेलीफोन पर लगातार धमकी दी जा रही थी, सूचक के पुत्र ने अपनी पत्नी और संतानों के साथ आत्महत्या कर लिया और तद्द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन मामला दर्ज किया गया था।

6. आरोप पत्र दाखिल किए जाने पर जब दिनांक 2.1.2013 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया था, इसे इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी।

7. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजन राज निवेदन करते हैं कि धन प्राप्त करने के बावजूद मामले में सुलह नहीं करने एवं आगे मांग करने और तब अनेक समस्याओं को सृजित करने की धमकी देने के संपूर्ण अभिकथन को स्वीकार कर भी लिया जाए, उन कृत्यों को अभियुक्तगण की ओर से प्रत्यक्ष अथवा सक्रिय कृत्य नहीं कहा जा सकता है जो मृतक को आत्महत्या करने की ओर ले गया और कि भले ही वे धमकियाँ दी गयी थी, वे कभी नहीं उपदर्शित करती हैं कि याचीगण का भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध करने की कोई आपराधिक मन:स्थिति थी।

8. इस संबंध में, याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता **एम॰ मोहन बनाम राज्य, आरक्षी उप अधीक्षक के प्रतिनिधित्व में राज्य, (2011)3 SCC 626** मामले में निर्णय पर विश्वास करते हैं।

9. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि न्यायालय ने अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

10. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभात कुमार सिन्हा निवेदन करते हैं कि विनिर्दिष्ट अभिकथन है कि अभियुक्तगण ने इस बहाना पर 1,50,000/- रुपयों की राशि लिया था कि वे सुलह कर लेंगे किंतु मामले में सुलह करने के बजाए अभियुक्तगण पुन: 5 लाख रुपया मांगने लगे। जब इसका भुगतान नहीं किया गया था, अभियुक्तगण लगातार फोन पर धमकी देने लगे कि वे उनका जीवन नर्क बना देंगे जिसने मृतक को इतना चिंतित किया कि उसने अपनी पत्नी एवं पुत्री के साथ आत्महत्या कर लिया और तद्द्वारा याचीगण का कृत्य निश्चय ही भारतीय दंड संहिता की धारा 107 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार दुष्प्रेरण का कृत्य कहा जा सकता है।

11. इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि समरुप स्थिति में, पत्नी पर क्रूरता के बार–बार कारित किए जाने पर जब पत्नी ने आत्महत्या कर ली, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **साहेब राव एवं एक अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2006)9 SCC 794,** में अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध बनता है।

12. आगे यह निवेदन किया गया था कि बार–बार धमकी दिए जाने के कारण मृतक को मानसिक यातना के अध्यधीन किया गया था और उस कारण यदि मृतक ने आत्महत्या कर लिया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन मामला निश्चय ही बनता है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित करने की आवश्यकता कभी नहीं है।

13. इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **गणनाथ पटनायक बनाम उड़ीसा राज्य (2002)2 SCC 619**, मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

14. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि संज्ञान लेने वाले आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

15. यह दोहराया जाए कि अभियोजन का मामला यह है कि जब याची सं॰ 1 की पुत्री की मृत्यु अपने ससुराल में हो गयी, पति एवं परिवार के अन्य सदस्यों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन वर्ष 2005 में मामला दर्ज किया गया था। बाद में, सूचक के पुत्र ने वर्ष 2006 में दूसरा विवाह किया। दिनांक 2.2.2011 को जब पति ने पत्नी और संतान के साथ आत्महत्या कर लिया, मामला दर्ज किया गया था जिसे भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन इस अभिकथन पर दर्ज किया गया था कि याचीगण सूचक के पास आए और कहा कि यदि धन का भुगतान किया जाएगा, वे मामला वापस ले लेंगे और तद्द्वारा अभिकथित रूप से 1,50,000/- रुपयों की राशि का भुगतान याचीगण को किया गया था किंतु उसके बावजूद मामला वापस नहीं लिया गया था बल्कि याचीगण पुनः 5 लाख रुपयों की राशि की मांग करने लगे। जब इसका भुगतान नहीं किया गया था, टेलीफोन के माध्यम से धमकी दी गयी थी कि यदि भुगतान नहीं किया जाएगा, वे उनको समस्त प्रकट के संकट में डालेंगे। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, वह मानसिक क्रूरता के तुल्य है और उस कारण मृतक ने आत्महत्या किया।

16. इस प्रकार, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या पूर्वोक्त समस्त कृत्य भारतीय दंड संहिता की धारा 107 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार दुष्प्रेरण के कृत्य कहे जा सकते हैं।

17. इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए मुझे अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस संबंध में सिद्धांत **एम॰ मोहन बनाम राज्य, आरक्षी उप अधीक्षक के प्रतिनिधित्व में (ऊपर),** मामले में अधिकथित किया गया प्रतीत होता है जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया है कि धारा 306 के अधीन अपराध करने के लिए स्पष्ट आपराधिक मनः स्थिति होनी चाहिए। यह अभियुक्त द्वारा प्रत्यक्ष अथवा सक्रिय कृत्य की कारिता आवश्यक बनाता है जो मृतक को कोई और विकल्प नहीं होने के चलते आत्महत्या की ओर ले गया और ऐसा कृत्य पीड़ित को उस अवस्था में लाने की ओर आशयित होना होगा कि वह आत्महत्या कर ले।

18. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित उक्त सिद्धांत के संदर्भ में यह देखा जाना है कि क्या अभियुक्तगण के कृत्य दुष्प्रेरण के तुल्य हैं। यदि अभियुक्तगण ने अभिकथित रूप से 5 लाख रुपयों की मांग रखी थी और इसे परिपूर्ण नहीं किए जाने के कारण मृतक एवं अन्य को समस्त प्रकार के संकटों में डालने की धमकी दी गयी थी, याचीगण की कोई आपराधिक मनः स्थिति नहीं हो सकती थी कि ऐसी धमकी के कारण मृतक आत्महत्या कर लेगा क्योंकि अभिकथित कृत्यों को अभियुक्तगण द्वारा किया गया

प्रत्यक्ष अथवा सक्रिय कृत्य कभी नहीं कहा जा सकता है जो मृतक को आत्महत्या करने की ओर ले गया और इसलिए याचीगण के कृत्य को भारतीय दंड संहिता की धारा 107 के निबंधनानुसार दुष्प्रेरण का कृत्य कभी नहीं कहा जा सकता है।

19. जहाँ तक विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से निर्दिष्ट निर्णय का संबंध है, वह मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर प्रयोज्य प्रतीत नहीं होता है क्योंकि उस मामले में तथ्य ये थे कि लगातार क्रूरता के अध्यधीन किए जाने के कारण पत्नी ने आत्म हत्या कर लिया था और इसलिए, माननीय न्यायालय ने याचीगण के कृत्य का प्रत्यक्ष संबंध मृतक के आत्महत्या करने का कृत्य के साथ पाया।

20. इन परिस्थितियों के अधीन, मैं पाता हूँ कि न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 306/34 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

21. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

प्रेम चंद्र त्रिपाठी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

C.M.P. No. 98 of 2014. Decided on 15th May, 2014.

सरकारी संविदा–पथ निर्माण–समय का विस्तार–कार्य की धीमी प्रगति के संबंध में प्रकथनों पर विचार करते हुए न्यायालय ठेकेदार को समय का विस्तारण प्रदान करने का इच्छुक नहीं है–करार के निबंधनानुसार ठेकेदार के विरुद्ध अग्रसर होने की स्वतंत्रता प्रत्यर्थी-राज्य को देते हुए याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–M/s A.K. Mehta, Rahul Kumar, For the Applicant (Res. No. 9); Mr. Vaibhav Kumar, For the Opp. Parties.

आदेश

यह सी॰ एम॰ पी॰ LWE-JH-2009-10-102 योजना के अधीन नवम प्रत्यर्थी को अधिनिर्णीत किलोमीटर संख्या-182 से 259.725 तक में एन॰ एच॰ 75 के निर्माण कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए सक्षम बनाने के लिए दिसंबर 2014 तक समय का विस्तारण इप्सित करते हुए (रिट याचिका में) नवम प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल की गयी है।

2. जनहित याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 6626 वर्ष 2011 कि॰ मी॰ सं॰ 182 से 259.725 तक, जिसे नवम प्रत्यर्थी को अधिनिर्णीत किया गया है, में एन॰ एच॰ 75 के निर्माण में जाँच करने के लिए निर्देश दिए जाने के लिए दाखिल की गयी थी। जनहित याचिका का नवम् प्रत्यर्थी को दिनांक 31.3.2014 तक काम पूरा करने का निर्देश देते हुए दिनांक 24.1.2014 के आदेश के तहत निपटायी गयी थी और नवम प्रत्यर्थी को इस न्यायालय के समक्ष समापन रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश भी दिया गया था। रिट याचिका में दिनांक 31.3.2014 तक काम पूरा करने का निर्देश नवम प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल पूरक प्रतिशपथ पत्र और ठेकेदार नवम प्रत्यर्थी (मेसर्स पाटिल कंस्ट्रक्शन लि॰) के लिए उपस्थित विद्वान

अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ मेहता के निवेदनों पर आधारित था। अब पूर्वोक्त विस्तार में पूर्वोक्त पथ का निर्माण कार्य पूरा करने के लिए दिसंबर, 2014 तक समय का विस्तार इप्सित करते हुए इस आवेदन को दाखिल किया गया है। सहायक शपथ पत्र में और सी॰ एम॰ पी॰ के साथ दाखिल पूरक शपथ पत्र में भी यह कथन किया गया है कि ठेकेदार काम निष्पादित करने के लिए मजदूर एवं मशीनरी से सुसज्जित है किंतु विधि व्यवस्था की समस्या के कारण और कच्चा माल की अनुपलब्धता के कारण भी और अतिवादी/नक्सली गतिविधियों की दृष्टि में ठेकेदार अनुबंधित समय के भीतर काम पूरा नहीं कर सका था। आगे यह कथन किया गया है कि स्टोन चिप्स की आपूर्ति के लिए ठेकेदार को खनन पट्टा प्रदान किया गया है किंतु वन विभाग ने वन मामला सं॰ 7 वर्ष 2013 आरंभ किया और वन अधिकारियों ने ठेकेदार के स्टोन चिप्स की विपुल मात्रा और क्रशर यूनिट को जब्त कर लिया। सहायक शपथ पत्र में आगे यह कथन किया गया है कि अधिहरण केस सं॰ 97 वर्ष 2013 में पारित अधिहरण आदेश के विरुद्ध ठेकेदार ने उपायुक्त–सह–अपीलीय प्राधिकारी, गढ़वा के समक्ष अपील किया है और अपीलीय प्राधिकारी ने दिनांक 10.1.2014 के आदेश के तहत जब्त वस्तुओं की निर्मुक्ति का निर्देश दिया है। आगे यह कथन किया गया है कि उपायुक्त–सह–अपीलीय प्राधिकारी, गढ़वा द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध वन विभाग ने सचिव, वन विभाग, भारत सरकार के समक्ष पुनरीक्षण याचिका सं॰ 22 वर्ष 2014 दाखिल किया है और यह न्याय निर्णयन के लिए लंबित है आवेदक (प्रत्यर्थी सं॰ 9) के अनुसार, केवल कच्चे माल की अनुपलब्धता के कारण ठेकेदार काम पूरा नहीं कर सका था और इसे प्राधिकारी से मामले में हस्तक्षेप करने का अनुरोध करते हुए और क्रशर सहित जब्त वस्तुओं की निर्मुक्ति के लिए निर्देश देने के लिए प्रधान सचिव, वन विभाग को संबोधित दिनांक 11.4.2014 के मेमो सं॰ 479 में मुख्य अभियंता को पत्र में निर्दिष्ट भी किया गया है।

3. शपथ पत्र और पूरक शपथ पत्र में प्रकथनों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए आवेदक (प्रत्यर्थी सं॰ 9) के विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ मेहता ने निवेदन किया कि काम पूरा करने के लिए ठेकेदार के पास पर्याप्त सामग्री होने पर भी कच्चे माल की अनुपलब्धता के कारण ठेकेदार अनुबंधित समय के भीतर काम पूरा नहीं कर सका था। आगे यह निवेदन किया गया है कि करार सं॰ 4F22-008-09 के तहत मेसर्स नंदलाल पांडे जैसे ठेकेदार के संबंध में, उक्त ठेकेदार ने छह वर्ष बाद भी काम पूरा नहीं किया है और चूँकि ऐसा है, राज्य प्राधिकारी उसी पथ पर काम करने वाले विभिन्न ठेकेदारों के संबंध में भिन्न और अधिमानी व्यवहार नहीं कर सकता है और इसलिए, नवम प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने दिसंबर, 2014 तक समय के विस्तार के लिए प्रार्थना करते हैं।

4. राज्य प्रत्यर्थी ने यह कथन करते हुए विस्तृत प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है कि दिनांक 31.1.2014 को प्रगति केवल 45.90% है जबकि यह दिनांक 8.6.2013 को 42% थी जो नौ माह की अवधि के दौरान मात्र 3.90% की वृद्धि उपदर्शित करती है। प्रत्यर्थीगण के अनुसार, दिनांक 21.4.2014 की तिथि तक कुल काम का केवल 46.40% पूरा किया गया है। प्रतिशपथ पत्र नवम प्रत्यर्थी (मेसर्स पाटिल कंस्ट्रक्शन लि॰) द्वारा निष्पादित काम की धीमी गति निर्दिष्ट करता है।

5. प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र के पैरा 10 में यह कथन किया गया है कि पहले नवम प्रत्यर्थी मेसर्स पाटिल कंस्ट्रक्शन लि॰ की संविदा दिनांक 22.10.2011 को समाप्त कर दी गयी थी किंतु उक्त समापन दिनांक 3.12.2011 को वापस ले लिया गया था और ठेकेदार को काम पूरा करने के लिए समस्त

आवश्यक कदमों को उठाने का निर्देश दिया गया था। आगे यह कथन किया गया है कि काम में तेजी लाने के लिए नवम प्रत्यर्थी मेसर्स पाटिल कंस्ट्रक्शन को अनेक पत्र भेजे गए थे और अनेक पत्रों के बावजूद काम की प्रगति धीमी थी। रिट याचिका में दिनांक 24.1.2014 के आदेश द्वारा ठेकेदार के वचन पर आधारित दिनांक 31.3.2014 तक काम पूरा करने का निर्देश नवम प्रत्यर्थी को देते हुए रिट याचिका निपटायी गयी थी।

6. प्रतिशपथ पत्र में, प्रत्यर्थीगण ने यह कथन भी किया है कि उन्होंने सद्भावपूर्वक विश्वास किया कि नवम प्रत्यर्थी मेसर्स पाटिल कंस्ट्रक्शन लि॰ दिनांक 31.3.2014 तक काम पूरा कर लेगा जैसा वचन नवम प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दिया गया था। आगे यह कथन किया गया है कि यह आशा करते हुए कि दिनांक 31.3.2014 तक काम पूरा कर लिया जाएगा, नवम प्रत्यर्थी के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गयी थी। प्रतिशपथ पत्र में, प्रत्यर्थीगण ने काम की धीमी गति/काम की अपूर्णता दर्शाते हुए अनेक फोटोग्राफ भी दाखिल किया है। यह कथन भी किया गया है कि एक अन्य ठेकेदार अर्थात् मेसर्स संजय अग्रवाल कंस्ट्रक्शन (अष्टम प्रत्यर्थी) ने काम का 96% से अधिक पूरा कर लिया है जिसे नवम प्रत्यर्थी (मेसर्स पाटिल कंस्ट्रक्शन लि॰) के साथ-साथ काम पूरा करने के लिए समय का विस्तार प्रदान किया गया था। नवम प्रत्यर्थी के विरुद्ध दांडिक कार्रवाई करने के लिए इस न्यायालय से अनुमति इप्सित की गयी है और यह निवेदन भी किया गया है कि नवम प्रत्यर्थी के विरुद्ध स्वप्रेरणा पर अवमान कार्यवाही आरंभ की जा सकती है।

7. प्रतिशपथ पत्र में किए गए प्रकथनों को ध्यान में रखकर और काम की धीमी गति के संबंध में प्रकथनों पर विचार करते हुए, हम नवम प्रत्यर्थी को समय का विस्तार प्रदान करने के इच्छुक नहीं हैं और तद्नुसार यह सी॰ एम॰ पी॰ खारिज किया जाता है। संविदा करार के निबंधनानुसार नवम प्रत्यर्थी के विरुद्ध अग्रसर होने की छूट राज्य प्रत्यर्थी को है।

8. परिणामस्वरुप, आई॰ ए॰ सं॰ 1985 भी निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

अनूप कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 4941 of 2001. Decided on 2nd July, 2014.

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881–धारा 138–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धारा 482–चेक का अनादर–चेक के निर्गत होने की तिथि को वैधानिक रूप से कोई प्रवर्तनीय ऋण या दायिता विद्यमान नहीं थी–एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध नहीं बनता है–दांडिक अभियोजन अभिखंडित। (पैराएँ 8, 11 एवं 13)

निर्णयज विधि.–2014 (2) JLJR 319 (SC)—Applied; (1996) 6 SCC 369—Distinguished; (1996)2 SCC 739—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. R.R. Nath, For the Petitioner; Mr. Gouri Shankar Prasad, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना। बार-बार बुलाने के बावजूद परिवादी-विपक्षी संख्या 2 की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ है, यद्यपि विद्वान अधिवक्ता का नाम

सूची में मौजूद है। 25.6.2004 को भी बार–बार बुलाने के बावजूद परिवादी विपक्षी संख्या 2 की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ था तथा विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता को एक अवसर प्रदान करने के लिए, मामला आज के लिए स्थगित कर दिया गया था। जैसा कि ऊपर कथित किया गया है आज भी परिवादी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है।

2. याची परिवाद केस संख्या 444 वर्ष 2001/टी॰ आर॰ संख्या 154 वर्ष 2001 में श्री के॰ कुमार, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 21.6.2001 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा परिवाद में किये गये कथन, तथा सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर परिवादी के बयान के आधार पर याची के विरूद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम (इसमें इसके पश्चात 'अधिनियम' के तौर पर निर्दिष्ट) की धारा 138 के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया है तथा विचारण का सामना करने के लिए उसके विरूद्ध समन निर्गत करने का आदेश किया गया था।

3. दिनांक 11.4.2002 के आदेश द्वारा यह आवेदन ग्रहण किया गया था तथा याची के विरूद्ध आगे की कार्यवाही स्थगित कर दी गयी थी। नोटिस पर परिवादी विपक्षी संख्या 2 उपस्थित हुआ था तथा प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया था।

4. परिवादी विपक्षी संख्या 2 ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग के समक्ष परिवाद मामला दाखिल किया था, जिसे परिवाद केस संख्या 444 वर्ष 2001 के तौर पर दर्ज किया गया था। परिवाद याचिका के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि 30.90 लाख रुपये के एक प्रतिफल पर पक्षकारों के बीच जमीन की बिक्री के लिए एक समझौता हुआ था। परिवाद याचिका में यह कथित किया गया है कि हजारीबाग में परिवादी के निवास पर निष्पादित समझौते के अनुसार भारतीय स्टेट बैंक, हनुमान नगर, पटना के खाता संख्या 01190005362 पर आहरित क्रॉस्ड अकाउन्ट पेई चेक संख्या MSHL/141/863540 के माध्यम से अग्रिम धन के तौर पर 2 लाख रुपये की एक राशि का भुगतान किया गया था। परिवादी ने भारतीय स्टेट बैंक में अपने खाते में 30.3.2001 को उक्त चेक प्रस्तुत किया था, परन्तु उसे उसके बैंकर द्वारा 24.4.2001 को लिखित में सूचित किया गया था कि उक्त चेक की राशि का भुगतान लेखीबाल अर्थात, याची द्वारा रोक दिया गया था। तत्पश्चात्, याची को नोटिस देने के उपरान्त, जो, जैसा कि कथित किया गया है, अनुत्तरित रही थी, तब सांविधिक अवधि के भीतर परिवाद याचिका दाखिल किया गया था। सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर परिवादी का कथन अभिलिखित किया गया था जिसमें उसने अपने मामले का समर्थन किया था, जिसके आधार पर अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 21.6.2001 के आक्षेपित आदेश द्वारा याची के विरूद्ध प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया है, जिसे वर्तमान आवेदन में चुनौती दी गयी है।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैधानिक है क्योकि याची द्वारा भुगतान रोका गया था तथा मामले के उस दृष्टि में अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध आकर्षित नहीं होगा क्योंकि उस धारा के अनुसार, यह अपराध तब ही बनता है जब चेक का आदर करने के लिए खाता में अपर्याप्त राशि होती है, या उस बैंक तथा खाताधारी के बीच एक समझौते द्वारा खाते से निकाली जाने वाली निर्धारित राशि से चेक की राशि अधिक होती है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि यह मामला याची द्वारा भुगतान को रोके जाने से संबंधित है, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 मामले में आकर्षित नहीं होगी। याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि किसी भी दशा में, परिवाद याचिका के ही अनुसार, चेक एक अग्रिम धन के तौर पर निर्गत किया गया था, परन्तु सौदा पक्षकारों के बीच अंतत: तय नहीं हो सका था तथा तद्नुसार, परिवादी तथा याची के बीच वैधानिक रूप ये कोई प्रवर्तनीय ऋण या अन्य

दायिता नहीं थी तथा इस आधार पर भी याची के विरूद्ध अधिनियम की धारा 138 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है।

6. याची के मामले के अनुसार, प्रश्नाधीन जमीन, जो पटना में अवस्थित है, की बिक्री के लिए 29 मार्च, 2001 को पक्षकारों के बीच एक समझौता हुआ था। परिवादी 30 मार्च, 2001 को पटना पहुँचा था तथा प्लॉट की नाप लेना प्रारंभ किया था, जब मुहल्ले के कुछ लोग आये थे तथा याची द्वारा जमीन की नाप लेने पर अभ्यापत्ति की थी, यह सूचित करते हुए कि जमीन परिवादी द्वारा पहले ही बेची जा चुकी थी। 30 मार्च, 2001 की ही संध्या में याची ने परिवादी से संपर्क करने का प्रयास किया था परन्तु उससे संपर्क नहीं कर सका था तथा यह प्रतीत होता है कि इसके उपरान्त याची ने अपने बैंक को चेक का भुगतान रोक देने के लिए अनुदेश दिया था तथा भुगतान रोक दिया गया था। याची का मामला यह है कि विक्रय विलेख उसके पक्ष में निष्पादित नहीं किया गया है, तथा इस प्रकार परिवादी को वैधानिक रूप से कुछ भी देय नहीं था। तद्नुसार, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची तथा परिवादी के बीच वैधानिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण या कोई दायिता नहीं थी तथा तद्नुसार, एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध नहीं बनता है।

7. अपने इस तर्क के समर्थन में कि मामला याची द्वारा भुगतान रोक देने के अनुदेश से संबंधित है तथा मामले की इस दृष्टि में अधिनियम की धारा 138 के अधीन मामले में अपराध आकर्षित नहीं होगा, याची के विद्वान अधिवक्ता ने **(1996) 6 SCC 369** में रिपोर्ट किये गये **के॰ के॰ सिद्धार्थन बनाम टी॰ पी॰ प्रवीण चन्द्रन एवं एक अन्य** में भारत के माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि चेक का भुगतान रोक देने की दशा में, अगर भुगतान को रोक देने के लिए चेक प्रस्तुत करने के पहले बैंकर को अनुदेश दिया गया था तथा चेक के प्रस्तुतीकरण के पहले इसके बारे में चेक के ऊपरीवाल को भी सूचित कर दिया गया था, तब एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध आकर्षित नहीं होगा।

8. अपने अन्य तर्क के समर्थन में कि चेक के निर्गत होने की तिथि को वैधानिक रूप से कोई प्रवर्तनीय ऋण या कोई दायिता अस्तित्व में नहीं थी। तथा, तद्नुसार, एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध नहीं बनता है, याची के विद्वान अधिवक्ता ने 2014(2) JLJR 319 (SC) में रिपोर्ट किये गये **मेसर्स इन्डस एयरवेज प्राईवेट लिमिटेड बनाम मेसर्स मैग्नम एविएशन प्राईवेट लिमिटेड एवं एक अन्य** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, उक्त मामले में अग्रिम धन के तौर पर चेक निर्गत किया गया था तथा, तत्पश्चात्, ऑर्डर रद्द कर दिया गया था। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नवत् विधि अधिकथित की है:–

> ^^19. ***---èkkjk 138 d vèkhu ,d nkfMd nkf;rk cuu d fy,] pd fy[k tku dh frfFk dk oèkkfud :i l dkb ioruh; _.k ;k vU; nkf;rk vfLrRo e gkuh pkfg,A*** *ge fnYyh mPp U;k;ky; d bl nf"Vdk.k dk Lohdkj dju e vleFk g fd ,l h lfonk ij gLrk{kj dju d le; vfxe Hkxrku d rkj ij pd d fuxeu dk vfLrRo'kh y nkf;rk d rkj ij ekuk tkuk g rFkk ,l pd dk vuknj ,u0 vkb0 vfèkfu;e dh èkkjk 138 d vèkhu ,d vijkèk d rY; gA fnYyh mPp U;k;ky; ,u0 vkb0 vfèkfu;e dh èkkjk 138 dh ifjfèk d vkx pyk x;k g ,l k vfHkfuèkkfjr djd fd ,u0 vkb0 vfèkfu;e dh èkkjk 138 vfèkfu;fer dju dk mí'; fu"Qy gk tk;xk vxj vkMj dju d ckn rFkk vfxe Hkxrku djd] Hkxrku jkd nu d vun'k fuxr fd; tkr g rFkk vkMj jí dj fn; tkr gA geu tk Åij ppk fd;k g mle]* ***vxj lkekuk dh [kjhn d fy, vfxe Hkxrku d rkj ij ,d pd fuxr fd;k tkrk***

*g rFkk fdlh dkj.k l Ø; vkMj viu rkfdd ifj.kke rd ugh y tk;k tkrk g bld jí dj fn; tku rFkk vU;Fkk d dkj.k rFkk lkefx;k ;k mu oLrvk] ftud fy, Ø; dk vkMj fd;k x;k Fkk] dh vkifrdÙkk }kjk vkifr ugh dh tkrh g] gekjh lfopkfjr jk; e] pd dk ,d vfLrRo'khy _.k ;k nkf;rk d fy, fy[kk x;k ugh dgk tk ldrk gA*** (tkj fn;k x;k)

9. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि परिवाद याचिका, तथा सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर अभिलिखित परिवादी के बयान के परिशीलन से, यह प्रकट है कि याची द्वारा चेक निर्गत किया गया था, जिसे बैंक में जमा किये जाने पर अनादृत किया गया था, तथा अपेक्षित वैधानिक नोटिस के उपरान्त, सांविधिक अवधि के भीतर परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी। तद्नुसार याची के विरूद्ध अपराध बनता है।

10. एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 निम्नवत् पठित है:–

*"138. **y[kk e tek jkf'k vi;kIr gku vkfn d dkj.k pdk dk vuknr gk tkuk-**&tgk fdlh 0;fDr }kjk fdlh cd e lèkkfjr viu [kkrk e l viu fdlh _.k vFkok vU; nkf;Ro l Hkkxr% ;k i.kr% mUekfpr gku d fy, dkb pd fn;k tkrk g vkj og pd [kkr e vi;kIr jkf'k gku d dkj.k vFkok igy l gh ml [kkr e l fdUgh vU; 0;fDr;k dk lnk; dju dk djkj dj fn; tku d dkj.k cd }kjk fcuk Hkxrku fd; iu% ykVk fn;k tkrk g] ogk ;g le>k tk;xk fd ml 0;fDr u vijkèk dkfjr fd;k g vkj ml bl vfèkfu;e d vU; micèkk ij çfrdy çHkko Mky fcuk] mruh vofèk d dkjkokl l tk fd nk o"k rd dh gk ldxh vFkok mruh jkf'k d teku l tk pd dh jkf'k l nxuh rd gk ldxh vFkok nkuk l nf.Mr fd;k tk ldxkA*

xxx xxx xxx

11. इस प्रकार इस धारा का एक सरल पठन स्पष्टत: दर्शाता है कि किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऋण या अन्य दायिता को समूचे तौर पर या आंशिक रूप से उन्मोचित करने के लिए चेक लिखा जाना चाहिए। वर्तमान मामले में चेक एक अग्रिम धन के तौर पर निर्गत किया गया था तथा सौदा भी अपने तार्किक अंत तक नहीं लाया गया था; क्योंकि याची के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित नहीं हुआ था, मेरी सुविचारित राय है कि याची का मामला **मेसर्स इन्डस एयरवेज प्राईवेट लिमिटेड (ऊपर)** में अधिकथित विधि द्वारा पूर्णत: आच्छादित है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ऐसे मामलों में किसी व्यक्ति के ऋण या दायिता को वैधानिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण या दायिता नहीं कहा जा सकता है। मेरी सुविचारित राय में, एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध याची के विरूद्ध आकर्षित ही नहीं होता है।

12. तथापि, यह तर्क कि मामला याची द्वारा भुगतान रोक देने के अनुदेश से संबंधित है तथा मामले की उस दृष्टि में अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध मामले में आकर्षित नहीं होगा, मैं **के॰ के॰ सिद्धार्थन के मामले (ऊपर)** में निर्णय से पाता हूँ कि उसमें यह उल्लिखित है कि **(1996) 2 SCC 739** में यथा रिपोर्ट किये गये **इलेक्ट्रानिक्स व्यापार एवं प्रौद्योगिकी विकास निगम लिमिटेड बनाम इंडियन टेकनोलॉजिस्ट एण्ड इंजिनियर्स (इलेक्ट्रानिक्स) (प्राईवेट) लिमिटेड** में, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि बैंक को भुगतान रोक देने के अनुदेश के कारण भी किसी चेक के अनादृत होने पर धारा 138 आकर्षित होती है। वर्तमान मामले में मैं अभिलेख से पाता हूँ कि 30 मार्च, 2001 को परिवादी

द्वारा चेक बैंक में प्रस्तुत किया गया था, तथा याची के मामले के अनुसार उसने अन्य व्यक्तियों को जमीन की बिक्री के बारे में सटीक स्थिति जानने के लिए 30 मार्च, 2001 की संध्या में परिवादी से बात करने का प्रयास किया था। यह स्पष्टत: दर्शाता है कि 30 मार्च, 2001 को भुगतान रोक देने के लिए बैंक को कोई अनुदेश नहीं दिया गया था, न ही 30.3.2001 को भुगतान रोक देने के बारे में चेक के ऊपरीवाल को कोई सूचना थी, जब चेक बैंक में प्रस्तुत किया गया था। मेरी सुविचारित राय में, **के॰ के॰ सिद्धार्थन के मामले (ऊपर)** में उच्चतम न्यायालय का निर्णय याची के किसी काम का नहीं है।

13. पूर्वोल्लिखित चर्चाओं की दृष्टि में चूँकि याची का मामला **मेसर्स इन्डस एयरवेज प्राईवेट लिमिटेड (ऊपर)** में अधिकथित विधि द्वारा पूर्णत: आच्छादित है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ऐसे मामलों में किसी व्यक्ति के ऋण या दायिता को वैधानिक रूप से प्रवर्तनीय ऋण या दायिता नहीं कहा जा सकता है, तथा, तद्नुसार, एन॰ आई॰ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध नहीं बनता है, अत: मेरी सुविचारित राय है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में समर्थित नहीं किया जा सकता है।

14. तद्नुसार, परिवाद केस संख्या 444 वर्ष 2001/टी॰ आर॰ संख्या 154 वर्ष 2001 में श्री के॰ कुमार, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 21.6.2001 के आक्षेपित आदेश तथा उक्त परिवाद मामले में याची के विरूद्ध समूची दांडिक कार्यवाही भी एतद्द्वारा अभिखंडित की जाती है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

डी॰ परमेश्वरी

cuke

डी॰ शंकर रेड्डी

First Appeal No. 186 of 2009 with I.A. No. 3039 of 2014. Decided on 24th June, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–धारा 96–तलाक की डिक्री के विरूद्ध अपील–पक्षकारों ने मंडल विधिक सेवा समिति में लोक अदालत के समक्ष सौहार्द्रपूर्ण रूप से मामले का समाधान कर लिया है–प्रथम अपील वापस ली गयी अपील के तौर पर खारिज। (पैरा 5)

अधिवक्तागण.–Mrs. Rashmi Kumari, For the Appellant; None, For the Respondent.

आदेश

यह प्रथम अपील कुटुम्ब न्यायालय, जमशेदपुर के निर्णय, जो दाम्पत्य वाद संख्या 64 वर्ष 2008 दिनांक 17.1.2008 में आया था, के विरूद्ध दाखिल की गयी है तथा जिसके द्वारा प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, जमशेदपुर ने तलाक की डिक्री द्वारा अपीलार्थी–श्रीमती डी॰ परमेश्वरी तथा प्रत्यर्थी/पति–डी॰ शंकर रेड्डी के बीच संबंध विवाह को भंग कर दिया है।

2. जब प्रथम अपील तथा अंतर्वर्ती आवेदन सुनवाई के लिए सामने आया था, अपीलार्थी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया था कि श्रीकाकुलम जिला (आंध्र प्रदेश) में मंडल विधिक सेवा समिति, टेकाली–सह–कनीय सिविल न्यायाधीश, टेकाली में लोक अदालत में पक्षकारों के बीच मामले पर समझौता हो चुका है तथा, अतएव अपीलार्थी अपील वापस लेने की अनुमति की ईप्सा करती है।

3. इस संबंध में, अपीलार्थी ने अपील वापस लेने के लिए न्यायालय की अनुमति की ईप्सा करते हुए परिशिष्टों के साथ आई॰ ए॰ संख्या 3039 वर्ष 2014 भी दाखिल किया है। परिशिष्ट 2 श्रृंखला में सचिव, विधिक सेवा समिति, राँची को संबोधित अपीलार्थी का दिनांक 28.5.2014 का पत्र अंतर्विष्ट है यह कथित करते हुए कि उसके तथा उसके पति श्री डी॰ शंकर रेड्डी के बीच मामले का एम॰ सी॰ 9 वर्ष 2009 में 5.6.2010 को श्रीकाकुलम जिला (आंध्र प्रदेश) में मंडल विधिक सेवा समिति, टेकाली सह कनीय सिविल न्यायाधीश, टेकाली के समक्ष लोक अदालत के समक्ष सौहार्द्रपूर्ण रूप से समाधान हो चुका था।

4. आई॰ ए॰ संख्या 3039 वर्ष 2014 का पेज 11 श्रीकाकुलम जिला (आंध्र प्रदेश) में मंडल विधिक सेवा समिति, टेकाली-सह-ज्यूनियर सिविल न्यायाधीश, टेकाली में लोक अदालत द्वारा पारित अधिनिर्णय है, जो निम्नवत् पठित हैं:-

^^ookfgd ekeyk

eMy fofèkd lok lfefr % Vdkyh dh ykd vnkyr d le{k

5 tu] 2010 dk

ookfgd dl l[;k ,e0 lh0 9@2009] duh; flfoy U;k;kèkh'k % Vdkyh d U;k;ky; e

mifLFkr %

(1) Jh MhO f'k'k;;k] ch0 dke] ch0 ,y0] duh; flfoy U;k;kèkh'k] Vdkyh

(2) Jh ch0 odV jMMh] vfèkoDrk] ykd vnkyr d lnL;] Vdkyh

(3) d0 odVjko] vfèkoDrk] ykd vnkyr d lnL;] Vdkyh

fcp%

1- nxk ije'ojh] ifr] 'kdj jMMh] vk; yxHkx 35 o"k] }kjk ,u0 l; jko] lokfuoÙk] fgUnh ifMr] ifu: LVhV] uoikMk xke] lUFkkckEeyh eMy] Jhdkdye fty k

2- nik fnokdj jMMh mQ 'kEiFkh jMMh] vk; vkB o"k] vo;Ld gku d dkj.k mldh ekrk rFkk LokHkkfod vfoHkkod&iFke ;kph }kjk ifrufèkRo % ;kphx.k

rFkk

nik 'kdj jMMh] firk Loxh; jkek jko] vk; yxHkx 48 o"k] 6382643&WIV, CLK, GD l[;k oky lokfuoÙk lU;deh] vc d0@20@9] fjoj 0; Vydk dkykuh] te'knij Vydk ikLV] te'knij] fty k ioh flgHke] >kj[kM jkT; d fuoklh d chp

fofèkd lok ikfèkdkj vfèkfu;e] 1987 dh èkkjk 21 d vèkhu vfèkfu.k;

tcfd okn d nkuk i{kdkj okÙkkykik] lyg ,o ppk d mijkUr uhp mfYyf[kr fucèkuk ij ekey e ykd vnkyr d le> ,d le>kr ij lger gk x; Fk rFkk rnulkj bl fofèkd lok ikfèkdkj vfèkfu;e] 1987 dh èkkjk 21 d vèkhu uhp fuEuor vfèkfu.khr fd;k tkrk g%&

vfèkfu.k;

iFke ;kph rFkk f}rh; ;kph ,o iR;Fkh nkuk gh ykd vnkyr d le{k mifLFkrA le>kr d fucèkuk d vulkj ekey dk lekèkku fd;k x;k] iFke ;kph

dk iR;Fkh l LFkk;h fuokfgdk d rkj ij 1,50,000/- (,d yk[k ipkl gtkj #i; ek=) dh jkf'k iklr gkrh g rFkk nl j ;kph dk 1,50,000/- (,d yk[k ipkl gtkj #i; ek=) dh ,d jkf'k iklr gkrh gA iR;Fkh 'k{kf.kd] fpfdRlk ,o ukdjh dh lfoèkkvk d fy, Hkrio lU; dkVk d vèkhu nl j ;kph dk ykHk miyCèk djku ij lger gA nkuk ;kphx.k }kjk iR;Fkh d fo:) dkb vkj nkok ughA le>krk vfHkfyf[kr fd;k tkrk g rFkk rnulkj vfèkfu.k; ikfjr fd;k tkrk gA

gLrk{kj

MhO l'k;;k
vè;{k
eMy fofèkd lok lfefr&
lg&duh; flfoy U;k;kèkh'k]
Vdkyh

1- gLrk{kj MhO ije'ojh — gLrk{kj

2- gLrk{kj Mh ije'ojh — iR;Fkh dk gLrk{kj

;kph dk gLrk{kj

gLrk{kj — gLrk{kj

;kph d vfèkoDrk dk gLrk{kj — iR;Fkh d vfèkoDrk dk gLrk{kj

5. चूँकि पक्षकार केस संख्या एम० सी० 9 वर्ष 2009 में 5.6.2010 को श्रीकाकुलम जिला (आंध्र प्रदेश) में मंडल विधिक सेवा समिति, टेकाली-सह-कनीय सिविल न्यायाधीश, टेकाली में लोक अदालत के समक्ष मामले का सौहार्द्रपूर्ण रूप से समाधान कर चुके हैं, जिसे अंतर्वर्ती आवेदन के साथ अभिलेख पर रखा गया है, अतः यह प्रथम अपील वापस ली गयी अपील के तौर पर खारिज की जाती है।

6. आई० ए० संख्या 3039 वर्ष 2014 निस्तारित किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

अभिषेक कापड़ी उर्फ मोती एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 517 of 2013. Decided on 26th June, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860–धारा 498A–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 177, 178 एवं 482–क्रूरता–परिवाद–समूची परिवाद याचिका में ऐसा कोई अभिकथन नहीं कि परिवादी के साथ कभी भी धनबाद जिला में अपने माता-पिता के घर पर क्रूरता बरती गयी थी तथा यातना दी गयी थी–अवर न्यायालय को अपराध का विचारण करने की कोई अधिकारिता नहीं थी–आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–(2007)1 SCC 262—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Binod Kr. Mallah, For the Petitioners; M/s Kaushik Sarkhel, Ganga Kewat, For the Opp. Parties.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य के विद्वान अधिवक्ता एवं परिवादी विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता को भी सुना।

2. याचीगण श्री अमरेश कुमार, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 11.10.2012 के आदेश से व्यथित हैं, जिसके द्वारा अवर न्यायालय ने एक जांच पर याचीगण के विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन प्रथम दृष्टया अपराध पाया है।

3. परिवादी विपक्षी संख्या 2 ने अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में एक परिवाद मामला दाखिल किया था जिसे सी॰ पी॰ केस संख्या 1142 वर्ष 2012 के तौर पर दर्ज किया गया था। परिवादी ने कथित किया है कि वह याची अभिषेक कापड़ी की वैधानिक रूप से विवाहित पत्नी है तथा विवाह वर्ष 2012 में हुआ था। तत्पश्चात्, उसे दुमका जिला में उसके ससुराल वालों के यहां ले जाया गया था जहां परिवादी के साथ क्रूरता तथा यातना बरते जाने के अभिकथन हैं तथा अंतत: यह कथित किया गया है कि उसे धनबाद जिला में अपने माता-पिता के घर वापस लौटने पर बाध्य किया गया था।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने याचीगण के विरूद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाने वाले आक्षेपित आदेश को चुनौती देने में एक संक्षिप्त बिन्दु दिया है। यह निवेदन किया गया है कि परिवाद याचिका में क्रूरता एवं यातना के जो भी अभिकथन हैं, वह कथित रूप से केवल दुमका जिला में दाम्पत्य गृह में ही हुए हैं, परन्तु परिवाद धनबाद के न्यायालय में दाखिल किया गया था जिसके पास मामले का विचारण करने का कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा लिया गया एक अन्य बिन्दु यह है कि याचीगण को झूठ-मूठ फंसाया गया है तथा वस्तुत: परिवादी के साथ कोई क्रूरता तथा यातना नहीं बरती गयी थी।

5. परिवाद याचिका का अवलोकन करने पर, मैं पाता हूँ कि क्रूरता तथा यातना के अभिकथन केवल दुमका जिला में अवस्थित वैवाहिक घर के हैं।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता तथा परिवादी विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने भी आग्रह का विरोध किया है। परिवादी विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने परिवाद याचिका से निर्दिष्ट किया है कि परिवादी के साथ मुख्यत: इस तथ्य के कारण क्रूरता एवं यातना बरती गयी थी कि वह एक संतान उत्पन्न करने में असमर्थ थी। विद्वान अधिवक्ता ने परिवाद याचिका के पैरा 8 से निर्दिष्ट किया है कि धनबाद में अपने माता-पिता के घर में परिवादी को टेस्ट ट्यूब संतान प्राप्त करने के लिए एक महिला चिकित्सक द्वारा लीलावती अस्पताल, मुंबई जाने की सलाह दी गयी थी, परन्तु याचीगण ने चिकित्सक की सलाह का अनुसरण नहीं किया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह भी क्रूरता के तुल्य है तथा तद्नुसार, अपराध को धनबाद जिला के भीतर भी कारित होना कहा जा सकता है।

7. मेरी सुविचारित राय में विद्वान अधिवक्ता का निवेदन मामले को कुछ ज्यादा ही दूरी तक खींचने के तुल्य है तथा इसे विचार में नहीं लिया जा सकता है। समूची परिवाद याचिका में ऐसा कोई अभिकथन नहीं है कि परिवादी के साथ धनबाद जिला में उसके माता-पिता के घर पर कभी कोई क्रूरता एवं यातना बरती गयी थी।

8. परिवादी विपक्षी संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने **(2007) 1 SCC 262** में रिपोर्ट किये गये **मनीष रतन एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं एक अन्य** में भारत के माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें वैवाहिक विवाद से उत्पन्न एक समरूप मामले में, जहां यह पाया

गया था कि उस न्यायालय, जहां मामला संस्थित किया गया था, को मामले का विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी, उच्चतम न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन अधिकारिता के इस्तेमाल में दांडिक मामले को उस न्यायालय में अंतरित करने का निर्देश दिया था जिसके पास मामले का विचारण करने की क्षेत्रीय अधिकारिता थी। तद्नुसार विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामले में भी यही रास्ता अपनाया जाय, अगर यह पाया जाता है कि अवर न्यायालय को इस मामले का विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी।

9. मेरी सुविचारित राय है कि चूँकि धनबाद जिला, जहां मामला संस्थित किया गया था, में अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध क्रूरता या यातना का कोई अभिकथन नहीं है, अवर न्यायालय को अपराध का विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है। तद्नुसार, सी॰ पी॰ केस संख्या 1142 वर्ष 2012 में श्री अमरेश कुमार, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 11.10.2012 का आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में समर्थित नहीं किया जा सकता है तथा इसे तद्नुसार अपास्त किया जाता है।

10. तथापि, न्याय के हित में यह निर्देश दिया जाता है कि अगर परिवादी समुचित न्यायालय में दाखिल किये जाने के लिए परिवाद याचिका को वापस करने हेतु अवर न्यायालय के पास जाता है, इसे सक्षम अधिकारिता के न्यायालय में दाखिल किये जाने के लिए परिवादी को वापस किया जाएगा।

11. तद्नुसार, यह आवेदन यथा उपरोक्त निर्देश के साथ अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

विजय कुमार मिनोचा

cuke

सुनीता बगराय एवं अन्य

Civil Revision No. 14 of 2011. Decided on 9th May, 2014.

संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882—धारा 116—अभिधृति–बेदखली–पट्टा का अवसान–मासिक अभिधृति–किराया के स्वीकरण मात्र पर टी॰ पी॰ अधिनियम की धारा 116 आकृष्ट नहीं होगी किंतु पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद किराएदार को अपना कब्जा जारी रखने की अनुमति देने वाले मकानमालिक का आचरण महत्वपूर्ण है–वादी पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद वाद परिसर के ऊपर अपना कब्जा जारी रखने की अनुमति याची को देने का आशय नहीं रखता था–याची द्वारा वादी के खाते में सीधे किराया जमा किए जाने को किराया का स्वीकरण नहीं कहा जा सकता है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 12 से 16)

निर्णयज विधि.–(2000)7 SCC 232—Distinguished; AIR 1972 SC 819; AIR 1989 FC 124; (2005) 5 SCC 543; (2006) 6 SCC 205—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Manjul Prasad, For the Petitioner; Mr. Rahul Gupta, For the Opp. Parties.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–यह सिविल पुनरीक्षण बेदखली अभिधान वाद सं॰ 01/2007 के संबंध में विद्वान द्वितीय अपर मुंसिफ, राँची द्वारा पारित दिनांक 20.1.2011 के निर्णय और दिनांक 4.2.2011 को हस्ताक्षरित डिक्री के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा याची/प्रतिवादी को निर्णय की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर वादी को वाद परिसर का रिक्त कब्जा सौंपने का निर्देश दिया गया है।

2. वादी ने वादपत्र के नीचे संलग्न अनुसूची में पूर्णत: और विशेषत: वर्णित वाद परिसर से उसको बेदखल करने के लिए और इसके अतिरिक्त याची को बेदखल करने के बाद इसके ऊपर वादी/विरोधी पक्षकार को खास कब्जा देने के लिए याची के विरुद्ध वाद दाखिल किया है। यह प्रकट किया गया है कि पी॰ पी॰ कंपाउन्ड, पी॰ एस॰ हिंदपीड़ी, जिला राँची के निकट (राँची–चाईबासा रोड) के अंतर्गत मेन रोड पर अवस्थित वार्ड सं॰ III, खाता सं॰ 1786 में धृति सं॰ 515/C-1 के ऊपर फिटिंग्स के साथ एक दुकान परिसर, जो उत्तर एवं दक्षिण में अन्य दुकानों से सटा एवं सीमित है और जिसके पूर्व में खुला स्थान और मेनरोड है और पश्चिम में 4 फीट चौड़ा गलियारा है, दिनांक 1.1.1997 से दिनांक 31.12.2001 तक के लिए पाँच वर्ष के लिए किराया पर याची/पट्टाधारी को इसे अगले पाँच वर्षों तक नवीकरण करवाने के विकल्प के साथ किराया पर दिया गया था। पूर्वोक्त पट्टा दिनांक 1.2.2002 से आरंभ होकर दिनांक 31.12.2006 को समाप्त होने वाले पाँच वर्ष की नियत अवधि के लिए 3168/- रुपया मासिक किराया पर दिनांक 12.2.2002 के रजिस्टर्ड पट्टा विलेख के तहत नवीकृत किया गया था। नए पट्टा में आगे नवीकरण का प्रावधान नहीं था। याची/प्रतिवादी द्वारा निबंधनों एवं बाध्यताओं का सम्यक पालन सुनिश्चित करने के लिए 28,000/- रुपयों की राशि प्रतिभूति के रूप में वादी/विरोधी पक्षकार के पास जमा भी की गयी थी जो वाद परिसर का रिक्त कब्जा सौंपने के अवसर पर ब्याज के बिना लौटाए जाने योग्य था। पट्टा की अवधि के अवसान के बाद विरोधी पक्षकार ने अपने अधिवक्ता के माध्यम से दिनांक 31.12.2006 के बाद वाद परिसर खाली करने के लिए उसको कहते हुए दिनांक 18.12.2006 को याची के विरुद्ध नोटिस जारी किया था। चूँकि याची पट्टा की अवधि के अवसान के बाद वाद परिसर का रिक्त कब्जा सौंपने में विफल रहा, दिनांक 4.1.2007 को बेदखली अभिधान वाद सं॰ 1/2007 दाखिल किया गया था क्योंकि वाद हेतुक दिनांक 31.12.2006 को और से और पश्चातवर्ती तिथियों पर उद्भूत हुआ जब वाद परिसर खाली नहीं किया गया था। न्यायालय फीस और अधिकारिता के प्रयोजन से वाद 31016/- रुपयों पर मूल्यांकित किया गया था और मूल्यानुसार न्यायालय फीस जमा भी किया गया था।

3. याची/प्रतिवादी स्थानीय समाचार पत्र में नोटिस के प्रकाशन के बाद अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ और वाद का प्रतिवाद करने के लिए अनुमति प्रदान करने के लिए आवेदन दाखिल किया और वाद का प्रतिवाद करने की अनुमति प्रदान किए जाने के बाद लिखित कथन दाखिल किया गया था। याची ने मामला बनाया था कि वाद अपने वर्तमान स्वरुप में पोषणीय नहीं है और अधित्यजन, विवंध और उपमत के सिद्धांत द्वारा वर्जित है।

यह अभिवचन भी किया गया था कि वाद न्याय निर्णीत के सिद्धांत द्वारा वर्जित था। याची का आगे अभिवचन यह था कि कोई वाद हेतुक उद्भूत नहीं हुआ था। वह किराएदार के रूप में अनेक दशकों से लगातार वाद परिसर में व्यवसाय कर रहा है और प्रत्येक पाँच वर्ष बाद पट्टा विलेख सहमत बढ़ाए गए किराया पर निष्पादित एवं रजिस्टर्ड किया जाता था जबकि प्रत्येक पट्टा के अन्य निबंधन एवं शर्तें सदैव वही बने रहते हैं। पट्टा की अवधि, जो दिनांक 1.1.97 से दिनांक 31.1.2001 तक की अवधि के लिए थी, के अवसान पर आगे की पाँच वर्ष की अवधि के लिए एक अन्य पट्टा 3168/- रुपया की बढ़ायी गयी मासिक किराया पर निष्पादित की गयी थी जिसके लिए दिनांक 1.1.2002 से दिनांक 31.12.2006 तक के लिए नवीकृत पट्टा के निष्पादन एवं रजिस्ट्रेशन के लिए व्यय के रूप में याची द्वारा 2561/- रुपयों की राशि का भुगतान किया गया था और उसे दिनांक 12.2.2002 को रजिस्टर्ड किया गया था। यह प्रतिवाद किया गया था कि याची को दिनांक 12.2.2002 के पट्टा विलेख के विषय वस्तु का परिशीलन करने का अवसर नहीं दिया गया था और वह इस धारणा के अधीन था कि नवीकरण खंड सामान्य रूप से वहाँ होगा किंतु वाद के संस्थापन की जानकारी के बाद वह जान सका था कि विरोधी पक्षकार ने दिनांक 12.2.2002 को निष्पादित पट्टा से नवीकरण खंड का विलोप करके कपट किया था। याची ने अपने लिखित कथन में आगे प्रतिवाद किया है कि वह मासिक आधार पर अथवा एक बार में अनेक माहों के लिए चेक द्वारा नियमित रूप से किराया का भुगतान कर रहा था। जून से अगस्त, 2006

माह के लिए किराया का भुगतान दिनांक 22.6.2006 के चेक सं॰ 726200 वाले एकल चेक 9405/- रुपयों के लिए द्वारा किया गया था। इसी प्रकार से, सितंबर से नवंबर, 2006 के माह के लिए किराया याची से एकांउट पेयी चेक सं॰ 529773 के माध्यम से दिनांक 30.9.2006 को विरोधी पक्षकार द्वारा संग्रहित किया गया था। पट्टा की अवधि का अवसान दिनांक 31.12.2006 को होना था, अत: याची ने विरोधी पक्षकार को दिनांक 1.1.2007 से आरंभ होने वाले पाँच वर्ष की आगे की अवधि के लिए पट्टा नवीकृत करने के लिए कहा और ऐसे अनुरोध पर विरोधी पक्षकार ने प्रकट किया कि उस विलेख में नवीकरण खंड है ही नहीं। ऐसे तथ्य को जानने पर याची चकित हुआ और विरोधी पक्षकार को विलेख की प्रति देने के लिए कहा। ऐसी मांग पर, विरोधी पक्षकार ने विलेख के प्रति की आपूर्ति किया। इसका परिशीलन करने के बाद याची ने वादी के साथ कपट का विवाद्यक उठाया और समुचित विधिक कार्रवाई करने की संसूचना उसको दी। तत्पश्चात, विरोधी पक्षकार/वादी ने याची को शांत करने के लिए कहा कि चिंता की बात नहीं है और उसकी किराएदारी अस्त-व्यस्त नहीं की जाएगी। वादी/विरोधी पक्षकार के अनुरोध पर याची ने दिसंबर, 2006 के किराया के साथ अग्रिम में जनवरी और फरवरी 2007 माह के लिए किराया जमा किया और वादी के पक्ष में लिखे गए दिनांक 30.11.2006 के एकांउट पेयी चेक सं॰ 531898 के माध्यम से 9504/- रुपयों की राशि उसको दी गयी थी। वादी ने आगे एकांउट पेयी चेक सं॰ 508268 के माध्यम से मार्च, 2007 माह के लिए 3168/- रुपयों की राशि प्राप्त किया। याची का मामला यह है कि दिसंबर, 2006 से मार्च, 2007 तक का किराया प्राप्त करने के बाद वादी/विरोधी पक्षकार ने असद्भावपूर्ण रूप से रसीद जारी नहीं किया था जिसके बाद मामला सक्षम प्राधिकारी के ध्यान में लाया गया था। विनिर्दिष्ट निर्देश के बावजूद वादी/विरोधी पक्षकार ने दिसंबर, 2006 से मार्च, 2007 तक के माह के लिए किराया रसीद जारी नहीं किया है। याची ने वादी और उसके पुत्र के विरुद्ध दांडिक कृत्यों के लिए परिवाद मामला सं॰ 472 वर्ष 2007 भी दाखिल किया है। याची का आगे अभिवचन यह है कि अभिधृति जारी रखने के आश्वासन पर, वादी द्वारा की गयी मांग पर याची/प्रतिवादी ने दिसंबर, 2006 से मार्च, 2007 तक के माह के लिए किराया का भुगतान किया था और इसलिए याची अतिधारण द्वारा मासिक किराएदार बन गया था। याची ने अपने द्वारा दाखिल लिखित कथन में पैरावार वाद पत्र के विषय वस्तु से विनिर्दिष्टत: इनकार किया है। याची ने इनकार किया है कि वादी के अधिवक्ता के माध्यम से उस पर कोई नोटिस दाखिल कभी नहीं की गयी थी। यह अभिवचन किया गया था कि पट्टा की अवधि के अवसान के बाद वाद परिसर खाली करने के लिए याची/प्रतिवादी को कहने के लिए वादी को कोई आधार उपलब्ध नहीं था क्योंकि वह अतिधारण द्वारा मासिक किराएदार बन गया है और उसे पट्टा की अवधि के अवसान के मनगढ़ंत अभिवचन पर बेदखल नहीं किया जा सकता है। विद्वान मुंसिफ ने दोनों पक्षों के अभिवचनों पर विचार करने के बाद निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया:-

fook|d lO 1&D;k okn] tlk bl fojfpr fd;k x;k g] ik"k.kh; g

fook|d lO 2-D;k oknh d ikl okn d fy, oèk okn grd g

fook|d lO 3-D;k çfroknh iVVk dh fu;r vofèk d fy, oknh d vèkhu fdjk,nkj Fkk vFkok D;k vfrèkkj.k }kjk fdjk,nkjh lftr dh x;h g

fook|d lO 4-D;k oknh fnukd 12.2.2002 d iVVk foy[k d volku d ckn okn lifÙk l çfroknh dk cn[ky dju d fy, fMØh iku dk gdnkj g

fook|d lO 5-D;k iVVk d volku d ckn oknh çfroknh }kjk tek fd, x, 28,000/- #i;k dh çfrHkfr fu{ki dk leigr dju dk gdnkj g\ vkj

fook|d l0 6– D;k oknh fdlh vurk"k dk gdnkj g tlk nkok fd;k x;k g\

4. वादी ने निम्नलिखित गवाहों का परीक्षण किया और दस्तावेजों को सिद्ध किया:–

v0 lk0 1–xkjo cxjk;(

v0 lk0 2 v'kkd dekj]

v0 lk0 3 txu djekyh] ,o

v0 lk0 4 yfyr f=ikBh

çn'k 1–e[rkjukek dh çekf.kr çfr(

çn'k 2–Qjojh] 2002 d iVVk foy[k dh çekf.kr çfr(

çn'k 3–fnukd 18.12.2006 dk ukfVl(

çn'k 3/A– fnukd 16.1.2002 d ukfVl dh dkcu çfr(

çn'k 3/B– fnukd 23.1.2002 d ukfVl dh dkcu çfr(

çn'k 3/C–fnukd 1.2.2007 dk ukfVl(

çn'k 3/D–fnukd 9.2.2007 dk ukfVl(

çn'k 3/E–fnukd 18.4.2007 dk ukfVl(

çn'k 4 l 4F–Mkd jlhn(

çn'k 4/.G– ikorh ij gLrk{kj ,o y[ku(

çn'k 5–ikorh ij jlhn dh dkcu çfr e gLrk{kj(

çn'k 6 ,o 6/A–egjcn fyQkQk ij i"Bkdu] vkj

çn'k 7–fnukd 1.2.2007 dk cd jlhnA

5. याची/प्रतिवादी ने निम्नलिखित गवाहों का परीक्षण किया और दस्तावेजों को सिद्ध किया:–

c0 lk0 1 t; exy ilkn(

c0 lk0 2 jktUn dekj ikM(

c0 lk0 3 Jo.k dekj fpryfx;k(

c0 lk0 4 fl)'oj dekj(

c0 lk0 5 idt dekj xlrk(

c0 lk0 6 lkeukFk jk;(

c0 lk0 7 fot; dekj feukpk(vkj

c0 lk0 8 on çdk'k feukpkA

çn'k A–iVVk d uohdj.k dh jlhn(

çn'k A/1–je'k çlkn dh fjlhfox]

çn'k B–chO chO lhO dl lO 06/2007 e ikfjr fnukd 28.5.2007 d vkn'k dh çekf.kr çfr(

çn'k C l C/4–vfçy] 2004 l vxLr] 2004 dh fdjk;k jlhn(

çn'k D–bMlbM cd }kjk tkjh [kkrk fooj.k]

çn'k E–je'k çlkn dh fjlhfox(

çn'k F–fofoèk ;kfpdk 13/2007 (A) dh çekf.kr çfr(

çn'k F/1 fofoèk dl l0&13/2007 (A) e fnukd 15.2.2007 dk vkn'k(

çn'k G–fnukd 14.5.2007 dk i=(

çn'k H l H/4– Mkd jlhnk dh fjlhfoxA

6. याची ने आक्षेपित निर्णय और डिक्री का विरोध इस आधार पर किया है कि पट्टा के नवीकरण के समय पर कपट किया गया था और उसको पट्टा की विषय वस्तु का परिशीलन करने की अनुमति दिए बिना दिनांक 12.2.2002 को निष्पादित पट्टा विलेख पर उसका हस्ताक्षर लिया गया था और वह इस धारणा के अधीन था कि पहले की तरह नवीकरण खंड नवीकृत पट्टा विलेख में उल्लिखित किया गया है और वह निश्चिंत था कि पट्टा के अवसान के बाद अर्थात् दिनांक 31.12.2006 के बाद उसकी किराएदारी पाँच वर्ष की आगे की अवधि के लिए नवीकृत कर दी जाएगी। इस संदर्भ में, मैंने वादी द्वारा सिद्ध किए गए साक्ष्य एवं दस्तावेजों (प्रदर्श 3/A), जो वादी द्वारा याची को भेजी गयी दिनांक 16.1.2002 के पत्र की कार्बन प्रति है, का परिशीलन किया है जिसमें यह उपदर्शित किया गया है कि पट्टा की प्रारूप प्रति इसके अनुमोदन के लिए याची को भेजी गयी थी। वादी द्वारा याची को भेजी गयी दिनांक 23.1.2002 के पत्र की कार्बन प्रति प्रदर्श 3/B आगे उपदर्शित करती है कि याची को, यदि वह दिलचस्पी रखता है, पट्टा के नवीकरण के लिए अपनी सहमति देने के लिए सात दिनों का समय दिया गया था। उसी पत्र में यह भी स्पष्ट किया गया था कि पाँच वर्षों के अवसान के बाद अर्थात् दिनांक 31 दिसंबर, 2006 के बाद पट्टा के नवीकरण का खंड पट्टा विलेख में सम्मिलित करने का अनुरोध वादी को स्वीकार्य नहीं है। डाक रसीदों को भी सिद्ध किया गया है और प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया है। यह याची का स्वीकृत मामला है कि पट्टा विलेख दिनांक 12.2.2002 को निष्पादित एवं रजिस्टर्ड किया गया था और इसका खर्च उसके द्वारा उठाया गया था। इन परिस्थितियों में जिनमें दिनांक 12.2.2002 के पट्टा के निष्पादन के पहले वादी द्वारा याची के साथ पत्र व्यवहार किया गया था, यह स्पष्ट है कि वादी अपने आचरण में बिल्कुल निष्पक्ष था और याची को पट्टा विलेख का परिशीलन करने का समस्त अवसर दिया गया था और पट्टा विलेख का निष्पादन एवं रजिस्ट्रेशन सुझाता है कि याची पट्टा के निबंधनों एवं शर्तों से पूरी तरह अवगत था और वह अच्छी तरह जानता था कि आगे की अवधि के लिए पट्टा के नवीकरण का खंड वहाँ नहीं था। उक्त के अतिरिक्त, किराएदार के समक्ष निबंधनों एवं शर्तों का प्रस्ताव रखना मकान मालिक की इच्छा एवं पसंद है और उसे अभिधृति के निबंधनों एवं शर्तों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करना है जब पट्टा विलेख निष्पादित और रजिस्टर्ड किया जाता है। पट्टाधारी यह अभिवचन नहीं कर सकता है कि वह पट्टा के निबंधनों एवं शर्तों से अवगत नहीं था। अतः, ऊपर कथित परिस्थितियों में मैं याची द्वारा दिए गए तर्क को इस संदर्भ में स्वीकार्य नहीं पाता हूँ।

7. अगला बिंदु जिसे याची ने इस न्यायालय के समक्ष उठाया है यह है कि वाद मकान मालिक द्वारा दाखिल किया गया था किंतु वह वाद पत्र में किए गए अभिवचनों का समर्थन करने के लिए आगे नहीं आया था बल्कि अ॰ सा॰ 1 जो वादी का पुत्र और मुख्तारनामा धारक हुआ करता है, ने वादी का मामला सिद्ध किया है। चूँकि याची को वादी का प्रति परीक्षण करने का अवसर नहीं मिला था, उस पर गंभीर प्रतिकूलता कारित हुई है और केवल इस आधार पर पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किए जाने का दायी है। मैंने अवर न्यायालय अभिलेख का परिशीलन किया है जिससे यह प्रतीत होता है कि वादी स्वयं वाद पत्र में किए गए अभिवचनों अथवा उपलब्ध दस्तावेजों और चिन्हित प्रदर्शों को सिद्ध करने के लिए उपस्थित नहीं हुआ था किंतु याची द्वारा किए गए अनुरोध पर वादी साक्ष्य देने के लिए उपस्थित हुआ। याची/प्रतिवादी ने उसका परीक्षण करने के बजाए एक अन्य अभिवचन किया था कि वह केवल वादी का

प्रति परीक्षण करना चाहता है। यह उम्मीद नहीं की जाती है कि किसी व्यक्ति, जिसका गवाह के रूप में परीक्षण नहीं किया गया है, का प्रतिपरीक्षण किया जा सकता है और यह विधि नहीं है। याची द्वारा सृजित स्थितियों पर विचार करते हुए विचारण न्यायालय ने दिनांक 7.5.2009 का विस्तृत आदेश पारित किया है। उक्त आदेश स्वयं सकारण है और याची द्वारा किसी उच्चतर फोरम के समक्ष उस आदेश को चुनौती नहीं दिया गया है। विद्वान अपर मुंसिफ ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि कोई वर्जना नहीं है यदि वादी का विधिपूर्ण मुख्तारनामा धारक न्यायालय के समक्ष उपस्थित होता है और वादी का मामला तथा दस्तावेजों को सिद्ध करने के लिए गवाह के रूप में अभिसाक्ष्य देता है। मेरा दृष्टिकोण भी यही है क्योंकि अ॰ सा॰ 1 के पक्ष में वादी का मुख्तारनामा चुनौती के अधीन नहीं है। इन परिस्थितियों में, मैं याची द्वारा दिए गए ऐसे तर्क में कोई बल नहीं पाता हूँ।

8. मुख्य बिंदु, जिस पर याची ने आक्षेपित निर्णय का विरोध किया है, अतिधारण का बिंदु है:–

यह प्रतिवाद किया गया है कि याची ने दिसंबर, 2006 से फरवरी, 2007 तक के माह के लिए किराया अर्थात् तीन माह का किराया चेक के माध्यम से जमा किया था और तद्नुसार वादी के खाता में राशि डाली गयी थी। याची द्वारा मार्च, 2007 माह के किराया का भुगतान भी किया गया था जिसे वादी के विश्वसनीय स्टॉफ द्वारा स्वीकार किया गया था। यह तर्क किया गया था कि पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद वादी द्वारा किराया का स्वीकरण स्पष्टतः सुझाता है कि वह मासिक किराएदार बन गया है और पट्टांतरण परिसर के ऊपर उसका कब्जा अतिधारण का कब्जा बन गया है जो संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 116 के अनुसार है और उसे केवल पट्टा के विनिश्चयकरण के आधार पर बेदखल नहीं किया जा सकता है। इस संदर्भ में, याची ने **भुनेश्वर प्रसाद बनाम यूनाइटेड कमर्शियल बैंक, (2000)7 Supreme Court Cases 232,** में निर्णय पर विश्वास किया है। निर्णय में उपदर्शित तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित हैं:–

^^çFke çR;Fkh cd ikp o"kk dh fu;r vofèk d fy, jftLVM iVVk foy[k d vèkhu okn ifjlj dk fdjk,nkj FkkA iVVk foy[k d vèkhu cd dk volku d le; ij nk ckj iVVk uohÑr djoku dk fodYi fn;k x;k FkkA ey iVVk fnukd 1.4.1981 l fnukd 31.3.1986 dh vofèk d fy, FkkA iVVk 10,876/-#i;k d ekfld fdjk;k ij fnukd 1.4.1986 l fnukd 31.3.1991 dh vofèk d fy, uohÑr fd;k x;k FkkA cd u fnukd 31.3.1991 d igy uohdj.k bfllr ugh fd;k FkkA vihykFkh edkuekfydk u fnukd 22.4.1991 d i= }kjk cd dk fnukd 31.5.1991 rd ifjlj [kkyh dju d fy, dgkA cd u fnukd 24.4.1991 d i= }kjk iVVk dk uohdj.k bfllr fd;kA vihykFkhx.k }kjk ;g vujkèk Lohdkj ugh fd;k x;k Fkk ftUgku cn[kyh dh viuh ekx ij tkj fn;kA cd u okn ifjlj e Lo; viuh 'kk[kk e vihykFkhx.k d [kkrk e fnukd 31.3.1991 d ckn Hkh fdjk;k tek djuk tkjh j[kkA

vihykFkhx.k u fcgkj Hkou (iVVk] fdjk;k ,o cn[kyh) fu;=.k vfèkfu;e] 1982 dh èkkjk 11 (1) (e) d vèkhu cd dh cn[kyh bl vkèkkj ij bfllr fd;k fd fd fofufn"V vofèk okyh iVVk dk volku gk pdk FkkA cn[kyh okn dk çfrjkèk djr g, cd u vfHkopu fd;k fd ;g ekfld vkèkkj ij fdjk,nkj Fkk(fd le;≤ ij fdjk;k c<k;k x;k Fkk(fd ;g fnukd 31.3.1991 d ckn Hkh fu;fer :i l c<k, x, nj ij fdjk;k tek dj jgk FkkA cd u vfHkopu fd;k fd blu fnukd 7.9.1991 d viu i= d erkfcd çLrko fn;k Fkk fd fdjk;k

13,595/-#i;k çfrekg c<k fn;k tk,(dN ppk d ckn vihykFkhx.k u;h nj ij fdjk;k çkIr dju d fy, Iger g, Fk vkj rcl o viu [kkrk l fu;fer :i l èku fudky jg FkA

fopkj.k U;k;ky; u cn[kyh okn fMØh fd;kA fdr] mPp U;k;ky; u iujh{k.k e vihykFkh edkuekfydk }kjk Lohdj.k vkj viu cd [kkrk l c<k, x, fdjk;k dk fudkyu d vkèkkj ij fMØh vikLr dj fn;kA

*lokPp U;k;ky; d le{k] vihykFkhx.k u çfrokn fd;k fd fdjk;k dk Lohdj.k ek= ekfld fdjk,nkjh lftr ugh djrk Fkk] D;kfd fdjk,nkj cd fdjk;k vfèkfu;e d çkoèkkuk d vèkhu cn[kyh l ljf{kr FkkA**

9. ऊपर उपदर्शित मामले में सामने आने वाले तथ्य ये हैं कि पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद पूर्व किराया अथवा राशि जिसे मानक किराया के रूप में नियत किया गया था के समतुल्य राशि का भुगतान नहीं किया गया था बल्कि बैंक द्वारा मकानमालिक (अपीलार्थी) के खाता में बढ़ाए गए दर पर किराया जमा किया गया था और वह भी कुछ चर्चा के बाद और मकान मालिक अपने खाता में इस प्रकार डाले गए किराया को निकालते रहा था और इसलिए विचारण न्यायालय का निर्णय उच्च न्यायालय द्वारा उलट दिया गया था और इसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया था।

*^^ijk 7e ;g lçf{kr fd;k x;k Fkk fd ^^VhO ihO vfèkfu;e dh èkkjk 116 dk li.k vkèkkj ;g g fd edkuekfyd cn[kyh dk okn nkf[ky dju dk gd vkj dCtk dh fMØh iku dk gdnkj g vkj blfy, iVVk d volku d ckn fdjk;k dk Lohdj.k fdjk,nkj d dkfct cu jgu nu d çfr Iger gku dh mldh bPNk fufn"V dju okyk lLi"V ÑR; gA ;g mu ekeyk e vuifLFkr gkxk tgk fucèku g tlk fdjk;k fofèk;k e vuè;kr fd;k x;k gA vr%] ,l ekey e] fdjk,nkj dk blLFkfir djuk g tgk ;g dgk tkrk g fd edkuekfyd u mlls lkfofèkd fdjk,nkj d :i e ugh cfYd doy fofèkd fdjk,nkj d :i e fdjk;k Lohdkj fd;k ftlu fdjk,nkj d dkfct cu jgu d çfr mldh lgefr dk minf'kr fd;kA**

*^^ijk 8e ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk&oreku ekey e cd u Lokfe;k d vkpj.k l LFkkfir fd;k g fd c<k, x, fdjk, dk Lohdj.k iVVk d volku d ckn cd d dkfct cu jgu d çfr Lokfe;k dh lgefr dk çrhd Fkk] rn}kjk VhO ihO vfèkfu;e] 1982 dh èkkjk 116 d vFk d vrxr ekfld iVVk lftr gvkA mPp U;k;ky; u lgh çdkj l fopkj.k U;k;ky; dk fu.k; ,o fMØh myV fn;k gA**

10. न केवल याची ने बल्कि विरोधी पक्षकार ने भी **'भगवान जी लक्ष्मसी बनाम हिम्मतलाल जमनादास दानी', AIR 1972 Supreme Court 819,** में निर्णय पर विश्वास किया है बल्कि सर्वोच्च न्यायालय ने भी **'भुनेश्वर प्रसाद एवं एक अन्य बनाम यूनाइटेड कमर्शियल बैंक एवं अन्य (ऊपर)** मामले में पूर्वोक्त निर्णय को निर्दिष्ट किया है। टी० पी० अधिनियम की धारा 116 की प्रयोज्यता की संपूर्ण धारणा पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद किराएदार ने और मकान मालिक के भी आचरण पर आधारित है; यदि किराएदार पट्टा की अवधि के अवसान के बाद किराएदारी जारी रखने के लिए इच्छुक होगा, वह अपने अधिभोग को जारी रखने का आशय रखते हुए शब्दों में अभिव्यक्ति द्वारा अथवा पट्टा के अवसान के बाद अगले माहों के लिए किराया देकर आचरण द्वारा इसे सिद्ध कर सकता है। मकानमालिक की सहमति भी उसके आचरण से आँकी जा सकती है किंतु यह प्रत्येक मामले के तथ्यों में अलग–अलग हो सकता है। चूंकि दोनों पक्षों ने **भगवानजी लक्ष्मसी (ऊपर)** मामले में निर्णय पर विश्वास किया है, मैं उक्त निर्णय के पैराग्राफों 9, 12 और 13 को उद्धृत करना वांछनीय महसूस करता हूँ:–

"9. vofèk d volku d ckn vfrèkkj.k dk ÑR; fdlh çdkj dh vfHkèkfr lftr ugh djrk gA ;fn iVVk d fofu'p;dj.k d ckn fdjk,nkj dkfct cuk jgrk g lkekU; fofèk fu;e ;g g fd og jtkenh l fdjk,nkj gA vofèk d fofu'p;dj.k d ckn edkuekfyd dh lgefr l dkfct cu g, fdjk,nkj vkj mldh lgefr d fcuk ,l dkfct fdjk,nkj d chp lfHkUurk dh tkuh pkfg,A igy okyk fdjk,nkj bfXy'k fofèk e jtkenh l fdjk,nkj g vkj ckn okyk fdjk,nkj vfrèkkj.k okyk fdjk,nkj vFkok bPNkulkj fdjk,nkj gA lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 116 d lekiu 'kCnk dh nf"V e vfrèkkj.k okyk iVVkèkkjh bPNkulkj fdjk,nkj dh ryuk e cgrj voLFkk e gA vfHkèkfr d fofu'p;dj.k d ckn dkfct cu jgu d çfr edku ekfyd dh lgefr u;h vfHkèkfr lftr djxhA èkkjk u tk vuè;kr fd;k g] og ;g g fd ,d vkj viuh vofèk d lekIr gk tku d ckn lifÙk ij dkfct cu g, iVVkèkkjh vFkok mi&iVVkèkkjh }kjk lkf{;r u;k iVVk Lohdkj dju dk çLrko gkuk pkfg, vkj nlh vkj fdjk;k vFkok vU;Fkk d Lohdj.k }kjk vfHk0;Dr edkuekfyd }kjk dkfct cu jgu d çfr fuf'pr lgefr gkuh gkxhA dkb [kl# ctkuth dikfM;k cuke ckt tjckb fgfjtHkk; okjMu] 1949 FCR 262 = (AIR 1949 FC 124) e QMjy U;k;ky; d ikl lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 116 d vèkhu lftr vfHkèkfr dh çÑfr d ç'u ij fopkj dju dk volj Fkk vkj e[kth] U;k;efr u cger dh vkj l ckyr g, dgk g fd vfHkèkfr] ftl iVVkèkkjh vFkok mi&iVVkèkkjh d ^^vfrèkkj.k** }kjk lftr fd;k tkrk g] fofèk e u;h vfHkèkfr g Hky gh foo{kk }kjk ble ijku iVV d fucèkuk e l vud cu jg ldr Fk(vkj fd u;h vfHkèkfr dk vfLrRo e yku d fy, f}i{kh; ÑR; gkuk gkxkA vkx ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd edku ekfyd dh lgefr] tk fdjk;k d Lohdj.k ij vkèkkfjr g] dk ,lh n'kk e fdjk;k dk Lohdj.k vkj 0;fDr tk bldk Hkxrku djrk g }kjk çkf[;r vfHkèkfr vfèkdkj dh Li"V ekU; rk e gkuk gkxkA irktfy 'kkL=h] U;k;efr viu vlgefr d fu.k; e lkjoku :i l lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 116 }kjk lftr vfHkèkfr dh çÑfr d lcèk e cger d lkFk lger g, vkj ;g fuEufyf[kr lç{k.kk l Li"V g%&

^^e[; fcn ij vkr g,] ;g n[kk tk,xk fd èkkjk iVVk d fofu'p;dj.k d ckn iVVkèkkjh dk dkfct cuk jguk çfrikfnr djrh g tk vkpj.k] lkekU; ifjfLFkfr;k e iVVkdrk d vèkhu fdjk,nkj d :i e cu jgu dh mldh bPNk dk min'kd g vkj mUgh fucèkuk ij] tgk rd o u;h fLFkfr d çfr ç;kT; g(ijku iVV d volku l u;h vfHkèkfr Lohdkj dju dk vudgk çLrko foof{kr djrk g] vkj tc iVVkdrk iVVkèkkjh d bl çdkj dkfct cu jgu d çfr lgefr nrk g] og vudg :i l iVVkèkkjh dk çLrko Lohdkj djrk g vkj i{kk d foof{kr djkj }kjk u;h vfHkèkfr ifj.kr gkrh gA tc] vkx iVVkèkkjh ml fLFkfr e fdjk;k nrk g vkj iVVkdrk bl Lohdkj djrk g] mudk vkpj.k vkj Hkh Li"Vr% u;h vfHkèkfr lftr dju d fy, i{kk d chp foo{kk lkeu ykrk gA**

le; d çokg }kjk vFkok NkMu dh ukfVl }kjk] iVVk fofuf'pr dj fn, tku d ckn dkfct fdjk,nkj] tk vfèkfu;e e lifjHkkf"kr vkèkkjk ij d flok, cn[kyh l lkfofèkd mUeDrrk dk vkun yrk g] l edkuekfyd }kjk fdjk;k d lerY; jkf'k d Lohdj.k ek= dk vfHkèkfr d u, djkj d lk{; d :i e ugh

ekuk tk ldrk gA (1961)3 SCR 813 = (AIR 1961 SC 1067) e bl U;k;ky; u fuEufyf[kr lçf{kr fd;k g%

^^rkfRod le; ij fdjk;k fucèku lfofèk;k }kjk vihykFkh dk cn[kyh d fo#) lkfofèkd mUeDrrk çnku dh x;h Fkh vkj mlI jkf'k;k] tk lfonkRed vfHkèkfr d volku d ckn fdjk;k d lerY; Fkh vFkok ftl ekud fdjk;k d :i e fu;r fd;k x;k Fkk] dk Lohdj.k lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 116 d vFk d vrxr iVVkèkkjh l fdjk;k d Lohdj.k d rY; ugh FkhA dkjokb dju e foQyrk tk U;k;ky;k ij vfèkjkfir lkfofèkd fu"kèk d ifj.kkeLo#i Fkh vkj vihykFkh dh vkj l fdlh LofPNd vkpj.k dk ifj.kke ugh Fkh] Hkh ^^vU;Fkk iVVkèkkjh d dkfct cu jgu d çfr lgefr nu** d rY; ugh FkhA fu'p; gh] fdjk,nkj ftld vfèkHkkx vfèkdkj dk fofuf'pr fd;k tkrk g vkj tk lkfofèkd mUeDrrk d QyLo#i vfèkHkkx e cuk jgrk g(d lkFk vfHkèkfr dh u;h lfonk dju oky edkuekfyd d fo#) çfr"kèk ugh gA vfHkO;Dr lfonk d vfrfjDr] i{kk dk vkpj.k fu%lng gLr{ki dk U;k;kfpr Bgjk ldrk g fd lfonkRed vfHkèkfr d fofu'p;dj.k d ckn edkuekfyd u fdjk,nkj d lkFk u;k lfonk fd;k Fkk fdr D;k vkpj.k ,lk gLr{ki U;k;kfpr Bgjkrk g] lno çR;d ekey d rF;k ij fuHkj djxkA fdjk,nkj ftldh vfHkèkfr fofuf'pr dh x;h g }kjk ifjlj dk vfèkHkkx lfofèk }kjk çnku fd, x, lj{k.k d QyLo#i g vkj u fd lfonk ftl fofuf'pr fd;k tkrk g l mnHkr gku oky fdlh vfèkdkj d dkj.kA lfofèk mld dCtk dk ljf{kr djrh g tc rd 'kr] tk mld fo#) cn[kyh dk vkn'k çkIr dju e iVVkdrk dk U;k;kfpr Bgjkrh g] fo|eku ugh gA tc ,d ckj U;k;ky; }kjk vfèkdkfjrk d ç;kx d fo#) fu"kèk gVk fn;k tkrk g] lkekU; fofèk d vèhu iVVkdrk }kjk dCtk iku dk vfèkdkj gjdr e vk tkrk g vkj fdjk,nkj dk cn[ky dju dk iVVkdrk d vfèkdkj dk ç;kx 'kri.k ugh gkxk tc rd lfofèk vU;Fkk çkoèkkfur ugh djrh gA**

12. vihykFkhx.k d fo}ku vfèkoDrk u rd fd;k fd tc dHkh fdjk,nkj] ftldh vfHkèkfr fofuf'pr dh x;h g fdr tk dkfct cuk jgrk g] l edkuekfyd }kjk fdjk;k Lohdkj fd;k tkrk g] vfrèkkj.k }kjk vfHkèkfr lftr gkrh gA rd ;g Fkk fd doy iVVkdrk dh lgefr vkj u fd iVVkèkkjh dh lgefr èkkjk 116 d ç;ktu l rkfRod FkhA ge bl çfrokn dk Lohdkj dju d bPNd ugh gA geu igy gh n'kk;k g fd èkkjk dk vkèkkj rRdkyhu edkuekfyd vkj rRdkyhu fdjk,nkj d chp f}i{kh; lfonk g] ;fn fdjk,nkj dk dkfct cu jgu dk lkfofèkd vfèkdkj g] vkj ;fn og fdjk;k dk Hkxrku djrk g] og lkekU;r% mld dkfct cu jgu d fy, çLrko d çfr fun'k ;kX; ugh gkxk ftl edkuekfyd }kjk mld Lohdj.k }kjk lfonk e lifjofrr fd;k tk ldrk gA ge ;g ugh dgr g fd èkkjk 116 dk çoru lno vioftr fd;k tkrk g pkg tk Hkh ifjfLFkfr;k gk ftud vèhu fdjk,nkj fdjk;k dk Hkxrku djrk g vkj edkuekfyd bl Lohdkj djrk gA geu ifjfLFkfr;k e l dN d lcèk e] ftle vfHkèkfr dh u;h lfonk fu"df"kr dh tk ldrh g] AIR 1961 SC 1067 e bl U;k;ky; d lç{k.kk dk igy fufn"V fd;k gA geu igy gh vfHkfuèkkfjr fd;k g fd lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 116 dk li.k vkèkkj ;g g fd lkekU; vfHkèkfr dh fLFkfr e edkuekfyd] tgk og [kkyh dju d ukfVl d ckn fdjk;k Lohdkj ugh djrk g] cn[kyh okn nkf[ky dju dk vkj dCtk dh fMØh çkIr dju dk gdnkj g] vkj bl çdkj fdjk;k dk mldk Lohdj.k lLi"V ÑR; g tk dkfct cu g, fdjk,nkj d çfr mldh lgefr dh bPNk dk |krd gA ,lk ogk ugh

g tgk fdjk;k vfèkfu;e fo|eku g(vkj ;fn fdjk,nkj dgrk g fd edkuekfyd u fdjk,nkj d dkfct cu jgu d çfr viuh lgefr dk minf'kr djr g, fdjk;k lkfofèkd vfHkèkfr d :i e ugh cfYd doy fofèkd fdjk;k d :i e Lohdkj fd;k] fdjk,nkj dk gh bl LFkkfir djuk gA bl ekey e bl LFkkfir dju dk dkb ç;kl ugh fd;k x;k g vkj edkuekfyd }kjk fdjk;k d Lohdj.k d vfrfjDr nj&nj rd ;g minf'kr dju d fy, dkb lk{; ugh g fd og vfHkèkfr dh lekfIr d ckn vihykFkhx.k d dkfct cu jgu dh bPNk j[krk FkkA bld vfrfjDr] tl k geu igy gh minf'kr fd;k g] fdjk;k nu e fdjk,nkj dk vk'k; Hkh rkfRod gA ;fn og lkfofèkd vfHkèkfr d vèkhu Hkxr; fdjk;k d :i e fdjk;k nrk g] edkuekfyd fdjk;k d :i e bldk Lohdkj djd vfrèkkj.k }kjk vfHkèkfr lftr ugh dj ldrk gA ,l ekey e] i{kx.k ;FkkDr (id idem) ugh gkx vkj dkb vke lgefr ugh gkxhA AIR 1961 SC 1067 e ftlu 1949 FCR 262 = (AIR 1949 FC 124) e QMjy U;k;ky; }kjk vfèkdfFkr fl)kr dk vulj.k lgh g vkj bl ij iufopkj dh vko';drk ugh gA

*13. vr%] ge bl fu"d"k ij vkr g fd vihykFkhx.k }kjk vfrèkkj.k ugh Fkk vkj ;fn ,l Fkk] ;g ç'u fd D;k vfrèkkj.k }kjk lftr dh x;h vfHkèkfr fuek.k ç;ktu l Fkh vkj blfy, edkuekfyd vfrèkkj.k }kjk vfHkèkfr d fofuf'p;dj.k d fy, Ng ekg dk ukfVl nu d fy, ckè; Fkk] fopkjkFk mnHkr ugh gkrk gA***

11. आगे यह पता चलता है कि **'काई खुसरु बेजोनजी कपाड़िया बनाम बाई जेरबाई हिरजीभाय वारडेन, 1949 FCR 262; AIR 1989 FC 124,** में फेडरल न्यायालय द्वारा दिया गया निष्कर्ष उक्त कथित निर्णय में अनुमोदित किया गया है और इसका प्रासंगिक भाग यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*^^fdr] èkkjk 116 d vFk d vrxr u;h vfHkèkfr lftr dju okyk djkj i{kk d vkpj.k l foof{kr fd;k tk ldrk gA vfHk0;Dr lfonk d vfrfjDr] i{kk dk vkpj.k fu%lng gLr{ki U;k;kfpr Bgjk ldrk g fd lfonkRed vfHkèkfr d fofu'p;dj.k d ckn edkuekfyd u fdjk,nkj d lkFk u;k lfonk fd;k Fkk] fdr D;k vkpj.k ,l gLr{ki dk U;k;kfpr Bgjkrk g] lno çR;d ekey d rF;k ij fuHkj djxkA***

12. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 116 किराया के स्वीकरण मात्र पर आकृष्ट नहीं होगी किंतु पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद किराएदार को काबिज बने रहने की अनुमति देने वाले मकानमालिक का आचरण महत्वपूर्ण है। **भुनेश्वर प्रसाद एवं एक अन्य बनाम यूनाइटेड कमर्शियल बैंक एवं अन्य (ऊपर)** में निर्णय में की गयी चर्चा से यह स्पष्ट है कि पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद भी किराया परिसर के ऊपर अपना कब्जा जारी रखने के लिए किराएदार को अनुमति देते हुए बढ़ाए गए किराया की निकासी करना शुरू कर दिया था। मेरा दृढ़ दृष्टिकोण है कि ऐसी स्थितियों में मकानमालिक का आचरण सदैव प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होगा। अब वर्तमान मामले पर आते हुए और मामला अभिलेख का परिशीलन करने के बाद यह प्रतीत होता है कि वाद परिसर के लिए अभिधृति दिनांक 1.1.2002 से आरंभ होकर दिनांक 31.12.2006 को समाप्त होने वाली नियत अवधि के लिए थी और दिनांक 12.2.2002 को पक्षों द्वारा और उनके बीच पट्टा विलेख निष्पादित किया गया था।

13. प्रदर्श 3 अपने अधिवक्ता बाल मुकुन्द लाल के माध्यम से वादी की ओर से याची को भेजी गयी दिनांक 18.12.2006 की कानूनी नोटिस की प्रति है जिसके द्वारा याची को पट्टा के अवसान के तुरन्त बाद किराया परिसर को छोड़ने एवं खाली करने तथा दिनांक 1.1.2007 के प्रभाव से इसका रिक्त

कब्जा सौंपने का निर्देश दिया गया था। याची को वाद परिसर से बेदखल करने की कार्रवाई पट्टा की अवधि के अवसान के पहले आरंभ की गयी थी और पट्टा के अवसान के बाद वाद परिसर खाली करके बाध्यता के अपने भाग का पालन करने के लिए उसे सम्यक रूप से सूचित किया गया था और उसे काफी पहले सूचित किया गया था।

जब याची ने दिनांक 1.1.2007 को अर्थात् पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद पट्टांतरण परिसर खाली नहीं किया था, दिनांक 4.1.2007 को तुरन्त बेदखली वाद दाखिल किया गया था। वादी का यह आचरण बिल्कुल स्पष्ट है कि वह पट्टा के विनिश्चयकरण के बाद वाद परिसर के ऊपर याची का कब्जा बने रहने की अनुमति देने का आशय नहीं रखता था। याची ने अभिवचन किया है कि उसने दिसंबर, 2006 से फरवरी, 2007 तक के लिए किराया दिया था और वादी द्वारा इसे स्वीकार किया गया था। याची का यह प्रतिवाद साक्ष्य और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री की दृष्टि में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। ज्योंही वादी जान सका था कि याची/प्रतिवादी ने उसके बचत बैंक खाता में 9,504/- रुपयों की उक्त राशि जमा किया था, इस प्रकार जमा की गयी राशि को विकलित करने और व्यक्ति जिसने उसके खाता में चेक जमा किया है को नामित करने के अनुरोध के साथ दिनांक 1 फरवरी, 2007 के पत्र (प्रदर्श 3/C) द्वारा संबंधित बैंक के शाखा प्रबंधक को मामला तुरन्त सूचित किया गया था। शाखा प्रबंधक का परीक्षण अ॰ सा॰ 3 के रूप में किया गया है और उसने वादी के प्रतिवाद का समर्थन किया है। वादी के अनुरोध पर उसके खाता से 9,504/- रुपयों की उक्त राशि विकलित की गयी थी और विविध खाता में रखी गयी थी। तत्पश्चात, दिनांक 9.2.2007 के पत्र के तहत वादी द्वारा याची को यह सूचना भी दी गयी थी कि वादी के खाता में दिनांक 23.12.2006 के चेक सं॰ 531898 के माध्यम से जमा की गयी 9,504/- रुपयों की उक्त राशि को विकलित करने का निर्देश दिया गया था और याची को भविष्य में ऐसी गलती नहीं करने की चेतावनी दी गयी थी क्योंकि वादी नयी अभिधृति सृजित करने का आशय नहीं रखता हैं और इसलिए, आपसे उसके लिए साक्ष्य सृजित करने की उम्मीद नहीं की जाती है। इस संबंध में वादी द्वारा उठाया गया कदम स्पष्टत: चित्रित करता है कि वह वाद परिसर के ऊपर याची को काबिज बने रहने की अनुमति देने का आशय नहीं रखता था और आगे की अवधि के लिए पट्टा को नवीकृत करने का आशय नहीं था। कल्पना की किसी सीमा तक याची द्वारा वादी के खाता में प्रत्यक्षत: चेक के माध्यम से तीन माह का किराया जमा किए जाने को किराया के स्वीकरण के रूप में नहीं कहा जा सकता है। याची अटकल नहीं लगा सकता है कि प्रतिवादी क्या बचाव करने जा रहा है और इसलिए लिखित कथन में प्रतिवादी द्वारा किए बचाव को वादी के अभिवचन में किए जाने की उम्मीद नहीं की जा सकती है और साक्ष्य देकर अथवा प्रतिवादी द्वारा पेश किए गए गवाहों का प्रति परीक्षण करके ऐसे बचाव का खंडन किया जा सकता है। वादी ने अपनी सहमति के बिना अपने खाता में प्रतिवादी द्वारा जमा की गयी राशि के संबंध में अपना खाता विकलित कराने का कदम सही प्रकार से उठाया है।

14. प्रत्यर्थी-विरोधी पक्षकार ने **(2005)5 SCC 543; (2006)6 SCC 205** में प्रकाशित निर्णय पर भी विश्वास किया है। यह दृष्टिकोण कि पूर्व किराया के समतुल्य किराया का स्वीकरण मात्र संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 116 के अर्थ के अधीन पट्टा के अवसान के बाद किराएदार को काबिज बने रहने की अनुमति देते हुए मकानमालिक की सहमति नहीं मानी जा सकती है, **''भवनजी लखमसी बनाम हिमतलाल जमनादा दानी'' और काई खुसरु बेजोनजी कपाड़िया बनाम बाई जेरबाई हिरजीभाय वारडेन (ऊपर)** में निर्णय से समर्थन पाता है।

15. इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए और उक्त निर्दिष्ट निर्णयों की दृष्टि में, मैं इस पुनरीक्षण में गुणागुण नहीं पाता हूँ। विद्वान अपर मुंसिफ ने दोनों पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य एवं दस्तावेजों

पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है। **भुनेश्वर प्रसाद बनाम यूनाइटेड कमर्शियल बैंक (ऊपर)** मामले में सामने आने वाले तथ्य वर्तमान मामले में उपलब्ध नहीं है और इसलिए उक्त निर्णय याची की मदद नहीं करेगा।

16. साक्ष्य एवं दस्तावेज का अधिमूल्यन करने के लिए आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री में मुद्दे के तौर पर चर्चा की गयी है जिसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। याची ने पहले ही वाद में लगभग आठ वर्ष लगाया है और वाद परिसर के कब्जा का आनन्द लिया है। अत: उसे इस निर्णय की तिथि से 60 दिनों के भीतर वाद परिसर खाली करने का निर्देश दिया जाता है जिसमें विफल होने पर उसे विधि की सम्यक प्रक्रिया द्वारा वहाँ से बेदखल किया जाएगा। अपर मुंसिफ, राँची द्वारा पारित टी॰ एस॰ सं॰ 01/2007 में निर्णय और डिक्री एतद् द्वारा मान्य ठहरायी जाती है।

17. तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

श्याम बिहारी सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 3620 of 2013. Decided on 15th April, 2014.

नैसर्गिक न्याय–उल्लंघन–कोई नोटिस दिए बिना विलेख लेखक की अनुज्ञप्ति का रद्दकरण–कोई आदेश जो दंडात्मक है और जिसका किसी व्यक्ति के लिए सिविल परिणाम है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन किए बिना पारित नहीं किया जा सकता है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैरा 2 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Ranjan, For the Petitioner; Mr. J.C to G.A., For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका में याची ने उपायुक्त-सह-जिला रजिस्ट्रार, पलामू द्वारा जारी मेमो सं॰ 418 दिनांक 30.5.2013 (परिशिष्ट-5) के आदेश को अभिखंडित करने की प्रार्थना की है जिसके द्वारा याची की विलेख लेखक की अनुज्ञप्ति रद्द कर दी गयी है।

2. उक्त आदेश का विरोध करने के लिए याची द्वारा उठाया गया संक्षिप्त बिंदु यह है कि आदेश कतिपय अभिकथनों के आधार पर पारित किया गया है। यह दंडात्मक है और इसे याची को कोई नोटिस दिए बिना, सुनवाई अथवा प्रतिनिधित्व किए जाने का अवसर दिए बिना पारित किया गया है।

3. प्रत्यर्थीगण ने उक्त अवस्था स्वीकार करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। प्रतिशपथ पत्र के पैरा-8 में यह कथन किया गया है कि यद्यपि याची को नोटिस भेजी गयी थी, इसे उसने प्राप्त नहीं किया था।

4. यह सुनिश्चित है कि कोई आदेश जो दंडात्मक है और जिसका किसी व्यक्ति के लिए सिविल परिणाम है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अनुपालन किए बिना पारित नहीं किया जा सकता है।

5. वर्तमान मामले में, याची पर समुचित नोटिस तामील किए बिना और याची को सुनवाई एवं प्रतिनिधित्व किए जाने का अवसर दिए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। इस प्रकार यह नैसर्गिक

न्याय के सिद्धांतों का स्पष्ट उल्लंघन है। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश शून्य एवं अकृत है और संपोषणीय नहीं है।

6. पूर्वोक्त कारणों से, यह रिट याचिका अनुज्ञात की गयी है।

7. उपायुक्त-सह-जिला रजिस्ट्रार, पलामू द्वारा जारी दिनांक 30.5.2013 के मेमो सं॰ 418 (परिशिष्ट-5) में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है।

8. किंतु यह कहना अनावश्यक है कि यदि याची के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए कोई वैध आधार है, प्रत्यर्थीगण विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुरुप अग्रसर होने के लिए स्वतंत्र होंगे।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

विधाता सिंह उर्फ गुल्लु सिंह

cuke

झारखंड राज्य

I.A. No. 8195 of 2013 in Cr. Appeal (DB) No. 438 of 2011. Decided on 24th March, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—दंडादेश का निलंबन–हत्या का विचारण–तीन चश्मदीद गवाह हैं–अन्वेषण अधिकारी के उदासीन रवैये के कारण अभियुक्त को संदेह का लाभ नहीं दिया जा सकता है–यह दंडादेश के निलंबन का आदेश पाने का तीसरा प्रयास है–समय प्रवाह के सिवाए परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 6 से 11)

निर्णयज विधि.–AIR 2008 SC 1882; (2002)9 SCC 366; (2004)6 SCC 175—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s P.P.N. Roy, Ashok Kumar Sinha, For the Appellant; A.P.P., For the State; M/s Sailesh, L.C.N. Sahdeo, For the Informant.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह अंतर्वर्ती आवेदन सत्र विचारण सं॰ 204 वर्ष 2010 में सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा अधिनिर्णीत अपीलार्थी को दंडादेश के निलंबन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 389 के अधीन दाखिल किया गया है जिसके द्वारा अपीलार्थी को निशांत कुमार उर्फ कुंदन सिंह की हत्या कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया है और इस अपीलार्थी को आजीवन कारावास का दंड और 10,000/- रुपयों का जुर्माना अधिनिर्णीत किया गया है और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में उसे छह माह का कठोर कारावास भुगतने का आदेश भी दिया गया है।

2. इस न्यायालय ने सत्र विचारण सं॰ 204 वर्ष 2010 के अभिलेख और कार्यवाही को प्राप्त किया है और हमने इसका परिशीलन किया है और अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता और विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ तथा सूचक के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुना है।

3. अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों को देखते हुए अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। चूँकि दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों का अधिक विश्लेषण नहीं कर रहे हैं किंतु इतना कहना पर्याप्त है कि:–

(i) vfHk;ktu dk ekeyk ,d l vfèkd p'enhn xokgk ij vkèkkfjr g tk v0 lk0 1, v0 lk0 2 vkj v0 lk0 3 g vkj mud vfHklk{; dk n[kr g, mUgku Li"Vr% gR;k dkfjr dju e vkXu;kL= dk mi;kx djd bl vihykFkh vfHk;Dr dh Hkfedk dk fooj.k fn;k gA

(ii) v0 lk0 4 MkO 'kyUn dekj }kjk fn, x, lk{; dk n[kr g,] ftUgku erd d 'kjhj dk 'ko ijh{k.k fd;k] ;g çrhr gkrk g fd mudk vfHklk{; p'enhn xokgk d vfHklk{; l i;kIr lif"V ik jgk gA

(iii) vUo"k.k vfèkdkjh vFkkr v0 lk0 11 }kjk fn, x, vfHklk{; dk n[kr g, p'enhn xokgk }kjk fn, x, vfHklk{; dh lif"V dh x;h gA

(iv) vihykFkh d fy, mifLFkr fo}ku vfèkoDrk u foLrkjiod ekey ij rd fd;k g vkj vud fcnvk lfgr bl fcn dk mBk;k g fd rFkkdfFkr p'enhn xokg p'enhn xokg ugh g vkj vkXu;kL= ft l vfHkdfFkr :i l ç;Dr fd;k x;k g vkj vUo"k.k d nkjku tCr fd;k x;k g vkj dkjrlk ftUg vUo"k.k d nkjku tCr fd;k x;k g dk U;k;kyf;d ç;kx'kkyk ugh Hktk x;k Fkk vkj dkb lk{; ugh g fd mDr vkXu;kL= dk mi;kx fd;k x;k FkkA vihykFkh d fo}ku vfèkoDrk }kjk fd;k x;k ;g çfrokn nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 389 d vèkhu nMkn'k d fuycu d pj.k ij e[;r% bu dkj.kk l Lohdkj ugh fd;k tkrk g%

(a) vfèkxg.k lph d erkfcd] vkXu;kL= ,o dkjrl dh cjkenxh dh x;h g ftl çn'kk 10 vkj 12 d :i e fpfUgr ,o fl) fd;k x;k gA (tlk vihykFkh d fo}ku vfèkoDrk ,o fo}ku ,0 ih0 ih0 vkj lpd d fo}ku vfèkoDrk u fuonu fd;k gA

(b) ln< vUo"k.k vFkok =fVi.k vUo"k.k dk ykHk vfHk;Dr dk ugh fn;k tk ldrk gA ;gk vfHkxfgr oLrvk dk vUo"k.k vfèkdkjh }kjk U;k;kyf;d ç;kx'kkyk ugh Hktk x;k Fkk] vUo"k.k ,tUlh }kjk dh x;h og xyrh p'enhn xokgk v0 lk0 1, 2 vkj 3 dk vfo'okl ;kX; vkj vfo'oluh; ugh cukrh g ;fn o vU;Fkk fo'okl ;kX; ,o fo'oluh; xokg gA vkylh vUo"k.k vfèkdkjh fo'okl ;kX; xokgk dk vfo'okl ;kX; xokgk e lifjofrr ugh dj ldrk g vkj blfy,] bl pj.k ij vfHk;Dr dk ykHk ugh fn;k tk ldrk g D;kfd vkylh vUo"k.k vfèkdkjh u vkXu;kL= ,o dkjrl dk U;k;kyf;d ç;kx'kkyk ugh Hktk gA

(c) v0 lk0 1, 2 vkj 3 vFkkr p'enhn xokgk d çfr ijh{k.k dk n[kr g, çFke n"V;k erd dh gR;k dkfjr dju e vihykFkh vfHk;Dr dh vrxLrrk g vkj bu p'enhn xokgk d çfr ijh{k.k l vihykFkh vfHk;Dr d i{k e çFke n"V;k dN Hkh ugh vk;k gA

4. पूर्वोक्त कारणों से हम अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के बचाव कि आग्नेयास्त्र एवं कारतूस का समुचित रूप से मिलान नहीं किया गया था और इसलिए, अपीलार्थी अभियुक्त को अधिनिर्णीत दंडादेश निलंबित किया जा सकता है, स्वीकार करने के इच्छुक नहीं है। यह प्रतिवाद गुणागुण रहित है। इस तर्क को त्यक्त करने के लिए अनेक अन्य कारण हैं किंतु चूँकि यह दांडिक अपील लंबित है, हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर आगे चर्चा नहीं कर रहे हैं।

5. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि विचित्र रूप से इस हत्या मामले को पृथक रूप से दर्ज किया गया था और आयुध अधिनियम के अधीन अपराध दर्ज किया गया था। पिस्तौल और कारतूसों की बरामदगी को कतरास (अंगर पथरा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 29 वर्ष 2010 के तहत पृथक अपराध के रूप में दर्ज किया गया था। यह तथ्य भी आक्षेपित निर्णय के पैराग्राफ 21 में और सत्र विचारण सं॰ 204 वर्ष 2010 में सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दंडादेश में दर्ज किया गया है और अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि उक्त मामला जी॰ आर॰ सं॰ 380 वर्ष 2010 के रूप में संख्यांकित किया गया था और दिनांक 16.3.2012 के आदेश के तहत न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद द्वारा दिनांक 16.3.2012 को दोषमुक्ति का आदेश पारित किया गया है और इसलिए, इस अपीलार्थी अभियुक्त द्वारा आग्नेयास्त्र का उपयोग नहीं किया गया है और इसलिए सत्र विचारण सं॰ 204 वर्ष 2010 में सत्र न्यायाधीश, धनबाद द्वारा पारित दंडादेश निलंबित किया जा सकता है। यह प्रतिवाद भी इस न्यायालय द्वारा मुख्यतः इन कारणों से स्वीकार नहीं किया गया है:–

(a) nkuk ekey iFkd :i l nt fd, x, g vkj blfy, vfHky[k ij ektn lk{; d vkèkkj ij nkuk ekey iFkd gA

(b) l= fopkj.k l0 204 o"k 2010 d rF;k e] tlk ;gk Åij dFku fd;k x;k g] vfHk;ktu dk ekeyk ,d l vfèkd p'enhn xokgk vFkkr v0 lk0 1, 2 vkj 3 ij vkèkkfjr g vkj mUgku vihykFkh vfHk;Dr d fo#) çFke n"V;k ekeyk fl) fd;k gA

(c) bld vfrfjDr] th0 vkj0 dl l0 308 o"k 2010 e ikfjr fnukd 16.3.2012 d nk"kefDr vkn'k dk n[kr g, ;g çrhr gkrk g fd bl ekey dk mDr vkyl h vUo"k.k vfèkdkjh fopkj.k U;k;ky; vFkkr U;kf;d nMkfèkdkjh] çFke J.kh] èkuckn d U;k;ky; dHkh ugh x;k Fkk D;kfd og vfHkxg.k lph dk p'enhn xokg FkkA >kj[kM jkT; e] vfHk;ktu xokg d :i e fopkj.k U;k;ky; ugh tku dh vUo"k.k vfèkdkjh dh :Vhu çFkk g vkj ;g ekeyk >kj[kM jkT; e çpfyr lkekU; fu;e dk viokn gA ***vUo"k.k vfèkdkjh d vkyL;i.k jo; dk ykHk vfHk;Dr dk ugh fn;k tk ldrk gA***

(d) bld vfrfjDr] th0 vkj0 dl l0 380 o"k 2010 e U;kf;d nMkfèkdkjh] çFke J.kh] èkuckn }kjk ikfjr nk"kefDr vkn'k dk n[kr g, ;g çrhr gkrk g fd vfHk;ktu }kjk doy ,d xokg dk ijh{k.k fd;k x;k gA bl çdkj] vfHk;ktu fo'k"kr% vUo"k.k vfèkdkjh d vkyL; dk iu% ldr g vkj blfy,] l= fopkj.k l0 204 o"k 2010 e vfHk;Dr dk ykHk ugh fn;k tk ldrk g tlk ;gk Åij dFku fd;k x;k gA mDr vUo"k.k vfèkdkjh }kjk vkXu;kL= ,o dkjrl dk U;k;kyf;d ç;kx'kkyk ugh Hktk x;k FkkA bl çdkj] ***çFke n"V;k ;g çrhr gkrk g fd vUo"k.k vfèkdkjh vfHk;Dr dh enn dj jgk gA***

(e) th0 vkj0 dl l0 380 o"k 2010 e lpd ifyl vfèkdkjh Fkk tk ifyl lc&bLiDVj dh J.kh dk g vkj og Hkh vfHk;ktu xokg d :i e U;k;ky; ugh x;k FkkA bl çdkj] ***vfHk;ktu d i{kikrh@n'euhi.k jo; d dkj.k*** *th0 vkj0 dl l0 380 o"k 2010 e U;kf;d nMkfèkdkjh] çFke J.kh] èkuckn }kjk nk"kefDr dk fcn gA*

(f) bld vfrfjDr] th0 vkj0 dl l0 380 o"k 2010 e U;kf;d nMkfèkdkjh] çFke J.kh] èkuckn }kjk ikfjr nk"kefDr d vkn'k dk n[kr g, ;g vfHk;Dr dh lEekuiod nk"kefDr ugh gA U;kf;d nMkfèkdkjh] çFke J.kh] èkuckn }kjk fn, x, mDr fu.k; d ijkxkQ 11 dk iBu fuEufyf[kr g%

*"11. mDr rF; ij] e bl fu"d"k ij vk;k g fd vfHk;ktu u oreku vfHk;Dr dk bl ekey e xLr dju d fy, vfHky[k ij i;kIr lk{; ugh yk;k g vkj mlds fo#) leLr ;fDr;Dr lng d ij mDr vkjkik dk fl) dju e l{ke ugh gvk gA**

6. इस प्रकार, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद के मुताबिक, अभियोजन अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य लाने में विफल रहा है। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि दोनों मामलों को भिन्न रूप से संभाला गया था। वर्तमान मामला सत्र विचारण सं॰ 204 वर्ष 2010 है जिसके तीन चश्मदीद गवाह हैं जिनका परीक्षण जी॰ आर॰ केस सं॰ 380 वर्ष 2010 में अभियोजन गवाह के रूप में किया जा सकता था। प्रासंगिक समय पर न तो अन्वेषण अधिकारी चौकन्ना था और न ही आरक्षी अधीक्षक, धनबाद सतर्क थे और अन्वेषण अधिकारी के उदासीन रवैया के कारण सत्र विचारण सं॰ 204 वर्ष 2010 में अभियुक्त को लाभ नहीं दिया जा सकता है।

7. खिलाड़ी बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य, AIR 2008 SC 1882, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विशेषत: पैराग्राफ 10 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

10. vuojh cxe cuke 'kj ekgEen ,o ,d vU;] 2005 (7) SCC 326, e vU; ckrk d lkFk fuEufyf[kr lçf{kr fd;k x;k Fkk%

"7. mPp U;k;ky; d vkn'k dk ljljh ifj'khyu Hkh food dk ijk xj bLreky n'kkrk gA ;|fi tekur vkonuk ij vkn'k ikfjr djr g, U;k;ky; dk lk{; d foLrkji.k ijh{k.k ,o ekey d x.kkx.k d foLrr nLrkothdj.k d ijh{k.k l cpuk g] fQj Hkh tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; dk lr"V gkuk pkfg, fd D;k çFke n"V;k ekeyk curk g fdr ekey d x.kkx.k ij lex fopkj vko';d ugh gA tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky; dk U;kf;d rjhd l vkj u fd :Vhuh rjhd l viu Lofood dk ç;kx dju dh vko';drk gA

8. çFke n"V;k ;g fu"df"kr dju d fy, fd tekur D;k çnku fd;k x;k g fo'k"kr% tgk vfHk;Dr ij xHkhj vijk/k dju dk vkjki yxk;k x;k g] vkn'k e dkj.k minf'kr dju dh vko';drk gA tekur vkonu ij fopkj djr g, U;k;ky;k d fy, tekur çnku dju d igy vU; ifjfLFkfr;k d lkFk fuEufyf[kr dkjdk ij fopkj dju dh vko';drk gA

(1) ***nk"kflf) dh fLFkfr e vfHk;kx dh çÑfr vkj nM dh dBkjrk vkj leFkudkjh lk{; dh çÑfrA***

(2) xokg d lkFk NMNkM dju vFkok ifjoknh dk [krj dh vk'kdk dh ;fDr;Dr vk'kdkA

(3) ***vkjki d leFku e U;k;ky; dh çFke n"V;k lrf"VA***

,l dkj.kk l vlc) dkb vkn'k food d xj bLreky l ihfMr gkrk g tlk bl U;k;ky; }kjk *jke xkfoUn mikè;k; cuke ln'ku flg ,o vU;] (2002)3 SCC 598; iju vkfn cuke jkefcykl ,o ,d vU;] vkfn (2001)6 SCC 338 vkj dY;k.k pn ljdkj cuke jkt'k jtu mQ ili ;kno ,o ,d vU;] JT 2004 (3) SC 442, e xkj fd;k x;k gA** ¼tkj Mkyk x;k½*

8. रामजी प्रसाद बनाम रतन कुमार जायसवाल एवं एक अन्य, (2002)9 SCC 366, में पैराग्राफ 3 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"3. ,l ekey e tgk vfHk;Dr dk Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 302 d vèkhu fopkj.k U;k;ky; }kjk nk"kh ik;k x;k Fkk] vkiokfnd jkLrk viuku d fy, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk dkb dkj.k ugh fn;k x;k gA ***,l ekeyk e lkekU; 0;ogkj nMkn'k fuyfcr ugh djuk g vkj doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fuycu dk ykHk fn;k tk ldrk gA*** *(tkj fn;k x;k)*

9. हरियाणा राज्य बनाम हसमत, (2004)6 SCC 175, मामले में पैराग्राफ 6 से 9 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"6. lfgrk dh èkkjk 389 vihy yfcr jgr g, nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj tekur ij vihykFkh dh fuefDr ij fopkj djrh gA ***èkkjk 389 d vko';d vo;ok e l ,d nMkn'k vFkok vihy fd, x, vkn'k d fu"iknu dk fuycu vknf'kr dju d fy, vihyh; U;k;ky; }kjk fyf[kr e dkj.k dk nt dju dh vko';drk gA*** *;fn og ifjjkèk e g] mDr U;k;ky; fun'k n ldrk g fd ml tekur ij vFkok Lo; viu cèk i= ij fueDr fd;k tk,A* ***fyf[kr e dkj.kk dk nt dju dh vko';drk Li"Vr% minf'kr djrh g fd çklfxd igyvk ij lkoèkkuhiod fopkj djuk gkxk vkj nMkn'k d fuycu vkj tekur çnku dju dk fun'k nu okyk vkn'k :Vhu rjhd l ikfjr ugh fd;k tkuk pkfg,A***

7. ***vihyh; U;k;ky; ekey dk oLrfu"B fuèkkj.k dju d fy, vkj bl fu"d"k fd ekeyk nMkn'k d fuycu ,o tekur çnku dju dk vko';d cukrk g] d fy, dkj.k nt dju d fy, dÙkO;c) gA*** *oreku ekey e] nMkn'k d fuycu vkj tekur çnku dju dk fun'k nu d fy, mPp U;k;ky; ij vfèkeku Mkyu okyk ,dek= dkjd vfHk;Dr&çR;FkhZ dk çnku fd, x, ijky dh vofèk d nkjku Lor=rk d n#i;kx d vfHkdFku dh vuifLFkfr çrhr gkrh gA*

8. fo}ku l= U;k;kèkh'k] xMxko u fnukd 24.10.2001 d fu.k; }kjk vfHk;Dr çR;FkhZ dk nk"kh ik;k gA çR;FkhZ }kjk nkfMd vihy lO 100 MhO chO o"k 2002 nkf[ky dh x;h FkhA ;g rF; fd vihy yfcr jgu d nkjku vfHk;Dr çR;FkhZ ijky ij Fkk] n'kkrk g fd vkjHk e vfHk;Dr&çR;FkhZ dk nMkn'k d fuycu dk ykHk ugh fn;k x;k FkkA ;g rF; ek= fd ijky dh vofèk d nkjku vfHk;Dr u Lor=rk dk n#i;kx ugh fd;k g] vfuok;r% nMkn'k d fu"iknu dk fuycu vkj tekur çnku djuk vko';d ugh cukrk gA mPp U;k;ky; }kjk fopkj fd, tku d fy, tk vko';d Fkk] og ;g Fkk fd D;k nMkn'k d fu"iknu d fuycu vkj rRi'pkr tekur çnku dju d fy, dkj.k fo|eku FkA mPp U;k;ky; lgh fl)kr dk nf"V e j[krk çrhr ugh gkrk gA

9. fot; dekj cuke ujUn vkj jketh çlkn cuke jru dekj tk; loky e bl U;k;ky; }kjk ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO nO lO dh èkkjk 302 d vèkhu nk"kfl) vrxLr dju oky ekeyk e ***doy vkiokfnd ekeyk e nMkn'k d fu"iknu d fuycu dk ykHk çnku fd;k tk ldrk gA*** *mPp U;k;ky; dk vk{kfir vkn'k bl vko';drk dk ijk ugh djrk gA fot; dekj ekey e ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd HkkO nO lO dh èkkjk 302 d vèkhu nMuh; gR;k tl xHkhj vijkèk dk vrxLr dju oky ekey e tekur d fy, çkFkuk ij fopkj djr g,* ***U;k;ky; dk vfHk;Dr d fo#) yxk, x, vfHk;kx dh çÑfr] rjhd dk ftle vfHkdfFkr :i l vijkèk fd;k x;k g] vijkèk dh xHkhjrk vkj gR;k dk xHkhj vijkèk dju d fy,***

*mudk nk"kfl) fd, tku d ckn vfHk;Dr dk tekur ij fueDr dju dh okNuh;rk t l çkIfxd dkjdk ij fopkj djuk pkfg,A vk{kfir vkn'k ikfjr djr g, mPp U;k;ky; }kjk bu igyvk ij fopkj ugh fd;k x;k gA*** (tkj fn;k x;k)

10. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों, न्यायिक उद्घोषणाओं के समेकित प्रभाव के कारण और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए और इस तथ्य को भी देखते हुए कि पहले भी इस अपीलार्थी के दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना दिनांक 17.10.2011 के आदेश के तहत इस न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं की गयी थी और तत्पश्चात पुनः दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 438 वर्ष 2011 में दंडादेश के निलंबन के लिए आई॰ ए॰ सं॰ 1041 वर्ष 2012 दाखिल किया गया था और तर्क के बाद इस आई॰ ए॰ पर जोर नहीं दिया गया था और इसे जोर नहीं दिए जाने के कारण दिनांक 8.3.2012 के आदेश के तहत निपटाया गया था और तत्पश्चात, समय प्रवाह के सिवाए परिस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। यह दंडादेश के निलंबन का आदेश पाने का तीसरा प्रयास है।

11. तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 8195 वर्ष 2013 खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

राष्ट्रीय घरेलू कर्मकार कल्याण न्यास, राँची

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 2810 of 2012. Decided on 29th April, 2014.

असंगठित मजदूर सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008—धारा 3—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—अधिनियम, 2008 के प्रावधानों का क्रियान्वयन इप्सित करने वाली लोक हित याचिका—केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए अधिनियम, 2008 की धारा 3 के अधीन विभिन्न योजनायें को क्रियान्वित करना झारखंड राज्य का कर्तव्य है और उन्हें स्वयं धारा 3 के अधीन भी अपनी योजनायें तैयार करनी चाहिए—झारखंड राज्य केंद्र सरकार द्वारा मंजूर की गयी राशियों का उपयोग करने में अक्षम रहा—निर्देश जारी। (पैराएँ 11, 12 एवं 13)

अधिवक्तागण.—M/s. Anup Kumar Agrawal, Robit Thakur, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar, For the Resp.-State; Mr. Md. Mokhtar Khan, For the Union of India.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.—यह जनहित याचिका असंगठित मजदूर सामाजिक सुरक्षा अधिनियम (संक्षिप्तता के लिए इसमें इसके बाद 'अधिनियम, 2008 के रूप में निर्दिष्ट) के प्रावधानों के क्रियान्वयन के लिए याची द्वारा दाखिल की गयी है।

2. अधिनियम, 2008 के अधीन, जैसा हमारे:—

(a) fnukd 7.8.2013,

(b) fnukd 27.8.2013,

(c) fnukd 11.9.2013

(d) fnukd 12.11.2013.

के आदेशों में कथन किया गया है, अधिनियम, 2008 की योजना के अनेक प्रावधानों को स्पष्ट किया गया है। झारखंड राज्य ने राज्य सामाजिक सुरक्षा बोर्ड का गठन नहीं किया था जैसा अधिनियम,

2008 की धारा 6 के अधीन परिकल्पित किया गया है। इस बोर्ड को अधिनियम, 2008 की धारा 6 के अधीन केंद्र सरकार द्वारा आरंभ की गयी अनेक योजनाओं को क्रियान्वित करना है जैसा अधिनियम, 2008 की धारा 3 के अधीन परिकल्पित किया गया है।

3. अधिनियम, 2008 की धारा 3 के अधीन असंगठित मजदूरों के लिए कल्याण योजनाओं को निरुपण किया जाना है और वे:–

(a) Hkfo"; fufèk]

(b) fu;ktu migfr ykHk]

(c) vkokl]

(d) lrkuk d fy, 'k{kf.kd ;ktuk]

(e) dedkj mRØe.k ;ktuk]

(f) vR;f"V lgk;rk vkj

(g) o}koLFkk xg l lcfèkr gk ldr gA

इन विषयों को अधिनियम 2008 की धारा 3 के अधीन दिया गया है। वस्तुत:, असंगठित मजदूर सामाजिक सुरक्षा के कल्याण के लिए पूर्वोक्त विषयों पर योजनाएँ विरचित की जानी है।

4. जैसा अधिनियम 2008 की धारा 6 के अधीन परिकल्पित किया गया है, बोर्ड गठित नहीं किया गया था और एक भी बैठक बुलायी नहीं गयी थी। मामला लिए जाने के बाद अधिनियम 2008 की धारा 6 के मुताबिक बोर्ड गठित किया गया था। यह अच्छी बात है कि इस लोक प्रेरित याची ने जनहित याचिका के रूप में इस रिट याचिका को दाखिल किया है। यह बिल्कुल सच्ची और वास्तविक जनहित याचिका है। अब बोर्ड की केवल एक बैठक बुलायी गयी है और कोई नहीं जानता है कि उस बैठक का परिणाम क्या है और झारखंड राज्य में अधिनियम 2008 के प्रावधानों को क्रियान्वित करने के लिए बोर्ड कितना संवेदनशील है।

5. अधिनियम 2008 के अधीन केंद्र सरकार द्वारा 10 योजनाएँ शुरू की गयी है और उन 10 योजनाओं को दिनांक 12.11.2013 की इस जनहित याचिका में हमारे आदेश के पैराग्राफ सं॰ 4 में उल्लिखित किया गया है। उक्त पैराग्राफ सं॰ 4 (i) का पठन निम्नलिखित है:–

"(i) vlxfBr etnj lkekftd lj{kk vfèkfu;e] 2008 (vfèkfu;e] 2008) d vèkhu dn ljdkj }kjk fuEufyf[kr ;ktuk, pyk;h tk jgh gA ;ktukvk d uke ik=rk ekinM vkj >kj[kM jkT; }kjk irk yxk, x, ykHkkfFk;k dh l[;k uhp fufn"V dh tkrh g%&

<u>असंगठित मजदूर सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 के अधीन असंगठित मजदूरों के लिए योजनाएँ। पात्रता मापदंड एवं लाभार्थियों की संख्या</u>

क्र॰	योजना का नाम	पात्रता मापदंड	लाभार्थियों की संख्या
	<u>श्रम नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग</u>		
1.	इंदिरा गांधी राष्ट्रीय	आवेदक (पुरुष अथवा महिला) की आयु 60	5.70 लाख

	वृद्धावस्था पेंशन योजना	वर्ष अथवा उच्चतर होगा (60-79) वर्ष आयु समूह में गंभीर एवं कई नि:शक्तताओं वाले बी॰ पी॰ एल॰ विधवाओं एवं बी॰ पी॰ एल॰ व्यक्तियों को अपवर्जित करते हुए)।	
2.	राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना	1. 'मुख्य अन्नदाता' घर का सदस्य स्त्री या पुरुष होगा जिसकी आय कुल गृहस्थी आमदनी के मद में सारवान रूप से योगदान देती है। 2. ऐसे मुख्य अन्नदाता की मृत्यु तब प्रोद्भूत होनी चाहिए थी जब वह 18 वर्ष से 59 वर्ष तक की आयु समूह में है अर्थात् 18 वर्ष की आयु से अधिक और 60 वर्ष की आयु से कम। 3. मृत्यु शोक संतप्त परिवार भारत सरकार द्वारा विहित मापदंड के अनुसार गरीबी रेखा के नीचे के परिवार के रूप में अर्हित होता है। 4. मुख्य अन्नदाता की मृत्यु की स्थिति में योजना के अधीन केंद्रीय सहायता 20,000/- रुपया होगी।	1712
3.	आम आदमी बीमा योजना	1. सदस्य नजदीकी जन्मदिन पर 18 वर्ष और 59 वर्ष के बीच की आयु का होना चाहिए। 2. सदस्य सामान्यत: गरीबी रेखा के नीचे (बी॰ पी॰ एल॰) अथवा पहचान किए गए वोकेशनल समूह/ग्रामीण भूमिहीन परिवार के अधीन गरीबी रेखा के तनिक ऊपर के परिवार का मुखिया अथवा अर्जन करने वाला सदस्य होना चाहिए।	67,000
4.	राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना	बी॰ पी॰ एल॰ परिवार/लोग ● रिक्शा चालक ● कबाड़ उठानेवाले ● खान मजदूर ● सफाई मजदूर ● ऑटोरिक्शा चालक और टैक्सी चालक ● बीड़ी मजदूर ● फेरी वाले	18.14 लाख

		● भवन एवं निर्माण मजदूर ● मनेरगा लाभार्थी ● घरेलू काम करने वाले मजदूर	
		उद्योग विभाग	
5.	हथकरघा बुनकर समग्र कल्याण योजना स्वास्थ्य बीमा योजना	● समस्त हथकरघा बुनकर-पुरुष अथवा स्त्री-स्वास्थ्य बीमा योजना के अधीन आच्छादित किए जाने के पात्र है। ● समस्त आनुषंगिक हथकरघा मजदूर अर्थात् जो वार्पिंग, वाइन्डिंग, डाइंग, प्रिंटिंग, फिशिंग, साइजिंग, झाला मेकिंग और जेक्वार्ड कटिंग के काम में लगे हैं भी आच्छादित किए जाने के पात्र हैं। ● हथकरघा बुनकर/आनुषंगिक हथकरघा मजदूर अर्थात् लाभार्थी केवल जनसंख्या सूची से होंगे अथवा अक्टूबर, 2009 से अक्टूबर, 2010 की अवधि के दौरान एच॰ आई॰ एस॰ के अधीन पहले से ही पंजीकृत व्यक्तियों में से होंगे। ● सभी बुनकर अपनी आय का कम से कम 50% हथकरघा बुनाई से प्राप्त कर रहे हों।	–
	महात्मा गांधी बुनकर बीमा योजना	● अल्पसंख्यक, महिला बुनकर और एन॰ ई॰ आर॰ से आने वाले बुनकर सहित 18 से 59 वर्ष की आयु के बीच समस्त-स्त्री या पुरुष बुनकर। ● राज्य हथकरघा विकास निगम/ऐपेक्स/प्राइमरी हथकरघा बुनकर सहकारी सोसाइटी से आने वाले बुनकर। सहकारी सोसाइटी से बाहर के बुनकर भी योजना के अधीन राज्य हथकरघा निदेशालय से प्रमाण पत्र कि वे पात्रता मापदंड परिपूर्ण कर रहे हैं, पर आच्छादित किए जा सकते हैं।	
6.	हथकरघा कारीगर समग्र कल्याण योजना		

स्वास्थ्य, आयुर्विज्ञान शिक्षा एवं परिवार कल्याण विभाग

7.	जननी सुरक्षा योजना	● आयु निर्बंधन नहीं। ● जन्म क्रम में निरपेक्ष रहते हुए योजना का लाभ एल॰ पी॰ एस॰ दर्जा में समस्त गर्भवती महिलाओं को दिया गया है। ● किसी विवाह अथवा बी॰ पी॰ एल॰ प्रमाण पत्र की आवश्यकता नहीं बशर्ते महिला सरकारी अथवा प्रत्यायित निजी स्वास्थ्य संस्थानों में प्रसव करवाती है। किंतु योजना के अधीन गृह प्रसव के अधीन लाभ के लिए एल॰ पी॰ एस॰ और एच॰ पी॰ एस॰ में निम्नलिखित मापदंड नियत किए गए थे: ● बी॰ पी॰ एल॰ गर्भवती महिलाएँ, ● 19 वर्ष और अधिक आयु की, गृह में प्रसव को प्राथमिकता देने पर, 500/- रुपया प्रति प्रसव की नगद सहायता की हकदार हैं। ● सहायता केवल दो जीवित जन्मों तक उपलब्ध होगी।	–
	पशुपालन एवं मत्स्य विभाग		
8.	मछुआरों के कल्याण के लिए राष्ट्रीय योजना एवं प्रशिक्षण और विस्तारण मॉडल मछुआरा ग्रामों का विकास सक्रिय मछुआरों के लिए सामूहिक दुर्घटना बीमा Fish Copped के लिए सहायता अनुदान बचत-सह-अनुतोष प्रशिक्षण एवं विस्तारण	● लाभार्थी राज्य सरकार द्वारा पहचाना गया सक्रिय मछुआरा होना चाहिए। ● गरीबी रेखा से नीचे के मछुआरों एवं भूमिहीन मछुआरों को प्राथमिकता दी जाएगी। ● भूमि अथवा कच्ची संरचना के स्वामी मछुआरों पर भी योजना के अधीन गृहों के आवंटन के लिए विचार किया जा सकता है।	
	भारत का जीवन बीमा निगम		
9.	जनश्री बीमा योजना	● 18 वर्ष से 59 वर्ष के बीच की आयु का व्यक्ति	

	● एल॰ आई॰ सी॰ द्वारा समूह पहचाना और अधिसूचित किया जाएगा। अब तक 44 वोकेशनल पेशेवर समूहों को पहचाना गया है। ● ग्रामीण गरीबी एवं शहरी गरीबी दोनों के अधीन न्यूनतम सदस्यता 25 होनी चाहिए। ● सदस्य सामान्यत: परिवार का मुखिया होना चाहिए।	

;gk ;g mYy[k djuk mi;Dr g fd vlxfBr etnj lkekftd lj{kk vfèkfu;e] 2008 d vèkhu vlxfBr etnjk d fy, Hkkjr ljdkj dh iokDr ;ktuk,¡ lekt d lokfèkd detkj oxk d fy, ^lkekftd U;k;* lfuf'pr dju d fy, vkj Hkkjr d lfoèkku d çLrkouk e of.kr ^^U;k;** dh dYiuk dk okLrfod Lo:i nu d fy, vuU; :i l vk'kf;r gA *fdr ;g çrhr gkrk g fd oreku ekeyk ykHkkfFk;k rd igpu d çfr lcfèkrk dh lonu'khyrk dh deh dk Li"V mnkgj.k gA lcfèkr 0;fDr;k dk le>uk gkxk fd ge ,l n'k e jgr g tgk fofèk dk 'kklu gekjh çtkrkf=d ç.kkyh dh uho gA vke vkneh dk vfLrRo lkfofèkd fofèk;k vkj lekt dY;k.k ;ktukvk vkj dk;ikfydk vkn'kk }kjk 'kkflr gkrk g] fofèk d dk;{k= d ckgj yxHkx dN Hkh ugh gA LokLF;] Hkktu] f'k{kk] tUe&eR; dk ithdj.k vkfn lfgr li.k ekuo xfrfofèk;k vud fofèk;k] ;ktukvk] vkfn }kjk 'kkflr gA bl i"BHkfe e] fofHkUu fofèk;k d ekè;e l çnÙk vfèkdkj vFkok ykHknk;h ;ktukvk l dkb opu v[kfMr :i l ^^fofèkd tkx#drk** d fook|dk d lkFk tM tkrk g ftld fy, jkT; ljdkj dk lcfèkr foHkkx vkj jkT; dk fofèkd lok çkfèkdj.k ;ktukvk dk fØ;kfUor dju vkj ;ktukvk d ckj e tkx:drk lftr dju dh ckè;rk d vèkhu gA oLrr% ;g vk?kkri.k g fd ofj"B ukxfjdk] ch0 ih0 ,y0 d lnL;k] fjD'kk pkydk] lQkb etnjk] vkVk fjD'kk pkydk] Qjhokyk] Hkou ,o fuek.k etnjk] dckM mBku okyk] ?kjy dkedkt dju okyk] vkfn lfgr xjhc] vufHkK ,o fuj{kj vlxfBr etnjk d fy, vfèkfu;fer ykHknk;h vfèkfu;e vFkkr vlxfBr etnj lkekftd lj{kk vfèkfu;e] 2008 d vkjHk g, ikp o"k chr pd g fdr jkT; ijh lhek rd ;ktukvk d ykHk dk mi;kx dju e v{ke jgk gA ;g xHkhj fprk dk ekeyk g fd bld xj&fØ;kUo;u d dkj.k vfèkfu;e dk ç;ktu gh foQy gk x;k g]* ***vr% ge jkT; ljdkj d e[; lfpo dk 0;fDrxr :i l ekey ij fopkj dju vkj Je] fu;ktu ,o çf'k{k.k foHkkx] >kj[kM ljdkj d çe[k lfpo dk ble bld ckn tkjh ekxn'kd fl)krk d erkfcd dBkj dne mBku d fy, dgu dk fun'k nr gA****

6. उक्त 10 योजनाओं को केंद्र सरकार द्वारा शुरू किया गया है और योजनाओं को श्रम नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, झारखंड राज्य के माध्यम से और कुछ विभागों के माध्यम से क्रियान्वित किया जाना है। इन विभागों में अधिक्रम में पृथक सचिव और तत्पश्चात उपसचिव हैं। अगस्त से हम इन योजनाओं, जिन्हें केंद्र सरकार द्वारा शुरू किया गया है, को अभिलेख पर लाने के लिए इस जनहित याचिका में एक-एक करके आदेश पारित कर रहे हैं। हमने ऐसे आदेश भी पारित किए हैं कि योजनाएँ झारखंड राज्य

के समस्त कर्मचारियों और समस्त जनता को समुचित रूप से मालूम नहीं हैं और इसलिए, हमने इस जनहित याचिका में आदेश भी पारित किया है और श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, झारखंड सरकार के प्रमुख सचिव जो अधिनियम 2008 की धारा 6 के अधीन गठित बोर्ड के सचिव भी हैं को प्रिंट मिडिया में और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में भी एक से अधिक भाषा में पात्रता के मापदंड तथा योजनाओं के अधीन लाभों के साथ पूर्वोक्त 10 योजनाओं का सार प्रकाशमान करने का निर्देश दिया है। यह निर्देश इस जनहित याचिका में दिनांक 12.11.2013 के हमारे आदेश के पैराग्राफ सं॰ 4 (iii) में दिया गया है। झारखंड राज्य का पूर्वोक्त विभाग अर्थात् श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग ऐसा आलसी विभाग है कि हमारे निर्देश के बावजूद योजनाओं की पात्रता और योजनाओं के अधीन लाभों के सार के बारे में न तो प्रिंट मीडिया में एक भी विज्ञापन दिया गया है और न ही इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में कोई समाचार या विज्ञापन दिया गया है। विभाग के प्रमुख सचिव और उक्त विभाग में अधिकारियों की पूरी बटालियन का यही रवैया है। शायद वे अधिनियम 2008 के प्रावधानों और अधिनियम 2008 की धारा 3 के अधीन केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी योजनाओं के क्रियान्वयन के प्रति संवेदनशील नहीं है जिसका परिणाम झारखंड राज्य में आम जनता को लाभों की अनुपलब्धता में हुआ है।

7. हमने दिनांक 12.11.2013 के आदेश में पैराग्राफ सं॰ 4 (v) में भी पहले निर्देश दिया है जो निम्नलिखित है:–

> *"(v)* ***bu ;ktukvk dh gkfMx dk jyo LV'ku] cl fMik] vLirky] ljdkjh dk;ky;k] lekgj.kky;] ç[kM dk;ky;k] flfoy U;k;ky;k] vkfn tl vklkuh l n"V0; lefpr LFkkuk ij yxk;k tk ldrk gA*** *dN vU; vfèkfu;e Hkh gk ldr g ftud vèkhu vkokl h; ;ktuk] tykifr] (tokgjyky ug: jk"Vh; uxj uoh dj.k fe'ku d vèkhu) flojt] vkfn tl h vU; ;ktuk, gk ldrh gA bu ;ktukvk dk Hkh lefpr :i l çV ,o byDVkfud ehfM;k e vkj lefpr LFkkuk ij ,o LFkkuh; Hkk"kkvk e lefpr vkdkj d gkfMx }kjk iiyV }kjk çdkf'kr fd;k tk ldrk gA***

रेलवे स्टेशन, बस डिपो, अस्पतालों, सरकारी कार्यालयों जहाँ आम जनता रोजाना आती–जाती है, उदाहरणस्वरुप समाहरणालय, प्रखंड कार्यालय, सिविल न्यायालय, आदि जैसे आसानी से दृष्टव्य स्थानों पर होर्डिंगों पर उल्लिखित किए जाने के लिए अधिनियम 2008 के अधीन योजनाओं के समुचित प्रकाशन के लिए इन निर्देशों को दिया गया था। विभाग द्वारा इन विज्ञापनों को समुचित रूप से और प्रभावकारी रूप से प्रकाशित नहीं किया गया है। नौ योजनाओं के लिए नौ पृथक विज्ञापन होने चाहिए क्योंकि धन जिसे केंद्र सरकार द्वारा दिया गया है अनुपयोगित बना हुआ है और इसे केंद्र सरकार को लौटाया जाना है। भारत के सहायक सॉलिसिटर जनरल द्वारा एक उदाहरण दिया गया है जिन्होंने इस रिट याचिका में उनके दिनांक 23.9.2013 के पत्र के तहत भारत सरकार के अवर सचिव से अनुदेश प्राप्त किया है क्योंकि हमारे पूर्व आदेश में ये अनुदेश भारत के सहायक सॉलिसिटर जनरल को दिए गए थे। यह कथन किया गया है कि योजनाओं में से एक अर्थात् राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आर॰ एस॰ बी॰ वाई॰) के अधीन झारखंड राज्य को वर्षवार निधि निर्मुक्त की गयी है। राशियाँ निम्नलिखित हैं:–

क्रमांक	वर्ष	रुपया करोड़ में
a.	2008-2009	5.24
b.	2009-2010	8.91

c.	2010-2011	11.49
d.	2011-2012	23.66
e.	2012-2013	56.68
f.	2013-2014 (दिनांक 13.9.2013 का)	5.97
	कुल	111.95

इस प्रकार, एक योजना के अधीन केंद्र सरकार ने झारखंड राज्य को 111.95 करोड़ रुपया दिया है। हम नहीं जानते हैं कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आर॰ एस॰ बी॰ वाई॰) के अधीन झारखंड राज्य द्वारा कितनी राशि का उपयोग किया गया है। इसी प्रकार से, कुल 10 योजनाएँ हैं। प्रत्येक वर्ष केंद्र सरकार द्वारा आवंटित बजट विशाल है। श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, झारखंड सरकार को केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी विभिन्न योजनाओं की जानकारी बिल्कुल नहीं है। इसके अतिरिक्त, काफी समय से इस मामले में हम कह रहे हैं कि राज्य सरकार को केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी मूल योजनाओं के कागजातों को प्रस्तुत करना चाहिए, किंतु राज्य सरकार मूल योजनाओं के कागजातों को प्रस्तुत नहीं कर रही है। इस मामले में पहले दिए गए हमारे निर्देश के मुताबिक झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण संक्षिप्त रूप में इन पैंपलेटों को तैयार करने में सहायता देगा और लोकप्रिय रूप से ज्ञात ''पहिए पर न्याय'' वाहन के माध्यम से इन पैंपलेटों को 'उत्सव दिन' पर, किसी 'मेला' पर अथवा किसी 'हाट दिन' पर झारखंड राज्य में आम जनता को वितरित किया जाएगा अथवा इन पैंपलेटों को वितरित किया जाए तब कभी राज्य द्वारा अथवा राज्य की एजेंसियों द्वारा विधिक जागरूकता प्रोग्राम अथवा कैंप अथवा कोई सार्वजनिक कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। झारखंड राज्य केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी योजनाओं के कागजातों को प्रस्तुत करने में विफल रहा है।

8. आज भी, झारखंड राज्य के अधिवक्ता के पास केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी 10 योजनाओं के कागजात नहीं हैं। कुछ पेपर फॉर्मेटों को संक्षिप्त रूप में इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है। यह न्यायालय मूल योजना एवं योजनाओं के खंडों को जानना चाहता है ताकि मूल योजनाओं के पठन के बाद झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण को केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी योजनाओं के अधीन पात्रता मापदंड एवं लाभ देने वाली योजनाओं का सही सार तैयार करने का निर्देश दिया जा सके। हम यह समझने में विफल हैं कि झारखंड सरकार मूल योजनाओं को क्यों नहीं प्रस्तुत कर रही है। आज भी राज्य के अधिवक्ता, जिनकी सहायता (1) रतन कुमार गुप्ता, पुत्र स्व॰ सोनू लाल, उपसचिव, श्रम, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, झारखंड सरकार और (2) उमेश प्रसाद सिंह, पुत्र श्री सुखदेव प्रसाद, डी॰ एल॰ सी॰, राँची, प्रभारी जे॰ एल॰ सी॰ झारखंड कर रहे हैं. यद्यपि उन्होंने मूल फाइल लाया है, किंतु उनके पास मूल योजनाओं की प्रति नहीं है और वे अपने द्वारा तैयार किए गए सार पर भरोसा कर रहे हैं। कभी-कभी विभाग द्वारा तैयार किये गये सार में त्रुटि हो सकती है। हमने इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के अधीन लाभार्थियों के बारे में एक प्रश्न पूछा है और दिया गया उत्तर यह है कि बी॰ पी॰ एल॰ के अधीन व्यक्ति हकदार हैं, यदि वे 60 वर्ष और अधिक आयु के हैं। बी॰ पी॰ एल॰ का अर्थ है गरीबी रेखा के नीचे। जब हमने न्यायालय में उपस्थित अधिकारी से प्रश्न पूछा कि आय मापदंड क्या है, उन्होंने उत्तर दिया कि 5000/- रुपया प्रतिमाह की आय वाला व्यक्ति गरीबी रेखा से नीचे माना जाता है जबकि इसे

5000/- रुपया वार्षिक के रूप में उल्लिखित किया गया है। इस प्रकार, मौखिक उत्तर और लिखित सार भिन्न है। हम अधिकारियों की स्मरण शक्ति में गलती नहीं निकाल रहे हैं किंतु तथ्य बना रहता है कि जब कभी 'झालसा' पैंपलेटों का सार तैयार कर रही है, इसमें सटीकता होनी चाहिए। हम मूल योजनाओं को जानना चाहते हैं और मूल योजनाओं को देखते हुए हम प्रकाशमान करेंगे कि मापदंड क्या है और लाभ क्या है। योजना एवं योजना के सार के बीच विशाल अंतर है। न्यायालय में विभाग द्वारा तैयार किए गए सार का पठन नहीं किया जा सकता है। अगस्त से, हम मूल योजनाओं के कागजातों को खोज रहे हैं, किंतु विभाग के दक्ष अधिकारी इसे प्रस्तुत करने में अक्षम हैं।

9. यह प्रतीत होता है कि सचिव और उसके अधीनस्थ उच्च श्रेणी के अधिकारियों का इस मामले में उदासीन रवैया है। उनका उपेक्षापूर्ण, लापरवाह और आलसी रवैया इस मामले में परिलक्षित हो रहा है। कि इस पी॰ आई॰ एल॰ में इस न्यायालय द्वारा मौखिक रूप से एवं हमारे आदेशों द्वारा भी अनेक अनुरोधों के बावजूद और झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण द्वारा किए गए अनेक अनुरोधों के बावजूद पूर्वोक्त 10 योजनाओं के कागजातों को प्रस्तुत नहीं किया गया है। इस विभाग के सचिव और उप सचिव तथा उच्च श्रेणी के अधिकारियों के विरुद्ध कार्रवाई करने के समय राज्य के लिए आ गया है; यदि आवश्यकता उद्भूत होती है, उन्हें विभाग से हटाया जाना चाहिए ताकि नए ऊर्जावान एवं अधिकारी अधिनियम 2008 के प्रावधानों और उनके अधीन केंद्र सरकार द्वारा बनायी गयी योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए कदम उठा सकें।

10. अत:, हम झारखंड राज्य के मुख्य सचिव को समुचित कदम उठाने का निर्देश देते हैं ताकि दक्ष अधिकारियों को श्रम नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग, झारखंड राज्य में लाया जा सके और आलस्यपूर्ण अधिकारियों को तुरन्त हटाया जा सके।

11. राज्य के अधिवक्ता आज पुन: मामले को स्थगित करने का अनुरोध कर रहे हैं ताकि पूर्वोक्त 10 योजनाओं के कागजातों को दिल्ली से अथवा अन्य राज्यों से लाया जा सके। पूर्वोक्त विभाग के सचिव को इतनी आसानी चीज भी मालूम नहीं थी कि किस प्रकार वह पूर्वोक्त 10 योजनाओं के कागजातों को प्राप्त कर सकते हैं। यह पूर्वोक्त विभाग की दक्षता के बारे में काफी कुछ परिलक्षित करता है। वस्तुत: इस न्यायालय को प्रशासनिक काम करना है क्योंकि प्रशासक अपने कर्तव्य का पालन करने में विफल रहे हैं। केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी अधिनियम 2008 की धारा 3 के अधीन अनेक योजनाओं को क्रियान्वित करना राज्य का कर्तव्य है और उन्हें अधिनियम 2008 की धारा 3 के अधीन स्वयं अपनी योजनाओं को भी तैयार करना चाहिए। जब यह विभाग केंद्र सरकार द्वारा शुरु की गयी योजनाओं को क्रियान्वित करने में अक्षम है, अधिनियम 2008 की धारा 3 के अधीन स्वयं अपनी योजनाओं के लिए कोई पहल कदमी करने और उनको क्रियान्वित करने का अवसर अत्यन्त कम है जैसा यहाँ ऊपर गौर किया गया है। कुल 10 योजनाओं में से एक योजना के लिए केंद्र सरकार द्वारा राज्य को लगभग 111 करोड़ रुपया आवंटित किया गया है। इसी प्रकार से, अन्य योजनाओं के लिए भी केंद्र सरकार द्वारा अत्यन्त विशाल राशि मंजूर की गयी होगी, किंतु झारखंड राज्य इस राशि का उपयोग करने में अक्षम है। अत: हम राज्य के मुख्य सचिव को योजना के आरंभ से प्रति योजना मंजूर राशि और प्रत्येक वर्ष कितनी राशि का उपयोग झारखंड राज्य द्वारा किया गया है का विवरण देते हुए शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश देते हैं। यदि संभव हो, तालिका रूप में योजनावार, वर्षवार इन विवरणों को दिया जा सकता है।

क्रमांक	योजना	वर्ष	केंद्र सरकार द्वारा मंजूर राशि	झारखंड राज्य द्वारा उपयोगित राशि	क्या केंद्र सरकार को उपयोगिता प्रमाण पत्र दिया गया है?	राज्य द्वारा पाए गए लाभार्थी की संख्या	राज्य द्वारा वितरित राशि
1.							
2.							
3.							
4.							
5.							
6.							
7.							
8.							
9.							
10.							

12. हम मुख्य सचिव को इस मामले में शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश देते हैं कि वर्ष 2008 से पूर्वोक्त 10 योजनाओं के लिए कितनी राशि आवंटित की गयी है। क्योंकि पूर्वोक्त योजनाएँ वर्ष 2008-2009 से शुरू की गयी प्रतीत होती हैं, उन योजनाओं के आरंभ से झारखंड राज्य द्वारा कितनी राशि का उपयोग किया गया है और क्या केंद्र सरकार को उपयोगिता प्रमाण पत्र भेजा गया है या नहीं? मामले के इस पहलू को मुख्य सचिव, झारखंड राज्य द्वारा दाखिल किए जाने वाले शपथ पत्र में प्रकाशमान करना होगा। अधिनियम 2008 के अधीन योजनाओं के प्रावधानों को क्रियान्वित करने के लिए पूर्वोक्त विभाग के पास इच्छा और इच्छा शक्ति नहीं है अन्यथा जहाँ चाह, वहाँ राह। अन्यथा किस प्रकार योजनाओं के कागजातों को पाना है, यह पूर्वोक्त विभाग को ज्ञात नहीं है और उच्च न्यायालय को सुझाव देना पड़ता है कि सचिव को किसी को दिल्ली अथवा पड़ोसी राज्य के पास भेजना चाहिए।

13. हम पुन: समय-समय पर सरकार द्वारा किए गए उपांतरण के साथ केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी पूर्वोक्त 10 योजनाओं को प्रस्तुत करने और न कि पैंपलेट या तैयार किए गए सार को प्रस्तुत करने का निर्देश झारखंड राज्य को देते है। हम झारखंड राज्य के मुख्य सचिव को यह निर्देश भी देते हैं कि इस वर्ष में अर्थात् दिनांक 1.1.2014 और इसके आगे पूर्वोक्त योजनाओं के अधीन कितने लाभार्थी पाये गये हैं और कितनी राशि वितरित की गयी है। यदि आँकड़े उपलब्ध हैं, उन्हें राज्य के मुख्य सचिव द्वारा शपथ पत्र में प्रकाशमान किया जाएगा। हम राज्य के मुख्य सचिव को पूर्व वर्षों के लिए और कितने व्यक्ति लाभान्वित हुए हैं और झारखंड राज्य में योजना के अधीन लाभार्थियों को कितनी राशि वितरित की गयी है, इंगित करने का निर्देश देते हैं और भारत के सहायक सॉलिसिटर जनरल को भी शपथ पत्र दाखिल करने का निर्देश देते हैं कि क्या राज्य ने पूर्वोक्त योजनाओं के अधीन लाभार्थियों का कोई आँकड़ा दिया है और क्या उन्होंने कोई पत्र लिखा है कि उन्होंने योजनाओं के अधीन झारखंड राज्य में लाभार्थियों को

कितनी राशि वितरित की है और क्या झारखंड राज्य द्वारा वर्षवार, योजनावार उपयोगिता प्रमाण पत्र दिया गया है।

14. राज्य के अधिवक्ता यहाँ ऊपर कथन किए गए इस न्यायालय की प्रतिपादनाओं पर विचार करने के लिए और शपथ पत्र दाखिल करने के लिए समय इप्सित कर रहे हैं।

15. इस आदेश की प्रति आरंभ में फैक्स द्वारा और तत्पश्चात विशेष संदेशवाहक द्वारा झारखंड राज्य के मुख्य सचिव को भेजी जाएगी।

16. मामला दिनांक 6.5.2014 तक के लिए स्थगित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

रवि ऑफसेट प्रिंटर्स एन्ड पब्लिशर्स प्रा॰ लि॰

cuke

झारखंड राज्य

W.P. (C) No. 2847 of 2014. Decided on 24th June, 2014.

सरकारी संविदा–संविदा का पंचाट–राज्य किसी निर्णय पर आने के लिए स्वयं अपनी पद्धति चुन सकता है और सद्भावपूर्ण कारणों से कोई शिथिलीकरण प्रदान करने के लिए स्वतंत्र है–समस्त संबंधितों के प्रति निष्पक्ष होना राज्य एजेंसियों का लोक कर्तव्य है–तब भी जब निर्णय लेने की प्रक्रिया में कुछ त्रुटि पायी जाती है, न्यायालय को अत्यन्त सतर्कता के साथ और केवल लोक हित में और न कि केवल विधिक बिंदु बनाने मात्र के लिए अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी स्वविवेकी शक्ति का प्रयोग करना होगा। (पैराएँ 12 एवं 13)

निर्णयज विधि.–(2000)2 SCC 617—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. K.P. Deo, For the Petitioner; Mr. Rajiv Ranjan, For the Respondents.

आदेश

झारखंड शिक्षा परियोजना परिषद् (जे॰ ई॰ पी॰ सी॰) झारखंड राज्य में केंद्र प्रायोजित योजना सर्व शिक्षा अभियान के लिए राज्य क्रियान्वयन एजेंसी है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम के मुताबिक सरकारी एवं सरकार सहायित विद्यालयों के छात्रों को पुस्तक प्रदान किया जाना है। उन विद्यालयों के लगभग 50-55 लाख छात्रों को नि:शुल्क पाठ्य पुस्तकों को प्रदान करने और पाठ्य पुस्तकों को मुद्रित करने का उत्तरदायित्व झारखंड शिक्षा परियोजना परिषद् को दिया गया है। उक्त प्रयोजन से, राज्य परियोजना निदेशक ने पाठ्य पुस्तकें मुद्रित करवाने के लिए रुचि की अभिव्यक्ति आमंत्रित करते हुए निविदा सं॰ 01-TB-JEPC 14-15 दिनांक 24.1.2014 को जारी किया जिसमें खंडों में से एक कागज की गुणवत्ता के बारे में अनुबंधित करता है जो निम्नलिखित है:–

> *^^(a) ikB; iLrdk d doj iij d fy, ;g vkb0 ,l0 6956:2001 d vu#i iij fey d okVj ekd d :i e efnr iij fey d çrhd d lkFk 170 th0 ,l0 ,e0 ,e0 th0 (e'khu XyTM) 'or iYi ckM gkuk pkfg,A*
>
> *(b) ikB;iLrdk d VDIV iij d fy, ;g] xM iij fey d vkb0 ,l0 1848:1991 d vu#i iij fey d okVj ekd d :i e vfèkefnr iij fey d çrhd d lkFk doy 100% cc@oM oftu iYi l fufer 70 th0 ,l0 ,e0 'or eifyFkk@lQn Øhe okHk gkuk pkfg,A***

2. निविदा जारी किए जाने पर संभावित बोली लगाने वालों से आपत्ति मांगी गयी थी जिसे स्वीकार किया गया था। परिणामस्वरुप, दिनांक 7.2.2014 को भूल सुधार जारी किया गया था जिसमें कागज जिस पर पाठ्य पुस्तकों को मुद्रित किया जाना था की गुणवता का विनिर्देश विनिर्दिष्ट किया गया था:–

^^(a) ikB; iLrdk d doj iij d fy,] ;g vkb0 ,l0 6956: 2001 d vu#i okVj ekd d :i e vfèkefnr iij fey d çrhd d lkFk doy oftu 'or iYi ckM (fdlh fj lkbfdYM iYi d fcuk) l fufer 170 th0 ,l0 ,e0 ,e0 th0 (e'khu XyTM) gkuk pkfg,A

*(b) ikB; iLrdk d VDIV iij d fy, ;g xM I iij fey d vkb0 ,l0 1848: 1991 d vu#i iij fey d okVj ekd d :i e vfèkefnr iij fey d çrhd d lkFk doy oftu iYi (fdlh jh lkbfdYM iYi d fcuk) l fufer 70 th0 ,l0 ,e0 'or Øhe okHk iij gkuk pkfg,A***

3. किंतु, उक्त संविदा दिनांक 20.3.2014 को रद्द कर दी गयी थी। कुछ दिन बाद, दिनांक 7.4.2014 को निविदा सं॰ 02/TB/JEPC/2014-15 के तहत एक अन्य निविदा जारी की गयी थी जिसके द्वारा कागज की गुणवत्ता का विनिर्देश वही था जिसे पूर्व विज्ञापन के भूल सुधार के माध्यम से दिया गया था। बाद में, कागज की गुणवत्ता के संबंध में भूल सुधार दिनांक 30.5.2014 को जारी किया गया था जिसे निम्नलिखित रूप में विहित किया गया था:–

dkxt dk ueuk

(a) ^^ikB; iLrd d doj iij d fy,] ;g vkb0 ,l0 6956:2001 d vu#i iij fey d okVj ekd d :i e vfèkefnr iij fey d çrhd d lkFk doy cEc@oM oftu 'or iYi ckM l fufer 170 th0 ,l0 ,e0 ,e0 th0 (e'khu XyTM) gkuk pkfg,A

*(b) ikB; iLrdk d VDIV iij d fy,] ;g vkb0 ,l0 1848: 2007 d vu#i iij fey d okVj ekd d :i e vfèkefnr iij fey d çrhd d lkFk doy cEc@oM oftu iYi l fufer 70 th0 ,l0 ,e0 'or eifyFkk@Øheokhk iij gkuk pkfg,A***

4. उससे व्यथित होकर, याची ने इस रिट आवेदन को दाखिल किया है जिसमें निविदा के उस भाग जिसके अधीन दिनांक 30.5.2014 को भूल सुधार सम्मिलित किया गया था के अभिखंडन की प्रार्थना की गयी है।

5. इस आवेदन में की गयी शिकायत यह है कि भूल सुधार करके राज्य प्राधिकारी ने निविदा को मेसर्स हिन्दुस्तान पेपर निगम और इसके अनेक डीलरों के पक्ष में एकाधिकारपूर्ण बना दिया है क्योंकि उस गुणवत्ता का कागज, जिसे भूल सुधार के अधीन विनिर्दिष्ट किया गया है, केवल मेसर्स हिन्दुस्तान पेपर निगम द्वारा निर्मित किया जाता है और प्रत्यर्थी प्राधिकारी का मेसर्स हिन्दुस्तान पेपर निगम के साथ संबंध इतना मजबूत है कि पेपर की गुणवत्ता के संबंध में ऐसा अनुबंध विगत कई वर्षों से किया जा रहा है। विगत वर्ष जब इसमें कुछ गलत पाया गया था, सत्र 2013-14 के लिए पाठ्य पुस्तकों के मुद्रण से संबंधित मामले में जाँच करने का आदेश दिया गया है।

6. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री के॰ पी॰ देव ने अपने बिंदु को पुख्ता करने के लिए कि उक्त निविदा एकाधिकारपूर्ण बनायी गयी है, निवेदन किया कि निविदा में इस प्रभाव का विशेष खंड अंत:स्थापित किया गया है कि बोली लगाने वाले को पेपर मिल, जो भूल सुधार में विनिर्दिष्ट गुणवत्ता के कागज का कम से कम 300 एम॰ टी॰ उत्पादन प्रतिदिन कर रहे हैं, से स्वीकृति पत्र के साथ आना चाहिए।

7. आगे यह निवेदन किया गया है कि मेसर्स हिन्दुस्तान पेपर निगम को लाभदायी अवस्था में लाने के लिए बोली लगाने वाले दस्तावेज में पूर्वोक्त खंड जोड़ा गया है क्योंकि केवल हिन्दुस्तान पेपर निगम उस प्रकार के कागज का निर्माण कर रहा है जिसका विनिर्देश निविदा में दिया गया है और तद्द्वारा निविदा के भूल सुधार का वह भाग जिसने निविदा को एकाधिकारपूर्ण बना दिया है अभिखंडित किए जाने योग्य है।

8. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव रंजन प्रतिशपथ पत्र में दिए गए बयान को निर्दिष्ट करके निवेदन करते हैं कि कागज जिसके ऊपर पाठ्य पुस्तक मुद्रित किया जाता है की गुणवत्ता इस कारण से महत्वपूर्ण बन जाती है क्योंकि पुस्तकों का उपयोग 5-14 वर्ष की आयु के बालकों द्वारा किया जा रहा है। उनसे अच्छे तरीके से पुस्तकों का उपयोग करने की उम्मीद नहीं की जाती है और इसलिए परियोजना कागज की गुणवत्ता पर समझौता नहीं कर सकती है।

9. आगे यह निवेदन किया गया था कि पाठ्य पुस्तकों के मुद्रण एवं उपापन की प्रक्रिया समयबद्ध तरीके से की जाती है और समयानुसार काम होना पेपर मिल की क्षमता पर निर्भर करता है, जो मुद्रकों को कागज की ऐसी विशाल मात्रा की आपूर्ति करने की अवस्था में है।

10. आगे यह निवेदन किया गया था कि बम्बू पल्प/बम्बू वुड से निर्मित की जानेवाली कागज की गुणवत्ता के संबंध में निविदा में दिया गया अनुबंध बिल्कुल सामान्य है क्योंकि अन्य अनुदेश भी उसी विनिर्देश पर टिके हैं और कि यह कहना सही नहीं है कि निविदा में उल्लिखित उस प्रकार की गुणवत्ता का कागज केवल मेसर्स हिन्दुस्तान पेपर निगम द्वारा निर्मित किया जा रहा है और 2.5-3 करोड़ पाठ्य पुस्तक मुद्रित करने के लिए लगभग 9000-10,000 एम॰ टी॰ कागज की आवश्यकता होगी और उस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए यदि 300, एम॰ टी॰ प्रतिदिन की उत्पादन क्षमता के लिए पेपर मिल के लिए रखी गयी शर्त कम की जाती है, यह समय तालिका के भीतर पाठ्य-पुस्तकों का मुद्रण एवं आपूर्ति विलंबित करेगा और कि वर्ष 2005-06 से वर्ष 2014-15 तक प्रतिदिन निर्मित कागज की गुणवत्ता के संबंध में यही शर्त बनायी रखी गयी है और कि 100% बम्बू/वुड वर्जिन पल्प से कागज निर्मित करने की आवश्यकता समाप्त कर दी गयी है ताकि अधिकाधिक निर्माण के कंपनियों की भागीदारी हो सके।

11. आगे यह निवेदन किया गया था कि कागज की गुणवत्ता और कागज निर्माण करने वाली कंपनी के संबंध में निविदा में जो भी अनुबंध किया गया है, वह मुख्य सचिव की अध्यक्षता में जे॰ ई॰ पी॰ सी॰ की राज्य कार्यपालिका कमिटी में लिए गए निर्णय के अनुरुप है और कि कागज की गुणवत्ता के संबंध में उक्त अनुबंध विगत 5-6 वर्षों से किया जा रहा है किंतु इस प्रकार की आपत्ति किसी ने नहीं की है बल्कि इस प्रकार की आपत्ति याची द्वारा की गयी है जिसने बोली में भाग कभी नहीं लिया था। स्पष्टत: इसे निहित स्वार्थ से प्रच्छन्न हेतु से किया गया है और तद्द्वारा रिट आवेदन अभिखंडित किए जाने योग्य है।

12. संविदा का पंचाट, चाहे इसे निजी पक्ष द्वारा अथवा लोक निकाय अथवा राज्य द्वारा किया जाता है, आवश्यकत: वाणिज्यिक संव्यवहार है। निर्णय पर आने के लिए सर्वाधिक महत्व वाला विचार वाणिज्यिक संव्यवहार है जो अन्य बातों के साथ कीमत जिस पर पक्ष काम करने का इच्छुक है, क्या प्रस्तावित माल अथवा सेवा अध्यपेक्षित विनिर्देश के हैं और क्या इसे देने वाले व्यक्ति के पास विनिर्देश के मुताबिक माल अथवा सेवा प्रदान करने की क्षमता है जैसे कारक सम्मिलित करेगा।

13. यह भी सुस्थापित किया गया है कि राज्य निर्णय पर आने के लिए स्वयं अपनी पद्धति चुन सकता है और सद्भावपूर्ण कारणों से शिथिलीकरण प्रदान करने के लिए स्वतंत्र है यदि निविदा शर्तें ऐसे शिथिलीकरण की अनुमति देती है। किंतु समस्त संबंधितों के प्रति निष्पक्ष होना राज्य, इसके निगमों अभिकरणों और एजेंसियों का लोक कर्तव्य है। तब भी जब निर्णय लेने की प्रक्रिया में कुछ त्रुटि पायी जाती है, न्यायालय को अत्यन्त सतर्कता के साथ अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी स्वविवेकी शक्ति का प्रयोग करना होगा और इसे केवल लोकहित को अग्रसर करने में और न कि मात्र विधिक बिंदु बनाने के लिए इसका प्रयोग करना चाहिए।

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि यह विनिश्चित करने के लिए क्या इसके हस्तक्षेप की आवश्यकता है या नहीं, न्यायालय को सदैव व्यापक लोक हित अपने ध्यान में रखना चाहिए। केवल तब जब यह इस निष्कर्ष पर आता है कि अभिभावी लोक हित हस्तक्षेप को आवश्यक बनाता है, न्यायालय को हस्तक्षेप करना चाहिए।

15. मैं इस संबंध में **एयर इंडिया लि॰ बनाम कोचीन इंटरनेशनल एयरपोर्ट लि॰ एवं अन्य, (2000)2 SCC 617,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ।

16. कागज की गुणवत्ता और मुद्रित पुस्तकों को भी समयानुसार आपूर्ति की आवश्यकता से संबंधित प्रत्यर्थीगण की ओर से किए गए निवेदनों को ध्यान में रखकर निविदा के मामले में न्यायालय का कोई हस्तक्षेप अनावश्यक होगा।

17. तद्नुसार, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। अतः, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

एग्नेस किस्कू एवं अन्य

cuke

उपमुख्य कार्मिक अधिकारी (डब्ल्यू॰) एवं अन्य

M.A. No. 103 of 2010. Decided on 30th June, 2014.

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925—धारा 383—एकपक्षीय उत्तराधिकार प्रमाण पत्र का प्रतिसंहरण–मूल आवेदन में विधवा की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए अपीलार्थी द्वारा प्रतिस्थापित नोटिस के तामीले के लिए कदम नहीं उठाया गया था–मृतक की विधवा एवं पुत्र को मूल आवेदन का प्रतिवाद करने का अवसर नहीं दिया गया था–दाखिल किया गया आवेदन त्रुटिपूर्ण था और तथ्यों का छुपाया जाना भी सामने आ रहा था–अपील खारिज। (पैरा 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Ranjan, For the Appellants; Mr. J. Rahman, For the Resp. 1; Mr. A.K. Sahani, For the Resp. 2 & 3.

आदेश

यह विविध अपील विविध (प्रतिसंहरण) मामला सं॰ 2 वर्ष 2006 के संबंध में विद्वान प्रथम अपर जिला न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 19.6.2008 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा उत्तराधिकार मामला सं॰ 3 वर्ष 1999 के संबंध में अपीलार्थी के पक्ष में प्रदान किया गया एकपक्षीय उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रतिसंहृत कर दिया गया था।

2. अपीलार्थी ने आक्षेपित निर्णय को इस आधार पर चुनौती दिया है कि उत्तराधिकार मामला सं॰ 3 वर्ष 1999 के संबंध में पारित एकपक्षीय निर्णय के विरुद्ध विद्वान जिला न्यायाधीश को कोई प्रतिसंहरण

याचिका ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं थी। यदि प्रत्यर्थीगण उक्त निर्णय से व्यथित थे, उन्हें समुचित फोरम के समक्ष अपील दाखिल करना चाहिए था। आक्षेपित निर्णय भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 383 के अधीन उल्लिखित किसी आधार को संतुष्ट नहीं करता है। उक्त के अतिरिक्त, यह प्रतिवाद किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 सुशीला हेम्ब्रम ने अपने स्वर्गीय पति फ्रांसिस मुर्मू का परित्याग कर दिया था और उसने अपने पति की नपुंसकता के आधार पर तलाक इप्सित करने के लिए आसनसोल, पश्चिम बंगाल स्थित न्यायालय में वैवाहिक वाद सं॰ 176 वर्ष 1992 भी दाखिल किया था, किंतु गैर-अभियोजन के कारण उक्त वाद खारिज कर दिया गया था। तब सुशीला हेम्ब्रम ने धीरेन शर्मा नामक व्यक्ति से विवाह कर लिया। तब भी अपीलार्थी ने सुशीला हेम्ब्रम को उत्तराधिकार आवेदन का पक्ष बनाया था, किंतु वह उपस्थित नहीं हुई थी और उत्तराधिकार मामला सं॰ 3 वर्ष 1999 एकपक्षीय रूप से अग्रसर हुआ।

अपीलार्थी के पक्ष में उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रदान किए जाने के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 1 रेलवे प्राधिकारी ने अपीलार्थी के पक्ष में प्रदान किए गए उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के प्रतिसंहरण के लिए याचिका दाखिल किया और वह आवेदन विविध (प्रतिसंहरण) मामला सं॰ 2 वर्ष 2006 के रूप में दर्ज किया गया था। जाँच के क्रम में, प्रदर्श 1 के तहत तात्पर्यित रूप से नामांकन कागजात का दस्तावेज अभिलेख पर लाया गया था और रेलवे प्राधिकारी ने स्वीकार किया है कि मृतक फ्रांसीस मुर्मू ने अपने पुत्र अजय आनंद मुर्मू को अपने नाम निर्देशिती के रूप में नामांकित किया था। वस्तुतः प्रदर्श 1 नामांकन फॉर्म नहीं है बल्कि यह नाम निर्देशिती के नाम के रद्दकरण के लिए आवेदन था। अपीलार्थी के अनुसार, यह दस्तावेज सुशीला हेम्ब्रम द्वारा रेलवे प्राधिकारी की मौनानुकूलता के साथ सृजित किया गया था। यदि यह नामांकन उपलब्ध होता, अपीलार्थी को उत्तराधिकारी प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए नहीं कहा जाता।

अपीलार्थी वह व्यक्ति है जिसने मृतक फ्रांसिस मुर्मू का अंतिम संस्कार किया था और रेलवे क्वार्टर को सौंपने की समस्त औपचारिकताएँ उसके द्वारा की गयी थी। न तो सुशीला हेम्ब्रम और न ही अजय आनंद मुर्मू फ्रांसिस मुर्मू के मृत्यु के समय उपस्थित हुए थे। विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने समुचित परिप्रेक्ष्य में इन समस्त पहलूओं पर विचार नहीं किया है और आक्षेपित निर्णय पारित किया है जो अत्यन्त गलत, अवैध और अपास्त किए जाने का दायी है।

3. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 और 3 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी ने स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू के विधिक उत्तराधिकारियों के नामों एवं तथ्य को छुपाकर उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के प्रदान के लिए आवेदन दाखिल किया है। यह सत्य है कि तलाक के लिए वाद दाखिल किया गया था किंतु इसे गैर-अभियोजन के कारण खारिज कर दिया गया था और इसलिए सुशीला हेम्ब्रम एवं उसके मृतक पति के बीच वैवाहिक संबंध बना रहा। अपीलार्थी ने यह अच्छी तरह जानते हुए एकपक्षीय आदेश प्राप्त करने के आशय से सुशीला हेम्ब्रम का वर्तमान और सही पता छुपाया। सुशीला हेम्ब्रम के विरुद्ध जारी नोटिस किसी समाचार पत्र में प्रकाशित नहीं की गयी थी और तामील नहीं किया गया नोटिस न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था जो गलत था। यदि वह अपीलार्थी द्वारा उल्लिखित पता पर उपलब्ध नहीं थी, नोटिस के प्रति-स्थापित तामीले के लिए कदम उठाया जाना चाहिए था किंतु यह नहीं किया गया था। इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थी सं॰ 3 अजय आनन्द मुर्मू का नाम नामांकन अभिलेख में उपलब्ध था किंतु अपीलार्थी ने जानबूझकर यह तथ्य छुपाया था। अजय आनन्द मुर्मू जिसका नाम स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू का पुत्र होने के नाते नाम निर्देशिती के रूप में आ रहा था, को अपीलार्थी द्वारा मूल आवेदन में पक्ष नहीं बनाया गया था। चूँकि तथ्य छुपाया गया था और स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू के विधिक उत्तराधिकारियों

को पक्ष नहीं बनाया गया था, विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने सही प्रकार से अपीलार्थी के पक्ष में प्रदान किया गया उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रतिसंहृत किया है।

4. प्रत्यर्थी सं॰ 1 उप मुख्य कार्मिक अधिकारी (डब्ल्यू॰), चित्तरंजन लोकोमोटिव वर्क्स के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी द्वारा उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए जाने पर फ्रांसिस मुर्मू का अभिलेख सत्यापित किया गया था और तब यह पता किया गया था कि मृतक द्वारा अजय आनन्द मुर्मू को नाम निर्देशिती के रूप में नामित किया गया था, किंतु उत्तराधिकार मामला सं॰ 3 वर्ष 1999 में पक्ष नहीं बनाया गया था। चूँकि यह तथ्य रेलवे प्राधिकारी की जानकारी में आया, प्रतिसंहरण के लिए याचिका न्यायालय के समक्ष दाखिल की गयी थी और इसे विविध (प्रतिसंहरण) मामला सं॰ 2 वर्ष 2006 के रूप में दर्ज किया गया था और विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार करने के बाद आक्षेपित निर्णय पारित किया।

5. मैंने अवर न्यायालय अभिलेख और मेरे समक्ष प्रस्तुत सामग्री का परिशीलन किया है। यह मानते हुए भी कि प्रदर्श 1, नामांकन के रद्दकरण के लिए आवेदन, स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू द्वारा दाखिल किया गया था, तथ्य बना रहता है कि फ्रांसिस मुर्मू ने अजय आनन्द मुर्मू की पहचान अपने पुत्र के रूप में प्रकट किया था। इस प्रकार, यह प्रकट है कि स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू के विधिक उत्तराधिकारियों को भुगतेय बकाया के संबंध में उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के प्रदान के लिए उसके द्वारा दाखिल मूल आवेदन में अपीलार्थी द्वारा अजय आनन्द मुर्मू को पक्ष नहीं बनाया गया था। अपीलार्थी उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रदान करने के लिए आवेदन दाखिल किए जाने के समय पर इस तथ्य को सिद्ध करने में भी विफल रहा है कि उस समय हेम्ब्रम स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू की पत्नी नहीं थी। यह भी स्वीकार किया गया है कि मूल आवेदन में सुशीला हेम्ब्रम की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए अपीलार्थी द्वारा नोटिस के प्रतिस्थापित तामीले के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया था। विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि प्रथम दृष्टया यह स्पष्ट है कि स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू की विधवा सुशीला हेम्ब्रम और स्वर्गीय फ्रांसिस मुर्मू के पुत्र अजय आनन्द मुर्मू को मूल आवेदन का प्रतिवाद करने का अवसर नहीं दिया गया था। दाखिल किया गया आवेदन त्रुटिपूर्ण था और तथ्य छुपाया भी गया था।

ऊपर गौर किए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों में, मैं इस अपील में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

माला कुमारी

cuke

विजय कुमार उर्फ विजय शंकर राय

F.A. No. 92 of 2011. Decided on 24th June, 2014.

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 96 सह-पठित आदेश 9 नियम 13—कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984—धारा 19—प्रथम अपील–एकपक्षीय तलाक डिक्री—चूँकि एकपक्षीय निर्णय/डिक्री मूल निर्णय है, कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के अधीन अपील संपोषणीय है–सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 9 नियम 13 के अधीन आवेदन दाखिल करने के अपीलार्थी के अधिकार के बावजूद प्रथम अपील पोषणीय। (पैरा 11)

(ख) हिंदू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 13—अपीलार्थी पत्नी के मानसिक रोग एवं असामान्य व्यवहार के कारण एकपक्षीय तलाक डिक्री—कुटुम्ब न्यायालय को अपीलार्थी को

नोटिस का तामील करवाने के लिए समस्त संभव कदम उठाना चाहिए था—आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री अपास्त की गयी। (पैराएँ 15 से 17)

अधिवक्तागण.—Mr. Arbind Kumar Choudhary, For the Appellant; M/s Shekhar Prit Jha, A.K. Jha, For the Respondent.

आदेश

प्रथम अपील वैवाहिक वाद सं॰ 64 वर्ष 2010 में प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, देवघर द्वारा पारित निर्णय से उद्भूत होती है जिसके द्वारा विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने दिनांक 11.7.2009 को संपन्न अपीलार्थी पत्नी एवं प्रत्यर्थी पति के बीच विवाह विघटित कर दिया।

2. प्रत्यर्थी पति का मामला यह था कि उसका विवाह अपीलार्थी माला कुमारी के साथ दिनांक 11.7.2009 को हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार हुआ था। विवाहोपरांत प्रत्यर्थी पति और अपीलार्थी पत्नी श्रीमती रीना देवी के किराए के घर में साथ रहने के लिए देवघर आए और वे दिनांक 28.9.2009 तक साथ रहे। तत्पश्चात, पक्षों के बीच मतभेद उद्भूत हुआ और पति-पत्नी का संबंध कटु हो गया। यह अभिकथित करते हुए कि अपीलार्थी पत्नी माला कुमारी मानसिक रोगी है और उसका व्यवहार असामान्य है और वह कमजोर दिमाग की है और लगातार अभिकथित मानसिक रोग से पीड़ित है और कि वह आत्म हत्या करने की धमकी दे रही थी, प्रत्यर्थी पति ने विवाह का विघटन इप्सित करते हुए वैवाहिक वाद सं॰ 64 वर्ष 2010 दाखिल किया।

3. दिनांक 3.4.2010 को कुटुंब न्यायालय में हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन तलाक याचिका दाखिल की गयी थी किंतु अपीलार्थी न्यायालय में उपस्थित नहीं हुई थी और इसलिए न्यायालय ने स्थानीय समाचार पत्र में प्रकाशन का आदेश दिया और मामला एकपक्षीय रूप से विनिश्चित किया गया था।

4. अभिकथनों को सिद्ध करने के लिए प्रत्यर्थी पति ने स्वयं का अ॰ सा॰ 5 के रूप में परीक्षण कराया और चार अन्य गवाहों अर्थात अ॰ सा॰ 1 रैना देवी, अ॰ सा॰ 2 हरिकिशोर सिंह, अ॰ सा॰ 3 अंजनी देवी और अ॰ सा॰ 4 डॉ॰ सुधीर कुमार का परीक्षण भी किया।

5. यह इंगित करते हुए कि अनेक प्रयास किए गए थे, अपीलार्थी पत्नी न्यायालय में उपस्थित नहीं हुई थी और कि प्रत्यर्थी पति ने गवाहों का परीक्षण करके अभिकथनों को सिद्ध किया था, कुटुंब न्यायालय ने याचिका अनुज्ञात किया और अपीलार्थी तथा प्रत्यर्थी का विवाह विघटित करके तलाक डिक्री पारित किया।

6. वैवाहिक वाद सं॰ 64 वर्ष 2010 में कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित एकपक्षीय डिक्री से व्यथित होकर अपीलार्थी पत्नी ने वर्तमान प्रथम अपील दाखिल किया है।

7. अपीलार्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि ऑर्डर शीट के मुताबिक वैवाहिक वाद सं॰ 64 वर्ष 2010 ग्रहण किया गया था और वर्तमान अपीलार्थी को नोटिस जारी किया गया था जिसके लिए दिनांक 13.4.2010 को अध्यपेक्षित दाखिल किया गया था और तत्पश्चात्, सिविल न्यायालय, भागलपुर के माध्यम से अपीलार्थी को नजारथ नोटिस भेजने का आदेश दिया गया था और तत्पश्चात् पेपर प्रकाशन किया गया था और अंततः न्यायालय ने इसे अपीलार्थी पत्नी पर नोटिस के वैध तामीले के रूप में स्वीकार किया और दिनांक 13.9.2010 को एकपक्षीय सुनवाई के लिए मामला नियत किया और मामला एकपक्षीय रूप से विनिश्चित किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया था कि जैसा कुटुंब न्यायालय द्वारा सिविल न्यायालय, भागलपुर को निर्देश दिया गया था, नजारथ नोटिस वहाँ नहीं भेजा गया था जहाँ अपीलार्थी निवास कर रही थी। अपीलार्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि

पटना और देवघर से प्रकाशित दैनिक समाचारपत्र में प्रकाशन किया गया था और भागलपुर से प्रकाशित स्थानीय समाचार पत्र में प्रकाशन नहीं किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि पेपर प्रकाशन केवल दैनिक समाचार पत्र अर्थात 'प्रभात खबर' एवं 'आज' के पटना और देवघर संस्करण में किया गया था यद्यपि उन समाचार पत्रों का भागलपुर संस्करण भी था और प्रत्यर्थी पति ने भागलपुर संस्करण में इसे प्रकाशित करवाने के न्यायालय के आदेश के बावजूद केवल समाचार पत्रों के पटना और देवघर संस्करण में जानबूझकर नोटिस प्रकाशित करवाया था और चूँकि समाचार पत्रों के भागलपुर संस्करण में नोटिस प्रकाशित नहीं किया गया था, कुटुंब न्यायालय को यह अभिनिर्धारित नहीं करना चाहिए था कि यह नोटिस का वैध तामीला था।

8. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि विवाह दिनांक 11.7.2009 को संपन्न किया गया था और हिंदु विवाह अधिनियम की धारा 14 के उल्लंघन में दिनांक 3.4.2010 को विवाह के संपन्न होने की तिथि से एक वर्ष के अवसान के पहले ही तलाक मामला दाखिल किया गया था और आज्ञापक प्रावधानों के उल्लंघन की दृष्टि में अपीलार्थी को मामले का प्रतिवाद करने का अवसर दिया जाना चाहिए। यह निवेदन भी किया गया था कि प्रत्यर्थी पति ने अपीलार्थी पत्नी के विरूद्ध असामान्य व्यवहार और मानसिक रोग का गंभीर अभिकथन किया था और इसलिए एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करके अपीलार्थी को वाद का प्रतिवाद करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

9. प्रत्यर्थी पति के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि यह एकपक्षीय डिक्री है, प्रत्यर्थी पति ने गवाहों का परीक्षण करके अभिकथनों को सिद्ध किया है और अपीलार्थी जानबूझकर न्यायालय में उपस्थित नहीं हुई है। आगे यह निवेदन किया गया है कि कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित एकपक्षीय डिक्री के विरूद्ध अपीलार्थी पत्नी को एकपक्षीय डिक्री अपास्त करवाने के लिए सी० पी० सी० के आदेश IX नियम 13 के अधीन आवेदन दाखिल करना चाहिए था अथवा विकल्प में, वैवाहिक वाद सं० 64 वर्ष 2010 में तलाक डिक्री अपास्त करवाने के लिए पुनर्विलोकन आवेदन अथवा स्वतंत्र वाद दाखिल करना चाहिए था और अपील पोषणीय नहीं है।

10. हमने निवेदनों एवं अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों एवं कुटुंब न्यायालय के निर्णय का परिशीलन एवं विचारण किया है।

11. अपील की पोषणीयता के संबंध में प्रत्यर्थी पति की आपत्ति के संबंध में, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के मुताविक, एकपक्षीय रूप से पारित मूल डिक्री के विरूद्ध अपील की जा सकती है। यह इंगित किया जाना है कि कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 19 के मुताबिक ''...सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में अथवा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में अथवा किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी चीज के बावजूद कुटुंब न्यायालय के प्रत्येक निर्णय एवं आदेश के विरूद्ध, अंतर्वर्ती आदेश नहीं होने के नाते, तथ्यों पर एवं विधि पर उच्च न्यायालय में अपील की जाएगी।'' चूँकि एकपक्षीय निर्णय/डिक्री मूल निर्णय है, कुटुंब न्यायालय की धारा 19 के अधीन अपील संपोषणीय है। किसी भी स्थिति में, धारा 19 सर्वोपरि खंड से शुरू होती है और, इसलिए, सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश IX नियम 13 के अधीन आवेदन दाखिल करने के अपीलार्थी के अधिकार के बावजूद अपील पोषणीय है। मामले के ऐसे दृष्टिकोण में, अपील की पोषणीयता के संबंध में प्रत्यर्थी पति द्वारा की गयी आपत्ति स्वीकार नहीं की जा सकती है।

12. तलाक याचिका दिनांक 3.4.2010 को हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन दाखिल की गयी थी। आर्डर शीट के परिशीलन द्वारा यह देखा गया है कि वाद ग्रहण किए जाने के बाद मामला सुनवाई के लिए कुटुंब न्यायालय के पास लाया गया था और दिनांक 20.7.2010 को कुटुंब न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था:–

*"5/20.7.2010 ;kph mifLFkr gA fo0 i0 vuifLFkr gA ekeyk yk;k x;kA ;kph d fo}ku vfèkoDrk dk luk x;kA ;kph dk utkjFk] flfoy U;k;ky;] Hkkxyij d ekè;e l fo0 i0 d fo:) iu% tkjh fd, tku d fy, ukfVl d vè; if{krk dk nkf[ky dju dk fun'k fn;k tkrk gA ;kph dk fo0 i0 d LFkkuh; lekpkj i= e çdk'ku d fy, lefpr dne mBku dk fun'k Hkh fn;k tkrk gA oh0 i0 dh mifLFkfr d fy, ekeyk fnukd 30.8.2010 dk j[kk tk,A***

13. अपीलार्थी के अनुसार, यद्यपि न्यायालय ने नजारथ, सिविल न्यायालय, भागलपुर के माध्यम से अपीलार्थी पत्नी को नोटिस देने के लिए कदम उठाने का निर्देश प्रत्यर्थी पति को दिया है, और कार्यालय को इसे जारी करने का निर्देश दिया है किंतु ऐसा कोई नोटिस नहीं भेजा गया था। हम नजारथ, सिविल न्यायालय, भागलपुर से दाखिल तथा कुटुंब न्यायालय द्वारा प्राप्त कोई रिपोर्ट भी नहीं पाते हैं। दिनांक 22.7.2010 के आदेश के परिशीलन से यह देखा गया है कि प्रत्यर्थी पति ने अधिवक्ता के माध्यम से प्रकाशन के लिए नोटिस दाखिल किया था और कार्यालय को न्यायालय के माध्यम से नोटिस जारी करने का निर्देश दिया गया था। यह उपदर्शित करने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि नजारथ, सिविल न्यायालय, भागलपुर के माध्यम से अपीलार्थी पत्नी पर कतिपय नोटिस तामील करने के लिए कोई अध्यपेक्षित दाखिल किया गया था।

14. जैसा अपीलार्थी पत्नी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रतिवाद किया गया है, स्थानीय समाचार पत्र में पेपर प्रकाशन का आदेश दिया गया था जहाँ अपीलार्थी निवास कर रही थी किंतु पेपर प्रकाशन 'प्रभात खबर' (देवघर संस्करण) और 'आज' (पटना संस्करण) में किया गया था। स्वीकृत रूप से, अपीलार्थी पत्नी भागलपुर में निवास कर रही है। यह कथन किया गया है कि 'प्रभात खबर' भागलपुर से भी प्रकाशित होता है किंतु स्थानीय समाचार पत्र में, जहाँ अपीलार्थी निवास कर रही है, इसे प्रकाशित करवाने के कुटुंब न्यायालय के दिनांक 20.7.2010 के विनिर्दिष्ट आदेश के बावजूद भागलपुर संस्करण में प्रकाशन नहीं किया गया था।

15. ऐसे तथ्यों एवं परिस्थितियों में, हमारा दृष्टिकोण है कि कुटुंब न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में सही नहीं था कि अपीलार्थी पत्नी पर नोटिस का वैध तामीला किया गया था और कुटुंब न्यायालय एकपक्षीय रूप से मामले में अग्रसर होने और आक्षेपित निर्णय पारित करने में सही नहीं था।

16. प्रत्यर्थी पति ने असामान्य व्यवहार और मानसिक रोग का गंभीर अभिकथन करते हुए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन तलाक याचिका दाखिल किया है। अपीलार्थी पत्नी के विरूद्ध लगाए गए अभिकथनों की प्रकृति को ध्यान में रखकर हमारा दृष्टिकोण है कि कुटुंब न्यायालय को अपीलार्थी पर नोटिस तामील करवाने में समस्त संभव कदम उठाना चाहिए था ताकि अपीलार्थी को लिखित कथन दाखिल करके और प्रतिपरीक्षण द्वारा गुणागुण पर मामले का प्रतिवाद करने का अवसर दिया जा सके।

17. वैवाहिक वाद सं० 64 वर्ष 2010 में प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, देवघर द्वारा पारित दिनांक 21.2.2011 का निर्णय और दिनांक 3.3.2011 की डिक्री अपास्त की जाती है और तद्नुसार अपील अनुज्ञात की जाती है। अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों को वैवाहिक वाद सं० 64 वर्ष 2010 में 15.7.2014 को कुटुंब न्यायालय, देवघर के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है और प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, देवघर वैवाहिक वाद सं० 64 वर्ष 2010 को सुनेंगे और अपीलार्थी को लिखित कथन दाखिल करने और साक्ष्य देने का अवसर देंगे और इस निर्णय की प्रति की प्राप्ति की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर यथासंभव शीघ्रातिशीघ्र विधि के अनुरूप मामले को निपटाएँगे।

18. कार्यालय को एल० सी० आर० को तुरन्त संबंधित न्यायालय को वापस भेजने का निर्देश दिया जाता है।

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vferko dekj xlrk] U;k;efr

श्रीमति रीना कुमारी उर्फ अपूर्वा

cuke

श्री संदीप संतोष

F.A. No. 89 of 2013. Decided on 30th July, 2014.

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955–धारा 25–स्थायी निर्वाहिका की मात्रा–पक्षकारों के समाजिक दर्जे तथा जीवन स्तर को विचार में लिया जाना होता है–अपीलार्थी एक अधेड़ आयु की महिला है तथा निजी विद्यालय में एक शिक्षिका है–उसने पुनर्विवाह नहीं किया है तथा अपने वृद्ध माता-पिता के साथ रह रही है–निर्वाहिका या भरण-पोषण के भुगतान का निर्देश देना दंड की प्रकृति का नहीं होता है बल्कि केवल इतना सुनिश्चित करने के लिए होता है कि पत्नी को पक्षकारों के दर्जे के उपयुक्त निर्वाहिका का भुगतान किया जाए–प्रत्यर्थी के हाथ में आने वाला कुल वेतन लगभग 31000/- रुपये है–15,00,000/- रुपये की स्थायी निर्वाहिका तथा भरण-पोषण अधिनिर्णीत। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–M/s Raj Nandan Sahay, Rabindra Prasad, For the Appellant; M/s Dilip Jereth, Rajesh Kumar, Abinash Kumar, Amit Kumar, Amit Kumar, Veer Vijay Pradhan, For the Respondent.

अमिताव कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अपील अभिधान (दाम्पत्य) वाद संख्या 10 वर्ष 2008 में विद्वान प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, गिरिडीह द्वारा पारित निर्णय तथा डिक्री से उद्‌भूत हुई है, जिसके द्वारा क्रूरता तथा अभित्यजन के आधारों पर हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(i)(a), (ib) के निबंधनों में अपीलार्थी रीना कुमारी उर्फ अपूर्वा तथा प्रत्यर्थी श्री संदीप संतोष का विवाह भंग कर दिया गया था तथा प्रत्यर्थी को 10,000/- रुपये प्रतिमाह की दर से भरण पोषण या 7,00,000/- रुपये की निर्धारित निर्वाहिका एवं भरण-पोषण का एकमुश्त भुगतान करने का निर्देश दिया गया था जिसका प्रत्यर्थी द्वारा आदेश की तिथि से छह महीनों कें अंदर भुगतान कर दिया जाना था।

2. वर्तमान अपील में, अपीलार्थी ने विवाह भंग करने के निर्णय तथा डिक्री को चुनौती नहीं दिया है, तथापि, उसने 7,00,000/- रुपये के स्थायी निर्वाहिका एवं भरण पोषण की मात्रा को अति अल्प बताकर आक्षेपित किया है।

3. चूँकि निर्णय किये जाने के लिए एकमात्र मुद्दा 7,00,000/- रुपये के भरण-पोषण तथा एक निर्वाहिका की मात्रा के संबंध में है, हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 25 के प्रावधानों को निर्दिष्ट करना आवश्यक होगा, जो निम्नवत् पठित है:–

> *^^LFkk;h fuokg&0;; vkj Hkj.k&ik"k.k-&(1) bl vfèkfu;e d vèkhu {k=kfèkdkj dk i;kx dju okyk dkb U;k;ky; ;FkkfLFkfr iRuh ;k ifr }kjk bl i;ktu d fy; viu l vkonu fd; tku ij vkKfIr nu d le; ;k rRi'pkr fdlh le; iR;Fkh dk vfn"V dj ld fd vkond ;k vkofndk d viu Hkj.k&ik"k.k vkj ikyu d fy, ,l vkond ;k vkofndk d thou&dky l vfèkd u gku okyh vofèk d fy, ,lh i.k jkf'k ;k ,lh ekfld dkykoèkh; jkf'k nrk ;k nrh jg tl k dh iR;Fkh dk viuh vk; vkj vU; lEifÙk dk] ;fn dkb gk] vkond ;k vkofndk dh vk; ;k lEifÙk dk vkj i{kdkjk d vkpj.k vkj ekey dh vU; ifjfLFkfr;k dk n[kr g, U;k;ky; dk U;k; yx vkj ;fn vko';d gk rk ,lh nxuh iR;Fkh dh LFkkoj lEifÙk ij iHkkj }kjk ifrHkr dh tk;xhA*

(2) ;fn U;k;ky; dk lekèkku gk tkrk g fd mièkkjk (1) d vèkhu viu }kjk fn; x; vkn'k d i'pkr fdlh le; i{kdkjk e lfdlh dh ifjfLFkfr;k e rCnhyh gk xb gk rk og ,lfdlh vkn'k dk ,lh jhfr e tlh fd U;k;ky; U;k; le> fdlh i{kdkj dh ij.kk ij ifjofrr] :iHkfnr ;k fo[kf.Mr dj ldxkA

*(3) ;fn U;k;ky; dk lekèkku gk tkrk g fd ml i{kdkj u ftld i{k e fd bl èkkjk d vèkhu vkn'k fn;k tk pdk g] iu% fookg dj fy;k g ;fn ,lk i{kdkj iRuh g rk og lrh ugh jgh g] ;fn ,lk i{kdkj ifr g rk mlu fdlh L=h lfookg d ckn yfxd lEHkkx fd;k g rk og nlj i{kdkj dh ij.kk ij ,l fdlh vkn'k dk ,lh jhfr e tk U;k;ky; U;k; lxr le>] ifjofrr] mikrfjr ;k fo[kfMr dj ldxkA***

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि विद्वान विचारण न्यायालय इसका मूल्यांकन करने में विफल रहा था कि वैवाहिक वाद के दाखिले के समय प्रत्यर्थी का मासिक वेतन 22,000/- रुपये था तथा ऐसा साक्ष्य रखा गया था कि प्रत्यर्थी मासिक वेतन के अलावा अपने पैतृक गांव में अवस्थित भू-संपत्ति से एक लाख रुपये अर्जित करता है। यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी नेशनल इंस्टीच्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (एन० आई० टी०) कुरूक्षेत्र, हरियाणा में व्याख्याता के तौर पर लाभप्रद रूप से नियोजित है तथा वर्तमान में 70,000/- रुपये से अधिक वेतन प्राप्त कर रहा है। यह आग्रह किया गया है कि अपीलार्थी के पास आय का कोई सुनिश्चित स्रोत नहीं है तथा जीवन यापन के खर्च में भारी वृद्धि पर विचार करते हुए 7,00,000/- (सात लाख) रुपये की निर्वाहिका बढ़ायी जानी चाहिए। यह आग्रह किया गया है कि अपीलार्थी अपने माता-पिता के घर में रह रही है तथा अपने वृद्ध माता-पिता पर आश्रित है।

5. प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि नि:संदेह जून, 2014 के महीने का प्रत्यर्थी का वेतन विवरण दर्शाता है कि कुल वेतन 73,000/- रुपये प्रति महीना है परन्तु प्रत्यर्थी ने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा यथा आदेश किये गये 7,00,000/- रुपये की स्थायी निर्वाहिका की राशि का भुगतान करने के लिए बैंक से ऋण लिया था। यह कि वह ऋण राशि को चुकाने के लिए बैंक को 8,500/- रुपये की मासिक किस्त का भुगतान कर रहा है; यह कि उसने अपने सी० पी० एफ० खाते से भी आवास ऋण लिया है जिसके लिए 17,000/- रुपये प्रति माह की कटौती की जाती है तथा उसके हाथ में आने वाला कुल वेतन लगभग 31,000/- रुपये आता है।

6. सुना। इस न्यायालय ने पक्षकारों को सौहार्द्रपूर्ण रूप से मामले का समाधान करने का निर्देश दिया था जिसपर प्रत्यर्थी ने 12,00,000/- रुपये का भुगतान करने की सहमति दी थी जिसपर अपीलार्थी सहमत नहीं है तथा उसे स्वीकारणीय नहीं है जिसने मांग की थी कि भरण-पोषण की स्थायी निर्वाहिका बढ़ाकर 15,00,000/- रुपये कर दिया जाय।

7. इसे उल्लिखित किया जाता है कि भरण-पोषण के प्रावधान का मूल तत्व यह सुनिश्चित करना है कि पति-पत्नी में आर्थिक रूप से दुर्बल पक्ष की युक्तिसंगत रूप से अन्य पक्ष के द्वारा देख-भाल की जाय। पक्षकारों के सामाजिक दर्जे तथा जीवन यापन के स्तर को ध्यान में लिया जाना होता है। स्वीकार्यत:, अपीलार्थी एक अधेड़ आयु की महिला है तथा पूछ-ताछ पर, उसने कथित किया है कि वह निजी विद्यालय में एक शिक्षिका के तौर पर नियोजित है। उसके द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि 4,52,000/- रुपये के बैंक ड्राफ्ट के साथ विवाह के समय दिये गये सभी सामान उसे प्रत्यर्थी द्वारा वापस कर दिये गये हैं।

8. अपीलार्थी ने पुनर्विवाह नहीं किया है तथा अपने वृद्ध माता-पिता के साथ रह रही है। यह स्थापित सिद्धांत है कि निर्वाहिका या भरण-पोषण के भुगतान का निर्देश देना दंड की प्रकृति का नहीं होता है बल्कि मात्र इतना सुनिश्चित करने के लिए होता है कि पक्षकारों के दर्जे के उपयुक्त पत्नी को भरण-पोषण का भुगतान किया जाय। इस प्रकार, जीवन यापन के खर्च में हुए बढ़ोत्तरी तथा धन के

अवमूल्यन को ध्यान में रखते हुए हम प्रत्यर्थी–पति–संदीप संतोष को 15,00,000/– रु॰ की एक स्थायी निर्वाहिका तथा भरण–पोषण का भुगतान करने का निर्देश देना समुचित समझते हैं। इस चरण में प्रत्यर्थी ने निवेदन किया है कि वह 15,00,000/– रुपये की राशि का भुगतान करने का इच्छुक है परन्तु आदेश की तिथि से दो सप्ताहों के भीतर 7,00,000/– रुपये का भुगतान करने तथा 8,00,000/– रुपये की शेष राशि का किस्तों में भुगतान करने की स्वतंत्रता की ईप्सा करता है क्योंकि उसे बैंक से उसके द्वारा लिये गये एवं अपने सी॰ पी॰ एफ॰ खाते से भी लिए गए ऋण का पुनर्भुगतान करना है। अपीलार्थी द्वारा इसपर अभ्यापत्ति नहीं की गयी है।

9. इस प्रकार, दिये गये तथ्यों एवं परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी को इस आदेश की तिथि से दो सप्ताहों के भीतर अपीलार्थी–रीना कुमारी उर्फ अपूर्वा के नाम बने डिमांड ड्राफ्ट के माध्यम से 7,00,000/– (सात लाख) रुपये का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है। वह 8,00,000/– (आठ लाख) रुपये की शेष राशि का भुगतान 2,00,000/– (दो लाख) रुपये की चार बराबर किस्तों में करेगा। पहली किस्त का भुगतान नवम्बर, 2014 के पहले सप्ताह के भीतर कर देना है तथा शेष तीनों किस्तों में से प्रत्येक का भुगतान तीन महीनों के अन्तराल पर किया जाएगा।

10. यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अगर अनुबद्ध अवधि के भीतर उक्त राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, तब प्रत्यर्थी–पति असंदत्त राशि पर 9 प्रतिशत की दर से ब्याज का भुगतान करेगा। अपीलार्थी को भी विधि के अनुसार असंदत्त राशि की वसूली करने की स्वतंत्रता है।

11. अभिधान वैवाहिक वाद संख्या 10 वर्ष 2008 में विद्वान विचारण न्यायालय/प्रधान न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, गिरीड़ीह द्वारा पारित निर्णय तथा डिक्री में पूर्वोक्त उपांतरण के साथ उक्त निर्देश एवं सम्परीक्षणों के साथ अपील आंशिक रूप से अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

झारखंड राज्य एवं अन्य

cuke

अनिल चन्द्र पंडित एवं एक अन्य

Civil Review No. 72 of 2013. 31st July, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908–धारा 114–पुनर्विलोकन–एकल न्यायाधीश द्वारा याची को अवकाश नकदीकरण राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया जो अनुदान प्राप्त अल्पसंख्यक विद्यालय में एक शिक्षक था–मुद्दा अनुदान प्राप्त अल्पसंख्यक विद्यालय के एक शिक्षक, जिसकी सेवाएँ बिहार सरकार द्वारा अनुमोदित की गयी थी, को अवकाश नकदीकरण के भुगतान से संबंधित था, जिसका 2014(1) JBCJ 465 में खंडपीठ द्वारा समाधान किया गया है–इन आधारों पर दाखिल सिविल पुनर्विलोकन याचिका पोषणीय नहीं है–इसके अतिरिक्त, स्वयं निर्णय का अनुपालन कर लिया गया है–पुनर्विलोकन याचिका निस्तारित। (पैराएँ 2 से 5)

निर्णयज विधि.–2014 (1) JBCJ 465—Applied.

अधिवक्तागण.–M/s A. Allam, Shravan Kumar, For the Petitioners; Mrs. Richa Sanchita, For the Respondent No.2.

आदेश

आई॰ ए॰ संख्या 7226 of 2013

दिन के अनुक्रम में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता को त्रुटि संख्याओं 2 एवं 3 को दूर करने की अनुमति दी जाती है। त्रुटि संख्याओं 1 एवं 4 की उपेक्षा की जाती है।

2. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि पुनर्विलोकन के अधीन निर्णय को अवमान केस (सिविल) संख्या 361 वर्ष 2003 के लंबित रहने के दौरान अनुपालन कर लिया गया है। यह निवेदन किया गया है कि प्रस्तुत पुनर्विलोकन याचिका मुख्यत: इस आधार पर दाखिल की गयी थी कि उक्त निर्णय द्वारा, विद्वान एकल न्यायाधीश ने विपक्षी/रिट याची, जो अनुदान प्राप्त अल्पसंख्यक विद्यालय में एक शिक्षक था, को अवकाश नकदीकरण की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया था जो भुगतान प्रत्यर्थी सरकार के प्रभावी परिपत्र के अधीन अनुमान्य नहीं था।

3. तथापि, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता इसपर विवाद नहीं करते हैं कि **2014(1) JBCJ 465 में दिनांक 3.1.2014** के निर्णय के माध्यम से रिपोर्ट किये गये **मरीयम टिर्की बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य** के मामले में WP(S) संख्या 506 वर्ष 2013 एवं इसके सदृश मामलों) में इस न्यायालय के विद्वान खंडपीठ द्वारा दिये गये निर्णय की दृष्टि में सहायता प्राप्त अल्पसंख्यक विद्यालय के एक शिक्षक, जिसकी सेवाएँ राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित की गयी थी, को अवकाश नकदीकरण की राशि के भुगतान से संबंधित मामला अवअनिर्णीत विषय नहीं रह गया है।

4. मामले की इस दृष्टि में, इन आधारों पर दाखिल सिविल पुनर्विलोकन याचिका पोषणीय प्रतीत नहीं होती है। इससे भी बढ़कर, स्वयं निर्णय का पूर्णत: अनुपालन कर लिया गया है।

5. तदनुसार, सिविल पुनर्विलोकन याचिका निस्तारित की जाती है।

6. तथापि विलम्ब की माफी की ईप्सा करने वाले आई॰ ए॰ सं॰ 7226 वर्ष 2013 को निस्तारित किया जाता है क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन पारित आदेश से पुनर्विलोकन उद्‌भूत होता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

राम लाल ठाकुर

cuke

भारत संघ

M.A. No. 290 of 2013. Decided on 30th July, 2014.

रेलवे दुर्घटना एवं अप्रिय घटना (प्रतिकर) नियमावली, 1990–भाग III का स्तम्भ 4–दुर्घटना में उपहति–अधिकरण द्वारा एक लाख रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णीत–अनुसूची के अधीन विहित भुगतान से कम भुगतान करने का तर्क अधिकरण द्वारा इंगित नहीं किया गया है–नियमावली, 1990 की दृष्टि में, अपीलार्थी 2,40,000/- रु॰ की सीमा तक प्रतिकर प्राप्त करने का हकदार है–आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय उपांतरित। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Dubey, For the Appellant; Mr. R.N. Roy, For the Respondent.

आदेश

केस संख्या OA(IIV)RNC/2009/0077 के संबंध में रेलवे दावा अधिकरण, राँची पीठ द्वारा पारित दिनांक 18.4.2013 के निर्णय तथा अधिनिर्णय के विरूद्ध यह अपील दाखिल की गई है, जिसके द्वारा अधिकरण ने इस उपहति, जो अपीलार्थी को हुई थी, के विरूद्ध अपीलार्थी-दावेदार को एक लाख रुपये की राशि अधिनिर्णीत की है।

2. तथ्य संक्षेप में यह है कि अपीलार्थी गढ़वा रोड स्टेशन से डाल्टेनगंज तक की यात्रा के इरादे से प्लेटफार्म सं॰ 3 पर प्रतीक्षा कर रहा था तथा उसके पास सामान्य श्रेणी का एक टिकट था। जब रेलगाड़ी पहुँची थी उसे चक्कर आ गया था तथा नीचे गिर पड़ा था। अपीलार्थी का दायां हाथ चक्के के नीचे आ गया था एवं बाद में इसे कलाई के जोड़ के पास से काटना पड़ा था। घटना 24.6.2009 को घटित हुई थी।

3. अपीलार्थी ने आक्षेपित निर्णय को इस आधार पर आलोचना की है कि अधिकरण ने रेलवे दुर्घटनाएं तथा अप्रिय घटनाएं (प्रतिकर) नियमावली, 1990 (इसमें इसके पश्चात 'नियमावली 1990' के तौर पर निर्दिष्ट) में संलग्न अनुसूची के भाग-III के स्तम्भ 4 में उल्लिखित प्रतिकर से कम प्रतिकर अधिनिर्णीत करने का वैध कारण प्रदान नहीं किया है। यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी को हुई उपहति विवादित नहीं है तथा अतएव, वह नियमावली, 1990 में संलग्न अनुसूची के भाग III के स्तम्भ 4 में यथा इंगित 2,40,000/- रुपये प्राप्त करने का हकदार है। चूँकि अपीलार्थी को कम राशि अधिनिर्णीत की गयी है, उसने यह अपील दाखिल किया है।

4. प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ने यद्यपि अपीलार्थी के आग्रह का विरोध किया था, परन्तु नियमावली, 1990 से संलग्न अनुसूची के भाग-III के स्तम्भ 4 में इंगित प्रतिकर की राशि पर प्रश्न नहीं उठाया था।

5. मैंने आक्षेपित निर्णय का अवलोकन किया है। मुद्दा सं॰ 1 का अपीलार्थी के पक्ष में निर्णय किया गया है। मुद्दा सं॰ 2 का निर्णय करते हुए अधिकरण ने अपीलार्थी को एक लाख रुपये के प्रतिकर का भुगतान करने का निर्देश प्रत्यर्थी को दिया है, परन्तु अनुसूची के अधीन विहित भुगतान से कम भुगतान करने का कारण इंगित नहीं किया गया है। नियमावली, 1990 की दृष्टि में, अपीलार्थी 2,40,000/- रुपए की सीमा तक प्रतिकर पाने का हकदार है तथा, अतएव, आक्षेपित निर्णय तथा अधिनिर्णय उस सीमा तक उपांतरित किया जाता है तथा प्रत्यर्थी को आज (30.7.2014) से साठ दिनों के भीतर अपीलार्थी को अतिरिक्त प्रतिकर के तौर पर और 1,40,000/- रुपये का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है। जिसके अनुपालन से विफल होने पर अतिरिक्त प्रतिकर पर 9 प्रतिशत की दर से वार्षिक ब्याज लगेगा।

6. तद्नुसार, यह अपील निस्तारित की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ i lkn] U;k;efr

बुधमणी कुमारी

cuke

श्रीमती रीशो देवी एवं एक अन्य

W.P. (C) No. 2184 of 2014. Decided on 30th July, 2014.

व्यवहार एवं प्रक्रिया—उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रदान किये जाने का मामला—प्रतिवादी के लिखित कथन तथा शपथ पत्र को विधि के अनुसार सिद्ध किये बिना इन दस्तावेजों को साक्ष्य में लिया गया है—न्यायालय ने इन दस्तावेजों को साक्ष्य में लेने में अवैधानिकता कारित की है—इस संबंध में न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.—Mr. Arun Kumar, For the Petitioner; M/s Ravi Prakash & Atanu Banerjee, For the Respondents.

आदेश

याची के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता तथा प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. आवेदिका, जो मृतक लक्षमण ओराँव की दूसरी पत्नी है, के पक्ष में उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रदान किये जाने के लिए एक मामला दाखिल किया गया था। पक्षकारों द्वारा अपने साक्ष्यों को प्रस्तुत किये जाने के उपरान्त मामला जिरह के लिए निर्धारित किया गया था। जिरह के चरण में, अन्य मामले के संबंध में दाखिल लिखित कथन तथा रामा ओराँव द्वारा निष्पादित शपथ पत्र को भी साक्ष्य में लेने के लिए एक आवेदन दाखिल किया गया था। बाद में 14.3.2014 को, मतदाता सूची को साक्ष्य में लेने के लिए एक और आवेदन दाखिल किया गया था। तत्पश्चात्, लिखित कथन तथा रामा ओराँव द्वारा निष्पादित शपथ पत्र एवं मतदाता सूची भी दिनांक 31.3.2014 के आदेश के माध्यम से साक्ष्य में ली गयी थी जो आदेश चुनौती के अधीन है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री अरूण कुमार निवेदन करते हैं कि न्यायालय ने विधि के अनुसार लिखित कथन तथा शपथ पत्र को सिद्ध किये बिना इन दस्तावेजों को साक्ष्य में लेने में अवैधानिकता कारित की है। इसके अतिरिक्त, यह निवेदन किया गया था कि न्यायालय को विचारण के बिल्कुल अंतिम चरण में मतदाता सूची को साक्ष्य में लेने की अनुमति नहीं देनी चाहिए थी तथा, अतएव, आक्षेपित आदेश अपास्त किये जाने योग्य है।

4. इसके विरूद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री अतानु बनर्जी निवेदन करते हैं कि पक्षकारों के अभिवाकों की दृष्टि में, यह दस्तावेज साक्ष्य में लिये गये हैं तथा यह कि मतदाता सूची एक सार्वजनिक दस्तावेज है तथा इसे साक्ष्य में लेकर कुछ भी गलत नहीं किया गया है एवं, तद्द्वारा, न्यायालय ने कोई अवैधानिकता कारित नहीं की है विशेषकर तब जब लिखित कथन तथा शपथ पत्र अभिलेख पर पहले से था।

5. स्वीकार्यतः, लिखित कथन एवं रामा ओराँव के शपथ पत्र को विधि के अनुसार सिद्ध किये बिना इन दस्तावेजों को साक्ष्य में लिया गया है। इस प्रकार, न्यायालय ने इन दस्तावेजों को साक्ष्य में लेकर अवैधानिकता कारित की है तथा, तद्द्वारा, इस संबंध में न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त किया जाता है। जहां तक साक्ष्य में मतदाता सूची लेने से संबंधित मामले का सवाल है, मैं आक्षेपित आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं पाता हूँ, तद्नुसार, यह रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

6. विधि के अनुसार मामले में कार्यवाही करने में यह आदेश याची के मार्ग में नहीं आयेगा।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vferko dekj xlrk] U;k;efr

सुरेन्द्र कुमार एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 427 of 2013. Decided on 7th August, 2014.

सेवा विधि—नियुक्ति—पुलिस मैनुअल का नियम 672—दोषपूर्ण वर्ण दृष्टि के आधार पर कॉन्स्टेबल के पद पर नियुक्ति से वंचित किया जाना—वर्णान्धता के बिना दोषरहित दृष्टि वाले उम्मीदवारों एवं दृष्टि बाधित व्यक्ति के लिए पदों का अनन्य रूप से कोई विभाजन नहीं है—कॉन्सटेबल की नौकरी की प्रकृति एवं प्रकार्यों की तुलना किसी कृषि पदाधिकारी के कर्त्तव्यों एवं प्रकार्यों से नहीं की जा सकती है—पुलिस कॉन्सटेबलों के लिए वर्ण दृष्टि समेत उपयुक्त दृष्टि होना आवश्यक है क्योंकि उन्हें उग्रवादी के अभियान में संलग्न होना पड़ सकता है—अपीलार्थी

अपने समूचे कैरियर में ऐसे पदों पर पदस्थापित किये जाने का दावा नहीं कर सकते हैं जहां बाधित दृष्टि या नियमित कार्यों से संबंधित प्रकार्य किये जा सकते हैं क्योंकि पुलिस कॉन्सटेबल की भर्त्ती का मूल तत्व दिन के घंटों के निरपेक्ष रहते हुए अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करना है जिनके लिए उन्हें चयनित किया गया है–प्राधिकारियों द्वारा नियुक्ति पत्र के प्रत्याख्यान में कोई भेद भाव या मनमाना कृत्य नहीं था–एकल न्यायाधीश के आक्षेपित आदेश के साथ किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 11 से 14)

निर्णयज विधि.–CWP(T) No. 4520 and 4521 of 2008, (2010) 3 SLR 76; 2011(4) JCR 281 (Jhr.); 1994(4) SCC 460; 1995(6) SCC 720—Distinguished.

अधिवक्तागण.–M/s. B.K. Dubey, For the Appellants; J.C. to A.G., For the Respondents.

अमिताव कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) संख्या 6322/2012 में पारित दिनांक 13.11.2013 के निर्णय के विरूद्ध प्रस्तुत लेटर्स पेटेंट अपील दाखिल किया गया है जिस निर्णय द्वारा अपीलार्थीगण/याचीगण की रिट याचिका खारिज कर दी गयी थी।

2. पूर्वोक्त रिट में अपीलार्थीगण/रिट याचीगण के प्रकथन ये हैं कि विज्ञापन संख्या 1/2010 के अनुसरण में अपीलार्थीगण ने कॉन्स्टेबलों के पद के लिए आवेदन किया था; यह कि अपीलार्थीगण के पास विज्ञापन के निबंधनों में अपेक्षित अर्हता थी; यह कि उन्हें प्रवेश पत्र निर्गत किये गये थे जिसके उपरान्त वह लिखित परीक्षा तथा शारीरिक परीक्षण में सम्मिलित हुए थे एवं सफल घोषित किये गये थे; कि उन्हें अपेक्षित प्रमाण पत्रों के साथ 25.6.2012 को आरक्षी अधीक्षक, हजारीबाग के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश देते हुए उन्हें चयन पत्र निर्गत किये गये थे; कि अपीलार्थीगण अपेक्षित प्रमाण-पत्रों के साथ 25.6.2012 को आरक्षी अधीक्षक, हजारीबाग के कार्यालय में उपस्थित हुए थे तथा प्रमाण पत्रों की विशुद्धता के सत्यापन पर उन्हें 5.7.2012 को चिकित्सीय परीक्षण के लिए उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था; कि अपीलार्थीगण चिकित्सीय परीक्षण के लिए उपस्थित हुए थे परन्तु उन्हें नियुक्ति पत्र निर्गत नहीं किये गये थे एवं प्राधिकारियों द्वारा उनका योगदान स्वीकार नहीं किया गया था, तत्पश्चात्, अपीलार्थीगण ने अपने अभ्यावेदन दाखिल किये थे एवं प्राधिकारियों से मिले थे जहां उन्हें मालूम हुआ था कि दोषपूर्ण वर्ण-दृष्टि के कारण उन्हें उनके कर्त्तव्यों में योगदान देने नहीं दिया गया था। इस प्रकार, व्यथित होने से अपीलार्थीगण/याचीगण ने पूर्वोक्त रिट दाखिल किया था जिसे आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

3. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थीगण को शारीरिक एवं मानसिक रूप से सक्षम पाया गया था तथा रिट याचिका के परिशिष्ट 4 के अनुसार, सफल उम्मीदवारों को अपने मूल प्रमाण पत्रों के साथ आरक्षी अधीक्षक, हजारीबाग के कार्यालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने रिट याचिका के परिशिष्ट 5 को भी निर्दिष्ट किया है तथा निवेदन किया है कि बाधित वर्ण-दृष्टि चिकित्सीय परीक्षण के लिए व्याधि की कोटि के तौर पर उल्लिखित नहीं है तथा परिशिष्ट 5 आरक्षी महानिदेशक (प्रशासन), झारखंड सरकार के कार्यालय द्वारा निर्गत आदेश संख्या 877 दिनांक 29.10.2004 है। उन्होंने इस अपील के परिशिष्ट 1 को भी निर्दिष्ट किया है तथा निवेदन किया है कि उक्त विज्ञापन में शारीरिक परीक्षण की अपेक्षित अर्हता विहित की गयी है तथा बाधित वर्ण दृष्टि के संबंध में कहीं पर भी इसका उल्लेख नहीं किया गया है।

यह तर्क दिया गया है कि अपीलार्थीगण का मामला **सी॰ डब्ल्यू॰ पी॰ (टी॰) संख्या 4520 एवं 4521 वर्ष 2008** में **होशियार सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य** के मामले में निर्णय, जो **(2010) 3 SLR 76** में रिपोर्ट किया गया था, द्वारा पूर्णतः आच्छादित है। यह आग्रह किया गया है कि

उक्त मामले में, न्यायालय ने सम्परीक्षित किया था कि वर्णान्धता से ग्रस्त व्यक्ति अन्य नियमित कर्त्तव्यों का निर्वहन करने के लिए पूर्णत: अक्षम नहीं हो सकते हैं जबकि वर्णान्धता कर्त्तव्यों के निर्वहन में संभवत: बाधा नहीं पहुँचा सकती है। **2011(4) JCR 281 (Jhar.)** में रिपोर्ट किये गये **अनील कुमार दास एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य** के मामले में निर्णय पर भरोसा करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि उस मामले में याचीगण को कतिपय दोषपूर्ण दृष्टि से तथा वर्णान्धता से ग्रस्त पाया गया था एवं चिकित्सीय रूप से अक्षम घोषित किया गया था परन्तु, उन्हें सेवा में कार्य करते रहने का निर्देश दिया गया था।

अपने तर्क के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने **1995(6) SCC 720** में रिपोर्ट किये गये **नन्द कुमार नारायण राव घोरमरे बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य** के मामले में निर्णय तथा **1994(4) SCC 460** में रिपोर्ट किये गये **नरेन्द्र कुमार चांदला बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य** के मामले में हुए निर्णय पर भी भरोसा किया है।

4. पूर्वोक्त न्यायिक निर्णयों तथा उन मामलों के तथ्यों के आधार पर, विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि वर्तमान मामले में बाधित वर्ण दृष्टि के आधार पर अपीलार्थीगण को पद पर योगदान देने की अनुमति न देने की प्राधिकारियों की कार्रवाई मनमानी एवं अवैधानिक है; कि अन्य व्यक्तियों को ऐसे परीक्षणों के अध्यधीन नहीं किया गया था तथा विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इस पहलू पर विचार नहीं किया गया था। इस प्रकार, आक्षेपित निर्णय तथ्यों एवं विधि के अनुरूप नहीं है तथा अपास्त किये जाने योग्य है।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान वर्तमान अपील में दाखिल प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट A की ओर आकर्षित किया है तथा निवेदन किया है कि पुलिस मैनुअल के नियम 672 एवं झारखंड सरकार द्वारा विहित पुलिस मैनुअल प्रपत्र 104 के निबंधनों में पुलिस कॉन्स्टेबलों का चयन किया जाता है जिसके द्वारा पुलिस कॉन्स्टेबल के पद पर भर्त्ती के लिए किसी व्यक्ति की चिकित्सीय परीक्षा अनिवार्य है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थीगण/रिट याचीगण द्वारा दाखिल रिट याचिका के परिशिष्ट 4 में, यह स्पष्टत: उल्लिखित किया गया है कि प्रमाण पत्रों के सत्यापन के उपरान्त उम्मीदवारों को एक चिकित्सीय परीक्षा से गुजरना होगा; कि प्रमाण पत्रों के सत्यापन के उपरान्त, नियम 672 के निबंधनों में एक चिकित्सा बोर्ड गठित किया गया था तथा पांच चिकित्सीय पदाधिकारियों से गठित चिकित्सा बोर्ड के समक्ष उम्मीदवार उपस्थित हुए थे; कि चिकित्सीय परीक्षण संचालित करने के उपरान्त रिपोर्ट आरक्षी अधीक्षक, हजारीबाग के कार्यालय भेज दी गयी थी एवं ऐसा पाया गया था कि 19 उम्मीदवारों की वर्ण-दृष्टि दोषपूर्ण पायी गयी थी। चिकित्सा रिपोर्ट प्राप्त करने पर तथा मामले की गंभीरता पर विचार करते हुए, आरक्षी अधीक्षक, हजारीबाग द्वारा निर्गत ज्ञाप संख्या 4583/आर॰ डी॰ दिनांक 28.8.2012 द्वारा मुख्य चिकित्सा पदाधिकारी, हजारीबाग से आग्रह किया गया था कि उन उम्मीदवारों, जिन्हें मेधा सूची के अधीन चयनित किया गया था तथा जिनकी वर्ण-दृष्टि दोषपूर्ण पायी गयी थी, को विशेषज्ञ राय के लिए नेत्र विभाग, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची निर्दिष्ट किया जाय। पूर्वोक्त ज्ञापन के परिणामस्वरूप मुख्य चिकित्सा पदाधिकारी, हजारीबाग ने 19 उम्मीदवारों के संबंध में आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ के नेत्र विभाग की विशेषज्ञ राय के लिए निदेशक, आर॰ आइ॰ एम॰ एस॰ को 19 उम्मीदवारों की सूची के साथ एक आग्रह पत्र संख्या 1447 दिनांक 29.8.2012 भेजा था; कि 19 उम्मीदवारों की सूची तथा उनकी छायाचित्रों के साथ निदेशक, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ को आरक्षी अधीक्षक, हजारीबाग के कार्यालय से भी एक पत्र भेजा गया था। उम्मीदवारों की आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ के नेत्र विभाग द्वारा जांच की गयी थी तथा निदेशक, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ ने विशेषज्ञ मत की रिपोर्ट भेजी थी जिसके द्वारा सात को सामान्य वर्ण-दृष्टि वाला पाया गया था एवं अपीलार्थीगण/रिट याचीगण समेत 12 उम्मीदवारों को

असामान्य वर्ण–दृष्टि वाला पाया गया था; कि परिशिष्ट 4 श्रृंखला चिकित्सीय परीक्षण के अध्यधीन सशर्त्त चयन था तथा चूँकि उनके असामान्य/बाधित वर्ण–दृष्टि थी, उन्हें नियुक्ति पत्र प्रदान नहीं किया गया था।

6. अपीलार्थीगण/याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **होशियार सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य (ऊपर)** के मामले में निर्णय पर भरोसा किया है, परन्तु हम पाते हैं कि उक्त निर्णय प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है क्योंकि उक्त मामले में याचीगण पुलिस लाइन्स में अपना औपचारिक योगदान देने के उपरान्त भर्त्ती प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे जिसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें नियुक्ति पत्र निर्गत कर दिया गया था तथा वह अपनी ड्यूटी में योगदान दे चुके थे, इसी प्रकार, **अनिल कुमार दास (ऊपर)** के मामले में, याचीगण को नियुक्ति पत्र प्रदान किये गये थे तथा उन्होंने अपनी तीन वर्षों की परिवीक्षा अवधि पूरी कर ली थी तथा वह विभिन्न स्थानों में पदस्थापित थे। इसी प्रकार, **नरेन्द्र कुमार चांदला (ऊपर)** के मामले में, याची विद्युत बोर्ड में सब–स्टेशन अटेंडेंट के तौर पर कार्य कर रहा था जबकि वर्तमान मामले में नियुक्ति पत्र निर्गत नहीं किये गये थे एवं बुलावा पत्रों (रिट याचिका की परिशिष्ट 4 श्रृंखला) में, यह उल्लिखित किया गया है कि बुलावा पत्रों को नियुक्ति पत्र नहीं माना जाएगा तथा यह स्पष्टत: उल्लिखित किया गया है कि प्रमाण पत्रों के सत्यापन के उपरान्त उम्मीदवारों को एक चिकित्सीय परीक्षण से गुजरना होगा।

7. प्रत्यर्थी–राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने पुलिस मैनुअल के नियम 672 तथा पुलिस मैनुअल प्रपत्र 104 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। नियम 672 निम्नवत् पठित है:–

> *^^672(a) lHkh dkULVcyk dk lphc) fd; tkus d igy ih0 ,e0 ii= l[;k 104 e ,d i th] ftle iR;d 0;fDr dk uke ifo"V djk;k tk,xk] d lkFk ijh{k.k d fy, vkj{kh vLirky d fpfdRlk inkfèkdkjh d ikl Hktk tk,xkA ith e mEehnokj d ck; vxB dk fpUg fy;k tk,xkA ijh{kk dju okyk fpfdRlh; inkfèkdkjh bld nljh vkj ,lk gh ,d fpUg yxk rFkk nkuk fpUgk dh ryuk dh tk,xhA fdlh dk Hkh lphc) ugh fd;k tk,xk tcrd fd fpfdRlh; inkfèkdkjh ml l{ke ?kkf"kr ugh dj nrk gA doy p;fur 0;fDr;k dk gh Hktk tk,xk] rFkk mud ekey e fpfdRlh; ijh{k.k d fy, dkb iHkkj ugh fy;k tk,xkA vèkh{kd ojh; dk;dkjh fpfdRlk inkfèkdkjh&lg&flfoy ltu d è;ku e dkb ,lk ekeyk yk ldrk g ftle og le>rk gk fd mud }kjk iu% ,d ijh{kk dh tkuh pkfg,A*
>
> *(b) doy ml dk;ky; d foHkkx dk ièkku] ftue mUg p;fur fd;k x;k g] dh vè;i{kk ij ljdkjh lok e fu;ktu d fy, p;fur mEehnokjk dh ijh{kk dh tk,xhA fcgkj ljdkj (LokLF; foHkkx) Kki l[;k IIIM@1602@5921361@4 fnukd 9 tykb] 1960 d ekè;e l ,lh vè;i{kk lnj vLirky d mikèkh{kd dk ;k ml fty] ftle mUg dk; djuk g] d ml vLirky d fpfdRlk inkfèkdkjh dk lckfèkr dh tk,xhA***

8. स्वीकार्यत:, नियम 672 आवश्यक बनाता है कि एक चिकित्सीय परीक्षा अनिवार्य है तथा अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि परिशिष्ट 4 के अनुसार केवल प्रमाण पत्रों के सत्यापन तथा जांच की आवश्यकता थी, थोड़ा भ्रामक है क्योंकि जैसा कि ऊपर उल्लिखित किया गया है, रिट याचिका के परिशिष्ट 4 में यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया है कि प्रमाण पत्रों के सत्यापन के उपरान्त, उम्मीदवार को एक चिकित्सीय परीक्षण के लिए उपस्थित होना होगा। परिणामस्वरूप, अपीलार्थीगण/रिट याचिका को मुख्य चिकित्सा पदाधिकारी, सदर अस्पताल, हजारीबाग द्वारा गठित पांच

चिकित्सा पदाधिकारियों से गठित चिकित्सा बोर्ड के पास चिकित्सीय परीक्षण के लिए भेजा गया था तथा तत्पश्चात् उन्हें पुलिस मैनुअल द्वारा विहित नियम 672 के अनुसार चिकित्सा परीक्षण के लिए आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ भेजा गया था। कुल मिलाकर आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ में 19 उम्मीदवारों की जांच की गयी थी तथा याचीगण समेत 12 उम्मीदवारों को असामान्य/बाधित वर्ण-दृष्टि वाला पाया गया था तथा अतएव उन्हें नियुक्ति प्रदान नहीं की गयी थी।

9. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि रिट याचिका के परिशिष्ट 5 में, आरक्षी महानिदेशक (प्रशासन), झारखंड राज्य के कार्यालय द्वारा निर्गत आदेश में बाधित दृष्टि या दोषपूर्ण वर्ण-दृष्टि चिकित्सीय परीक्षण के लिए व्याधियों में से एक व्याधी के तौर पर प्रगणित नहीं की गयी है, स्वीकारणीय नहीं है क्योंकि उक्त परिशिष्ट में यह उल्लिखित नहीं किया गया है कि इसे पुलिस मैनुअल के नियम 672 के निबंधनों में निर्गत किया गया है या नहीं या इसे सरकार द्वारा अनुमोदित किया गया है। न ही इसका कोई उल्लेख है कि चिकित्सीय परीक्षा उसमें प्रगणित व्याधियों की कोटि के संबंध में पुलिस कॉन्स्टेबलों की भर्त्ती के संदर्भ में है या इसके मामले में है।

10. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **नन्द कुमार नारायण राव घोरमारे (ऊपर)** के मामले में निर्णय पर भरोसा किया है परन्तु उक्त निर्णय किसी काम का नहीं है क्योंकि उक्त मामले में तथ्य वर्णान्धता के आधार पर अपीलार्थी को नियुक्ति पत्र प्रदान न करने के संबंध में थे, जिसे द्वितीय वर्ग की सेवा में कृषि पदाधिकारी के पद पर लोक सेवा आयोग द्वारा चयनित किया गया था। उक्त मामले में, एक शपथ पत्र दाखिल किया गया था इसका विवरण देते हुए कि विभाग में 35 पद थे तथा केवल पांच पदों में वर्णान्धता के बिना दोषरहित दृष्टि की आवश्यकता थी। दिये गये तथ्यों में, उच्चतम न्यायालय ने सरकार को शपथपत्र में यथा उल्लिखित पांच पदों से इतर पदों में से किसी पद पर नियुक्त किये जाने के लिए अपीलार्थी के मामले पर विचार करने का सरकार को निर्देश दिया था।

11. यह प्रकट है कि वर्तमान मामले में, वर्णान्धता से रहित दोषरहित दृष्टि वाले उम्मीदवारों तथा बाधित दृष्टि वाले व्यक्तियों के लिए अनन्य रूप से पदों का कोई विभाजन नहीं है। किसी कॉन्स्टेबल के नौकरी की प्रकृति एवं प्रकार्यों की तुलना किसी कृषि पदाधिकारी के कर्त्तव्यों एवं प्रकार्यों के साथ नहीं की जा सकती है। पुलिस कॉन्स्टेबलों के लिए वर्ण-दृष्टि समेत उपयुक्त दृष्टि का होना आवश्यक है क्योंकि उन्हें उग्रवादियों के अभियान में संलग्न होना पड़ सकता है जो राज्य में काफी फैला हुआ है; कि अपीलार्थीगण अपने पूरे कैरियर में ऐसे पदों पर पदस्थापित किये जाने का दावा नहीं कर सकते हैं जहां बाधित दृष्टि या नियमित कार्यों से संबंधित प्रकार्य किये जा सकते हैं क्योंकि पुलिस कॉन्स्टेबल की नियुक्ति का मूल्य तत्व दिन के घंटों के निरपेक्ष रहते हुए उन कर्त्तव्यों का निर्वहन करना है जिनके लिए उन्हें चयनित किया गया है।

12. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का यह अभिवाक् कि प्राधिकारियों ने अपीलार्थीगण एवं रिट याचीगण के साथ भेद भाव किया है, थोड़ा भ्रामक है क्योंकि जिला स्तर पर चिकित्सीय बोर्ड ने वर्ण-दृष्टि के दोष के साथ 19 व्यक्तियों का पता लगाया था। पुनरावृत्ति की कीमत पर यह उल्लिखित किया जाता है कि सभी 19 व्यक्तियों के मामले, जैसा कि प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कथित किया गया है, को उनकी छाया चित्रों के साथ विशेषज्ञ मत के लिए आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ भेजा गया था तथा उक्त 19 व्यक्तियों की जांच की गयी थी जिनमें से 7 को सामान्य दृष्टि रखने वाला घोषित किया गया था तथा अपीलार्थीगण/रिट याचीगण समेत 12 व्यक्तियों में असामान्य वर्ण दृष्टि के दोष होने का पता चला था जिसपर विवाद नहीं किया गया है। तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्राधिकारियों द्वारा नियुक्ति पत्र के प्रत्याख्यान में कोई भेद भाव या मनमानी कार्रवाई नहीं थी।

13. उद्भूत परिदृष्य तथा मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, अपील गुणावगुणों से रहित है तथा विद्वान एकल न्यायाधीश के आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है।

14. तद्नुसार, यह अपील एतद्द्वारा खारिज की जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सुजीत कुमार मंडल

cuke

झारखण्ड राज्य

Cr. M.P. No. 3426 of 2013. Decided on 31st July, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धारा 451–जब्त वाहन का छोड़ा जाना–याची ट्रैक्टर तथा ट्रेलर का स्वामी है जो एक वाणिज्यिक वाहन है–इसे याची के पक्ष में छोड़ दिया जाना चाहिए था क्योकि यह किसी भी ढंग से अभियोजन मामले को प्रतिकूलतः प्रभावित नहीं करेगा–आक्षेपित आदेश अपास्त एवं विचारण न्यायालय को आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया।
(पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Ananda Sen, For the Petitioner; Mrs. Sadhna Kumar, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. याची दांडिक पुनरीक्षण संख्या 87 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 28.11.2013 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा प्रश्नाधीन वाहनों को छोड़ने के लिए आवेदन को अस्वीकार करते हुए विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला द्वारा जी॰ आर॰ संख्या 871 वर्ष 2003 में पारित दिनांक 19.9.2013 के आदेश के विरूद्ध दाखिल पुनरीक्षण अवर पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है।

3. याची को जी॰ आर॰ संख्या 871 वर्ष 2013 के तत्सम् सरायकेला पुलिस थाना केस संख्या 99 वर्ष 2013 के संबंध में अभियुक्त बनाया गया है। प्राथमिकी दर्शाती है कि खनन निरीक्षक द्वारा दो ट्रैक्टरों को पकड़ा गया था, एक ट्रैक्टर बालू से लदा हुआ था तथा दूसरा ट्रैक्टर पत्थरों से लदा हुआ था। याची ने ट्रैक्टरों तथा ट्रेलरों में से एक का स्वामी होने का दावा करते हुए, जिनकी निबंधन संख्या JH05AC4491 एवं JH05AC4492 थी, अपने पक्ष में ट्रैक्टर तथा ट्रेलर को छोड़ने के लिए आवेदन दाखिल किया था जिसे विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था, यह कथित करते हुए कि मामले का अन्वेषण अभी भी चल रहा था। उक्त आदेश के विरूद्ध दाखिल पुनरीक्षण भी अवर पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था।

4. विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि प्रश्नाधीन वाहनों के संबंध में पुलिस रिपोर्ट मंगवाई गयी थी एवं यह पाया गया था कि याची प्रश्नाधीन ट्रैक्टर का तथा ट्रेलर का मालिक है। इस तथ्य की दृष्टि में कि प्रश्नाधीन वाहन एक वाणिज्यिक वाहन है, मेरी सुविचारित राय है कि इसे याची के पक्ष में छोड़ दिया जाना चाहिए था क्योंकि याची को प्रश्नाधीन ट्रैक्टर तथा ट्रेलर का स्वामी पाया गया था। न्यायालय ऐसे बंध पत्र/प्रतिभू/बचनबद्धताएं याची से ले सकता है जैसा तथ्यों तथा परिस्थितियों में उपयुक्त एवं उचित समझा जाय, इस बचनबद्धता समेत कि ट्रैक्टर तथा ट्रेलर के छोड़े जाने

पर किसी भी ढंग से अभियोजन मामला प्रतिकूलत: प्रभावित नहीं होगा, तथा यह कि ट्रैक्टर एवं ट्रेलर पेश किया जायेगा जब कभी भी विचारण न्यायालय द्वारा ऐसा निर्देश दिया जाता है। वास्तव में, मामले के अन्वेषण के पूरा हो जाने के उपरान्त ही ऐसा कोई आदेश पारित किया जा सकता है।

5. पूर्वोल्लिखित परिचर्चाओं की दृष्टि में, जी॰ आर॰ संख्या 871 वर्ष 2003 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 19.9.2013 के आक्षेपित आदेश एवं दांडिक पुनरीक्षण संख्या 87 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 28.11.2013 के आदेश भी एतद्द्वारा अपास्त किये जाते हैं तथा विचारण न्यायालय को विधि के अनुसार एवं उपरोक्त किये गये सम्परीक्षणों की दृष्टि में आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

6. तद्नुसार, यह दांडिक विविध याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vferko dekj xlrk] U;k;efr

झारखंड राज्य एवं अन्य

cuke

राजेन्द्र प्रसाद महतो

L.P.A. No. 454 of 2013. Decided on 7th August, 2014.

सेवा विधि–प्रोन्नति–द्वितीय अपील का रद्दकरण–अगर किसी कर्मचारी ने नियमित आधार पर पहले ही दो प्रोन्नतियां प्राप्त कर ली है, ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन उसे कोई लाभ प्रोद्भूत नहीं होगा–याचीगण का यह मामला नहीं है कि प्रत्यर्थी को दो प्रोन्नतियां प्रदान की गयी थीं–प्रत्यर्थी को उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद से उत्पाद लिपिक के पद पर एक प्रोन्नति प्रदान की गयी थी–चूँकि प्रत्यर्थी द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किये जाने के पहले सतत् सेवा के 24 वर्ष पूरा कर चुका था, याची को प्रदत्त द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ को रद्द कर देने का कोई औचित्य नहीं है–एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी को प्रदत्त द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ को रद्द करने वाले आदेश को उचित रूप से अभिखंडित कर दिया था–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 12 से 17)

अधिवक्तागण.–M/s Jai Prakash, Yogesh Modi, For the Appellant/Petitioner; M/s. Saurav Arun, Deepak Kumar Dubey, For the Respondent.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–वर्तमान अपील डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ संख्या 1676 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 24.6.2013 के आदेश के विरूद्ध दाखिल की गयी है जिसके माध्यम से प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल रिट आवेदन प्रत्यर्थी को द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान करने वाले आदेश के रद्दकरण की सीमा तक आंशिक रूप से अनुज्ञात कर दिया गया था तथा आदेश की तिथि से दो महीनों के भीतर उसकी पहली प्रोन्नति तथा द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ के आदेश के निबंधनों में सेवा सीमान्त लाभों के बकायों तथा सेवा निवृत्ति बकायों की भी गणना करने का अपीलार्थीगण को निर्देश दिया गया था।

2. मामले के तथ्य संक्षेप में ये हैं कि प्रत्यर्थी को 105–2–195–3–204 के वेतनमान में 19.11.1974 को उत्पाद कॉन्स्टेबल के तौर पर नियुक्त किया गया था तथा उसे उत्पाद आयुक्त के सचिव द्वारा निर्गत कार्यालय आदेश संख्या 3598 दिनांक 17.6.1983 (61/V) के माध्यम से उत्पाद लिपिक के पद पर अस्थायी प्रोन्नति प्रदान की गयी थी एवं उसने 580-10-620-15-770EB 15-860 रुपये के वेतनमान में 21.6.1983 को योगदान दिया था। याची को 4500–7000/– रुपये के वेतनमान में 9.8.1999 के प्रभाव से पहला ए॰ सी॰ पी॰ (सुनिश्चित कैरियर प्रगति) प्राप्त हुआ था तथा 5000–8000/–

रुपये के वेतनमान में कार्यालय आदेश संख्या 862 दिनांक 28.6.2008 के माध्यम से 21.6.2007 के प्रभाव से औपबंधिक रूप से द्वितीय ए० सी० पी० भी प्राप्त हुआ था इस शर्त्त के साथ कि एक वर्ष के भीतर प्रत्यर्थी को प्रदत्त ऐसे वित्तीय उत्क्रमण के स्वीकरण पर वित्त विभाग, झारखंड का सम्पुष्टि आदेश प्राप्त कर लिया जाएगा।

3. संकल्प संख्या 5207/F दिनांक 14.8.2002 के पैरा 3(v) में वित्त विभाग की सलाह के आलोक में, उत्पाद एवं निषेध विभाग ने ज्ञाप संख्या 473 दिनांक 17.3.2010 के माध्यम से एक आदेश निर्गत किया था तथा प्रत्यर्थी के वित्तीय उत्क्रमण से संबंधित पिछला आदेश रद्द कर दिया गया था। तत्पश्चात्, याची ने ज्ञाप संख्या 473 दिनांक 17.3.2010 को अभिखंडित करने के लिए रिट-डब्ल्यू० पी० एस० संख्या 1676 वर्ष 2010-दाखिल किया था तथा इसे 24.6.2013 को अनुज्ञात कर दिया गया था इस सीमा तक कि प्रत्यर्थी द्वितीय ए० सी० पी० के लाभों का हकदार है ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए कि ए० सी० पी० प्रदान करने का नीतिगत निर्णय ऐसा नहीं दर्शाता है कि अगर किसी व्यक्ति को कतिपय वेतनमान के साथ प्रोन्नति प्रदान की जाती है, वह सेवा के 24 वर्ष के पूरे हो जाने पर द्वितीय ए० सी० पी० के लाभों का हकदार नहीं होगा। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने वर्तमान अपील दाखिल किया है।

4. अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अपर महाधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी को ए० सी० पी० प्रदान करने में दो त्रुटियां थी तथा दिनांक 17.3.2010 के आदेश से, वित्त विभाग द्वारा इन्हें उचित रूप से रद्द कर दिया गया था। यह निवेदन किया गया था कि 9.8.1999 के प्रभाव से 4500-7000/- रुपये के वेतनमान में उत्पाद लिपिक के पद पर एक नियमित प्रोन्नति प्राप्त करके, जो उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद में द्वितीय ए० सी० पी० के वेतनमान के समतुल्य है, याची-प्रत्यर्थी न तो पहले ए० सी० पी० और न ही द्वितीय ए० सी० पी० के लाभ को प्राप्त करने का हकदार है एवं विद्वान एकल न्यायाधीश ने सरकारी सेवकों को प्रदान किये जाने वाले ए० सी० पी० की योजना (खंड 3(v) के माध्यम से) का उचित रूप से मूल्यांकन नहीं किया था।

5. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विभागीय कोटा के 25 प्रतिशत के विरूद्ध, प्रत्यर्थी को उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद से उत्पाद लिपिक के पद पर प्रोन्नत किया गया था तथा अतएव, उत्पाद लिपिक के संवर्ग में उसके प्रवेश को प्रोन्नति नहीं कहा जा सकता है, बल्कि इसका एक नयी नियुक्ति के तौर पर अर्थान्वयन किया जाना होगा तथा अतएव, प्रत्यर्थी दूसरे ए० सी० पी० का हकदार है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि किसी गोपाल पंड़ित, जिसे प्रत्यर्थी के साथ उत्पाद कॉन्स्टेबल के तौर पर नियुक्त किया गया था तथा प्रत्यर्थी के समान उसकी भी स्थिति है, को उत्पाद लिपिक के पद में दूसरा ए० सी० पी० प्रदान किया गया है तथा ऐसा करते समय, अपीलार्थी प्राधिकारीगण प्रत्यर्थी के विरूद्ध एक भेदभावपूर्ण रवैया नहीं अपना सकते हैं। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि कोई नोटिस प्रदान किये बिना या अभ्यावेदन का कोई अवसर उपलब्ध कराये बिना आक्षेपित आदेश द्वारा प्रत्यर्थी को प्रदत्त पहले ए० सी० पी० तथा द्वितीय ए० सी० पी० के लाभों को रद्द कर दिया गया है तथा अतएव, विद्वान एकल न्यायाधीश ने दूसरा ए० सी० पी० प्रदान करने वाला आदेश के रद्दकरण की सीमा तक उचित रूप से आक्षेपित आदेश अभिखंडित कर दिया था।

6. प्रत्यर्थी को 19.11.1974 को उत्पाद कॉन्स्टेबल के तौर पर नियुक्त किया गया था। दिनांक 17.6.1983 के आदेश से, प्रतिशपथ पत्र के साथ दाखिल परिशिष्ट A के माध्यम से प्रत्यर्थी तथा कोई गोपाल पंडित एवं दो दफ्तरियों समेत चार उत्पाद निरीक्षकों को दिनांक 17.6.1983 के आदेश द्वारा 580-10-770-EB-15-860 रुपये के वेतनमान में उत्पाद लिपिक के पद पर प्रोन्नति प्रदान की गयी थी।

7. जहां तक प्रत्यर्थी के इस तथ्य का सवाल है कि उत्पाद लिपिक के तौर पर उसकी प्रोन्नति को ''एक नई नियुक्ति'' माना जाना चाहिए, यह किसी दस्तावेज द्वारा समर्थित नहीं है। जैसा कि विद्वान एकल

न्यायाधीश द्वारा निर्दिष्ट किया गया था, परिशिष्ट A के परिशीलन से यह दिखाई पड़ता है कि यह प्रत्यर्थी एवं दो दफ्तरियों समेत चार उत्पाद कॉन्स्टेबलों की प्रोन्नति का एक आदेश था तथा अतएव, इसे 25 प्रतिशत कोटि के अधीन पद पर चयन के आधार पर एक नई नियुक्ति नहीं माना जा सकता है तथा उक्त अभिवाक् कि उत्पाद लिपिक के तौर पर प्रत्यर्थी की प्रोन्नति को एक नई नियुक्ति माना जाए, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा उचित रूप से नकार दिया गया था।

8. सुनिश्चित कैरियर प्रगति (ए॰ सी॰ पी॰) के अधीन दो वित्तीय उत्क्रमण प्रदान करने के लिए संकल्प संख्या 5207 दिनांक 14.8.2002 के माध्यम से राज्य सरकार की योजना के अनुसार, उक्त संकल्प में सुसंगत खंड 3(v) है जो निम्नवत् पठित है:–

> *^^3(v) fo'k"k dkfV] ftl lc) ljdkjh lod dk lhèkh HkÙkh d ekè;e l fu;Dr fd;k x;k g] e ljdkjh lok dh leph vofèk e ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu nk foÙkh; mRØe.k dh x.kuk bLreky dh x;h fu;fer ikUufr d fo:) dh tk,xhA bldk ;g vfHkik; g fd ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu nk foÙkh; mRØe.k miyCèk djk; tk;x o'kÙk fd ljdkjh lod u fofgr vofèk (12 o"k ,o 24 o"k) d Hkhrj dkb fu;fer ikUufr ikIr u dh gkA vxj dkb depkjh ,d fu;fer ikUufr ikIr dju d mijkUr ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu vuekU; nlj foÙkh; mUu;u dk orueku igy gh ikIr dj jgk g] ,lh ifjfLFkfr;k e vfrfjDr mRØe.k dk ykHk ml xkg; ugh gkxkA vxj dkb depkjh igy gh fu;fer ikUufr ikIr dj pdk g] rc og fu;fer lok d 24 o"k ijk dju d mijkUr gh ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu nlj foÙkh; mRØe.k dk ik= gkxkA vxj dkb depkjh fu;fer vkèkkj ij igy gh nk ikUufr;k ikIr dj pdk g] ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu ml dkb Hkh ykHk vuekU; ugh gkxkA***

9. उपरोक्त खंड 3(v) के विश्लेषण पर, निम्नांकित कोटियां उद्भूत होती हैं:–

- *,0 lh0 ih0 d vèkhu nk foÙkh; mRØe.k ljdkjh lod dk miyCèk djk; tk;x o'kr dh ljdkjh lod u 12 o"kk ,o 24 o"kk dh fofgr vofèk d Hkhrj dkb fu;fer ikUufr ikIr u dh gkA*

- *,d fu;fer ikUufr ikIr dju d mijkUr] vxj dkb depkjh ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu vuekU; f}rh; foÙkh; mUu;u dk orueku igy gh ikIr dj pdk g] ,lh ifjfLFkfr;k e] vfrfjDr mRØe.k dk ykHk ml vuekU; ugh gkxkA*

- ***vxj dkb depkjh igy gh ,d fu;fer ikUufr ikIr dj pdk g] rc og ;ktuk d vèkhu fu;fer lok d 24 o"k ij gku d mijkUr gh f}rh; foÙkh; mRØe.k dk ik= gkxkA***

- *vxj dkb depkjh fu;fer vkèkkj ij igy gh nk ikUufr;k ikIr dj pdk g] ,0 lh0 ih0 ;ktuk d vèkhu depkjh dk dkb ykHk mnHkr ugh gkxkA*

10. प्रस्तुत मामले में, प्रत्यर्थी को केवल एक प्रोन्नति प्राप्त हुई थी, अर्थात्, कार्यालय आदेश संख्या 3598 दिनांक 17.6.1983 के माध्यम से 580-10-620-15-770-EB-15-860 रुपये के वेतनमान में उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद से उत्पाद लिपिक के पद पर एवं 4000–6000/– रुपये के संशोधित वेतनमान

में। उत्पाद कॉन्स्टेबल का वेतनमान 2650-3540/- रुपये है तथा पहले ए० सी० पी० के अनुसार, यह 3200-4900/- रुपये होगा एवं द्वितीय ए० सी० पी० के लिए 4000-6000/- रुपये होगा।

11. अपीलार्थीगण का पक्ष यह है कि 4000-6000/- रुपये के वेतनमान में एक नियमित प्रोन्नति प्राप्त करने पर, जो उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद में दूसरे ए० सी० पी० के तुल्य है, रिट याची-प्रत्यर्थी उत्पाद कॉन्स्टेबल के प्रोन्नति पद में न तो पहले ए० सी० पी० और न ही दूसरे ए० सी० पी० के लाभ को प्राप्त करने का हकदार है। विद्वान महाधिवक्ता ने निवेदन किया कि जो दूसरी त्रुटि कारित की जा रही है, वह नीति के खण्ड 3(v) की प्रथम दो पंक्तियों के सरल पठन से प्रकट है जो कथित करती है कि ए० सी० पी० योजना के अधीन समूची सेवा में दूसरे वित्तीय उत्क्रमण की गणना उस श्रेणी से की जाएगी जिस श्रेणी में कर्मचारी को नियुक्त किया गया था, जिसका अर्थ है कि गणना के उद्देश्य के लिए प्रत्यर्थी के मामले को 19.11.1974 से लिया जाना चाहिए था, परन्तु ए० सी० पी० प्रदान करते समय सेवा कैरियर 1983 से लिया गया था जब उसे उत्पाद लिपिक के पद पर प्रोन्नत किया गया था, जो राज्य सरकार की योजना के अनुसार पूर्णत: त्रुटिपूर्ण है। यह निवेदन किया गया कि इस त्रुटि का बाद में पता चला था तथा अतएव, ए० सी० पी० रद्द कर दिया गया था तथा विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी को द्वितीय ए० सी० पी० प्रदान करने के आदेश में हुई त्रुटियों को ध्यान में नहीं रखा था।

12. इस तर्क में कोई गुण नहीं है कि चूँकि प्रत्यर्थी को उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद से उत्पाद लिपिक के पद पर प्रोन्नति प्रदान की गयी थी, वह द्वितीय ए० सी० पी० का हकदार नहीं है। ए० सी० पी० प्रदान करने के लिए दिनांक 14.8.2002 के उपरोक्त संकल्प में, यह कथित नहीं किया गया है कि अगर किसी व्यक्ति को एक प्रोन्नति प्रदान की जाती है, वह किसी ए० सी० पी० का हकदार नहीं होगा। यह केवल इतना कथित करता है कि अगर कोई कर्मचारी पहले ही एक नियमित प्रोन्नति प्राप्त कर चुका है, तब वह नियमित सेवा के 24 वर्ष पूरा करने के उपरान्त ही ए० सी० पी० योजना के अधीन दूसरे वित्तीय उत्क्रमण का पात्र होगा। अगर कोई कर्मचारी नियमित आधार पर पहले ही दो प्रोन्नतियां प्राप्त कर चुका है, ए० सी० पी० योजना के अधीन कोई लाभ प्रोद्भूत नहीं होगा। अपीलार्थीगण का यह मामला नहीं है कि प्रत्यर्थी को दो प्रोन्नतियां प्रदान की गयीं थीं। स्वीकार्यत:, जैसा कि पहले निर्दिष्ट किया गया है, प्रत्यर्थी को उत्पाद कॉन्स्टेबल के पद से उत्पाद लिपिक के पद पर एक प्रोन्नति प्रदान की गयी थी। संकल्प के खंड 3(v) में भाषा यह है कि ''अगर किसी कर्मचारी ने पहले ही एक प्रोन्नति प्राप्त कर लिया है, तब वह नियमित सेवा के 24 वर्ष पूरा होने के उपरान्त ही ए० सी० पी० योजना के अधीन दूसरे वित्तीय उत्क्रमण का पात्र होगा''। जब प्रत्यर्थी को कार्यालय आदेश संख्या 862 दिनांक 28.6.2008 के माध्यम से 5000-8000/- रुपये के वेतनमान में 21.6.2007 के प्रभाव से औपबंधिक रूप से द्वितीय ए० सी० पी० प्रदान किया गया था, प्रत्यर्थी पहले ही नियमित सेवा के 24 वर्ष पूरा का चुका था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने उचित रूप से निर्दिष्ट किया था कि चूँकि प्रत्यर्थी द्वितीय ए० सी० पी० प्रदान किये जाने के पहले सतत् सेवा के 24 वर्ष पूरा कर चुका था, प्रत्यर्थी को प्रदत्त द्वितीय ए० सी० पी० के रद्दकरण का कोई औचित्य नहीं था। इस प्रकार, हमारी राय है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी को प्रदत्त द्वितीय ए० सी० को रद्द करने वाले आदेश को उचित रूप से अभिखंडित कर दिया था।

13. हमारा निष्कर्ष एक अन्य तथ्य एवं परिस्थिति द्वारा भी प्रबलीकृत होता है। जैसा कि पूर्व में निर्दिष्ट किया गया था। कार्यालय आदेश संख्या 3598 दिनांक 17.6.1983 के माध्यम से प्रत्यर्थी एवं कोई गोपाल पंडित तथा दो दफ्तरियों समेत चार उत्पाद कॉन्स्टेबलों को उत्पाद लिपिक के तौर पर प्रोन्नत किया गया था। उक्त गोपाल पंडित को आदेश संख्या 1020 दिनांक 24.6.2005 के माध्यम से 9.8.1999 के प्रभाव से 4500-7000/- रुपये के वेतनमान में पहला ए० सी० पी० प्रदान किया गया था। प्रत्यर्थी की ओर से, यह कथित किया गया है कि उक्त गोपाल पंडित को 5000-8000/- रुपये के वेतनमान में द्वितीय ए० सी० पी० प्रदान किया गया था तथा इसे रद्द नहीं किया गया था। जब समरूप स्थिति वाले गोपाल

पंडित जैसे उत्पाद लिपिक को द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किया गया था, प्रत्यर्थी के साथ भेद-भाव नहीं किया जा सकता है।

14. प्रत्यर्थी को 9.8.1999 के प्रभाव से 4500-7000/- रुपये के वेतनमान में कार्यालय आदेश संख्या 1686 दिनांक 20.12.2007 के माध्यम से पहला ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किया गया था। जहां तक पहले ए॰ सी॰ पी॰ का सवाल है, योजना के अनुसार अगर कोई कर्मचारी पहले ही एक नियमित प्रोन्नति प्राप्त कर चुका है, वह नियमित सेवा के 24 वर्षों के पूरे होने पर ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन द्वितीय वित्तीय उत्क्रमण का पात्र होगा। अपीलार्थीगण का स्पष्ट पक्ष यह है कि प्रथम ए॰ सी॰ पी॰ के बदले में, प्रत्यर्थी को आदेश संख्या 3598 दिनांक 17.6.1983 के माध्यम से प्रोन्नति दी गयी थी तथा अतएव, प्रत्यर्थी किसी ए॰ सी॰ पी॰ का हकदार नहीं है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी को प्रदत्त द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ को रद्द करने वाले दिनांक 17.3.2010 के आदेश के साथ हस्तक्षेप नहीं किया था। प्रत्यर्थी ने भी इसके विरूद्ध कोई अपील दाखिल नहीं किया है। अतएव, 4500-7000/- रुपये के वेतनमान में द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ का रद्दकरण अभी तक प्रभावी बना हुआ है।

15. जब 5000-8000/- रुपये के वेतनमान में प्रत्यर्थी को 21.6.2007 के प्रभाव से द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किया गया था, प्रत्यर्थी नियमित सेवा के 24 वर्ष पहले ही पूरा कर चुका था एवं अतएव, योजना के अनुसार प्रत्यर्थी दूसरे ए॰ सी॰ पी॰ का हकदार था। मामले की इस दृष्टि में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उचित रूप से सम्परीक्षित किया था कि सेवा के 24 वर्ष पूरे हो जाने पर प्रत्यर्थी को प्रदत्त द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ के रद्दकरण का कोई वैधानिक औचित्य नहीं है। प्रत्यर्थी 31.1.2009 को सेवा से निवृत्त हो गया था।

16. याची-प्रत्यर्थी को प्रदत्त द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ के रद्दकरण के संबंध में आदेश अभिखंडित करते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नांकित निर्देश निर्गत किया था:-

> *^^pfd ;kph dfFkr : i l 31.1.2009 dk lokfuoÙk gk x;k g] iR;Fkhx.k dk bl vkn'k dh ifrfyfi dh ikfIr@iLrfrdj.k dh frfFk l nk eghuk d Hkhrj mldh igyh ikUufr rFkk nljh ikUufr d vkn'k d fucèkuk e mu frfFk;k l] tc mDr vkn'k fuxr fd; x; Fk] mld lok lhekUr ykHkk d cdk;k ,o lokfuofÙk cdk;k dh Hkh x.kuk dju dk fun'k fn;k tkrk g rFkk rRi'pkr] lkfofèkd C;kt d lkFk Ng lIrkgk d Hkhrj mld lHkh LohÑr cdk;k dk Hkxrku dju dk fun'k fn;k tkrk gA***

17. हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 24.6.2013 के आदेश के साथ हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते हैं। इस प्रकार, यह एल॰ पी॰ ए॰ खारिज किये जाने योग्य है।

परिणामत:, यह एल॰ पी॰ ए॰ खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vferko dekj xIrk] U;k;efr

सुजीत कुमार पांडे

cuke

अंजली देवी

F.A. No. 48 of 2006. Decided on 22nd July, 2014.

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955—धाराएँ 13 एवं 25—तलाक–पत्नी की मानसिक विक्षिप्तता–अपीलार्थी और प्रत्यर्थी एक दशक के ऊपर से पृथक रूप से रह रहे हैं और सुलह की गुंजाइश नहीं है–विवाह विघटित किया गया–निर्वाह-भत्ता एवं भरण-पोषण हेतु उन्नीस लाख रुपए की एकमुश्त राशि अधिनिर्णीत की गयी–प्रत्यर्थी-पत्नी को जीवन यापन का वही

स्तर बनाए रखना है जिसकी वह हकदार होती यदि अपीलार्थी ने वैवाहिक संबंध बनाए रखा होता–कुटुंब न्यायालय का आक्षेपित आदेश उपांतरित। (पैराएँ 5, 6, 14, 17, 18 एवं 19)

निर्णयज विधि.–(2011)13 SCC 110—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Rajeeva Sharma, Rita Kumari, For the Appellant; Mr. L.K. Lal, For the Respondent.

अमिताव कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–वर्तमान अपील वैवाहिक (तलाक) वाद सं॰ 12 वर्ष 2001/146 वर्ष 2003 में प्रमुख न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय, दुमका द्वारा पारित दिनांक 9.8.2005 के निर्णय के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा विद्वान प्रमुख न्यायाधीश ने विवाह के विघटन और याची–अपीलार्थी को तलाक डिक्री के लिए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन अपीलार्थी द्वारा दाखिल याचिका खारिज कर दिया।

2. याची अपीलार्थी का मामला यह है कि दिनांक 4.12.1997 को ओ॰ पी॰ प्रत्यर्थी अंजली देवी के साथ विवाह संपन्न किया गया था। विवाहोपरांत अपीलार्थी पति और प्रत्यर्थी पत्नी देवघर में निवास करते थे जहाँ अपीलार्थी ने अपनी पत्नी को मंदबुद्धि, विषादग्रस्त और असामान्य पाया। अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को हनीमून के लिए बंगलोर चलने के लिए कहा जिस पर उसने अपनी अनिच्छा अभिव्यक्त किया किंतु उसके मनाने पर वह उसके साथ बंगलोर गयी। बंगलोर में उसने पाया कि प्रत्यर्थी असामान्य तरीके से व्यवहार कर रही थी और पूछने पर उसने बताया कि वह मानसिक विक्षिप्तता से पीड़ित है और वर्ष 1989 से डॉ॰ बी॰ के॰ सिंह, पटना के इलाज में है, जिसके बाद अपीलार्थी उसे मानसिक स्वास्थ्य एवं न्यूरोसाइंस राष्ट्रीय संस्थान (NIMHANS) ले गया जहाँ डॉक्टर ने मत दिया कि वह चिरकालिक मानसिक विक्षिप्तता से पीड़ित थी। यह अभिकथित किया गया है कि जब अपीलार्थी ने उसके इलाज के संबंध में विगत मेडिकल रिपोर्ट मांगा, प्रत्यर्थी ने कथन किया कि यह उसके पिता के पास था। बंगलोर के डॉक्टर ने कुछ दवा दिया और अपीलार्थी को उसे वापस ले जाने और उस डॉक्टर जिसके अधीन उसका इलाज चल रहा था से उसका इलाज करवाने के लिए कहा। अपीलार्थी ने अपने ससुर से मानसिक विक्षिप्तता की बात दबाने के बारे में शिकायत किया और उसको NIMHANS का नुस्खा दिखाया। प्रत्यर्थी के इलाज से संबंधित मेडिकल कागजात देने के बार–बार अनुरोध पर इन्हें उसको नहीं दिया गया था। इसके बावजूद, अपीलार्थी प्रत्यर्थी को दुर्गापुर ले गया जहाँ वह सब–इंस्पेक्टर, रेलवे सुरक्षा बल, के रूप में पदस्थापित था किंतु प्रत्यर्थी का असामान्य व्यवहार बना रहा और उसने दुमका ले जाने के लिए जोर दिया। यह कि वह स्टॉफ और अधिकारियों की उपस्थिति में अप्रिय व्यवहार करती थी और अनेक अवसरों पर उसने अपीलार्थी पर पागलपन भरा हमला किया। कि प्रत्यर्थी दांपत्यगृह से भाग जाया करती थी और अपीलार्थी अत्यन्त मुश्किल से उसे वापस लाता था और वह आत्महत्या करने की धमकी देती थी। उसके असहनीय असामान्य आचरण एवं व्यवहार पर विचार करते हुए अपीलार्थी उसे उसके माएके दुमका ले आया। यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी और उसके परिवार ने अपीलार्थी के साथ क्रूर व्यवहार किया और उसे तथा उसके परिवार के सदस्यों को झूठे मामले में आलिप्त करने की धमकी दी।

उक्त तथ्यों पर विवाह को अकृत घोषित करने के लिए वाद दाखिल किया गया था क्योंकि प्रत्यर्थी की मानसिक विक्षिप्तता के संबंध में तात्विक तथ्यों का दमन हुआ था। प्रत्यर्थी पत्नी द्वारा वाद का प्रतिवाद किया गया था जिसने अभिकथन से इनकार किया और कथन किया कि अपीलार्थी पति चाहता था कि वह दूसरी महिला से विवाह करने की अनुमति दे जिसके साथ उसका प्रेम प्रसंग चल रहा था जिसके लिए

वह सहमत नहीं थी। अत: व्यथित होकर अपीलार्थी ने वर्ष 1999 में उसे उसके माएके लाकर छोड़ दिया यद्यपि वह अपीलार्थी के साथ प्रसन्न विवाहित जीवन बिताने के लिए इच्छुक थी।

3. साक्ष्य पर विचार करने पर आक्षेपित निर्णय द्वारा वाद खारिज कर दिया गया था। अपने वैवाहिक (तलाक) वाद की खारिजी से व्यथित होकर अपीलार्थी पति ने इस अपील को दाखिल किया है।

4. अपील की सुनवाई के क्रम में अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि इस तथ्य पर विचार करते हुए कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी एक दशक से अधिक समय से अलग रह रहे हैं और सुलह की गुंजाइश नहीं है, सहमति से विवाह विघटित किया जा सकता है।

5. अपीलार्थी अपने विद्वान अधिवक्ता के साथ उपस्थित है। प्रत्यर्थी/पत्नी भी अपने अधिवक्ता के साथ न्यायालय में उपस्थित है। अपीलार्थी द्वारा विवाह के विघटन की प्रार्थना का प्रत्यर्थी द्वारा खंडन नहीं किया गया है अथवा आपत्ति नहीं की गयी है। इस प्रभाव का शपथ पत्र प्रत्यर्थी द्वारा यह प्रकथन करते हुए दाखिल किया गया है कि दिए गए तथ्यों में विवाह विघटित किया जाए, किंतु प्रत्यर्थी हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 25 के अधीन भरण–पोषण के लिए स्थायी निर्वाह भत्ता की हकदार है ताकि वह अपने दैनिक जीवन के व्यय को पूरा कर सके और सुविधा एवं सम्मान के साथ अपना जीवन व्यतीत कर सके।

6. इस प्रकार, ताथ्यिक परिदृश्य में, यह ध्यान में लेते हुए कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी एक दशक से अधिक से अलग रह रहे हैं और प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल शपथ पत्र को विचार में लेते हुए और कि उनके बीच सुलह की गुंजाइश नहीं है, विवाह विघटित किया जाता है। तद्नुसार, कुटुंब न्यायालय, दुमका द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

7. अब न्याय निर्णयण के लिए एकमात्र विवाद्यक अपीलार्थी द्वारा भुगतान की जाने वाली निर्वाह भत्ता की मात्रा के संबंध में है।

8. इस संदर्भ में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने सितंबर, 1989 से अपीलार्थी के वेतन का ब्योरा देते हुए पूरक शपथ पत्र दाखिल किया है। यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी की अब केवल दस वर्ष की सेवा बची है और उसे दिनांक 31.7.2024 को अधिवर्षित होना है। यह कथन किया गया है कि अपीलार्थी को अपने निजी खर्च के लिए 5,000/- रुपए की आवश्यकता है और वह अपने बीमार भाई हिमांशु पांडे के इलाज पर 1500/- रुपया खर्च करता है और उसे हिमांशु पांडे की दो पुत्रियों की शिक्षा पर 3,000/- रु० प्रतिमाह खर्च करना है, कि अपीलार्थी की माता अनेक बीमारियों से पीड़ित है और ब्रेस्ट कैंसर के लिए उसकी शल्य चिकित्सा भी की गयी थी और अपीलार्थी को उसकी दवा के लिए 5,000/- रुपया प्रतिमाह खर्च करना है, कि अपीलार्थी का पिता उच्च रक्त चाप का मरीज है और हृदय एवं श्वास रोगों से पीड़ित है और उसके पिता की दवा के लिए 3,000/- रुपया खर्च किया जाता है।

9. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यह स्पष्ट है कि अपील की सुनवाई के क्रम में सुलह के लिए प्रयास किए गए थे जो असफल थे जिसके बाद पक्षगण अपने बीच मित्रतापूर्वक विवाद सुलझाने के लिए सहमत हुए थे किंतु पक्षों के बीच मतैक्य नहीं था। यह निवेदन किया गया है कि वह अपने वृद्ध पिता के साथ रह रही है और उसके पास आय का स्रोत नहीं है। यह कथन भी किया गया है कि वह विचारण का सामना कर रही है और मुकदमें का खर्च उठा रही है और उसने अपने जीवन स्तर के अनुसार सुविधाजनक एवं सम्मानपूर्ण तरीके से अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए स्थायी निर्वाह भत्ता का प्रार्थना किया है।

10. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **(2011)13 SCC 110** में प्रकाशित निर्णय को निर्दिष्ट किया है और निवेदन किया है कि पूर्वोक्त मामले में यह विचार में लेने के बाद कि पति 83,000/- रुपयों का

वेतन पा रहा था, न्यायालय ने हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 25 के अधीन निर्वाह भत्ता के रूप में 40,000/- रुपयों के भुगतान का निर्देश दिया था।

11. दूसरी ओर, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि जैसा ऊपर गौर किया गया है, अपीलार्थी के अनेक दायित्व हैं क्योंकि उसे अपने वृद्ध माता–पिता, मानसिक स्वास्थ्य समस्या से पीड़ित अपने भाई की सेवा करनी है और अपने भाई की दो पुत्रियों की शिक्षा व्यय का भुगतान भी करना है और अपने भाई की दो पुत्रियों के विवाह का खर्च देना है क्योंकि वे सब उस पर आश्रित हैं।

12. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

13. उक्त विवाद्यक का न्याय निर्णयण करने के पहले हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 25 को निर्दिष्ट करना आवश्यक होगा जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^LFkk;h fuokg&O;; vkj Hkj.k&ik"k.k–&(1) bl vfèkfu;e d vèkhu {k=kfèkdkj dk i;kx dju okyk dkb U;k;ky; ;FkkfLFkfr iRuh ;k ifr }kjk bl i;ktu d fy; viu l vkonu fd; tku ij vkKfIr nu d le; ;k rRi'pkr fdlh le; iR;Fkh dk vfn"V dj ld fd vkond ;k vkofndk d viu Hkj.k&ik"k.k vkj ikyu d fy, ,l vkond ;k vkofndk d thou&dky l vfèkd u gku okyh vofèk d fy, ,lh i.k jkf'k ;k ,lh ekfld dkykoèkh; jkf'k nrk ;k nrh jg tlk dh iR;Fkh dk viuh vk; vkj vU; lEifÙk dk] ;fn dkb gk] vkond ;k vkofndk dh vk; ;k lEifÙk dk vkj i{kdkjk d vkpj.k vkj ekey dh vU; ifjfLFkfr;k dk n[kr g, U;k;ky; dk U;k; yx vkj ;fn vko';d gk rk ,lh nxuh iR;Fkh dh LFkkoj lEifÙk ij iHkkj }kjk ifrHkr dh tk;xhA*
>
> *(2) ;fn U;k;ky; dk lekèkku gk tkrk g fd mièkkjk (1) d vèkhu viu }kjk fn; x; vkn'k d i'pkr fdlh le; i{kdkjk e l fdlh dh ifjfLFkfr;k e rCnhyh gk xb gk rk og ,l fdlh vkn'k dk ,lh jhfr e tlh fd U;k;ky; U;k; le> fdlh i{kdkj dh ij.kk ij ifjofrr] :iHkfnr ;k fo[kf.Mr dj ldxkA*
>
> *(3) ;fn U;k;ky; dk lekèkku gk tkrk g fd ml i{kdkj u ftld i{k e fd bl èkkjk d vèkhu vkn'k fn;k tk pdk g] iu% fookg dj fy;k g ;fn ,lk i{kdkj iRuh g rk og lrh ugh jgh g] ;fn ,lk i{kdkj ifr g rk mlu fdlh L=h l fookg d ckn yfxd lEHkkx fd;k g rk og nlj i{kdkj dh ij.kk ij ,l fdlh vkn'k dk ,lh jhfr e tk U;k;ky; U;k;lxr le>] ifjofrr] mikrfjr ;k fo[kfMr dj ldxkA**

14. यह सत्य है कि स्थायी निर्वाह भत्ता की राशि जिसकी अपीलार्थी की पत्नी हकदार है के संबंध में कोई गणितीय फॉर्मूला नहीं अपनाया जा सकता है किंतु हैसियत, उनकी परस्पर सामाजिक आवश्यकताएँ और पति की वित्तीय क्षमता जैसा तथ्यों को विचार में लिया जाना है और इस तथ्य को ध्यान में लेते हुए कि पत्नी के लिए नियत महत्तम राशि इतनी होनी चाहिए जो उसके हैसियत एवं जीवन स्तर जिसका आनंद उसने लिया होता यदि पक्षगण सामान्य परिस्थितियों में वैवाहिक जीवन बिताने, को विचार में लेकर उसके सुविधापूर्ण जीवन के लिए पर्याप्त हो।

15. अपीलार्थी द्वारा दाखिल वेतन पर्ची से यह प्रकट है कि अपीलार्थी का कुल वेतन 61,989/- रुपया है। इस संदर्भ में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया है कि अपीलार्थी को कर्ज का भुगतान

करना है जो उसने लिया है और वस्तुत: उसकी शुद्ध आय उसकी कुल आय का एक-तिहाई है कि उसका अन्य दायित्व हैं जैसा ऊपर इंगित किया गया है और उसके पास आय का अन्य स्रोत नहीं है; कि कृषि संपत्ति संयुक्त संपत्ति है जिससे वह प्रति वर्ष 3000-4000/- रुपया पाता है कि प्रत्यर्थी का दायित्व नहीं है जबकि अपीलार्थी अपने वृद्ध माता-पिता, अपने मानसिक रूप से बीमार भाई की देखभाल के दायित्वों से लदा हुआ है और उसे अपने वृद्ध माता-पिता की दवा का खर्च और अपने बीमार भाई की दो पुत्रियों की शिक्षा का खर्च भी उठाना है।

16. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि वह अपने वृद्ध पिता के साथ रह रही है और उसके पास अन्य का कोई नियत स्रोत नहीं है।

17. यह अभिवचन कि अपीलार्थी द्वारा कर्ज लिया गया है और कर्ज के समापन के लिए उसे किस्तों में भुगतान करना है, अत: इस पर विचार किया जा सकता है, हमें स्वीकार्य नहीं है। यह दर्शाने के लिए कि किस प्रयोजन से कर्ज लिया गया था, कोई कागज या दस्तावेज दाखिल नहीं किया गया है। इसके विपरीत, यह सुझाता है कि अपीलार्थी कर्ज जिसे उसने कर रियायत का लाभ लेने के लिए और भावी आस्तियों को सृजित करने के लिए लिया होगा, का भुगतान करने के लिए पर्याप्त रूप से सक्षम है। अपीलार्थी रेलवे सुरक्षा बल में इंस्पेक्टर के रूप में पदस्थापित है और उसके पास दस वर्षों की सेवा बची है और वेतन में वृद्धि तथा भविष्य में उच्चतर रैंक में प्रोन्नति की संभावना सेवा का स्वाभाविक परिणाम है। उसकी कुल आय 61,989/- रुपया प्रतिमाह है एवं कटौति के बाद अनिवार्य शिर्षों के अधीन उसे 53,000/- रु० की राशि भुगतान की गई। प्रत्यर्थी पत्नी को जीवन स्तर बनाए रखना है जिसकी वह हकदार होती यदि अपीलार्थी ने वैवाहिक संबंध बनाए रखा होता।

18. इस प्रकार, परिस्थितियों की संपूर्णता तथा सामाजिक वर्ग जिससे पक्षगण आते हैं पर विचार करते हुए और जीवन यापन एवं दैनिक आवश्यकताओं के व्यय में वृद्धि को देखते हुए प्रत्यर्थी को भुगतान किए जाने वाले 19,00,000/- रुपयों पर निर्वाह भत्ता एवं भरण-पोषण नियत करना समुचित होगा और इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर अपीलार्थी द्वारा 19,00,000/- (उन्नीस लाख) रुपयों की एकमुश्त राशि का भुगतान किया जाए। अनुबंधित अवधि के भीतर 19,00,000/- रुपयों की एकमुश्त राशि के भुगतान की विफलता पर अपीलार्थी को उक्त राशि पर 9% प्रति वर्ष की दर पर ब्याज का भुगतान करना है। यदि अनुबंधित अवधि के भीतर एकमुश्त राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, प्रत्यर्थी विधि के अनुरुप इसे वसूल करने के लिए स्वतंत्र है।

19. वैवाहिक (तलाक) वाद सं० 12 वर्ष 2001/146 वर्ष 2003 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, दुमका द्वारा पारित दिनांक 9.8.2005 का निर्णय अपास्त किया जाता है और दिनांक 4.12.1997 को अपीलार्थी/पति एवं प्रत्यर्थी/पत्नी के बीच संपन्न विवाह विघटित किया जाता है। निर्णय के पैराग्राफ 18 में पूर्वोक्तानुसार अपीलार्थी पति को छह माह की अनुबंधित अवधि के भीतर प्रत्यर्थी पत्नी को 19,00,000/- (उन्नीस लाख) रुपयों की एकमुश्त भरण-पोषण राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है।

20. तद्नुसार, वैवाहिक (तलाक) वाद सं० 12 वर्ष 2001 में कुटुंब न्यायालय का निर्णय उपांतरित किया जाता है और यह अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है। परिणामस्वरुप, समस्त अंतर्वर्ती आवेदनों को बंद किया जाता है।

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

सत्यनारायण अग्रवाल

cuke

झारखंड राज्य

Cr.M.P. No. 480 of 2014. Decided on 31st July, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 451—अधिहृत वाहन की निर्मुक्ति–पुलिस रिपोर्ट दर्शाता है कि याची वाहनों का स्वामी था–चूँकि वाहन वाणिज्यिक वाहन थे, इन्हें प्रतिभूति/बंधपत्र/वचन के विरुद्ध रजिस्टर्ड स्वामी के पक्ष में निर्मुक्त किया जाना चाहिए था–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और विचारण न्यायालय को डी॰ टी॰ ओ॰ से रिपोर्ट पाने के बाद नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 4 से 6)

निर्णयज विधि.–Cr. M.P. No. 3095 of 2013—Applied.

अधिवक्तागण.–M/s. Ananda Sen, For the Petitioner; M/s. Niki Sinha, For the Opp. Party.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 89 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 17.1.2014 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 871 वर्ष 2013 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला द्वारा प्रश्नगत वाहनों की निर्मुक्ति की प्रार्थना को अस्वीकार करने वाले दिनांक 28.9.2013 के आदेश के विरुद्ध दाखिल पुनरीक्षण अवर पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है।

3. याची को सरायकेला पी॰ एस॰ केस सं॰ 99 वर्ष 2013, जी॰ आर॰ सं॰ 871 वर्ष 2013 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है क्योंकि दो ट्रैक्टरों, एक बालू से लदा और दूसरा पत्थर से लदा, को खान निरीक्षक द्वारा पकड़ा गया था और प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। रजिस्ट्रेशन सं॰ JH 05Z 6807 धारण करने वाले जब्त ट्रैक्टरों में से एक और इसकी ट्रॉली का स्वामी होने का दावा करते हुए याची ने उनके वाणिज्यिक वाहन होने के नाते उनकी निर्मुक्ति के लिए अवर न्यायालय में आवेदन दाखिल किया था। अवर न्यायालय ने संबंधित पुलिस थाना से रिपोर्ट प्राप्त किया जिसने रिपोर्ट किया कि याची वाहनों का स्वामी था। किंतु, इस तथ्य की दृष्टि में कि अन्वेषण अधिकारी द्वारा की गयी प्रार्थना के आधार पर वाहनों की अधिहरण कार्यवाही पहले ही आरंभ कर दी गयी थी, प्रश्नगत वाहन की निर्मुक्ति की प्रार्थना अवर न्यायालय द्वारा दिनांक 28.9.2013 के आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दी गयी थी। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में यह भी उल्लिखित किया गया है कि जब्त ट्रैक्टर से संबंधित दस्तावेजों को सत्यापन के लिए संबंधित डी॰ टी॰ ओ॰ के पास भेजा गया था और अभी भी रिपोर्ट की प्रतीक्षा की जा रही थी। उक्त आदेश के विरुद्ध दाखिल पुनरीक्षण भी अवर पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि केवल इस आधार पर कि उनके संबंध में अधिहरण कार्यवाही आरंभ कर दी गयी थी, वाहनों की निर्मुक्ति की प्रार्थना अस्वीकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। यह इंगित किया गया है कि वर्तमान मामले में अभियोजन एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम के अधीन संस्थित किया गया है और समस्थित मामले में जहाँ भी एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम के अधीन अभियोजन संस्थित

किया गया था और प्रश्नगत वाहनों के संबंध में अधिहरण कार्यवाही आरंभ की गयी थी, इस न्यायालय ने दिनांक 19.12.2013 को निपटाए गए मामले **दांडिक विविध याचिका सं॰ 3095 वर्ष 2013 (विभा झा बनाम झारखंड राज्य)** में एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम की धारा 24 (4A) को ध्यान में लेते हुए अभिनिर्धारित किया है कि ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो न्यायालय को केवल इस आधार पर कि अधिहरण कार्यवाही आरंभ की गयी है, एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम के उल्लंघन के मामले में जब्त वाहन की निर्मुक्ति का आदेश पारित करने से रोकता है और तद्नुसार, उक्त आधार पर निर्मुक्ति की प्रार्थना अस्वीकार करना न्यायालय की ओर से समुचित नहीं था। उक्त निर्णय पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

5. विभा झा बनाम झारखंड राज्य (ऊपर) में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि इस मामले के तथ्यों पर पूर्णत: प्रयोज्य प्रतीत होती है। किंतु मामले का एक अन्य पहलू भी है। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में यह उल्लिखित किया गया है कि जब्त वाहनों से संबंधित दस्तावेजों को सत्यापन के लिए संबंधित डी॰ टी॰ ओ॰ के पास भेजा गया था, किंतु अभी भी रिपोर्ट की प्रतीक्षा की जा रही थी। पुलिस रिपोर्ट दर्शाता था कि याची प्रश्नगत वाहनों का स्वामी है। मेरे सुविचारित मत में, यदि याची प्रश्नगत वाहनों का रजिस्टर्ड स्वामी पाया गया है और मामले में अन्वेषण पूरा कर लिया गया है, कोई कारण प्रतीत नहीं होता है कि इस तथ्य को ध्यान में लिए बिना कि वाहनों के संबंध में अधिहरण कार्यवाही आरंभ कर दी गयी है, याची के पक्ष में वाहनों को क्यों नहीं निर्मुक्त किया जाए। चूँकि प्रश्नगत वाहन वाणिज्यिक वाहन हैं, इन्हें इस वचन सहित कि वाहनों की निर्मुक्ति किसी तरीके से अभियोजन मामले पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी और कि वाहनों को प्रस्तुत किया जाएगा जैसा और जब न्यायालय द्वारा ऐसा करने का निर्देश दिया जाता है, ऐसी प्रतिभूतियों/बंधपत्रों/वचनों, जैसा न्यायालय मामले के तथ्यों में योग्य एवं समुचित पाता है, देने पर इसे रजिस्टर्ड स्वामी के पक्ष में निर्मुक्त किया जाना चाहिए था। वस्तुत:, संबंधित डी॰ टी॰ ओ॰ से रिपोर्ट पाने पर ही, जिस रिपोर्ट की अभी भी प्रतीक्षा की जा रही थी जैसा विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश से प्रतीत होता है, ऐसा कोई आदेश पारित किया जा सकता है।

6. पूर्वोल्लिखित चर्चाओं की दृष्टि में, जी॰ आर॰ सं॰ 871 वर्ष 2013 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 28.9.2013 का आक्षेपित आदेश और दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 89 वर्ष 2013 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 17.1.2014 का आदेश भी एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और विद्वान विचारण न्यायालय को संबंधित डी॰ टी॰ ओ॰ से रिपोर्ट पाने और विधि के अनुरुप तथा ऊपर किए गए संप्रेक्षणों की दृष्टि में नया आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

7. तद्नुसार, पूर्वोक्त निर्देशों एवं संप्रेक्षणों के साथ यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjï vkjï çlkn] U;k;efr

चंदन तिवारी

cuke

श्रीमती ललिता देवी

S.A. No. 23 of 2013. Decided on 31st July, 2014.

अभिधृति—बेदखली—प्रतिवादी किराएदार द्वारा स्वामित्व का अभिवचन—विक्रय के करार के गैर रजिस्टर्ड दस्तावेज के आधार पर कोई संपत्तियों के ऊपर कोई हित नहीं पा सकता है—पक्षों के बीच मकानमालिक एवं किराएदार का संबंध है—बेदखली डिक्री मान्य ठहरायी गयी—अपील खारिज। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.—Mr. A.K. Sahani, For the Appellant; Mr. S.K. Pandey, For Respondent No. 1.

आदेश

अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. प्रत्यर्थी/वादी द्वारा व्यतिक्रम के आधार पर बेदखली के लिए वाद दाखिल किया गया था। प्रतिवादी उपस्थित हुआ और यह मामला बनाते हुए डब्ल्यू॰ एस॰ दाखिल किया कि प्रतिवादी को संपूर्ण भवन में प्रवेश दिया गया था जिसके दो भाग-उत्तरी एवं दक्षिणी थे। जब प्रतिवादी अधिभोग में था, भवन का उत्तरी भाग प्रतिवादी को बेच दिया गया था जबकि प्रतिवादी भवन के दक्षिणी भाग में किराएदार के रूप में बना रहा। कालक्रम में वादी ने विक्रय के करार का विलेख निष्पादित किया और तब से अपीलार्थी दक्षिणी भाग में किराएदार की हैसियत से नहीं बल्कि भावी स्वामी की हैसियत से निवास कर रहा था और तद्द्वारा किराया का भुगतान करने का प्रश्न ही उद्भूत नहीं होता है। दोनों न्यायालयों अर्थात् विचारण न्यायालय एवं अपीलीय न्यायालय ने मामले के इस पहलू पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया था और इसलिए दोनों न्यायालयों ने बेदखली की डिक्री पारित करने में अवैधता किया।

3. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री साहनी निवेदन करते हैं कि अपीलार्थी विक्रय के करार के विलेख के निष्पादन की तिथि से वाद परिसर के अधिभोग में था किंतु किराएदार के रूप में नहीं और तद्द्वारा न्यायालयों द्वारा दिया गया निष्कर्ष कि पक्षों के बीच मकानमालिक-किराएदार का संबंध था, दोषपूर्ण है।

4. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अपीलार्थी की ओर से जो कोई भी अभिवचन किया जा रहा है, टी॰ पी॰ अधिनियम की धारा 53 के पुराने प्रावधान के अधीन आधारित है जिसे दिनांक 24.9.2001 को संशोधित कर दिया गया और टी॰ पी॰ अधिनियम के संशोधित प्रावधान के अधीन कोई भी विक्रय के करार के गैर रजिस्टर्ड दस्तावेज के आधार पर संपत्तियों के ऊपर कोई हित नहीं पा सकता है और तद्द्वारा दोनों अवर न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में पूर्णत: न्यायोचित हैं कि पक्षों के बीच मकानमालिक-किराएदार का संबंध है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख के परिशीलन पर मैं पाता हूँ कि उक्त कथित तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन विचारण न्यायालय एवं अपीलीय न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में न्यायोचित हैं कि पक्षों के बीच मकानमालिक-किराएदार का संबंध है। इसके अतिरिक्त, इस मामले में विधि का कोई सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त प्रतीत नहीं होता है।

तद्नुसार, यह अपील खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferko dekj xlrk] U;k;efrx.k

सरजू यादव उर्फ सरयू यादव

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 397 of 2004. Decided on 1st May, 2014.

सत्र मामला सं॰ 543 वर्ष 1998 में श्री रामबाबू गुप्ता, अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा पारित दिनांक 3.1.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 9.1.2004 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–सड़क एवं भूमि के लिए झगड़ा–पीड़ित जिसकी मृत्यु 19 दिन बाद हो गयी को अपीलार्थी द्वारा रास्ते में रोका गया था और उससे पथ निर्माण के बारे में प्रश्न पूछा गया था और तत्पश्चात घटना हुई थी–अपीलार्थी द्वारा मृतक की हत्या कारित करने के लिए कोई पूर्व नियोजित कार्रवाई नहीं थी–उसके हाथ में विशेष हथियार नहीं था और न ही वह पीड़ित पर प्रहार करना चाहता था–यदि पीड़ित ने उससे कुछ नहीं पूछा होता, शायद घटना नहीं होती–विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है–अभियोजन ने चश्मदीद गवाह का परीक्षण नहीं किया है यद्यपि अ॰ सा॰ द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य में और प्राथमिकी में उसे लगातार निर्दिष्ट किया गया है–जब अभियोजन गवाह के रूप में, विशेषतः हत्या के मामले में, किसी चश्मदीद गवाह को उद्धृत किया जाता है, अभियोजन न्यायालय की अनुमति के बिना उस गवाह को छोड़ नहीं सकता है–गवाहों का परीक्षण अभियोजन की मृदुल इच्छा पर निर्भर नहीं है–दांडिक मामलों में निर्णायक गवाहों का परीक्षण करना अभियोजन का कर्तव्य है और इस मामले में अभियोजन अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में विफल रहा है–विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है–अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण बिल्कुल नहीं किया गया है–अन्वेषण अधिकारी का गैर-परीक्षण इस मामले के प्रति घातक है–डॉक्टर ने मत नहीं दिया है कि उपहति प्रकृति के सामान्य क्रम में मृतक की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है–हत्या कारित करने के लिए अपीलार्थी की ओर से किसी आशय की अनुपस्थिति में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मृतक की हत्या के अपराध के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है–अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडित किए जाने का दायी है–आजीवन कारावास दस वर्षों के कठोर कारावास में परिवर्तित किया गया–अपील अंशतः अनुज्ञात। (पैराएँ 6, 7, 8, 9, 11, 12, 14, 15, 17 एवं 18)

निर्णयज विधि.–(2006)11 SCC 420; (2009)15 SCC 635; (2013)12 JT 28: [2013]6 Supreme 193—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Lalan Kumar Singh, For the Appellant; Mr. M.B. Lal, For the State.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह अपील सत्र मामला सं॰ 543 वर्ष 1998 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गयी है। इस अपीलार्थी को शिव लाल यादव की हत्या के अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और दिनांक 3/9 जनवरी, 2004 के आदेश के तहत आजीवन कारावास से दंडित किया गया है। इस अपीलार्थी पर 5000/- रुपयों का जुर्माना भी लगाया गया है और व्यतिक्रम में इस अपीलार्थी के विरुद्ध एक वर्ष का सामान्य कारावास भी अधिनिर्णीत किया गया है और दंडादेश साथ-साथ चलेंगे, अतः वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

2. अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 26.6.1998 को प्रातः 9.15 बजे सूचक शिव लाल यादव (मृतक) ने घायल दशा में सब डिविजन अस्पताल, लातेहार में पुलिस को फर्दबयान दिया कि उसके भाई रामचंद्र यादव और शत्रुघ्न यादव एजेन्ट का काम कर रहे थे और गाँव में रोड का काम कर रहे थे। लगभग दो-तीन दिन पहले गाँव में रोड का काम करने के दौरान उसी गाँव के सरयू यादव (अभियुक्त)

ने उनसे कहा कि उसकी खेती के जमीन में रोड का निर्माण नहीं किया जाना चाहिए और जिसके लिए सूचक के भाई रामचंद्र यादव और सरयू यादव के बीच बहस हुआ और रोड का निर्माण रोक दिया गया है। सूचक ने आगे अभिकथित किया कि दिनांक 25.6.1998 को दोपहर 3 बजे सूचक के भाई शत्रुघ्न यादव और सरयू यादव की पत्नी के बीच सड़क और भूमि के लिए बहस हुआ और तत्पश्चात सरयू यादव की पत्नी अपने घर गयी और सूचक को उसके भाई शत्रुघ्न द्वारा इसके बारे में सूचित किया गया था। सूचक ने आगे अभिकथित किया कि दिनांक 26.6.1998 को सायं लगभग 6 बजे वह एक बालक के साथ अपने बारी में खेल रहा था और उसका छोटा भाई रामचंद्र प्रेम ठाकुर (नाई) से अपनी हजामत बनवा रहा था और उसके और उसके भाई के अलावा वहाँ बैठा हुआ था, उस समय पर सरयू यादव अपने माथा पर लकड़ी लिए और हाथ में टांगी लिए जंगल से अपने घर जा रहा था, तब सूचक ने उससे कहा कि वह क्यों सड़क और भूमि के लिए झगड़ा कर रहा था और यह कहने पर सरयू यादव ने अपने माथा से लकड़ी उतारा और टांगी से सूचक पर दो–तीन प्रहार किया जिस कारण सूचक घायल हो गया और अचेत हो गया और जमीन पर गिर गया। यह देख कर सूचक वहाँ दौड़ा और तब सरयू यादव वहाँ से भाग गया। तत्पश्चात, बेहोश दशा में सूचक को उसके भाई एवं परिवार के सदस्यों द्वारा इलाज के लिए लातेहार अस्पताल लाया गया था जहाँ उसका इलाज चल रहा है और उसके पीठ, गर्दन और दाएँ हाथ की कोहनी में कटने की उपहति थी। सूचक ने आगे अभिकथित किया कि उसके भाई, प्रेम ठाकुर (नाई) और गाँववाले इस घटना के गवाह हैं।

3. शिवलाल यादव द्वारा दिए गए पूर्वोक्त फर्दबयान की दृष्टि में अपराध दर्ज किया गया था और दिनांक 14 जुलाई, 1998 को अर्थात् घटना की तिथि से लगभग 19 दिन बाद इस सूचक शिवलाल यादव की मृत्यु हो गयी और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध जोड़ा गया था। अनेक गवाहों का बयान दर्ज किया गया था, अन्वेषण अधिकारी द्वारा आरोप–पत्र दाखिल किया गया था और सत्र मामला सं॰ 543 वर्ष 1998 के रूप में मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और विद्वान विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 1 से 5 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य के आधार पर और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर भी मृतक की हत्या के अपराध के लिए इस अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और दिनांक 3/9 जनवरी, 2004 के आदेश के तहत उसको आजीवन कारावास से दंडित किया और इस दांडिक अपील में इस अपीलार्थी द्वारा दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश को चुनौती दी गयी है।

4. हमने अपीलार्थी की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता को सुना है, जिन्होंने निवेदन किया है कि अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्यों में महत्वपूर्ण लोप, विरोधाभास एवं सुधार है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, तथाकथित चश्मदीद गवाह वस्तुतः चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं हैं। अ॰ सा॰ 2 ने अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफों 6 और 7 में स्पष्टतः कथन किया है कि वह चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है और जब वास्तविक रूप से घटना हुई थी, वह पानी लाने गया था और जब वह लौटा, उसने शिव लाल यादव को जमीन पर गिरा हुआ देखा। इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 3 भी चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि शत्रुघ्न यादव को बार–बार गवाहों द्वारा और पीड़ित जब वह घायल किया गया था द्वारा दाखिल प्राथमिकी में निर्दिष्ट किया गया है किंतु इस निर्णयकारी चश्मदीद गवाह का अभियोजन द्वारा परीक्षण नहीं किया गया है, यद्यपि उसे आरोप–पत्र में गवाह के रूप में उद्धृत किया गया था। इसी प्रकार से, किसी प्रेम ठाकुर को भी बार–बार गवाहों द्वारा और प्राथमिकी में भी निर्दिष्ट किया गया है, यद्यपि अभियोजन द्वारा उसका परीक्षण भी नहीं किया गया है। इस प्रकार, यह प्रेम ठाकुर

स्वाभाविक चश्मदीद गवाह और स्वतंत्र गवाह है। अभियोजन ने इन गवाहों का परीक्षण बिल्कुल नहीं किया है जबकि निकट संबंधी अ॰ सा॰ 1 जो मृतक का भाई है का परीक्षण चश्मदीद गवाह के रूप में किया गया है। इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 3 भी भाई है, अत: सिवाए निकट संबंधी के चश्मदीद गवाह के रूप में किसी का भी परीक्षण नहीं किया गया है। यद्यपि, अ॰ सा॰ 2 ने अपने अभिसाक्ष्य में पैराग्राफ 6 और 7 में कथन किया है कि उसने पुलिस के समक्ष बयान कभी नहीं दिया है और वह पहली बार न्यायालय में अपना साक्ष्य दे रहा है। अभियोजन द्वारा अन्वेषण अधिकारी का भी गवाह के रूप में परीक्षण नहीं किया गया है और इसलिए अ॰ सा॰ 2 और शेष गवाहों का साक्ष्यिक मूल्य नहीं है। अ॰ सा॰ 1 और 3 भाई हैं। अ॰ सा॰ 4 डॉ॰ सरोज कुमार है जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया। यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य के मुताबिक चाक्षुक साक्ष्य और चिकित्सीय साक्ष्य एक-दूसरे के विरोधाभासी हैं। मृतक द्वारा सही गयी उपहतियाँ है जो कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित किए जाने योग्य है किंतु, एक भी तथाकथित चश्मदीद गवाह ने न्यायालय के समक्ष कथन कभी नहीं किया है कि वर्तमान अपीलार्थी ने लाठी या छड़ी से वार किया था। इस प्रकार, डॉक्टर द्वारा निर्दिष्ट की गयी उपहति जो कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित किए जाने योग्य थी अस्पष्टीकृत बनी रही है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 5 ने निवेदन किया है कि पुलिस द्वारा उसका बयान कभी नहीं दर्ज किया गया था और न ही आरोप-पत्र में उसे गवाह के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, यद्यपि वह पुलिस के बारे में ए॰ बी॰ सी॰ भी नहीं जानता है, उसने प्राथमिकी सिद्ध किया है। वह किस प्रकार सहायक पुलिस सब-इंस्पेक्टर का हस्ताक्षर जानता है? वह छात्र है, किस प्रकार विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा फर्दबयान आदि को प्रदर्श संख्या दिया गया है, केस डायरी भी इस छात्र द्वारा सिद्ध किया गया है। यह साक्ष्य पूर्णत: अनुपयोगी है और न्यायालय के समय एवं ऊर्जा की पूरी बर्बादी है। न्यायालय में गवाह के रूप में उसका परीक्षण नहीं किया जा सकता है। वह सड़क से गुजरने वाला व्यक्ति है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा विवेक का इस्तेमाल बिल्कुल नहीं करके इस प्रकार के गवाहों का परीक्षण किया गया है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि की गयी है और इसलिए, इस प्रकार की दोषसिद्धि तुरन्त अभिखंडित एवं अपास्त की जा सकती है। इस गवाह ने फर्दबयान, प्राथमिकी, मृत्यु-समीक्षा, पंचनामा और केस डायरी सिद्ध किया है यद्यपि वह किसी का हस्तलेखन नहीं जानता है और अज्ञानता से भरा हुआ है, तब भी विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा प्रदर्श संख्या दी गयी है। इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा वैकल्पिक रूप से निवेदन किया गया है कि यह सुनियोजित हत्या नहीं है, यह मानते हुए कि अभियोजन का मामला है, तब भी पीड़ित शिव लाल यादव, जिसकी बाद में मृत्यु हो गयी थी, द्वारा दिए गए फर्दबयान के मुताबिक भी यह अपीलार्थी जंगल की ओर से आ रहा था और अपने माथा पर लकड़ी की गट्ठर और अपने हाथ में टांगी लिए था जो तेजधार वाला हथियार है जिसका उपयोग सामान्यत: गाँव वालों द्वारा गाँव में लकड़ी काटने के लिए किया जाता है और मृतक द्वारा उसे बीच रास्ते में रोका गया था और मृतक द्वारा उससे प्रश्न पूछा गया था और तत्पश्चात संपूर्ण घटना हुई थी। इस प्रकार, अपीलार्थी का मृतक को कोई चोट पहुँचाने का कोई इरादा नहीं था। यदि मृतक ने अपीलार्थी से प्रश्न नहीं पूछा होता, शायद अपीलार्थी चुपचाप अपने घर चला गया होता। स्वयं मृतक द्वारा दिए गए इस विवरण को देखते हुए और इस तथ्य को भी देखते हुए कि अपीलार्थी 15 वर्षों से अधिक से कारा अभिरक्षा में है, यह दोषसिद्धि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडनीय दोषसिद्धि में संपरिवर्तित की जा सकती है और उसे दस वर्षों के कठोर कारावास का दंड दिया जा सकता है जो भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन उच्चतम दंड है और इस दांडिक अपील को दाखिल करने का प्रयोजन पूरा किया जाएगा यदि दोषसिद्धि परिवर्तित की जाती है और दंडादेश उपांतरित किया जाता है।

5. हमने राज्य के विद्वान अधिवक्ता ए॰ पी॰ पी॰ को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि मृतक की हत्या कारित करने के लिए अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा गलती नहीं की गयी है और उसे सही प्रकार से आजीवन कारावास का दंड दिया गया है। अभियोजन का मामला एक से अधिक चश्मदीद गवाहों पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 1, 2 और 3 हैं। फर्दबयान जिसे स्वयं पीड़ित द्वारा तुरन्त दिया गया था जब वह अस्पताल में था और पीड़ित शिवलाल यादव जिसकी बाद में मृत्यु हो गयी ने प्राथमिकी में स्पष्टत: कथन किया है कि इस अपीलार्थी ने उसके मस्तक, गर्दन एवं हाथ पर टांगी से उपहति कारित किया था। इस प्राथमिकी पर अ॰ सा॰ 3 द्वारा भी हस्ताक्षर किया गया है। प्राथमिकी में अ॰ सा॰ 1 के प्रति निर्देश है, इस अपीलार्थी को प्राथमिकी में नामित किया गया है और अ॰ सा॰ 1, 2 और 3 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए, उन्होंने अपने अभिसाक्ष्य में स्पष्टत: कथन किया है कि इस अपीलार्थी ने टांगी से पीड़ित के मस्तक एवं गर्दन पर उपहति कारित किया है और तत्पश्चात पीड़ित गिर गया और उसे अस्पताल ले जाया गया था और तत्पश्चात आगे इलाज के लिए उसे झारखंड राज्य की राजधानी राँची निर्दिष्ट किया गया था और तत्पश्चात राजेन्द्र मेडिकल कॉलेज एन्ड हॉस्पिटल (आर॰ एम॰ सी॰ एच॰) में दिनांक 14 जुलाई, 1998 को उसकी मृत्यु हो गयी। अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिया गया चिकित्सीय साक्ष्य अ॰ सा॰ 2 जो चश्मदीद गवाह है द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को संपुष्ट करता है। अ॰ सा॰ 5 द्वारा फर्दबयान, प्राथमिकी, मृत्यु समीक्षा और केस डायरी सिद्ध की गयी है। इन साक्ष्यों के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से मृतक की हत्या कारित करने के लिए इस अपीलार्थी को दंडित किया है और इस न्यायालय द्वारा इस दांडिक अपील को ग्रहण नहीं किया जा सकता है।

6. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि यह अपीलार्थी द्वारा की गयी सुनियोजित हत्या नहीं है। प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि कोई शिवलाल यादव जो दिनांक 26 जून, 1998 को सायंकाल के दौरान अपने घर पर था और उस समय यह अपीलार्थी अपने माथा पर लकड़ी का गट्ठर लिए और हाथ में टांगी लिए जंगल से आ रहा था। सामान्यत: गाँव वाले लकड़ी काटने के लिए टांगी का उपयोग करते हैं। प्राथमिकी से आगे यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 1 जो शिवलाल यादव (मृतक) का भाई है और वह एक एजेन्ट था और सड़क निर्माण गतिविधि में लगा हुआ था। रोड इस अपीलार्थी के खेत से गुजर रहा था और तत्पश्चात उनके बीच झगड़ा हुआ और इस कारण इस शिव लाल यादव (मृतक) ने इस अपीलार्थी को रोका और उससे पूछा कि वह क्यों सड़क निर्माण पर विवाद कर रहा है और तत्पश्चात् इस अपीलार्थी ने टांगी से शिवलाल यादव पर उपहति कारित किया था और तत्पश्चात् शिवलाल यादव को सबडिविजनल अस्पताल, लातेहार ले जाया गया और तत्पश्चात उसे राँची निर्दिष्ट किया गया था और अंतत: दिनांक 14 जुलाई, 1998 को घटना की तिथि से लगभग 19 दिन बाद उसकी मृत्यु हो गयी।

7. इस प्रकार, प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि पीड़ित जिसकी मृत्यु 19 दिन बाद हो गयी को इस अपीलार्थी द्वारा रास्ते में रोका गया था और उससे सड़क के निर्माण के बारे में प्रश्न पूछा गया था और तत्पश्चात् यह घटना हुई थी। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि इस अपीलार्थी द्वारा मृतक की हत्या कारित करने की कोई पूर्व नियोजित योजना नहीं थी। उसके हाथ में कोई विशेष हथियार नहीं था और न ही वह पीड़ित पर प्रहार करना चाहता था। यदि पीड़ित ने उससे कुछ नहीं पूछा होता, शायद कुछ भी नहीं हुआ होता। विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है और इसलिए, दोषसिद्धि का निर्णय एवं आदेश तथा दंडादेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है।

8. आगे, प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि किसी शत्रुघ्न यादव जो चश्मदीद गवाह है का बयान भी अन्वेषण अधिकारी द्वारा दर्ज किया गया था। आरोप-पत्र में उसका नाम अभियोजन गवाह के रूप

में उल्लिखित किया गया था किंतु अभियोजन द्वारा उसका परीक्षण नहीं किया गया है। अभियोजन पक्ष की ओर से कोई कारण नहीं दिया गया है कि हत्या के मामले के इस निर्णयकारी गवाह को क्यों छोड़ दिया गया है और न ही विचारण न्यायालय को ऐसा आवेदन दिया गया था अथवा अभियोजन के ऐसे आवेदन पर विचारण न्यायालय द्वारा कोई आदेश पारित किया गया था। जब अभियोजन गवाह के रूप में किसी चश्मदीद गवाह को उद्धृत किया जाता है विशेषत: हत्या के मामले में अभियोजन न्यायालय की अनुमति के बिना गवाह को नहीं छोड़ सकता है। गवाहों का परीक्षण अभियोजन की मृदुल इच्छा पर निर्भर नहीं है। दांडिक मामलों में निर्णयकारी गवाह का परीक्षण करना अभियोजन का कर्तव्य है और इस मामले में अभियोजन अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में विफल रहा है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है।

9. इसी प्रकार, अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए, प्राथमिकी को भी देखते हुए और अन्य अभियोजन गवाहों को भी देखते हुए गवाह के रूप में एक चश्मदीद गवाह का नाम लगातार निर्दिष्ट किया गया है जो प्रेम ठाकुर (नाई) है। इस प्रेम ठाकुर का परीक्षण भी अभियोजन द्वारा नहीं किया गया है यद्यपि वह हत्या मामले का चश्मदीद गवाह है। अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 3 मृतक के भाई हैं जबकि प्रेम ठाकुर स्वतंत्र गवाह है। अभियोजन ने इस हत्या मामले में इस स्वतंत्र गवाह का परीक्षण नहीं किया है यद्यपि उसे प्राथमिकी में और अ॰ सा॰ 1, 2 एवं 3 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य में लगातार निर्दिष्ट किया गया है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा समुचित रूप से मामले के इस पहलू का अधिमूल्यन नहीं किया गया है।

10. अ॰ सा॰ 2 जो कामेश्वर यादव है द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए, उसने अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 6 में कथन किया है कि वह चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है और उसने मृतक के शरीर पर उपहति कारित करते हुए इस अपीलार्थी को नहीं देखा है। उस महत्वपूर्ण समय पर वह पानी लेने गया था और जब वह लौटा उसने शिवलाल यादव को जमीन पर गिरा देखा। इस प्रकार, पैरा 6 को देखते हुए यह अ॰ सा॰ 2 चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है।

11. आगे, अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ 7 को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण अधिकारी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन उसका बयान दर्ज नहीं किया गया था और उसने न्यायालय में पहली बार अभिसाक्ष्य दिया है। इस मामले में अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण बिल्कुल नहीं किया गया है। अन्वेषण अधिकारी का गैर परीक्षण इस मामले के प्रति घातक है जब पैराग्राफ 7 जैसा अभिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिया गया है। यदि अन्वेषण अधिकारी किसी कारण से इस मामले में उपलब्ध नहीं है, तब भी अभियोजन किसी अन्य पुलिस अधिकारी का परीक्षण कर सकता था जो अन्वेषण अधिकारी के हस्तलेखन को जानता हो। अभियोजन द्वारा ऐसे किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है और व्यक्ति अर्थात् एक अन्य पुलिस अधिकारी जो रोज दिन उक्त पुलिस अधिकारी के साथ काम कर रहा था का परीक्षण अभियोजन द्वारा प्राथमिकी एवं फर्दबयान और प्रासंगिक समय पर दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन अन्वेषण अधिकारी द्वारा मामले के केस डायरी को निर्दिष्ट करते हुए अ॰ सा॰ 2 का बयान दर्ज करने का तथ्य सिद्ध करने के लिए किया जाना चाहिए था। अभियोजन ने इस प्रकार के किसी अन्य पुलिस अधिकारी का परीक्षण नहीं किया है।

12. अ॰ सा॰ 1 और 3 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए, वे मृतक के भाई हैं और अ॰ सा॰ 1 को प्राथमिकी में निर्दिष्ट किया गया है और कोई निर्देश नहीं है कि अ॰ सा॰ 2 चश्मदीद गवाह है और न ही अ॰ सा॰ 1 ने अ॰ सा॰ 3 को चश्मदीद गवाह के रूप में निर्दिष्ट किया है। इस प्रकार, प्राथमिकी में कोई निर्देश किए बिना अभियोजन द्वारा अ॰ सा॰ 3 को चश्मदीद गवाह के रूप में लाया गया है। जहाँ

तक अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य का संबंध नहीं है, उसने मृतक के शरीर पर उपहति कारित करने में इस अपीलार्थी द्वारा निभायी गयी भूमिका का स्पष्ट कथन किया है। उसने स्पष्टत: कथन किया है कि अपीलार्थी अपने मस्तक पर लकड़ी का गट्ठर और हाथ में टांगी लिए हुए जंगल की ओर से आ रहा था और उसे मृतक शिव लाल यादव द्वारा रोका गया था और शिव लाल यादव द्वारा पूछा गया था कि उसने पथ निर्माण के बारे में विवाद क्यों किया है और तत्पश्चात, इस अपीलार्थी ने अपने मस्तक से लकड़ी का गट्ठर उतारा और शिव लाल यादव पर उपहति कारित करने के लिए टांगी का उपयोग किया। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य से प्रतीत होता है कि यह इस अपीलार्थी द्वारा सुनियोजित हत्या नहीं है। यदि शिवलाल यादव ने इस अपीलार्थी को नहीं रोका होता, शायद इस घटना से बचा जा सकता था। इसके अतिरिक्त, इस अपीलार्थी के हाथ में विशेष हथियार नहीं था, वह टांगी की मदद से पेड़ की शाखा आदि काट कर जंगल से आ रहा था और उसे शिव लाल यादव द्वारा रोका गया था और तत्पश्चात उसने शिव लाल यादव पर टांगी से उपहति कारित किया। अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए इस विवरण को देखते हुए और इस अपीलार्थी द्वारा प्रयोग किए गए हथियार की प्रकृति को देखते हुए हमारा मत है कि यह अपीलार्थी हत्या की कोटि में नहीं आनेवाले आपराधिक मानव वध के अपराध के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास के बदले भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन 10 वर्षों के कठोर कारावास से दंडित किए जाने का दायी है। अधिक विशेषत:, मृतक की हत्या कारित करने के लिए अपीलार्थी की ओर से आशय नहीं था और अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिया गया चिकित्सीय साक्ष्य जिन्होंने यह कथन भी नहीं किया है कि उपहतियाँ मृतक की मृत्यु कारित करने के लिए प्रकृति के सामान्य क्रम में पर्याप्त थी। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिए गए इस मत की अनुपस्थिति में और हत्या कारित करने के लिए अपीलार्थी की ओर से किसी आशय की अनुपस्थिति में अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मृतक की हत्या के अपराध के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है। इसके बजाए, अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए अपीलार्थी हत्या की कोटि में नहीं आने वाले आपराधिक मानव वध के लिए दंडित किए जाने का दायी है और वह भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन 10 वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दायी है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है। यह अपीलार्थी दिनांक 1.7.1998 से कारा में बना हुआ है।

13. अ॰ सा॰ 4 डॉ॰ सरोज कुमार ने अपने अभिसाक्ष्य में निम्नलिखित उपहतियों का विवरण दिया है:–

^^'koio migfr%

(a) [kjkp

(i) yykV d ck,a Hkkx ij 1½ x 1/2 cm;

(ii) nk,a ij d ihN Åijh Hkkx ij 3 x 2 cm

(B) fl yh gb migfr%&(i) FkkMh frjNh vij MkmuokM vofLFkr xnu d ihN 08 cm ych ft l d uhp e#nM dk migfr d lkFk pkFk ,o ikpo lokbdyoVhck e dVu dh migfr FkhA (ii) vnj dh [kkiMh d gMMh dk lrgh rkj ij dkVrh eLrd d vkDlhihVy {k= e 0.5cm ych

***erk**&leLr migfr;k 'koio FkhA [kjkp dM ,o HkkFkj inkFk }kjk dkfjr fd;k x;k Fkk vkj blu eR;q dkfjr ugh fd;k Fkk vFkok ble ;kxnku ugh fn;k FkkA mDr fufn"V fly t[e ey t[e rt èkkj oky gfFk;kj l dkfjr fd;k x;k*

*Fkk] **eR; mDr migfr d dkj.k gb FkhA** ([k) eR; d ckn l xtjk le; 'ko&ijh{k.k d le; l 6 l 24 ?kVkA*

;g 'ko ijh{k.k fjikV ejh viuh fy[kkoV ,o gLrk{kj rFkk lhy e g&bl çn'k 2 fpfUgr djA mDr 'koio migfr Vkxh l dkfjr dh tk ldrh gA

14. इस प्रकार, चिकित्सीय साक्ष्य से यह भी प्रतीत होता है कि डॉक्टर ने कहीं मत नहीं दिया है कि उपहति प्रकृति के सामान्य क्रम में मृतक की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त, अभियोजन द्वारा अस्पष्टीकृत कतिपय उपहतियाँ है जिसे कड़े एवं भोथरे हथियार द्वारा कारित खरोंच के रूप में वर्णित किया गया है और किसी भी अभियोजन गवाह ने कथन नहीं किया है कि इस अपीलार्थी द्वारा पीड़ित पर लाठी अथवा छड़ी का वार किया गया था।

15. इस प्रकार, प्राथमिकी को देखते हुए (जिसे पीड़ित द्वारा दिया गया था जिसकी मृत्यु बाद में घटना से लगभग 19 दिन बाद अर्थात् दिनांक 14.7.1998 को हो गयी) और अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को भी देखते हुए यह प्रतीत होता है कि मृत्यु घटना की तिथि से 19 दिन बाद हुई थी। अपीलार्थी की ओर से आशय नहीं था और (अ॰ सा॰ 4 अर्थात् डॉक्टर जिन्होंने शव परीक्षण किया था द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य में भी यह कथन नहीं किया गया है कि उपहतियाँ प्रकृति के सामान्य क्रम में मृतक की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी।

16. कैलाश बनाम म॰ प्र॰ राज्य, (2006)11 SCC 420, में विशेषतः पैराग्राफ 39 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"39. fdr jkftUnj cuke gfj;k.kk jkT; e] bl U;k;ky; dh ,d vU; [kMihB u nM lfgrk dh èkkjk 300 d çkoèkkuk dk fo'y"k.k dju ij vkj fcjlk flg cuke itkc jkT; d tku eku ekey dk fufn"V djr g, fuEufyf[kr :i l fofèk dfFkr fd;k(

"23. fofo;u ckl] U;k;efr d ; lç{k.k ikekf.kd cu x, gA [kM ^rrh; dh ç;kT;rk d fy, fcjlk flg ekey e vfèkdfFkr ijh{kk vc gekjh fofèkd ç.kkyh e lekfo"V gk x;h g vkj fofèk d 'kklu dk Hkkx cu x;h gA HkkO nO lO dh èkkjk 300 d [kM rrh; d vèkhu vkijkfèkd ekuo oèk gR;k g] ;fn fuEufyf[kr nkuk 'krk dk lr"V fd;k tkrk g vFkkr (a) fd ÑR; tk eR; dkfjr djrk g] eR; dkfjr dju d vk'k; l fd;k x;k g vFkok 'kkjhfjd migfr dkfjr dju d vk'k; l fd;k x;k g(vkj (b) dkfjr fd, tku d fy, vk'kf;r migfr çÑfr d lkekU; Øe e eR; dkfjr dju d fy, i;kIr gA ;g fl) djuk gh gkxk fd ml fo'k"k 'kkjhfjd migfr dk dkfjr dju dk vk'k; Fkk tk çÑfr d lkekU; Øe e eR; dkfjr dju d fy, i;kIr Fkh vFkkr fd mifLFkr ik;h x;h migfr og migfr Fkh ftl dkfjr fd;k tkuk vk'kf;r FkkA*

24. bl çdkj] fcjlk flg ekey e vfèkdfFkr fl)kr d vulkj] Hky gh vfHk;Dr dk vk'k; çÑfr d lkekU; Øe e eR; dkfjr dju d fy, i;kIr 'kkjhfjd migfr dh dkfjrk rd lhfer Fkk vkj eR; dkfjr dju d vk'k; rd ugh x;k Fkk] vijkèk gR;k gkxkA èkkjk 300 e lyXu mnkgj.k (c) Li"Vr% bl fcn dk lkeu ykrk gA

25. èkkjk 299 dk [kM (c) vkj èkkjk 300 dk [kM (4) nkuk eR; dkfjr dju d ÑR; dh vfèklHkkO;rk dh tkudkjh vko';d cukrh gA bl ekey d ç;ktu

l bu rRle [kMk d chp lfHkUurk ij fopkj djuk vko';d ugh gA ;g dguk i;kIr gkxk fd èkkjk 300 dk [kM (4) ç;kT; gkxk tgk mld vkIUu [krjukd ÑR; l dkfjr dh tk jgh 0;fDr vFkok 0;fDr;k fo'k"k l lfHkUu vkerkj ij 0;fDr vFkok 0;fDr;k fo'k"k dh eR; dh vfèkHkk0;rk d çfr vijkèkh dh tkudkjh yxHkx 0;ogkfjd fuf'prrk gA vijkèkh dh vkj l ,lh tkudkjh vfèkHkk0;rk dh mPpre fMxh dh gkuh gkxh] iokDrkulkj eR; vFkok ,lh migfr dkfjr dju d tkf[ke dk mixr dju d fy, fdlh cgkuk d fcuk vijkèkh }kjk ÑR; fd, tku ijA

*26. mDr doy ekV rkj ij ekxn'kd fl)kr g vj u fd dBkj vfuok;rk,A vfèkdrj ekeyk e] mudk ikyu U;k;ky; d dke dk ldj cuk,xkA fdr dHkh&dHkkj rF; bl çdkj xFk jgr g vkj f}rh; ,o rrh; pj.k ,d nlj e bl çdkj ?kl jgr g fd f}rh; rFkk rrh; pj.kk e vrxLr ekeyk d lkFk iFkd 0;ogkj djuk lfoèkktud ugh gk ldrk gA***

ml ekey e] mDr fl)krk dk ykx djr g, Hkh nM lfgrk dh èkkjk 304 Hkkx II d vèkhu nk"kf lf) ?kkf"kr dh x;h FkhA (tkj fn;k x;k)

आगे **गुरमुख सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (2009)15 SCC 635** मामले में विशेषत: उसके पैराग्राफ सं॰ 23 और 25 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"23. vfHk;Dr dk lefpr nMkn'k vfèkfu.khr dju d igy bu dkjdk dk fopkj e fy, tku dh vko';drk gA ; dkjd doy mnkgj.kkRed pfj= d g vkj u fd li.k(çR;d ekey dk bld fo'k"k ifjç{; e n[kuk gkxkA çkIfxd dkjd fuEufyf[kr g%

(a) gr vFkok io n'euh(

(b) D;k ?kVuk {kf.kd vko'k e gb Fkh(

(c) okj vFkok migfr dkfjr djr g, vfHk;Dr dk vk'k;@tkudkjh(

(d) D;k eR; rjUr gb vFkok vud fnuk ckn ihfMr dh eR; gb(

(e) migfr dh xHkhjrk] vk;ke ,o çÑfr(

(f) vfHk;Dr dh vk; ,o lkekU; LokLF; n'kk(

(g) D;k migfr iofpru d fcuk vpkud >xM e dkfjr dh x;h Fkh(

(h) migfr dkfjr dju d fy, ç;Dr gfFk;kj dh çÑfr ,o vkdkj vkj cy ft l okj dkfjr fd;k x;k Fkk(

(i) vfHk;Dr dh vkijkfèkd i"BHkfe ,o çfrdy bfrgkl(

(j) D;k dkfjr dh x;h migfr çÑfr d lkekU; Øe e migfr dkfjr dju d fy, i;kIr ugh Fkh cfYd eR; vk?kkr d dkj.k gb Fkh(

(k) vfHk;Dr d fo#) yfcr vU; nkfMd ekeyk dh l[;k(

(l) ?kVuk ifjokj d lnL;k vFkok fudV lcfèk;k d chp gb(

(m) ?kVuk d ckn vfHk;Dr dk vkpj.k ,o 0;ogkj] D;k vfHk;Dr ?kk;y@erd dk rjUr ;g lfuf'pr dju d fy, vLirky y x;k Fkk fd mldk lefpr bykt gk ld

vfHk;Dr dk lefpr nMkn'k çnku djr g, bu dkjdk dk fopkj e fy;k tk ldrk gA

xx xx xx

25. ***tc ge fofèk d lfuf'pr fl)krk dk ykx djr g ftUg iokfYyf[kr ekeyk e çfrikfnr fd;k x;k g] HkkO nO lO dh èkkjk 302 d vèkhu vihykFkh dh nk"kf lf) lkf"kr ugh dh tk ldrh gA gekj lfopkfjr er e] vihykFkh vfHk;Dr dk HkkO nO lO dh èkkjk 302 d vèkhu d ctk, HkkO nO lO dh èkkjk 304 Hkkx II d vèkhu nk"kf l) fd;k tkuk pkfg, FkkA***

(tkj fn;k x;k)

पुनः **चेंदा उर्फ चंदाराम बनाम छत्तीसगढ़, (2013)12 JT 28 : (2013)6 Supreme 193,** मामले में, विशेषतः उसके पैराग्राफ सं॰ 16 और 17 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"16. fl)krk ftu ij geu mfpr :i l lokxi.k :i l ppk fd;k g d vkykd e ge rkfF;d voLFkk dk fo'y"k.k djuk gkxk fd D;k vihykFkh dk vk'k; eR; dkfjr djuk Fkk vFkok D;k ml doy migfr ft ldh eR; dkfjr dju dh lHkkouk Fkh] d ckj e tkudkjh FkhA ge ml rjhd dk fo'y"k.k Hkh djuk gkxk ft l rjhd l migfr dkfjr dh x;h g vkj bl dkfjr dju d fy, mdlkok dk Hkh fo'y"k.k djuk gkxkA ekey e ,l lk{; ugh g fd i{kk d chp io n'euh Fkh ;|fi v0 lO 2u ekey dk ,l fooj.k nu dk ç;kl fd;k gA ml ij èkkjk 161 d vèkhu ml d Lo; viu c;ku d Hkhrj fojkèkkHkk l gku d dkj.k vfo'okl fd;k x;k gA miyCèk lk{; n'kk,x fd vihykFkh dh vkj l io fpru ugh Fkk vkj fd ;g vpkud >xM dk ekeyk FkkA lk{; dk vfèkeY;u djr g, xkj djuk gkxk fd jkexyky (erd) dk >xMk ijh rjg ge'kk d fy, ly>ku d fy, ml dh iRuh }kjk ?kVukLFky ij cyk;k x;k Fkk vkj fd çFke vfHk;Dr d lkFk vpkud gvk >xMk ml dh iRuh dh mifLFkfr e gvk FkkA v0 lO 11 dkfrd jke d lk{; e vk;k g fd vihykFkh }kjk dkfjr migfr erd ,o çFke vfHk;Dr v tkjhjke d chp g, >xM d nkjku gb Fkh vkj fd vihykFkh }kjk erd d eLrd ij fd, x, ,dek= okj d ckn erd ,o v tkjhjke nkuk fxj x, Fk vkj v0 lO 2 gfeuckb u v tkjhjke ,o jkexyke dk vyx fd;k Fkk D;kfd o ,d&nlj e my> x, FkA bldk vFk doy ;g g fd jkexyke v tkjhjke ij gkoh gk x;k Fkk vFkok doy erd fxj x;k gkrk vkj u fd çFke vfHk;Dr v tkjhjkeA >xM d nkjku v tkjhjke ij gkoh gku dk erd dk mDr vkpj.k vihykFkh d fy, erd ij okj dju d fy, gfFk;kj Vduh tk vxy&cxy miyCèk Fkk] mBku dk rjUr mdlk;k FkkA ,l dkb lk{; fcYdy ugh g fd D;k vihykFkh eLrd ij vFkok 'kjhj ij vU;= okj dju dk vk'k; j[krk FkkA >xMr i{kk d xfreku gku d ukr ;g vklkuh l gk ldrk Fkk fd okj vuk'kf;r :i l eLrd ij gvkA fu%lng erd dk >xMk v tkjhjke d lkFk Fkk fdr li.k yMkb ,d vkj vfHk;Dr rFkk nljh vkj vihykFkh ,o vU; vfHk;Dr v tkjh jke d chp FkhA ***;g vko';d ugh g fd yMkb e[; vfHk;Dr ,o erd d chp gh gkuh pkfg,A yMkb nk i{kk d chp Hkh gk ldrh g] ,d vkj erd vkj nljh vkj vU; leLr vfHk;DrA doy ,d okj gvk gA ;g n'kku d***

fy, dN Hkh ugh g fd vihykFkh dh vkj l dkb vU; migfr dkfjr dju e vFkok fdlh vU; vkpj.k e dkb Øjrk vrxLr Fkh rkfd ;g vfHkfuèkkfjr fd;k tk ld fd vihykFkh fLFkfr dk vufpr ykHk y jgk Fkk vFkok mlu Øj vFkok vlekU; rjhd l 0;ogkj fd;kA bl çdkj] lfgrk dh èkkjk 300 d viokn 4 d vèkhu ekeyk yku d fy, vko';d leLr pkj vo;ok dk oreku ekey e lr"V fd;k x;k g tlk ili ekey (Åij) e dFku fd;k x;k gA

*17. vxyh tkp ;g djuh g fd D;k vijkèk èkkjk 304 d çFke Hkkx e vkrk g ;k f}rh; Hkkx eA x#e[k flg ekey (Åij) e minf'kr ekinMk dk è;ku e j[ku ij vijkèk f}rh; Hkkx d vèkhu vkrk çrhr gkrk gA gr vFkok io n'euh dk lk{; ugh gA ?kVuk {kf.kd vko'k e gb gA okj d ?kkrd ifj.kke d ihN vk'k; d lcèk e lk{; ugh gA doy ,d okj gvk FkkA vfHk;Dr uo;od gA dkb iofpru ugh gA ?kVuk dk fodkl n'kk,xk fd ;g vpkud >xM d chp gvk FkkA vihykFkh dh vkijkfèkd i"BHkfe vFkok çfrdy bfrgkl ugh gA ;g lekU; fook|d d dkj.k xkookyk d chp gvk rPN >xMk FkkA ?kkrd okj nk 0;fDr;k d chp g, gkFkkikb d Øe e fd;k x;k FkkA vihykFkh dh vkj l Øjrk dk dkb vU; ÑR; vFkok vlekU; vkpj.k ugh gA erd viuh iRuh dh mifLFkfr e gkFkkikb e vrxLr Fkk vkj ml oLrr% mld }kjk ?kVuk LFky ij cyk;k x;k Fkk rkfd vfHk;Drx.k d lkFk ekeyk fuiVk fn;k tk,A erd gkFkkikb e çFke vfHk;Dr ij gkoh gk x;k FkkA ml çFke vfHk;Dr dk nk"keDr fd;k x;k FkkA bl çdkj] bu leLr igyvk ij fopkj djr g, gekjk nf"Vdk.k g fd ;g vkthou dkjkokl d nM dk 50,000/- #i;k tekuk d lkFk 10 o"kk dh vofèk d fy, dkjkokl e ifjofrr dju d fy, l;kX; ekeyk gA rnulkj] vkn'k fn;k x;kA pfd erd viu ihN toku foèkok vkj ,d lrku NkM x;k g] bl çdkj oly dh x;h tekuk dh jkf'k dk Hkxrku foèkok vkj lrku dk fd;k tk,xkA vihykFkh }kjk tekuk dk Hkxrku dju e 0;frØe dh fLFkfr e ml vkx nk o"kk dh vofèk d fy, dkjkokl Hkxruk gkxkA ;fn vihykFkh igy gh mDr vofèk Hkxr pdk g] ml rjUr fueDr fd;k tk,xk ;fn fdlh vU; ekey e ml fu#) dju dh vko';drk ugh gA iokDrkulkj vihy vuKkr dh tkrh gA** (tkj fn;k x;k)*

17. अत:, हम सत्र मामला सं॰ 543 वर्ष 1998 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा दिनांक 3/9 जनवरी, 2004 को पारित दोषसिद्धि के निर्णय एवं आदेश तथा दंडादेश को अभिखंडित एवं अपास्त करते हैं। कि इस अपीलार्थी ने मृतक की हत्या की है वस्तुत: वह हत्या का कोटि में नहीं आने वाला मानव वध करने का दायी है और इसलिए उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है, किंतु वह भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडित किए जाने का दायी है और हम आजीवन कारावास के बजाय दंड परिवर्तित करते हैं वह 10 वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगा। सत्र मामला सं॰ 543 वर्ष 1998 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा पारित दिनांक 3/9 जनवरी, 2004 के दोषसिद्धि ने आदेश एवं निर्णय तथा दंडादेश को एतद् द्वारा इस सीमा तक परिवर्तित एवं उपांतरित किया जाता है।

18. अभिलेख पर मौजूद पूर्वोक्त साक्ष्य की दृष्टि में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन निर्णय एवं दोषसिद्धि और आजीवन कारावास तथा 5000/- रुपयों के जुर्माना का दंडादेश परिवर्तित एवं

उपांतरित किया जाता है और अपीलार्थी को हत्या की कोटि में नहीं आने वाले आपराधिक मानव वध के लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग II के अधीन अपराध का दोषी पाया गया है। अत:, हम सत्र मामला सं॰ 543 वर्ष 1998 में श्री रामबाबू गुप्ता, अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, लातेहार द्वारा पारित दिनांक 3/9 जनवरी, 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश को अभिखंडित एवं अपास्त करते हैं और एतद् द्वारा अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन आजीवन कारावास के बजाए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग II के अधीन 10 वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश देते हैं। चूँकि अपीलार्थी 15 वर्षों से अधिक समय से कारा अभिरक्षा में बना हुआ है, उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में वांछित न हो। यह अपील दंडादेश में पूर्वोक्त उपान्तरण के साथ आंशिक रूप से अनुज्ञात की जाती है तथा इसे निस्तारित किया जाता है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

अशोक कुमार झा

cuke

गीता देवी एवं अन्य

W.P. (C) No. 3802 of 2014. Decided on 31st July, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 21 नियम 97 एवं 99—डिक्री का निष्पादन—जब प्रभावकारी रूप से कब्जा देने के लिए कदम उठाए गए थे, इस पर आपत्ति की गयी थी और ऐसी आपत्ति पर याची ने दंडाधिकारी एवं पुलिस बल की तैनाती के लिए निष्पादन न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल किया था—जब एक बार न्यायालय को जानकारी हुई कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 21 नियम 97 एवं 99 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था, उन्हें पहले मामले को विनिश्चित करना चाहिए था और तब निष्पादन मामले में अग्रसर होना चाहिए था—निष्पादन करने वाले न्यायालय ने अवैधता किया था। (पैरा 1)

अधिवक्तागण.—M/s. R.R. Tiwari, V.K. Tiwari, For the Petitioner; None, For the Respondents.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वादीगण ने प्रतिवादी के विरुद्ध और न कि याची के विरुद्ध विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद दाखिल किया। वाद डिक्री किया गया था। उस आदेश का पालन वादीगण के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करके किया गया था। इस पर, वादीगण की ओर से कब्जा दिए जाने का रिट जारी करने की प्रार्थना करते हुए निष्पादन न्यायालय के समक्ष याचिका दाखिल की गयी थी। इस बीच, याची जो वाद भूमि के ऊपर काबिज था को जानकारी हुई कि वादीगण को कब्जा प्रदान को प्रभावकारी बनाने के लिए निष्पादन न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया है। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXI नियम 97 एवं 99 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था जिस पर दिनांक 24.7.2014 को विविध मामला दर्ज किया गया था। तत्पश्चात, डिक्री धारक ने उक्त विविध मामले के प्रति प्रत्युत्तर दाखिल किया। उसके बावजूद, डिक्री धारक कब्जा प्रदान करने की डिक्री के निष्पादन से संबंधित मामले का अनुसरण करता रहा। जब कब्जा के प्रभावकारी प्रदान के लिए कदम उठाए गए थे, इस पर आपत्ति की गयी थी और ऐसी आपत्ति पर याची ने दंडाधिकारी एवं बाद में पुलिस बल की तैनाती के लिए निष्पादन न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल किया। ऐसे आवेदन पर, एक बार में नहीं बल्कि टुकड़ों में दिनांक 24.7.2014 को आदेश पारित किया गया था। जब एक बार न्यायालय को जानकारी हुई थी कि सी॰ पी॰

सी॰ के आदेश XXI नियम 97 एवं 99 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था, उन्हें पहले मामले को विनिश्चित करना चाहिए था और तब निष्पादन मामले में अग्रसर होना चाहिए था किंतु निष्पादन न्यायालय अन्यथा मामले में अग्रसर हुआ और तद्द्वारा इसने अवैधता किया है।

2. निवेदन की दृष्टि में, प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 11 को देय पावती के साथ रजिस्ट्रीकृत डाक से और सामान्य प्रक्रिया के अधीन भी अध्यपेक्षा/तलबाना, आदि सोमवार तक दाखिल करने के लिए नोटिस जारी किया जाए।

3. इस मामले को प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 11 की उपस्थिति पर इसी शीर्ष के अधीन सूचीबद्ध किया जाए।

4. अगले आदेशों तक, कब्जा प्रदान करने का रिट, यदि जारी किया जाता है, याची अशोक कुमार झा के विरुद्ध निष्पादित नहीं किया जाएगा।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

राधा भटनागर

cuke

झारखंड उच्च न्यायालय, राँची एवं अन्य

W.P. (S) No. 1638 of 2013. Decided on 27th June, 2014.

झारखंड सेवा संहिता, 2000—नियम 74 (b) (ii)—न्यायिक अधिकारी की अनिवार्य सेवा निवृत्ति–अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए मत का निर्माण प्राधिकारी के व्यक्तिनिष्ठ संतुष्टि पर आधारित है–याची के संपूर्ण सेवा अभिलेख के समग्र निर्धारण पर स्क्रीनिंग कमिटी ने अनुशंसा किया कि याची को अनिवार्यतः सेवानिवृत किया जाए और उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी ने आगे स्क्रीनिंग कमिटी की अनुशंसा सहित अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परीक्षण किया और संकल्प किया कि याची को अनिवार्यतः सेवानिवृत्त करने की आवश्यकता थी–मात्र इसलिए कि विगत तीन वर्षों का याची का ए॰ सी॰ आर॰ उपलब्ध नहीं था, सेवा से याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश प्रासंगिक सामग्रियों पर अनाधारित के रूप में अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 18 से 21)

निर्णयज विधि.–(1980)2 SCC 15; (2003)8 SCC 117, 1994 Supp. (3) SCC 593; (2005)13 SCC 737; (2011)10 SCC 1; (1988)3 SCC 211—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Manoj Tandon, Shiv Shankar Kumar, Navin Kumar Singh, For the Petitioner; Mr. Ananda Sen, For the Respondent.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–मेमो सं॰ 6792 दिनांक 29.5.2012 में अंतर्विष्ट अधिसूचना जिसके द्वारा याची को अनिवार्यतः सेवा से निवृत्त कर दिया गया है से व्यथित होकर उक्त अधिसूचना का इस आधार पर अभिखंडन इप्सित करते हुए, याची इस न्यायालय के पास आयी है कि अभिलेख पर मौजूद सामग्रियाँ सेवा से याची को अनिवार्यतः निवृत्त करने के लिए झारखंड सेवा संहिता के नियम 74 (b) (ii) के अधीन शक्ति के प्रयोग को आवश्यक नहीं बनाती हैं। वर्तमान रिट याचिका में याची द्वारा झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 8 (1) (ix) को भी चुनौती दी गयी है और इस प्रभाव की घोषणा इप्सित की गयी है कि न्यायिक अधिकारी को सेवा से अनिवार्यतः निवृत्त करने की अनुशंसा इसकी

स्थायी कमिटी के बजाए उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा किया जाना आवश्यक है। दिनांक 15.5.2012 की संसूचना, जिसके द्वारा वर्ष 2008-09 के लिए उसके ए॰ सी॰ आर॰ में प्रतिकूल प्रविष्टि को मिटाने के लिए याची के अभ्यावेदन को अस्वीकार किया गया है, अभिखंडन करने की प्रार्थना याची द्वारा आगे की गयी है।

2. वर्तमान रिट याचिका की दाखिली की ओर ले जाने वाले मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि बिहार लोक सेवा आयोग की अनुशंसा पर याची को मुंसिफ के पद पर नियुक्ति के लिए चयनित किया गया था और कार्मिक एवं प्रशासनिक सुधार विभाग, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 30.11.1995 की अधिसूचना द्वारा याची को अनंतिम रूप से मुंसिफ के पद पर नियुक्त किया गया था और उसे आरा (भोजपुर) में पदस्थापित किया गया था। दिनांक 24.2.1998 की अधिसूचना सं॰ 1993 के तहत उसे सेवा में नियमित किया गया था। बिहार राज्य के द्विभाजन एवं पुनर्गठन के बाद याची को झारखंड कैडर आवंटित किया गया था और दिनांक 21.4.2001 की अधिसूचना के तहत याची को न्यायिक दंडाधिकारी, खूँटी, राँची के रूप में पदस्थापित किया गया था जहाँ उसने दिनांक 8.5.2001 को पदग्रहण किया। बाद में, दिनांक 2.8.2005 की अधिसूचना द्वारा याची को सेवा में संपुष्ट किया गया था और दिनांक 30.8.2006 की अधिसूचना द्वारा एश्योर्ड करिअर प्रोगेशन स्कीम के अधीन लाभ प्रदान किया गया था जिसके द्वारा दिनांक 18.12.2000 के प्रभाव से प्रथम ए॰ सी॰ पी॰ और दिनांक 18.12.2005 के प्रभाव से द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किया गया था। याची को सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी, मधुपुर, देवघर के रूप में स्थानांतरण पर सेवारत रहते हुए जिला न्यायाधीश, देवघर के हस्ताक्षर के अधीन दिनांक 20.10.2011 के पत्र सं॰ 30 द्वारा जारी वर्ष 2008-09 के लिए उसके ए॰ सी॰ आर॰ में प्रतिकूल प्रविष्टि संसूचित की गयी थी। अतः, याची ने अपने ए॰ सी॰ आर॰ में उक्त प्रतिकूल प्रविष्टि मिटाने के लिए दिनांक 22.11.2011 का अपना अभ्यावेदन दिया। किंतु, इसे लंबित रखा गया था और इस बीच याची के जूनियर कुछ न्यायिक अधिकारियों को दिनांक 20.3.2012 की अधिसूचना के तहत सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन के कैडर में प्रोन्नति दी गयी थी और इसलिए, याची ने अपने अभ्यावेदन को माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष रखने का अनुरोध करते हुए दिनांक 21.3.2012 का एक अन्य अभ्यावेदन दिया ताकि सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन के कैडर में प्रोन्नति के लिए उसके मामले पर विचार किया जा सके। किंतु, प्रभारी रजिस्ट्रार जनरल-सह-रजिस्ट्रार (निगरानी), झारखंड उच्च न्यायालय के हस्ताक्षर के अधीन जारी दिनांक 15.5.2012 के मेमो के तहत याची को सूचित किया गया था कि वर्ष 2008-09 निर्धारण वर्ष के लिए उसके ए॰ सी॰ आर॰ में प्रतिकूल प्रविष्टि का विलोपन इप्सित करने वाला उसका अभ्यावेदन माननीय उच्च न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है। तुरन्त तत्पश्चात, उपसचिव, कार्मिक एवं प्रशासनिक सुधार तथा राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार के हस्ताक्षर के अधीन जारी दिनांक 29.5.2012 के मेमो सं॰ 6792 में अंतर्विष्ट अधिसूचना द्वारा याची को झारखंड सेवा संहिता के नियम 74 (b) (ii) के अधीन दिनांक 30.5.2012 के प्रभाव से अनिवार्यतः सेवा से निवृत्त कर दिया गया था। सेवा से उसको अनिवार्यतः निवृत्त करने के निर्णय को चुनौती देते हुए याची वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आयी है।

3. झारखंड उच्च न्यायालय उपस्थित हुआ और यह कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया कि भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के दिनांक 14.10.2008 के पत्र में मार्गदर्शक सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए न्यायिक अधिकारियों, जिन्होंने अपेक्षित आयु प्राप्त कर लिया था, की सूची माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत की गयी थी जिन्होंने मामले को उच्च न्यायालय की स्क्रीनिंग कमिटी को निर्दिष्ट किया था। ऐसे समस्त न्यायिक अधिकारियों के संपूर्ण सेवा अभिलेखों, समग्र प्रदर्शन और निगरानी रिपोर्ट पर विचार करने के बाद उच्च न्यायालय की स्क्रीनिंग कमिटी ने दिनांक 11.4.2012 को

की गयी अपनी बैठक में संकल्प लिया और अनुशंसा किया कि वर्तमान याची सहित दस न्यायिक अधिकारियों की सेवाएँ जारी रखने की आवश्यकता नहीं है और झारखंड सेवा संहिता, 2001 के नियम 74 (b) (ii) के अधीन सेवा से उनको अनिवार्यत: निवृत्त करने की अनुशंसा की गयी थी। स्क्रीनिंग कमिटी की अनुशंसा को माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा गया था और माननीय मुख्य न्यायाधीश ने इस पर विचार करने के लिए मामले को उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी को निर्दिष्ट किया। उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी ने दिनांक 9.5.2012 के अपने कार्यवृत्त के तहत स्क्रीनिंग कमिटी की रिपोर्ट स्वीकार करने का संकल्प किया और तद्नुसार राज्य सरकार को अनुशंसा भेजी गयी थी। राज्य सरकार ने झारखंड उच्च न्यायालय की अनुशंसा को स्वीकार किया और परिणामस्वरुप लोक हित में याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए दिनांक 29.5.2012 की अधिसूचना जारी की गयी थी। इससे इनकार किया गया है कि न्यायिक अधिकारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति से संबंधित मामले को पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखने की आवश्यकता है, बल्कि उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी को झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 8 (1) (ix) के निबंधनानुसार न्यायिक अधिकारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए राज्य सरकार को अनुशंसा करने की शक्ति है। आगे यह कथन किया गया है कि याची निर्धारण वर्ष 2008-09 की प्रतिकूल प्रविष्टि के अतिरिक्त एक से अधिक अवसरों पर अपने ए॰ सी॰ आर॰ में संतोषजनक टिप्पणी प्राप्त करने में विफल रही। प्रमुख जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा के विरुद्ध पूर्वाग्रह का अभिकथन एवं अन्य अभिकथन से आधारहीन के रूप में इनकार किया गया है।

4. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज टंडन ने अपना तर्क केवल सेवा से याची की अनिवार्य से सेवानिवृत्ति के आदेश तक सीमित रखा है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि ''याची के समग्र निर्धारण के संबंध में ए॰ सी॰ आर॰ की टिप्पणियों की उद्धृत प्रति'', जिसे याची को आर॰ टी॰ आई॰ के माध्यम से उसके अनुरोध पर प्रदान किया गया था, उपदर्शित करेगी कि याची का समग्र प्रदर्शन संतोषजनक रहा है और याची की कर्तव्यनिष्ठा को दागदार बनाने वाली कोई टिप्पणी नहीं है और इसलिए, झारखंड सेवा संहिता, 2001 के नियम, 74 (b) (ii) के अधीन अनुशंसा अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों द्वारा समर्थित नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अनिवार्य सेवा निवृत्ति के आदेश के पहले के विगत तीन वर्षों के लिए याची के सेवा अभिलेख की अनुपस्थिति में अनुशंसा करने वाले प्राधिकारी की व्यक्तिनिष्ठ संतुष्टि में वस्तुनिष्ठता का अभाव है जो अनिवार्य सेवा निवृत्ति के आदेश को विधि में दोषपूर्ण बनाता है।

6. झारखंड उच्च न्यायालय के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आनन्द सेन ने निवेदन किया कि ''ए॰ सी॰ आर॰ की टिप्पणियों की उद्धृत प्रति'' याची की क्षमता, दक्षता, उपयोगिता एवं अखंडता का पूर्ण चित्र परिलक्षित नहीं करती है। यह निवेदन किया गया है कि याची के विरुद्ध गंभीर परिवाद प्राप्त किया गया था जिनमें जाँच की आवश्यकता थी और उसे माननीय निरीक्षक न्यायाधीश के आदेश द्वारा संबंधित जिला न्यायाधीश द्वारा लगातार ''निगरानी के अधीन'' रखा गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि इस निष्कर्ष पर आने के लिए कि क्या संबंधित कर्मचारी को अनिवार्यत: सेवानिवृत्त करना लोकहित में है, जिसका परीक्षण किया जाना है, वह ''संपूर्ण सेवा अभिलेख के आधार पर समग्र प्रदर्शन'' है। चूँकि वर्तमान मामले में, याची के संपूर्ण सेवा अभिलेख सहित अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों पर विचार करने के बाद माननीय उच्च न्यायालय ने झारखंड सेवा संहिता के नियम 74 (b) (ii) के अधीन याची की

अनिवार्य सेवानिवृत्ति अनुशंसित किया और राज्य सरकार ने उच्च न्यायालय की अनुशंसा को स्वीकार किया और लोक हित में याची को सेवानिवृत्त करते हुए अधिसूचना जारी किया, इस न्यायालय द्वारा मामले में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि न्यायिक अधिकारी के मामले में अधिकारी की प्रतिष्ठा एवं तुरन्त ऊपर के उच्चतर अधिकारी की धारणा अत्यन्त महत्व की है। याची के मामले में, जिला न्यायाधीश एवं माननीय निरीक्षक न्यायाधीश ने प्रतिकूल टिप्पणियों को दर्ज किया है और याची को ''निगरानी के अधीन'' रखा गया है और इसलिए, यह प्रतिवाद नहीं किया जा सकता है कि याची की ईमानदारी संदेह के परे थी। विद्वान अधिवक्ता ने **(2003)8 SCC 117, (2010)10 SCC 693, (2013)10 SCC 551** और **(2011)10 SCC 1** में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया है।

7. ''नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य'', (2012)3 SCC 580, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि उक्त नंद कुमार वर्मा की तुलना में याची का ए॰ सी॰ आर॰ निश्चय ही बेहतर है और इस प्रकार प्रतिवाद किया कि चूँकि उक्त नंद कुमार वर्मा की अनिवार्य सेवा निवृत्ति का आदेश माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दोषपूर्ण पाया गया है, याची के मामले पर भी नंद कुमार वर्मा के मामले के आलोक में विचार किया जाना चाहिए और याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश अभिखंडित किया जाए।

8. झारखंड उच्च न्यायालय के विद्वान अधिवक्ता ने स्क्रीनिंग कमिटी और उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी के समक्ष संपूर्ण सेवा अभिलेख, निगरानी फाइल, कार्यवाही प्रस्तुत किया है और हमने सावधानीपूर्वक इसका परिशीलन किया है।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने ''ए॰ सी॰ आर॰ की टिप्पणियों की उद्धृत प्रति'' पर जोर दिया है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

श्रीमती राधा भटनागर, सेवानिवृत्त न्यायिक अधिकारी के समग्र निर्धारण के संबंध में ए॰ सी॰ आर॰ की टिप्पणियों की उद्धृत प्रति

निर्धारण वर्ष	समग्र निर्धारण (टीका/टिप्पणी)
1996-1997	—
20.12.1997	''बी॰'' संतोषजनक
1997-1998	संतोषजनक
1998-1999	संतोषजनक
1999-2000	संतोषजनक
2000-2001	औसत
2001-2002	कोई टिप्पणी नहीं
2002-2003	आउटस्टैंडिंग ("A")
2003-2004	संपुष्ट किया जा सकता है। समस्त कार्य क्षेत्रों में सुधार करना चाहिए
2004-2005	''बी॰+''
2005-2006	''B+" (गुड)
2006-2007	संतोषजनक ('बी॰')

2007-2008	सुधार के लिए सक्षम
2008-2009	औसत ('B+')/उसे अपने सहकर्मियों, वादकारों एवं अधिवक्ताओं के साथ सौहार्द्रता बनाए रखने के लिए अपने व्यवहार एवं रवैया में परिवर्तन करने की आवश्यकता है।
2009-2010	—
2010-2011	—
2011-2012	—

रजिस्ट्रार जनरल–सह–रजिस्ट्रार (निगरानी)I/e

संयुक्त रजिस्ट्रार (प्रशासन 1)–सह–राज्य लोक

सूचना अधिकारी, झारखंड उच्च न्यायालय, राँची।

10. याची के सेवा अभिलेख का परिशीलन प्रकट करता है कि उसकी सेवा के प्रथम वर्ष में ही माननीय निरीक्षक न्यायाधीश ने दिनांक 20.12.1997 के गोपनीय टिप्पणियों में निम्नलिखित दर्ज किया था:–

कॉलम 6	क्या उसने ईमानदारी एवं निष्पक्षता के लिए न्यायिक प्रतिष्ठा बनाए रखा है?	परिवाद किए गए थे किंतु सिद्ध नहीं किए गए थे।

11. जब याची कोडरमा एवं धनबाद में पदस्थापित थी, उसके विरुद्ध अनेक परिवाद प्राप्त किए गए थे और जिला न्यायाधीश, धनबाद से रिपोर्ट मांगी गयी थी। जिला न्यायाधीश, धनबाद से रिपोर्ट प्राप्त करने के बाद माननीय निरीक्षक न्यायाधीश ने दिनांक 19.9.2007 के वृत्तांत के तहत जिला न्यायाधीश, कोडरमा से रिपोर्ट मंगाने का आदेश दिया जहाँ इस बीच याची को स्थानांतरित किया गया था। यह प्रतीत होता है कि दिनांक 5.12.2007 के वृत्तांत के तहत माननीय निरीक्षक न्यायाधीश ने आदेश दिया कि ''जिला न्यायाधीश, धनबाद द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट की दृष्टि में संबंधित अधिकारी को कम से कम छह माह के लिए जिला न्यायाधीश, कोडरमा द्वारा निगरानी के अधीन रखा जा सकता है।'' तत्पश्चात, छह माह के बाद, जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा से पुन: रिपोर्ट प्राप्त किया गया था जिसमें उन्होंने सूचित किया कि याची न्यायालय के सदस्यों के प्रति अपने क्षणिक तुनकमिजाजी एवं व्यवहार के कारण अच्छी प्रतिष्ठा नहीं रखती थी। याची को आगे छह माह की अवधि के लिए ''निगरानी के अधीन'' रखने का आदेश दिया गया था। यह प्रतीत होता है कि इस अवधि के दौरान याची की कर्तव्यनिष्ठा को दागदार करने वाला परिवाद भी जिला न्यायाधीश द्वारा प्राप्त किया गया था। यह भी रिपोर्ट किया गया था कि याची स्वयं साक्ष्य दर्ज नहीं कर रही थी और प्रतिपरीक्षण के लिए भी मामला प्रति परीक्षण दर्ज करने के लिए प्लीडर–कमिश्नर को भेजा जाता था। दिनांक 27.2.2009 के वृत्तांत के तहत यह आदेश दिया गया था कि ''संबंधित अधिकारी को आगे छह माह के लिए निगरानी के अधीन रखा जा सकता है।'' जिला एवं सत्र न्यायाधीश, कोडरमा ने पुन: रिपोर्ट किया कि याची की ईमानदारी के विरुद्ध अनेक परिवाद प्राप्त किए गए थे। आगे यह रिपोर्ट किया गया था कि गोपनीय जाँच पर जिला एवं सत्र न्यायाधीश ने पाया कि याची की प्रतिष्ठा खराब है। अंतत:, दिनांक 9.12.2009 के वृत्तांत के तहत माननीय जोनल न्यायाधीश ने याची के विरुद्ध समुचित कार्रवाई करने के लिए मामला स्थायी कमिटी को निर्दिष्ट किया और स्थायी कमिटी ने दिनांक 28.3.2011 को की गयी अपनी बैठक में याची के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का संकल्प किया। किंतु इस बीच, नियम 74 (b) (ii) के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी और इसलिए, याची के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया था।

12. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि ''ए॰ सी॰ आर॰ की टिप्पणियों की उद्धृत प्रति'' याची की कर्तव्यनिष्ठा दागदार करने वाली कोई प्रविष्टि उपदर्शित नहीं करती है। याची का सेवा अभिलेख अन्यथा प्रकट करता है। जैसा यहाँ ऊपर गौर किया गया है, याची की ईमानदारी के संबंध में अनेक परिवाद प्राप्त किए गए थे और उच्च न्यायालय के आदेश द्वारा याची को लगातार निगरानी के अधीन रखा गया था। संबंधित जिला न्यायाधीश द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट भी उपदर्शित करती है कि याची की प्रतिष्ठा संतोषजनक नहीं थी।

13. ''भारत संघ बनाम एम॰ ई॰ रेड्डी, (1980)2 SCC 15, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"17. ..... ldkjkRed lk{; }kjk ;g fl) djuk oLrr% ef'dy] ;fn vlHko ugh gkxk fd vfèkdkjh fo'k"k xjbekunkj g fdr ftu ykxk dk utnhd lmDr vfèkdkjh dk çn'ku n[ku dk volj feyk Fkk] o u doy mld çn'ku cfYd mldh çfr"Bk dh çÑfr ,o pfj= dk tkuu dh voLFkk e g----------***

14. नवल सिंह बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य,'' (2003)8 SCC 117, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

*"2. vkjHk e gh ;g nkgjkuk gkxk fd U;kf;d lok fu;ktu d vFk e lok ugh gA U;k;kèkh'k jkT; d lçHk U;kf;d 'kfDr dk ç;kx djr g, viu dk;k dk fuogu dj jg gA mudh bekunkjh ,o dr0;fu"Bk d lng d ij gku dh mEehn dh tkrh gA bl mudh lex çfr"Bk e ifjyf{kr gkuk pkfg,A vkx] U;kf;d lok dh çÑfr ,lh g fd ;g lngkLin bekunkjh d 0;fDr;k vFkok tk viuh mi;kfxrk xok cB g dk lok e cu jgu dh vuefr ugh n ldrk gA ;fn mPp U;k;ky; d U;k;kèkh'kk dh dfeVh }kjk ,lk eY;kdu fd;k tkrk g vkj fjV ;kfpdk e vfHki"V fd;k tkrk g] vr;Ur vkiokfnd ifjfLFkfr;k d flok,] U;k;ky; ble gLr{ki ugh djxk fo'k"kr% D;kfd vfuok;; lokfuofÙk dk vkn'k çkfèkdkjh dh 0;fDrfu"B lrf"V ij vkèkkfjr gA***

15. ''उ॰ प्र॰ राज्य बनाम बिहारी लाल'', 1994 Supp (3) SCC 593, में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक प्रतिकूल प्रविष्टि, जिसे तकनीकी आधार पर अपील में अपास्त कर दिया गया है, को भी विचार में लिया जा सकता है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिकारी की ईमानदारी के संबंध में प्रतिकूल टिप्पणियों जिनके विरुद्ध अधिकारी के पास अभ्यावेदन देने का अवसर नहीं था क्योंकि इसी समय के आस-पास अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया गया था, अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को दूषित नहीं करेंगी। **''एस॰ डी॰ सिंह बनाम झारखंड उच्च न्यायालय'', (2005)13 SCC 737,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश मान्य ठहराया गया था यद्यपि, न्यायिक अधिकारी को अनेक वरीय अधिकारियों को अधिक्रांत करते हुए प्रोन्नति प्रदान की गयी थी और उसके विरुद्ध निगरानी कार्यवाही छोड़ दी गयी थी।

16. ''राजेन्द्र सिंह वर्मा बनाम उप-राज्यपाल (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰)'', (2011)10 SCC 1, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

"192. lkekU; r% dr0;fu"Bk dk nkxnkj cuku okyh çfrdy çfof"V èkkj.kk vk d fu#i.k ij vkèkkfjr gkxh tk food e lkFk&lkFk Hkfedk fuHkku oky vud dkjdk dk ifj.kke gkxhA ;|fi lckè; rk fHkUu gk ldrh g] phtk dh çÑfr e gh] xkiuh; ifLrdk e çfof"V;k dk U;kf;d iufoykdu d vè;ènu dju e vlHkkouk d dxkj dk Nrh ef'dy gA dHkh&dHkkj] ;fn depkjh dh lkekU;

çfr"Bk vPNh ugh g ;|fi mld fo#) Bkl lkexh ugh gk ldrh g] ml ykdfgr e vfuok;r% lokfuoÙk fd;k tk ldrk gA vk; fo'k"k d ij U;kf;d vfèkdkjh d cu jgu d ç'u ij fopkj dju d fy, lefpr çkfèkdkjh ij çnÙk drO; li.k gA ;fn og çkfèkdkjh lnHkkoiod er fufer djrk g fd vfèkdkjh fo'k"k dh bekunkjh lngi.k g] U;k;ky;k d le{k ml er dh 'k)rk dk pukrh ugh nh tk ldrh gA tc mPp U;k;ky; d ç'kklfud i{k ij ,l loèkkfud dk; dk ç;kx fd;k tkrk g] ml ij dkb U;kf;d iufoykdu vR;Ur lrdrk ,o pkdlh d lkFk fd;k tkuk pkfg, vkj bl vud çdkf'kr fu.k;k e bl U;k;ky; }kjk çfrikfnr ekinMk rd dBkjrkiod lhfer djuk gkxkA tc lefpr çkfèkdkjh lnHkkoi.k er fufer djrk g fd U;kf;d vfèkdkjh dh vfuok; lokfuofÙk ykdfgr e g] vuPNn 226 d vèkhu fjV U;k;ky; vFkok vuPNn 32 d vèkhu ;g U;k;ky; vkn'k e gLr{ki ugh djxkA**

17. जब माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित पूर्वोक्त सिद्धांतों के आलोक में याची के मामले पर विचार किया जाता है, यह गौर किया गया है कि याची के तुरन्त ऊपर के उच्चतर अधिकारी अर्थात् जिला एवं सत्र न्यायाधीश ने रिपोर्ट किया कि याची की प्रतिष्ठा खराब थी और उसकी ईमानदारी के विरुद्ध अनेक परिवाद प्राप्त किए गए थे। माननीय निरीक्षक न्यायाधीश ने जिला न्यायाधीश की रिपोर्ट को स्वीकार किया और तीन अवसरों पर आदेश दिया कि याची को छह माह के लिए ''निगरानी के अधीन'' रखा जाए। हम याची के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद में सार नहीं पाते हैं कि याची की कर्तव्यनिष्ठा को दागदार बनाने वाली ''ए॰ सी॰ आर॰ की टिप्पणियों की उद्धृत प्रति'' में परिलक्षित किसी प्रतिकूल प्रविष्टि की अनुपस्थिति में अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश विधि में दोषपूर्ण है।

18. हम आगे पाते हैं कि अपने पूरे करिअर के दौरान याची औसत अधिकारी बनी रही और निर्धारण वर्ष 2002-2003 के सिवाए उसका प्रदर्शन केवल औसत अथवा संतोषजनक था। वर्ष 2004 में भी, माननीय मुख्य न्यायाधीश जो निरीक्षक न्यायाधीश थे ने याची के ए॰ सी॰ आर॰ में दर्ज किया है कि अधिकारी को समस्त क्षेत्र में सुधार करना चाहिए। याची के संपूर्ण सेवा अभिलेख के समग्र निर्धारण पर स्क्रीनिंग कमिटी ने अनुशंसा किया कि याची को अनिवार्यतः सेवानिवृत्त किया जाए और उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी ने स्क्रीनिंग कमिटी की अनुशंसा सहित अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परीक्षण किया और संकल्प किया कि याची को अनिवार्यतः सेवानिवृत्त करने की आवश्यकता थी। उच्च न्यायालय की अनुशंसा राज्य सरकार द्वारा स्वीकार की गयी थी और लोक हित में झारखंड सेवा संहिता, 2001 के नियम 74 (b) (ii) के अधीन अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश जारी किया गया था। यह सुनिश्चित है कि अनिवार्य सेवा निवृत्ति के मत का निर्माण प्राधिकारी की व्यक्तिनिष्ठ संतुष्टि पर आधारित होती है। **''मद्रास उच्च न्यायालय बनाम आर॰ रंजियाह'', (1988)3 SCC 211,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जब उच्च न्यायालय दृष्टिकोण अपनाता है कि अधीनस्थ न्यायिक सेवा के सदस्य के विरुद्ध अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया जाना चाहिए, ऐसी सामग्रियों की पर्याप्तता को चुनौती नहीं दी जा सकती है जब तक सामग्रियाँ अनिवार्य सेवानिवृत्ति के प्रयोजन से पूर्णतः अप्रासंगिक नहीं हैं। हम याची को सेवा से अनिवार्यतः सेवा निवृत करने वाले दिनांक 29.5.2012 के आदेश में मनमानापन अथवा अवैधता नहीं पाते हैं। अभिलेख पर लायी गयी सामग्रियाँ याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को न्यायोचित ठहराती हैं।

19. याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश में इस न्यायालय का हस्तक्षेप इप्सित करते हुए याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि चूँकि याची का सेवा अभिलेख नंद कुमार वर्मा, जिसकी सेवा

से अनिवार्य सेवानिवृत्ति को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अन्यायोचित अभिनिर्धारित किया गया है, के सेवा अभिलेख की तुलना में बेहतर है, याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश विधि में संपोषित नहीं की जा सकती है। नंद कुमार वर्मा के मामले में तथ्य ये हैं कि जमानत प्रदान करने में कतिपय लोप एवं कारिता के लिए उक्त अधिकारी के विरुद्ध कतिपय प्रतिकूल टिप्पणियाँ की गयी थी। उसे निरीक्षक न्यायाधीश के विरुद्ध आपत्तिजनक भाषा का प्रयोग करने के लिए कारण बताओ नोटिस भी जारी किया गया था। उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी ने उक्त अधिकारी द्वारा की गयी शर्तहीन क्षमायाचना स्वीकार किया और उसके कमियों को माफ किया। जमानत प्रदान करने के लिए किए गए अभिकथनों का खंडन करते हुए अधिकारी द्वारा दिया गया अंधाधुंध स्पष्टीकरण भी उच्च न्यायालय द्वारा सम्यक रूप से स्वीकार किया गया था। फिर भी, उच्च न्यायालय की स्थायी कमिटी ने अंधाधुंध जमानत प्रदान करने में उसके द्वारा किए गए अवचार के लिए उक्त अधिकारी के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का निर्देश दिया। जाँच अधिकारी ने अधिकारी के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध किया गया अभिनिर्धारित करते हुए रिपोर्ट दिया। जाँच अधिकारी की रिपोर्ट के आधार पर अनुशासनिक प्राधिकारी ने सेवा से अधिकारी को अनिवार्यत: सेवानिवृत्त करने का निर्णय लिया। वर्तमान मामले में तथ्य बिल्कुल भिन्न हैं। याची के विरुद्ध आरंभ किए जाने के लिए इप्सित अनुशासनिक कार्यवाही आरोप की मदों का प्रारूप विरचित करने के चरण पर बनी रही और याची पर आरोप ज्ञापन तामील नहीं किया गया था। उच्च न्यायालय ने उसके विगत सेवा अभिलेख पर विचार करके याची की अनिवार्य सेवा निवृत्ति अनुशंसित किया। याची का प्रतिवाद कि नंद कुमार वर्मा के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में उसकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है, अस्वीकार्य है।

20. याची के विद्वान अधिवक्ता ने अंत में निवेदन किया है कि अनिवार्य सेवा निवृत्ति के आदेश के पहले के विगत तीन वर्षों में याची का प्रदर्शन उसके ए॰ सी॰ आर॰ में दर्ज नहीं किया गया है और इस प्रकार, इस पर प्राधिकारी द्वारा विचार नहीं किया गया है, केवल यह तथ्य अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश अभिखंडित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। यह निवेदन किया गया है कि यह सुनिश्चित है कि यदि न्यायिक अधिकारी का संपूर्ण सेवा अभिलेख विचार में नहीं लिया गया है, अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। यह प्रतिवाद भी मामले के तथ्यों की दृष्टि में मान्य नहीं है। यदि याची का विगत तीन वर्षों का ए॰ सी॰ आर॰ उपलब्ध होता और फिर भी प्राधिकारी द्वारा उस पर विचार नहीं किया गया होता, याची प्रतिवाद कर सकती थी कि उसके संपूर्ण सेवा अभिलेख को अनुशंसा करने वाले प्राधिकारी द्वारा विचार में नहीं लिया गया था और इसलिए अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश विधि में दोषपूर्ण है। ए॰ सी॰ आर॰ सहित याची के सेवा अभिलेख में जो भी सामग्री उपलब्ध थी, उस पर उच्च न्यायालय द्वारा और राज्य सरकार द्वारा भी सम्यक रूप से विचार किया गया है। सेवा से याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति की अनुशंसा करने में प्राधिकारियों के विवेक पर जिस बात ने वजन डाला, उस पर रिट न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया जा सकता है। जैसा यहाँ ऊपर गौर किया गया है, याची अपने पूरे करिअर के दौरान औसत अधिकारी बनी रही और न्यायिक अधिकारी के रूप में उसकी कर्त्तव्यनिष्ठा को दागदार बनाने वाले गंभीर अभिकथन थे। जिला न्यायाधीश ने और माननीय निरीक्षक न्यायाधीश ने भी याची के विरुद्ध प्रतिकूल टिप्पणी किया है। मात्र इसलिए कि विगत तीन वर्षों के लिए याची का ए॰ सी॰ आर॰ उपलब्ध नहीं था, सेवा से याची की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश प्रासंगिक सामग्रियों पर अनाधारित अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है।

21. परिणामस्वरुप, हम इस रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाते हैं और तद्नुसार इस रिट याचिका को खारिज किया जाता है।

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferko dekj xlrk] U;k;efrx.k

अंटू गोप

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Jail Appeal (D.B.) No. 574 of 2003. Decided on 10th July, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 49 वर्ष 1998 में सत्र न्यायाधीश, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित क्रमश दिनांक 21 जनवरी 2003 और दिनांक 22 जनवरी, 2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–दोषसिद्धि–जब कभी कोई चश्मदीद गवाह होता है और अ॰ सा॰ के रूप में उसका परीक्षण नहीं किया गया है और जब अनेक अ॰ सा॰ विचारण न्यायालय के समक्ष उसी चश्मदीद गवाह को निर्दिष्ट कर रहे हैं, यह अभियोजन मामले के लिए घातक है–जब्त वस्तुओं को एफ॰ एस॰ एल॰ कभी नहीं भेजा गया था–प्राथमिकी काफी विलंबित चरण पर भेजी गयी है और आई॰ ओ॰ द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है–अभियोजन अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए हत्या के आरोप को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में विफल रहा है–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त किया गया–अपील अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 12 से 19)

निर्णयज विधि.–2014 (1) JLJR 428—Referred.

अधिवक्तागण.–Ms. Amrita Banerjee, For the Appellant; APP., For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–जब यह अपील अंतिम सुनवाई के लिए बुलायी गयी अपीलार्थी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ। अपीलार्थी के अधिवक्ता, जिन्हें इस न्यायालय द्वारा न्यायमित्र के रूप में नियुक्त किया गया था, अनुपस्थित है। अत: हम सुश्री अमृता बनर्जी, जो झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकार के पैनल में हैं, को न्यायमित्र नियुक्त करते हैं। सुश्री बनर्जी ने इस मामले को स्वीकार किया है और विस्तारपूर्वक मामले पर तर्क किया है।

2. यह दांडिक अपील सत्र विचारण सं॰ 49 वर्ष 1998 में सत्र न्यायाधीश, चाईबासा, पश्चिम सिंहभूम द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 21 जनवरी, 2003 और दिनांक 22 जनवरी, 2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है। इस अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंडादेश दिया गया है।

3. अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 28 जुलाई, 1997 को सूचक कृष्ण चंद्र टमसॉय (अ॰ सा॰ 3) ने पुलिस को लिखित रिपोर्ट दिया कि दिनांक 28.7.1997 को प्रात: 9 बजे सूचक का छोटा भाई राजेश चंद्र टमसॉय (मृतक) अपने खेत में मेढ़ बना रहा था। इस बीच, उसका सह–ग्रामीण अंटू गोप (अभियुक्त) वहाँ आया और मेढ़ पर बैठने के बाद धान के खेत में राजेश चंद्र टमसॉय से बात करने लगा और बातचीत के दौरान उसने राजेश चंद्र टमसॉय पर छूरा से प्रहार किया और पेट, छाती, हाथ, जांघ और शरीर के पिछले भाग में छूरा का 10 वार किया जिसके परिणामस्वरुप वह बुरी तरह घायल हो गया और घटनास्थल (धान के खेत) पर उसकी मृत्यु हो गयी। सूचक ने आगे अभिकथित किया कि उसके छोटे भाई द्वारा बचाओ–बचाओ का हल्ला किए जाने के कारण सूचक अन्य सह–ग्रामीणों के साथ घटना स्थल की ओर दौड़ा और उनको देखने के बाद अंटू गोप जंगल की ओर भाग गया और जब तक वह धान के खेत में अपने भाई के पास पहुँचा, उस समय तक उसकी मृत्यु हो गयी थी।

4. अभियोजन द्वारा परीक्षण किए गए सात गवाहों के संबंध में तालिका रूपी चार्ट में विवरण

क्रमांक	**गवाह का नाम**	**विवरण**
अ॰ सा॰ 1	डॉ॰ अरुण कुमार	वह डॉक्टर हैं जिन्होंने राजेश चंद्र टमसॉय उर्फ सुरेश चंद्र टमसॉय के मृत शरीर का शव परीक्षण किया है और **प्रदर्श 1 के रूप में चिन्हित शव परीक्षण रिपोर्ट को सिद्ध किया है।**
अ॰ सा॰ 2	अशोक कुमार	**उसने प्रदर्श 2 के रूप में चिन्हित औपचारिक प्राथमिकी सिद्ध किया है।**
अ॰सा॰ 3	कृष्ण चंद्र टमसॉय	वह इस मामले का **सूचक** है और **मृतक राजेश चंद्र टमसॉय का भाई है।** उसने अभियुक्त अंटू गोप को घटना स्थल से भागते देखा था। **उसने प्रदर्श 3 और 3/1 के रूप में चिन्हित लिखित रिपोर्ट में अपना हस्ताक्षर और दिनेश चंद्र टमसॉय का हस्ताक्षर सिद्ध किया है।**
अ॰ सा॰ 4	दिनेश चंद्र टमसॉय	वह **अनुश्रुत गवाह** है। उसने **प्रदर्श 4 और 4/1 के रूप में चिन्हित मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट में अपना हस्ताक्षर और डकुआ बोझ टमसॉय का हस्ताक्षर सिद्ध किया है। उसने प्रदर्श 4/2 और 4/3 के रूप में चिन्हित अभिग्रहण सूची में अपना हस्ताक्षर एवं डकुआ बोझ टमसॉय का हस्ताक्षर सिद्ध किया है।**
अ॰ सा॰ 5	धनेश्वर टमसॉय	वह **अनुज्ञात गवाह है।**
अ॰ सा॰ 6	योगेन्द्र प्रसाद सिंह	वह **इस मामले का अन्वेषण अधिकारी है। उसने प्रदर्श 5 के रूप में चिन्हित लिखित रिपोर्ट सिद्ध किया है और उसने प्रदर्श 6 के रूप में चिन्हित मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट की कॉर्बन कॉपी भी सिद्ध किया है। उसने प्रदर्श 7 के रूप में चिन्हित अभिग्रहण सूची सिद्ध किया है।**
अ॰ सा॰ 7	अर्जुन टमसॉय	पक्षद्रोही गवाह घोषित किया गया है।

5. अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध को सिद्ध करने में विफल रहा है।

तथाकथित चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 3 सूचक घटना का चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है। यद्यपि प्राथमिकी के परिशीलन पर, जिसे अ॰ सा॰ 3 द्वारा दर्ज किया गया था, यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 3 चश्मदीद गवाह है, किंतु अ॰ सा॰ 3 के प्रति परीक्षण को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वह घटना के दस मिनट बाद घटनास्थल पर आया। इस गवाह ने यह कथन भी किया है कि कोई दिवाकर गोप

चश्मदीद गवाह है और वह निकट के खेत में हल चला रहा था। उसके मुख्य परीक्षण में भी दिवाकर का निर्देश दिया गया था। यह प्रतीत होता है कि पुलिस ने न तो इस दिवाकर गोप–चश्मदीद गवाह का बयान दर्ज किया है और न ही उसे आरोप पत्र में अभियोजन गवाह के रूप में नामित किया गया है। वस्तुत:, अभियोजन द्वारा इस मामले में इस व्यक्ति अर्थात् दिवाकर गोप का परीक्षण कभी नहीं किया गया था। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि इसी दिवाकर को अ॰ सा॰ 5 द्वारा निर्दिष्ट किया गया था। अ॰ सा॰ 5 के मुताबिक दिवाकर चश्मदीद गवाह है और कि इसी दिवाकर की सूचना पर अ॰ सा॰ 5 को इस अपीलार्थी द्वारा की गयी मृतक की हत्या के बारे में पता चला था। तब अ॰ सा॰ 5 ने अ॰ सा॰ 4 को सूचित किया। इस प्रकार, अभियोजन द्वारा परीक्षण किए गए गवाह अनुश्रुत गवाह हैं और वस्तुत: वास्तविक चश्मदीद गवाह दिवाकर का परीक्षण अभियोजन द्वारा नहीं किया गया है। इस प्रकार, इस मामले का मुख्य गवाह न्यायालय के समक्ष नहीं आया है। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 3 के मुताबिक, जो सूचक है, कोई अर्जुन टमसॉय (अ॰ सा॰ 7) भी चश्मदीद गवाह है किंतु उक्त अर्जुन टमसॉय ने अभियोजन के मामले का समर्थन नहीं किया है और उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है। इस प्रकार, अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध को सिद्ध करने में विफल रहा है।

अपीलार्थी के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अन्वेषण अधिकारी द्वारा बरामद किया गया तथाकथित रक्तरंजित हथियार न्यायालयिक प्रयोगशाला नहीं भेजा गया है और न्यायालयिक प्रयोगशाला से कोई रिपोर्ट सत्र विचारण के अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं की गयी है। न्यायालय के समक्ष इस हथियार को प्रस्तुत नहीं किया गया है। इसी प्रकार से, रक्त रंजित मिट्टी को न तो कोई प्रदर्श संख्या दिया गया है और न ही अन्वेषण अधिकारी द्वारा बरामद इस रक्त रंजित मिट्टी का कोई न्यायालयिक प्रयोगशाला रिपोर्ट है। इस प्रकार, अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने के लिए विचारण न्यायालय के समक्ष तर्कपूर्ण एवं विश्वासोत्पादक साक्ष्य नहीं है। विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है और इसलिए सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि प्राथमिकी दिनांक 28 जुलाई, 1997 की है। उस वर्ष के कैलेंडर को देखते हुए यह सोमवार था। यह दिनांक 31 जुलाई, 1997 को दंडाधिकारी के पास पहुँचा। इस विलंब के संबंध में अन्वेषण अधिकारी (अ॰ सा॰ 6) के अभिसाक्ष्य में उल्लेखनीय स्पष्टीकरण नहीं है। जब कभी दंडाधिकारी को प्राथमिकी भेजने में अस्पष्टीकृत विलंब होता है, झूठा आलिप्त किए जाने का प्रत्येक मौका मिलता है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का भी समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है।

6. हमने राज्य के ए॰ पी॰ पी॰ को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि इस मामले में प्राथमिकी तुरन्त दर्ज की गयी है और इसे दंडाधिकारी को भेजा गया था। मामला चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 पर आधारित है। उन्होंने स्पष्टत: कथन किया है कि उन्होंने अपीलार्थी अभियुक्त को हत्या करने के बाद घटनास्थल से भागते देखा है। विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है। प्राथमिकी के मुताबिक अपीलार्थी–अभियुक्त द्वारा छूरे का 10 जख्म दिया गया था। इस प्रकार, अभियुक्त की आपराधिक मन: स्थिति उपस्थित है और उसे सही प्रकार से मृतक की हत्या करने के लिए दंडित किया गया है। अभियोजन द्वारा प्राथमिकी, मृत्यु समीक्षा पंचनामा भी सिद्ध किया गया है। अ॰ सा॰ 1 डॉक्टर अरुण कुमार ने शव परीक्षण रिपोर्ट सिद्ध किया है जिसमें यह कथन किया गया है कि मृतक के शरीर पर छूरे के अनेक जख्म हैं। इस प्रकार, चाक्षुक एवं चिकित्सीय साक्ष्य एक–दूसरे के साथ संगत है और वे संपुष्टिकारी हैं। अत: इस न्यायालय द्वारा यह अपील ग्रहण नहीं की जा सकती है।

7. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने एवं अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 3 सूचक है जिसने दिनांक 28 जुलाई, 1997 को जिला पश्चिम सिंहभूम में अवस्थित मंझारी पुलिस थाना को लिखित में सूचना दिया है कि जब यह अपीलार्थी और सूचक का भाई खेत में थे, इस अपीलार्थी ने सूचक के भाई पर छूरे की दस उपहतियाँ कारित किया और हल्ला करने पर जब सूचक घटनास्थल पहुँचा, उसने इस अपीलार्थी को हत्या करने के बाद जंगल की ओर भागते देखा और जब वह घटना स्थल पर पहुँचा, उसके भाई की मृत्यु हो गयी थी। इस गवाह ने यह कथन भी किया है कि अन्य सह ग्रामीण भी घटनास्थल पर आए थे और उन्होंने ने भी इस अपीलार्थी को भागते देखा है। इस प्रकार, अभिलेख को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 3 तात्विक गवाह है और उसने प्राथमिकी के मुताबिक घटना देखा है। मुख्य परीक्षण एवं प्रति परीक्षण को नजदीक से देखते हुए, क्योंकि वह मृतक का भाई है, यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 3 ने अपने मुख्य परीक्षण के पैरा 3 में कथन किया कि दिवाकर गोप और अर्जुन टमसॉय भी घटना स्थल पर थे। अर्जुन टमसॉय (अ॰ सा॰ 7) पक्षद्रोही हो गया है। जहाँ तक दिवाकर का संबंध है, पुलिस ने न तो दिवाकर जो चश्मदीद गवाह है का बयान दर्ज किया है और न ही आरोप पत्र में इस दिवाकर को अभियोजन गवाह के रूप में उद्धृत किया गया है। आगे, अ॰ सा॰ 3 के प्रतिपरीक्षण को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उसने अपने प्रति परीक्षण में इसी चश्मदीद गवाह दिवाकर को पुनः निर्दिष्ट किया है और प्रति परीक्षण में यह कथन भी किया गया है कि हल्ला सुनने पर वह दस मिनट के भीतर घटनास्थल पर पहुँचा था। उसने प्रति परीक्षण में आगे कथन किया है कि उसने इस अपीलार्थी को भागते देखा है। इस प्रकार, इस गवाह के प्रति परीक्षण को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उसने इस अपीलार्थी द्वारा की गयी हत्या नहीं देखा है। प्राथमिकी के विवरण में झूठ है कि उसने अपीलार्थी को हत्या करते देखा है। इसके अतिरिक्त, दिवाकर तात्विक गवाह है किंतु अन्वेषण अधिकारी द्वारा उसका बयान न तो दर्ज किया गया है और न ही अभियोजन गवाह के रूप में उसका परीक्षण किया गया है और यह गवाह (अ॰ सा॰ 3) दस मिनट बाद घटनास्थल पर आया था। इस प्रकार, विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष गवाह अ॰ सा॰ 3 के समग्र अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि जब यह गवाह घटना के 10 मिनट बाद घटनास्थल पर पहुँचा था, यह संभव नहीं है कि अभियुक्त तब तक वहाँ उपस्थित रहता और ज्योंही यह गवाह घटनास्थल पर 11वें मिनट पर पहुँचा, अभियुक्त भाग गया। इस अ॰ सा॰ 3 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य सह-पठित अ॰ सा॰ 7 और अ॰ सा॰ 1 के अभिसाक्ष्य का प्रवाह देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 3 चश्मदीद गवाह बिल्कुल नहीं है और उसके अभिसाक्ष्य में तात्विक सुधार एवं तात्विक लोप को देखते हुए वह अविश्वसनीय गवाह है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है।

8. अ॰ सा॰ 4 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उसने मृत्यु समीक्षा पंचनामा (प्रदर्श 4 और प्रदर्श 4/1) और अभिग्रहण सूची (प्रदर्श 4/2 और 4/3) सिद्ध किया है। यह गवाह भी अनुश्रुत गवाह है। अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि उसने अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ सं॰ 1 में कथन किया है कि अ॰ सा॰ 5 धनेश्वर टमसॉय ने इस गवाह (अ॰ सा॰ 4) को सूचित किया है कि अपीलार्थी ने मृतक राजेश चंद्र टमसॉय की हत्या की है। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 4 अनुश्रुत गवाह है और उसने युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा किए गए हत्या का अपराध सिद्ध नहीं किया है। जहाँ तक अभिग्रहण सूची का संबंध है, न तो रक्तरंजित मिट्टी और न ही रक्तरंजित हथियार को प्रदर्श संख्या दी गयी है। इन वस्तुओं को न तो विद्वान विचारण न्यायालय

के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और न ही न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा गया था। आगे, न्ययालयिक प्रयोगशाला रिपोर्ट अभिलेख पर नहीं लाया गया है और इस प्रकार प्रदर्श 4/2 और 4/3 बिल्कुल बेकार हैं। हम अभियोजन मामले का अधिमूल्यन करने में विफल हैं कि इन दो वस्तुओं का सच्चा एवं वास्तविक अभिग्रहण किया गया था क्योंकि यदि ऐसा मामला था, उन्हें न्यायालयिक प्रयोगशाला रिपोर्ट के साथ विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए था।

9. झारखंड राज्य में यदा-कदा इस प्रकार की वस्तुओं को न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजा जाता है और यदा-कदा ऐसी रिपोर्टों का विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है और विरल से विरलतम मामले में मृतक के रक्त समूह का मिलान इस प्रकार की जब्त की गयी वस्तुओं पर पाए गए रक्त समूह के साथ किया जाता है और यह मामला अपवाद नहीं है। पुलिस अधिकारी रुटीन रूप से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में विफल रहे हैं। वे ऐसी वस्तुओं को न्यायालयिक प्रयोगशाला कभी नहीं भेजते हैं और संबंधित रिपोर्टों को अभिलेख पर कभी नहीं लाया जाता है। वक्त आ गया है कि पुलिस प्रशिक्षण केंद्र, हजारीबाग और श्रीकृष्ण लोक प्रशासन संस्थान अन्वेषण अधिकारियों एवं ए॰ पी॰ पी॰ को यह समझाने के लिए समुचित कदम उठाए कि जब्त वस्तुओं का स्वयं अपना महत्व है और इन्हें इस प्रकार का माना जाना चाहिए।

10. अत:, हम निर्देश देते हैं कि पुलिस अधिकारियों एवं ए॰ पी॰ पी॰ दोनों को जब्त वस्तुओं को न्यायालयिक प्रयोगशाला भेजने का महत्व बताने के लिए प्राचार्य, पुलिस प्रशिक्षण केंद्र हजारीबाग और निदेशक, श्रीकृष्ण लोक प्रशासन संस्थान को इस निर्णय की प्रति भेजी जाए। अन्यथा अभिग्रहण सूची तैयार करने का कोई प्रयोजन नहीं है, विशेषत: हत्या मामलों में। अन्वेषण अधिकारियों के आलस्यपूर्ण रवैये पर दृढ़तापूर्वक विचार किया जाना चाहिए। यह प्रतीत होता है कि **गुजरात राज्य बनाम किशनभाई,** 2014 (1) JLJR 428 , मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के मुताबिक राज्य द्वारा अन्वेषण अधिकारियों को नोटिस कभी नहीं जारी किया जाता है जब कभी उनकी ओर से विफलता होती है और इसलिए उन पर सचिव, गृह विभाग एवं पुलिस महानिदेशक द्वारा नोटिस का तामील करना होगा।

11. इस मामले में, हम, एतद् द्वारा सचिव, गृह विभाग, झारखंड सरकार/पुलिस महानिदेशक को संबंधित अन्वेषण अधिकारी पर इस मामले में उसके आलस्यपूर्ण रवैये पर नोटिस तामिल करने का निर्देश मुख्यत: निम्नलिखित बिंदुओं पर देते हैं:-

(i) n0 ç0 l0 dh èkkjk 161 d vèkhu fnokdj xkh dk c;ku D;k ugh nt fd;k x;k FkkA

(ii) fopkj.k U;k;ky; d le{k bl çLrr dju d ç;ktu l ,Q0 ,l0 ,y0 fjkV d fy, tCr oLrvk dk U;k;kyf;d ç;kx'kkyk D;k ugh Hkt k x;k FkkA

(iii) fopkj.k d nkjku fopkj.k U;k;ky; d le{k tCr oLrvk dk çLrr D;k ugh fd;k x;k FkkA

12. जब कभी प्रश्नगत घटना का चश्मदीद गवाह होता है और यदि उसका बयान दर्ज नहीं किया जाता है और अभियोजन गवाह के रूप में उसका परीक्षण नहीं किया जाता है। और जब अनेक अभियोजन गवाह विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष इसी चश्मदीद गवाह को निर्दिष्ट कर रहे हैं, यह अभियोजन मामले के प्रति घातक है यदि इस विशेष चश्मदीद गवाह का परीक्षण नहीं किया जाता है। अत: ऐसी परिस्थितियों में, अन्वेषण अधिकारी को अपने अभिसाक्ष्य में कथन करना होगा कि क्यों और किन परिस्थितियों के अधीन उसने चश्मदीद गवाह का बयान दर्ज नहीं किया है। वर्तमान मामले के तथ्यों में,

अ॰ सा॰ 6 जो मामले का अन्वेषण अधिकारी है, ने स्पष्ट नहीं किया है कि उसके द्वारा दिवाकर गोप का बयान क्यों नहीं दर्ज किया गया है।

13. न्यायालय का कर्तव्य:—चश्मदीद गवाहों, जिन्हें अन्य अभियोजन गवाहों द्वारा निर्दिष्ट किया गया है, पर समन जारी करना विद्वान विचारण न्यायालय का कर्तव्य है। अक्सर, अभियोजन गवाहों ने चश्मदीद गवाह के रूप में किसी दिवाकर गोप को निर्दिष्ट किया है। यह कहना अनावश्यक है कि विचारण न्यायालय की भूमिका मूकदर्शक नहीं है और वर्तमान मामले में इस दिवाकर गोप पर समन जारी करना विचारण न्यायालय का कर्तव्य था भले ही आरोप-पत्र में उसे अभियोजन गवाह के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया गया है। अन्वेषण अधिकारी की ओर से और ए॰ पी॰ पी॰ की ओर से की गयी गलती विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा सुधारी जा सकती थी। न्यायालय को अत्यन्त सावधानी बरतनी होगी कि एक ओर निर्दोष व्यक्ति को दंड नहीं दिया जाय और दूसरी ओर दोषी बच नहीं सके। जब कभी अभियोजन गवाह लगातार चश्मदीद गवाह के रूप में किसी को निर्दिष्ट कर रहे हैं और जब वह हत्या का एकमात्र चश्मदीद गवाह है, इस गवाह का परीक्षण करना विचारण न्यायालय का मुख्य कर्तच्य था।

अब घटना जुलाई, 1997 की है और तब से 17 वर्ष पहले ही बीत चुके हैं, हम उच्च न्यायालय में इस दिवाकर गोप का साक्ष्य दर्ज करने के इच्छुक नहीं हैं यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अधीन इसकी अनुमति है। आगे, इस मामले के चाक्षुक साक्ष्य को विचार में लेते हुए और इस तथ्य को भी देखते हुए कि अपीलार्थी वर्ष 1997 से अभिरक्षा में है, हम चश्मदीद गवाह का साक्ष्य लेने के इच्छुक नहीं है यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन यह अनुज्ञेय है।

14. जैसा ऊपर कथन किया गया है, अ॰ सा॰ 4 के अभिसाक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वह अनुश्रुत गवाह है। उसे अ॰ सा॰ 5 द्वारा घटना के बारे में सूचित किया गया था। अ॰ सा॰ 5 के अभिसाक्ष्य के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि उसने विचारण न्यायालय के समक्ष कथन किया है कि उसे दिवाकर गोप द्वारा सूचित किया गया था कि इस अपीलार्थी ने मृतक की हत्या की है। अत:, अ॰ सा॰ 5 अनुश्रुत गवाह है। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 अनुश्रुत गवाह हैं।

15. अ॰ सा॰ 7 जो अर्जुन टमसॉय है के अभिसाक्ष्य के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि उसने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 7 ने अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध को सिद्ध नहीं किया है।

16. अ॰ सा॰ 6 अन्वेषण अधिकारी है। उसने अपने प्रति परीक्षण में कथन किया है कि जब्त वस्तुओं को न्यायालयिक प्रयोगशाला कभी नहीं भेजा गया था। उसने प्राथमिकी, मृत्यु समीक्षा पंचनामा सिद्ध किया है। अ॰ सा॰ 1 जो डॉ॰ अरुण कुमार है के अभिसाक्ष्य को देखते हुए निम्नलिखित शव पूर्व उपहतियां थी:—

"1. Nj dk t[e&1½" x 1/2"–l[;k e ikp] iV d Åij(Nkrh d vkrfjd Hkkx e l[;k e nk] ,d ck, fgLl vkj nljk nk, fgLl ijA

2. Nj dk ,d t[e&1½" x 1/2" x vfLFk rd xgjk] nk;h tk?k d Åij

3. Nj dk ,d t[e&1½" x 1/2" x vfLFk rd xgjk] nk;h tk?k d Åij

4. Nj dk ,d t[e&2" x1/2" x vfLFk rd xgjk ck;h tk?k d Åij

अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिए गए साक्ष्य के परिशीलन पर यह स्पष्ट है कि मृतक के शरीर के ऊपर छूरे के जख्म हैं। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि घटना दिनांक 28 जुलाई, 1997 की है। शव परीक्षण दिनांक 29 जुलाई, 1997 को किया गया था। न्यायिक दंडाधिकारी को प्राथमिकी की प्रति 31 जुलाई, 1997 को भेजी गयी थी। इस प्रकार, शव परीक्षण रिपोर्ट पाने के बाद प्राथमिकी की प्रति

न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी को भेजी गयी थी जैसा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 157 के अधीन आवश्यक है और यह प्राथमिकी काफी विलंबित चरण पर भेजी गयी थी और मामले के इस पहलू के संबंध में अपने अभिसाक्ष्य में अन्वेषण अधिकारी द्वारा कोई उल्लेखनीय स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है।

17. इस प्रकार, अभिलेख पर मौजूद समस्त साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध को सिद्ध करने में विफल रहा है क्योंकि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के निम्नलिखित पहलूओं का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है:–

(a) v0 lk0 3 vfo'oluh; rFkk xj Hkjklen xokg gA

(b) v0 lk0 4 vkj v0 lk0 5 vuJr xokg gA

(c) fnokdj xki] ftl vU; xokgk }kjk ?kVuk d okLrfod p'enhn xokg d :i e fufn"V fd;k x;k Fkk] dk ijh{k.k vfHk;ktu }kjk ugh fd;k x;k gA

(d) v0 lk0 7 i{knkgh gk x;k gA

(e) tCr oLrvk dh U;k;kyf;d ç;kx'kkyk fjikV fopkj.k U;k;ky; d le{k çLrr ugh dh x;h FkhA

(f) vUo"k.k vfèkdkjh v0 lk0 6u viu vfHklk{; e tCr oLrvk dh ,Q0 ,l0 ,y0 dh fjikV çLrr ugh dju] iokDr fnokdj xki d xj ijh{k.k d lcèk e vkj U;kf;d nMkfèkdkjh] çFke J.kh dk foyc l çkFkfedh Hktu d ckj e Li"Vhdj.k ugh fn;k gA

18. ऊपर चर्चा किए गए अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के समेकित प्रभाव के कारण यह प्रतीत होता है कि अभियोजन इस अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए हत्या के आरोप को युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में विफल रहा है।

19. ऊपर चर्चा किए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों में, यह दांडिक अपील अनुज्ञात की जाती है और सत्र विचारण सं॰ 49 वर्ष 1998 में श्री बी॰ एन॰ पांडे, सत्र न्यायाधीश, चाईबासा, पश्चिम सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 21 जनवरी, 2003 का दोषसिद्धि का निर्णय और दिनांक 22 जनवरी, 2003 का दंडादेश अभिखंडित और अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। अत:, इस अपीलार्थी अर्थात् अंटू गोप जो दिनांक 2 अगस्त, 1997 से न्यायिक अभिरक्षा में है को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

जय प्रकाश महतो

cuke

विधान लखियार

First Appeal No. 23 of 2013. Decided on 30th July, 2014.

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963—धारा 12—संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882—धारा 41—करार का विनिर्दिष्ट पालन–यदि प्रतिवादी ने संपत्ति जिस पर उसका स्वामित्व नहीं है बेचने के लिए करार किया है, उसे ऐसी संपत्ति के विरुद्ध विक्रय विलेख रजिस्टर और

निष्पादित करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है–प्रतिवादी ने कभी ऐसा घोषणा नहीं किया कि वह संपत्ति का संपूर्ण स्वामी है और उसे इसको बेचने का प्राधिकार है–प्रतिवाद द्रश्यमान स्वामी की कोटि में नहीं आता है और विवंध का नियम लागू नहीं होगा–अपीलार्थी-प्रतिवादी द्वारा निष्पादित करार प्रवर्तित नहीं किया जा सकता है–अपीलार्थी को 6% ब्याज के साथ राशि वापस करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 12 से 15)

निर्णयज विधि.–(2011)11 SCC 153—Distinguished; (2007)2 SCC 404; AIR 1975 Rajasthan 1969; AIR 1987 Delhi 194, AIR 1988 Pat 147—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s A.K. Das, Chandrajit Mukherjee, For the Appellant; M/s Rahul Gupta, Niyati Sah, For the Respondent.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–यह अपील अभिधान वाद सं॰ 220 वर्ष 2010 के संबंध में उप-न्यायाधीश II, राँची द्वारा पारित दिनांक 16.1.2012 के निर्णय और दिनांक 3.2.2012 को हस्ताक्षरित डिक्री के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा दिनांक 30.8.2007 के करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वादी/प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल वाद डिक्री किया गया है और अपीलार्थी/प्रतिवादी को डिक्री तैयार किए जाने की तिथि से साठ दिनों के भीतर शेष प्रतिफल लेने के बाद वाद भूमि के संबंध में वादी/प्रत्यर्थी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर करने का निर्देश दिया गया है और वादी विक्रय विलेख के निष्पादन एवं रजिस्ट्रेशन में उपगत समस्त व्यय वहन करेगा।

2. वादी ने वाद पत्र में मामला बनाया है कि गाँव पुंडग, पी॰ एस॰ राँची (अब जगरनाथपुर), जिला राँची में अवस्थित 1.92 एकड़ क्षेत्रफल मापवाली आर॰ एस॰ खाता सं॰ 308, भूखंड सं॰ 540 के अधीन दर्ज भूमि प्रतिवादी एवं अन्य सह-अंशधारियों की पैतृक संपत्ति है। भूमि लंगड़ा तेली के नाम में दर्ज की गयी थी जिसकी मृत्यु अपने पीछे अपने दो पुत्रों अर्थात् जीतवहन तेली एवं इंदर तेली को अपने विधिक उत्तराधिकारियों एवं उत्तरजीवियों के रूप में छोड़कर हो गयी और जिन्होंने लंगड़ा तेली की मृत्यु के बाद संपत्ति वसीयत में पाया। तत्पश्चात् दोनों भाईयों जीतबहन तेली एवं इंदर तेली ने मित्रतापूर्वक संपत्ति का बँटवारा कर लिया और अपने-अपने परस्पर हिस्से में आयी भूमि पर कब्जा अर्जित किया।

आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि जीतबहन तेली और इंदर तेली के विधिक उत्तराधिकारियों ने भी अपने बीच संपत्ति का बँटवारा कर लिया और उन्होंने अपने पक्ष में आवंटित भूमि के परस्पर हिस्सों को अर्जित किया। भूमि के अपने परस्पर हिस्सों पर काबिज होने के बाद उन्होंने विभिन्न खरीदारों को बहुमूल्य प्रतिफल के लिए अचल संपत्ति भी बेचा था और किसी अन्य सह-अंशधारियों द्वारा यह आपत्ति नहीं की गयी थी। यह दर्शाने के लिए कि जीतबहन तेली एवं इंदर तेली के विधिक उत्तराधिकारियों ने विभिन्न खरीदारों को भूमि का अपना परस्पर हिस्सा बेचा, वादी ने वादपत्र में परस्पर विक्रय विलेखों का विवरण दिया है। उस संदर्भ में आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि प्रतिवादी जो सह-अंशधारी लखन साहू का पुत्र है ने दिनांक 24.6.2004 को श्रीमती जयमती देवी, पत्नी अशोक कुमार कश्यप के पक्ष में पाँच कट्ठा माप वाले आर॰ एस॰ खाता सं॰ 65 के अधीन भूखंड सं॰ 1039 का भाग, भूमि के टुकड़ा के लिए विक्रय विलेख निष्पादित किया था। उक्त विक्रय विलेख के परिवर्णन में यह उपदर्शित किया गया था कि प्रतिवादी का पिता लखन साहू शारीरिक रूप से कमजोर और बीमार व्यक्ति है और उसने अपने पुत्र प्रतिवादी को संपत्ति का देखभाल न्यस्त किया और वह यदि आवश्यक हो परिवार के कल्याण के लिए इसे बेच सकता है।

प्रतिवादी ने वादी को आश्वस्त किया कि उसके पिता के हिस्सा में आवंटित संपत्ति बेचने के लिए उसके पिता द्वारा उसे प्राधिकृत किया गया है और गाँव पुंडग में लगभग 10 डिसमिल माप वाले आर॰

एस॰ खाता सं॰ 308, भूखंड सं॰ 540 के अधीन भूमि के विरुद्ध 50,000/- रु॰ प्रति डिसमिल की दर पर दिनांक 23.8.2007 को वादी के पक्ष में विक्रय का करार निष्पादित किया और चेक सं॰ 952304/83400 2010 एस॰ बी॰ आई॰, अशोक नगर शाखा के माध्यम से पाँच लाख रुपयों की कुल राशि के विरुद्ध 50,000/- रुपया अग्रिम के रूप में प्राप्त किया। विवादित भूमि को अधिक पूर्णरूप से वादपत्र की अनुसूची में वर्णित किया गया है। अपीलार्थी/प्रतिवादी ने आगे दिनांक 15.9.2007 को एस॰ बी॰ आई॰, अशोक नगर शाखा के चेक सं॰ 952505/8340020 के माध्यम से 6000/- रुपया और एस॰ बी॰ आई॰ शाखा, राँची के चेक सं॰ 952500 के माध्यम से 1000/- रुपया प्राप्त किया और करार के पृष्ठ भाग पर इसकी रसीद अभिस्वीकृत की गयी है। इस प्रकार, प्रतिवादी को कुल 66,000/- रुपयों की राशि का भुगतान किया गया था।

वादी सदैव शेष प्रतिफल राशि के भुगतान पर वाद संपत्ति खरीदने के लिए तैयार एवं इच्छुक था और उसने प्रतिवादी को शेष प्रतिफल राशि का प्रस्ताव भी दिया था किंतु झूठे बहाने पर प्रतिवादी विक्रय विलेख के निष्पादन एवं रजिस्ट्रेशन से बचता रहा।

तत्पश्चात, वादी ने प्रतिवादी पर दिनांक 17.11.2008 और दिनांक 20.12.2008 के रजिस्टर्ड पोस्ट ए॰/डी॰ के साथ के अधीन अधिवक्ता के माध्यम से नोटिस तामील किया था। जब प्रतिवादी करार के अधीन बाध्यता के अपने भाग का पालन करने में विफल रहा दिनांक 23.8.2007 के करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद संस्थित करने के अलावा वादी के पास कोई विकल्प नहीं था।

3. वाद हेतुक दिनांक 23.8.2007 जब करार निष्पादित किया गया था और पश्चातवर्ती तिथियों जब प्रतिवादी से विक्रय विलेख निष्पादित करने का अनुरोध करते हुए नोटिसों को तामील किया गया था, को उद्भूत हुआ। वादपत्र के आधार पर उप न्यायाधीश I के न्यायालय, राँची में अभिधान वाद सं॰ 220/2010 दर्ज किया गया था।

4. प्रतिवादी नोटिस तामील किए जाने के बाद विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ और लिखित कथन दाखिल किया किंतु लिखित कथन में किए गए प्रतिवाद के समर्थन में साक्ष्य नहीं दिया था। अत: इसे उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है।

5. अभिवचनों के आधार पर विद्वान उप-न्यायाधीश ने निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया:–

I. D;k okn tSlk fojfpr fd;k x;k g ikS"k.kh; gS

II. D;k oknh dks ikl okn dk fy, oèk okn grq gS

III. D;k okn vfèkR;tu] miefr ,oa fooèk ds fl)kar }kjk ofTkZr gS

IV. D;k okn ifjlhek dh fofèk ,oa çfrdwy dCtk }kjk ofTkZr gS

V. D;k okn fofufn"V vuqrks"k vfèkfu;e dh èkkjkvksa 12, 16 vkSj 20 ds çkoèkkuksa }kjk ofTkZr gS

VI. D;k çfroknh ds firk ,oa vU; lg&v'kèkkfj;ksa us viuk iSr`d Hkkfe dk cVokjk fd;k gS vkSj rnuqlkj ÑR; fd;k vkSj vkx Hkh ;gh fd;k gS

VII. D;k çfroknh us viuk firk y[kuq egrks ds çkfèkdkj ds vèkhu vkSj mlds lgefr ls fnukad 23.8.2007 dk djkj fu"ikfnr fd;k vkSj blls çdkj ;g fofèk ds vèkhu çorZuh; gS

VIII. D;k çfroknh us bl djkj ds igys Hkh viuk firk dh vkj ls foØ; foys[kk ,oa nLrkostk dk fu"ikfnr fd;k gS D;kfd mlds firk cheka gkus ds dkj.k Lo; lifÙk dk çcèk dju dh voLFkk e ugh gS

IX. D;k oknh lfonk d viu Hkkx dk ikyu dju d fy, r;kj vkj bPNd g vkj bl lcèk e oknh u çfroknh ij viu vfèkoDrk d ekè;e l fnukd 17.11.2008 vkj fnukd 20.12.2008 dk ukfVl rkehy fd;kA

X. fdu vurk"k vFkok vurk"kk dk oknh gdnkj g

वादी/प्रत्यर्थी ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए स्वयं सहित तीन गवाहों का परीक्षण किया है।

अंत में, विद्वान उप न्यायाधीश ने वादी के पक्ष में वाद डिक्री किया है और प्रतिवादी को वाद संपत्ति के संबंध में शेष राशि के भुगतान पर वादी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित करने का निर्देश दिया है। अत: यह अपील की गयी है।

6. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निष्पक्षत: स्वीकार किया है कि अपीलार्थी लिखित कथन में किए गए प्रतिवाद के समर्थन में साक्ष्य देने में विफल रहा है कि वादी द्वारा प्रस्तुत गवाहों का परीक्षण किया गया था। प्रतिवादी को अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर वादी का मामला भंजित करने का प्रत्येक अधिकार है भले ही उसने लिखित कथन में अपने द्वारा किए गए प्रतिवाद के समर्थन में किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया था।

तब अपीलार्थी ने आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री का इस आधार पर विरोध किया है कि वाद संपत्ति प्रतिवादी की पैतृक संपत्ति है और यह तथ्य वाद संपत्ति खरीदने के लिए करार करने के पहले पूरी तरह से वादी की जानकारी में था। वादपत्र में स्वीकार किया गया है कि वाद संपत्ति लंगड़ा तेली (प्रतिवादी का पूर्वज) के नाम में दर्ज गाँव पंडुग, पी॰ एस॰ राँची (अब जगरनाथपुर) जिला राँची में अवस्थित 1.92 एकड़ कुल क्षेत्रफल मापवाले आर॰ एस॰ खाता सं॰ 308 भूखंड सं॰ 540 के अधीन दर्ज भूमि का हिस्सा है। वादी ने आगे स्वीकार किया है कि वाद संपत्ति लखन महतो (प्रतिवादी का पिता) के हिस्सा में आवंटित की गयी है।

वादी का आगे स्वीकृत मामला यह है कि प्रतिवादी वाद संपत्ति का संपूर्ण स्वामी नहीं है और उसने ऐसा बहाना कभी नहीं किया। वादी ने प्रकथनों को करते हुए मामला बनाया है कि लखन महतो (प्रतिवादी का पिता) वृद्ध बीमार व्यक्ति है और अपना दैनिक कर्म करने में भी अक्षम है और इसलिए उसने अपने पुत्र जय प्रकाश महतो (प्रतिवादी) को संपत्ति देखभाल एवं व्यवस्था करने के लिए प्राधिकृत किया है। किंतु ऐसा कोई प्राधिकृतकरण अथवा मुख्तारनामा, जिसके द्वारा लखन महतो ने अपने हिस्सा में आवंटित संपत्ति बेचने के लिए अपने पुत्र जय प्रकाश महतो (प्रतिवादी) को प्राधिकृत किया है, करार करने के पहले अथवा बाद में प्रस्तुत नहीं किया गया है। वादी ने उससे यह तथ्य सत्यापित करने के लिए लखन महतो से बात करने का परवाह कभी नहीं किया कि क्या उसने अपने पुत्र जय प्रकाश महतो को संपत्ति बेचने के लिए प्राधिकृत किया है या नहीं। यह पूरी तरह से वादी की जानकारी में था कि वाद संपत्ति का स्वामी लखन महतो है किंतु उसने भूमि के अभिकथित विक्रय के विरुद्ध लखन महतो के पक्ष में अग्रिम भुगतान हेतु चेक नहीं लिखा था। समय के किसी बिंदु पर, वाद दाखिल करने के पहले भी, उसने यह जानने के लिए लखन महतो से संपर्क नहीं किया कि क्या उसने वाद संपत्ति बेचने के लिए अपने पुत्र को अपनी सहमति दी थी।

7. आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि भले ही वाद संपत्ति में प्रतिवादी के हित को इस सीमा तक खींचा जाता है कि वह भी पैतृक संपत्ति में सह–अंशधारी है और वह संपत्ति में अपना हिस्सा बेचने के लिए सहमत हुआ था, तब ऐसा प्रतिवाद कि प्रतिवादी संपत्ति में अपना हिस्सा बेचने जा रहा है, करार में प्रकट किया जाना था जो पूर्णत: अनुपस्थित है। अत:, लाखन महतो के स्वामित्व वाली संपत्ति उसके

जीवनकाल के दौरान उसके पुत्र जय प्रकाश महतो द्वारा समुचित प्राधिकृतकरण अथवा मुख्तारनामा के बिना नहीं बेची जा सकती है। यदि प्रतिवादी ने संपत्ति, जिसका स्वामी वह नहीं हैं, बेचने के लिए करार किया है, उसे ऐसी संपत्ति के विरुद्ध विक्रय विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है और, इसलिए, विद्वान उपन्यायाधीश का निष्कर्ष विधि की गलत धारणा पर आधारित अत्यन्त गलत है। यह संपत्ति बेचने के लिए सहमत होने वाले दृश्यमान स्वामी का मामला नहीं है।

अपीलार्थी ने आगे आधार लिया है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर दस्तावेज नहीं लाया गया है कि लंगड़ा तेली के नाम में खड़ी पैतृक संपत्ति का बँटवारा माप एवं सीमांकन करके सह-अंशधारियों के बीच कर दिया गया है और वे भूमि के अपने परस्पर हिस्सों पर शांतिपूर्ण कब्जा का उपभोग कर रहे हैं।

वादी ने विभिन्न सह-अंशधारियों द्वारा भूमि जिस पर वे काबिज थे और अधिभोग में थे के संबंध में निष्पादित कतिपय विक्रय विलेखों को प्रदर्शित करके इन्हें अभिलेख पर लाने का प्रयास किया है। उन विक्रय विलेखों में परिवर्णन है कि लंगड़ा तेली की संपत्तियों का बँटवारा उसकी संततियों के बीच कर दिया गया है किंतु विक्रय विलेख के परिवर्णन में सामने आने वाली यह घोषणा यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि पैतृक संपत्ति के संबंध में सह-अंशधारियों के बीच बँटवारा माप एवं सीमांकन करके किया गया है। लंगड़ा तेली की कोई संतति इस तथ्य का समर्थन करने के लिए आगे नहीं आया है।

8. विद्वान अधिवक्ता ने **(2011)11 SCC 153** (पैरा 18) में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों एवं साक्ष्य से पुत्र (प्रतिवादी) के पक्ष में पिता द्वारा दिया गया कोई अभिव्यक्ति अथवा विवक्षित प्राधिकार नहीं है। आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री विधि के भ्रम पर आधारित है, अत्यन्त गलत है, और अपास्त किए जाने की दायी है।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्रतिवादी ने लिखित कथन दाखिल करने के बाद वाद त्याग दिया और कार्यवाही में भाग नहीं लिया। लिखित कथन में किए गए प्रतिवाद के समर्थन में उसकी ओर से किसी गवाह का परीक्षण नहीं किया गया है और, इसलिए, उसके आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री को चुनौती देने के लिए कोई आधार नहीं है। यह अपील गुणागुण रहित है और खारिज किए जाने की दायी है।

यह प्रतिवाद किया गया था कि लंगड़ा तेली प्रतिवादी का सामान्य पूर्वज था। विभिन्न गाँवों में वाद संपत्ति एवं अन्य संपत्ति का स्वामी उक्त लंगड़ा तेली था और ये उसके अधिभोग में थी जिसकी मृत्यु अपने पीछे अपने दो पुत्रों अर्थात् जीतनबहन तेली एवं इंदर तेली को छोड़ कर हो गयी। संपत्ति जिसका स्वामी लंगड़ा तेली था और जो उसके अधिभोग में थी और जिसे उसके उक्त नामित दोनों पुत्रों जीतबहन तेली एवं इंदर तेली ने विरासत में पाया था, उन्होंने अपने ऊपर न्यागत संपत्तियों का मित्रतापूर्वक बँटवारा कर लिया था और वे भूमि के अपने परस्पर आवंटित हिस्से पर काबिज थे और अधिकार, अभिधान एवं हित का उपभोग कर रहे थे। जीतबहन तेली एवं इंदर तेली की संततियों ने भी संपत्ति विरासत में पाया और उस पंक्ति में लखन साहू एवं उसके तीन भाईयों, इंदर तेली के पुत्र ने संपत्तियों को विरासत में पाया था जो उनके पिता इंदर तेली के हिस्सा में आयी थी। पूर्वोक्त चार भाईयों ने भी मित्रतापूर्वक संपत्तियों का बँटवारा कर लिया जो उनके पिता के हिस्सा में आयी थी और वे तद्नुसार इसके ऊपर अपने अधिकार, अभिधान एवं कब्जा का उपभोग कर रहे थे। लखन साहू प्रतिवादी का पिता है और वह शारीरिक रूप से कमजोर एवं संपत्ति की देखभाल करने में अक्षम है और इसलिए, प्रतिवादी जो पुत्र है को संपत्ति की देखभाल एवं प्रबंध करने और उसकी ओर से समस्त विधिक कार्यों एवं चीजों को करने के लिए प्राधिकृत किया गया है। ऐसे प्रतिवाद के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर प्रदर्शों 3, 3a, 3b और 3c को लाया है कि लंगड़ा तेली की संपत्तियों का बँटवारा सह-अंशधारियों के बीच कर

लिया गया है और परस्पर संततियों ने विभिन्न खरीदारों को अपना परस्पर हिस्सा बेचा था। सह-अंशधारियों के बीच हुआ बँटवारा पूर्वोक्त विक्रय विलेख के परिवर्णन से प्रकट है।

10. विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान प्रदर्श 3a की ओर यह दर्शाने के लिए आकृष्ट किया है कि अपीलार्थी/प्रतिवादी ने गाँव तेतर टांड़ के अंतर्गत खाता सं॰ 65 में दर्ज भूखंड सं॰ 1039 के अंश, 9 डिसमिल माप वाले भूमि क्षेत्र के संबंध में श्रीमती जयमती देवी के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया था। परिवर्णन में प्रकट किया गया था कि अपीलार्थी-प्रतिवादी लखन महतो का पुत्र है तथा वह अपने माता तथा पिता की देखभाल करने के उत्तरदायित्वों का निर्वहन कर रहा था जो शारीरिक रूप से कमजोर तथा बीमार व्यक्ति थे। पूर्वोक्त दस्तावेजों (प्रदर्श 3 श्रृंखला) को निर्दिष्ट करके यह प्रतिवाद किया गया था कि वादी किए गये प्रकथनों तथा प्रतिवादी द्वारा दर्शाये गये दस्तावेजों से संतुष्ट होकर वाद संपत्ति खरीदने पर सहमत हुआ था और इसे प्रभाव देने के लिए पक्षों द्वारा और उनके बीच पूर्वोक्त विक्रय करार (प्रदर्श 4) निष्पादित किया गया था। जब प्रतिवादी ने स्वयं का वाद संपत्ति के विक्रय का पूर्ण प्राधिकार रखने वाले के रूप में दिखाया, वादी इसे खरीदने के लिए सहमत हुआ और 66,000/- रुपयों की सीमा तक अग्रिम का भुगतान किया। वादी सदैव अपने पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर्ड करवाने का इच्छुक था और अपना आशय दर्शाने के लिए उसने प्रतिवादी से शेष प्रतिफल राशि प्राप्त करने एवं विक्रय विलेख निष्पादित करने का अनुरोध किया था किंतु वह वादा पूरा करने से बचता रहा और करार (प्रदर्श 4) के अधीन बाध्यता के अपने भाग का पालन करने में विफल रहा। वादी ने विभिन्न अवसरों पर नोटिस भी तामील किया था और पूर्वोक्त नोटिसों की प्रति को प्रदर्श 1 एवं 1/a तथा डाक रसीद (प्रदर्श 2) के रूप में चिन्हित किया गया था। जब प्रतिवादी विक्रय विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर्ड करने में विफल रहा, वादी के पास वर्तमान वाद दाखिल करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। वादी सहित तीन गवाहों का परीक्षण करके वाद पत्र में किए गए प्रतिवाद को सिद्ध किया गया है।

11. विद्वान अधिवक्ता ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 115 को निर्दिष्ट किया और निवेदन किया कि प्रतिवादी उस घोषणा से बच नहीं सकता है जिसे उसने वादी के समक्ष किया था। वह यह अभिवचन नहीं कर सकता है कि संपत्ति उसके पिता की है और उसे वाद संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। उसने करार (प्रदर्श 4) में घोषणा किया है कि उसे उसके पिता द्वारा संपत्ति की देखभाल एवं प्रबंध करने के लिए प्राधिकृत किया गया है और वह परिवार के कल्याण के लिए इसको बेचने के लिए प्राधिकृत है। वादी ने स्वयं को प्रदर्श 3a से आश्वस्त किया जिसने प्रतिवादी द्वारा की गयी पूर्वोक्त घोषणा को अनुमोदित किया। अत:, वर्तमान मामले में विवंध का नियम लागू होगा।

विद्वान अधिवक्ता ने संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 41 को निर्दिष्ट किया है और **(2007)2 SCC 404 [हरदेव सिंह बनाम गुरमेल सिंह]** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है। आगे प्रतिवाद यह था कि वाद संपत्ति के विरुद्ध विक्रय के लिए करार निष्पादित करने के बाद प्रतिवादी यह अभिवचन नहीं कर सकता है कि वह संपत्ति का संपूर्ण स्वामी नहीं है और इसे बेचने के लिए प्राधिकृत नहीं है। वह संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के मामले में त्रुटिपूर्ण अभिधान का अभिवचन नहीं कर सकता है। एक अन्य अभिवचन कि वाद संपत्ति पैतृक संपत्ति है जिसमें अन्य सह-अंशधारियों का अधिकार है, आधार नहीं होगा। इस संदर्भ में **AIR 1975 Rajasthan 1969 [दीनानाथ बनाम चुनीलाल]** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया गया है।

विद्वान अधिवक्ता ने आगे **AIR 1987 Delhi 194 [श्रीमती चांद रानी मेहरा एवं अन्य बनाम ओम शंकर मेहरा]** और **AIR 1988 Pat 147 [प्रदीप नारायण सिंह एवं अन्य बनाम बृजनंदन सिंह एवं अन्य]** में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया है।

उद्धृत किए गए निर्णयों की दृष्टि में यह निवेदन किया गया था कि अपील गुणागुण रहित है और यह खारिज किए जाने की दायी है।

12. दोनों पक्षों को सुनने पर और आक्षेपित निर्णय, प्रदर्शित दस्तावेजों एवं अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का परिशीलन करने के बाद यह प्रतीत होता है कि वादी ने मामला बनाया है कि प्रतिवादी जय प्रकाश महतो ने उसको आश्वस्त किया था कि उसके पास उस संपत्ति को बेचने का प्राधिकार है जो सह अंशधारियों के बीच परस्पर बँटवारा के बाद उसके पिता द्वारा अर्जित की गयी है। यह तर्क किया गया था कि प्रतिवादी ने प्रकट किया था कि उसका पिता वृद्ध एवं बीमार व्यक्ति है और दैनिक घरेलू कामों को करने में अक्षम है, अत: परिवार के कल्याण के लिए संपत्ति की देखभाल करने एवं इसका प्रबंध करने के लिए उसे प्राधिकार दिया गया है। प्रदर्श 3a, जिसके द्वारा प्रतिवादी ने गाँव तेतर टांड, भूमि की प्रकृति टांड़ 2.9 डिसमिल माप वाले क्षेत्र खाता सं॰ 65, भूखंड सं॰ 1039 से संबंधित संपत्ति श्रीमती जयमती देवी को बेचा था और अपने पिता की ओर से प्रतिवादी द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था जो उसके हिस्सा में आया था, को निर्दिष्ट करके प्रतिवाद किया गया था।

वादी ने अन्य विक्रय विलेखों पर भी विश्वास किया है जिन्हें प्रदर्श 3 श्रृंखला के अधीन चिन्हित किया गया है, यह उपदर्शित करते हुए कि अन्य सह अंशधारियों ने भी विभिन्न खरीदारों को संपत्ति बेचा था।

तर्क के क्रम में साक्ष्य अधिनियम की धारा 115 एवं संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 41 निर्दिष्ट की गयी है।

13. अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों से यह अत्यन्त स्पष्ट है कि प्रतिवादी ने ऐसी कोई घोषणा कभी नहीं किया कि वह संपत्ति का संपूर्ण स्वामी है और उसे इसको बेचने का प्राधिकार है। प्रदर्श 4 करार है जिसके लिए करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद दाखिल किया गया है। उक्त करार के परिवर्णन से यह प्रतीत होता है कि प्रतिवादी ने कथन किया था कि वह अपने पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों की सहमति से भूमि का 10 डिसमिल बेचने का आशय रखता है। यह भी प्रतीत हो रहा है कि संपत्ति जो वाद का विषय वस्तु है प्रतिवादी के पिता लखन साहू के हिस्सा में आयी थी और लखन साहू जीवित है।

प्रदर्श 4 में किया गया प्रतिवाद प्रतिवादी को दृश्यमान स्वामी की कोटि में नहीं लाता है जैसा संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 41 में परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"41. **n';eku Lokeh }kjk vrj.k-&** tgk fd ;Fkkoj lifÙk e fgrc) O;fDr ;k dh vfHkO;Dr ;k foof{kr lEefr l dkbZ O;fDr ,lh lEifÙk dk n';eku Lokeh g vkj ml çfrQykFk vUrfjr djrk g] ogk vrj.k bl vkèkkj ij 'kU;dj.kh; ugh gkxk fd vrjd olk dju d fy, çkfèkÑr ugh Fkk]*
>
> *ijUr ;g rc tc fd vUrfjrh u ;g vfHkfuf'pr dju d fy, fd vUrjd vrj.k dju dh 'kfDr j[krk Fkk] ;fDr;Dr lkoèkkuh cjru d i'pkr lnHkkoiod dk; fd;k gkA*
>
> *lifÙk vrj.k vfèkfu;e dh èkkjk 41 d vo;o g%&*
>
> *(i) vrjd n';eku Lokeh g(*
>
> *(ii) og okLrfod Lokeh dh lgefr] vfHkO;Dr vFkok foof{kr] }kjk ,lk g(*
>
> *(iii) vrj.k çfrQy d fy, g(*
>
> *(iv) vrfjrh u lnfo'okl e ;g vfHkfuf'pr dju dh ;fDr;Dr lkoèkkuh cjrr g, fd vrjd dk vrj.k dh 'kfDr Fkh ÑR; fd;k gA*

स्वीकृत रूप से, प्रतिवादी ने स्वयं को संपत्ति के स्वामी के रूप में कभी नहीं प्रस्तुत किया और यह अच्छी तरह से प्रकट किया गया था कि उक्त संपत्ति का स्वामी एवं अधिभोगी उसका पिता है जो परस्पर बँटवारा के बाद उसके हिस्सा में आयी थी। लखन साहू (प्रतिवादी का पिता) द्वारा निष्पादित प्राधिकार पत्र अथवा मुख्तारनामा वादी को कभी नहीं दिखाया गया था। प्रदर्श 3a के परिवर्णन ने प्रकट नहीं किया था कि लखन साहू ने प्रतिवादी जय प्रकाश (पुत्र) को संपत्ति बेचने के लिए प्राधिकृत किया था। धारा 41 के अवयव 2 और 4 अत्यन्त ही महत्वपूर्ण हैं। यदि क्रेता ने पूर्वोक्त अवयवों को ध्यान में नहीं लिया था, वह संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 41 की मदद नहीं ले सकता है। वादी ने प्रतिवादी पर तामील नोटिसों की प्रति भी सिद्ध किया है जिन्हें प्रदर्श 1 और 1/a के रूप में चिन्हित किया गया है।

प्रदर्श 1 प्रतिवादी जय प्रकाश महतो को भेजी गयी नोटिस की प्रति है जिसके द्वारा वादी ने प्रतिवादी को शेष प्रतिफल राशि प्राप्त करने के लिए और वाद संपत्ति के संबंध में विलेख निष्पादित एवं रजिस्टर करने के लिए अनुरोध किया था।

प्रदर्श 1/a वादी की ओर से अधिवक्ता बृज मोहन सिंह यादव द्वारा अधिवक्ता श्री एस॰ तंबोली को भेजा गया उत्तर प्रतीत होता है। प्रदर्श 1/a का प्रतिवाद उस उत्तर के बारे में कहता है, जिसे वादी के अधिवक्ता ने प्रतिवादी के अधिवक्ता को दिया था। प्रदर्श 1/a का पैराग्राफ 1 यह चित्र देता है कि लखन लाल महतो (प्रतिवादी का पिता) ने अपने द्वारा प्राप्त की गयी नोटिस का उत्तर दिया गया था और उक्त लखन लाल महतो ने अपनी सहमति एवं प्राधिकार से अपने पुत्र जय प्रकाश द्वारा विक्रय के किसी करार के निष्पादन से इनकार किया है।

14. वादी ने अभिलेख पर ऐसा कोई उत्तर नहीं लाया है यदि इसे लखन लाल महतो द्वारा वादी अथवा उसके अधिवक्ता को भेजा गया था। वादी ने वाद पत्र में इस तथ्य को छुपाया है कि विक्रय के करार का निष्पादन लखन लाल महतो के ध्यान में लाया गया था और उस पर भी नोटिस का तामील किया गया था और जिसका उत्तर उसने दिया था। यह उल्लेख करना अनावश्यक नहीं होगा कि लखन लाल महतो जो उक्त संपत्ति का स्वामी है को वादी द्वारा दाखिल वाद का पक्ष नहीं बनाया गया है। यह दर्शाता है कि वादी ने कुछ तथ्यों को छुपाया है और उसने समुचित तरीके से वादपत्र प्रस्तुत नहीं किया है। यह भी प्रकट है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 41 की आवश्यकता प्रतिवादी को दृश्यमान स्वामी की कोटि में रखने के लिए तर्क करने के पहले परिपूर्ण नहीं की गयी है।

ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं नहीं पाता हूँ कि वह दृश्यमान स्वामी की कोटि में स्वयं को रखकर प्रतिवादी द्वारा निष्पादित करार का मामला नहीं है। यदि यह विचार किया जाता है कि प्रतिवादी ने संपत्ति का स्वामी होने का बहाना करते हुए करार निष्पादित नहीं किया था, विवंध का नियम लागू नहीं होगा।

15. उद्धृत निर्णयों में उपदर्शित तथ्य एवं परिस्थितियाँ वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों से बिल्कुल सुभिन्न हैं और इसलिए मैं नहीं समझता हूँ कि उद्धृत निर्णय अपीलार्थी/प्रतिवादी के मददगार हैं। अपीलार्थी/प्रतिवादी द्वारा निष्पादित करार प्रवर्तित नहीं किया जा सकता है और इसलिए, द्वितीय विकल्प पर विचार करने की आवश्यकता है। स्वीकृत रूप से, प्रतिवादी ने लिखित कथन दाखिल करने के बाद उसमें किए गए प्रतिवाद के समर्थन में साक्ष्य नहीं दिया था और इसलिए, प्रतिवादी अपने पक्ष में मामला बनाने में विफल रहा है। उसका इनकार कि उसने उक्त करार निष्पादित नहीं किया था और उसने 66,000/- रुपयों की सीमा तक अग्रिम प्राप्त नहीं किया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, वादी को हानि नहीं पहुँचायी जा सकती थी और तद्नुसार, अपीलार्थी/प्रतिवादी को इस निर्णय की तिथि से 60 दिनों के भीतर 6% प्रति वर्ष की दर पर ब्याज के साथ 66,000/- रुपयों की उक्त राशि, जो उसने अग्रिम के रूप में लिया था, का भुगतान वादी/प्रत्यर्थी को करने का निर्देश दिया जाता है और इसका अनुपालन

करने में विफल होने पर इस प्रकार उपदर्शित राशि को विधि की सम्यक प्रक्रिया के अधीन उससे वसूल किया जाएगा।

इन संप्रेक्षणों और निर्णय तथा डिक्री में उपांतरण के साथ अपील निपटायी जाती है। इस निर्णय की दृष्टि में, आई॰ ए॰ सं॰ 1388/2014 निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

कृषि उत्पाद विपणन कमिटी, गढ़वा (सभी में)

cuke

सरयू प्रसाद गुप्ता एवं अन्य (110 में)

डॉ॰ आर॰ एल॰ जायसवाल एवं एक अन्य (104 में)

श्रीमती डॉ॰ महाराजा जायसवाल एवं एक अन्य (105 में)

राजेन्द्र प्रसाद केशरी एवं अन्य (106 में)

बिगन मियां एवं अन्य (107 में)

अलीमुद्दीन अंसारी एवं अन्य (108 में)

जहीरूद्दीन अंसारी एवं अन्य (109 में)

L.P.A. Nos. 110, 104 to 109 of 2014. Decided on 2nd May, 2014.

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धारा 54—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 100A—एल॰ पी॰ ए॰—पोषणीयता—निर्देश न्यायालय द्वारा पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध अपील केवल उच्च न्यायालय में होगी और आगे अपील सर्वोच्च न्यायालय में होगी—सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100A के अधीन विनिर्दिष्ट वर्जना की दृष्टि में, प्रथम अपील में पारित एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध एल॰ पी॰ ए॰ पोषणीय नहीं। (पैराएँ 13 एवं 20)

निर्णयज विधि.—AIR 2004 SC 5152; 2002 (2) JLJR (SC) 12; (2006) 7 SCC 613; AIR 2003 SC 189; (2004)11 SCC 672—Referred; (2010)13 SCC 517; (2010) 9 SCC 84; (2006) 13 SCC 295—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s V.P. Singh, M.K. Roy, A. Kumari, For the Appellant; M/s V.K. Prasad, S. Narsaria, For the Respondent-State; M/s M. Tiwari, N. Sinha, P. Sinha, For the Pvt. Respondent.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.—क्या भूमि अर्जन मामलों के विरुद्ध दाखिल प्रथम अपीलों में एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध लेटर्स पेटेन्ट अपील पोषणीय है या नहीं, यह बिंदु इन अपीलों में विचार किए जाने के लिए आता है।

2. अनावश्यक विवरणों को छोड़कर इन लेटर्स पेटेन्ट अपीलों की दाखिली की ओर ले जाने वाले संक्षिप्त तथ्य ये हैं: अपीलार्थी कृषि उत्पाद विपणन कमिटी (इसमें इसके बाद विपणन कमिटी) के प्रावधानों के अधीन स्थापित सांविधिक निकाय है। गढ़वा में मार्केट यार्ड की स्थापना के लिए, बाजार अधिनियम के प्रावधानों की आवश्यकता के मुताबिक, राज्य सरकार द्वारा सरकारी अधिसूचना द्वारा गढ़वा में भूमि का 22.71 एकड़ अर्जित किया गया था जिसे दिनांक 16.6.1977 को जिला गजट में प्रकाशित किया गया था। भूमि अर्जन अधिकारी ने सड़क के बगल से 200 फीट तक अवस्थित भूमि के लिए भूमि का मूल्य 16,900-/- रुपया प्रति एकड़ और 200 फीट के परे भूमि के लिए 12,675/- रुपया प्रति एकड़

नियत किया। दिनांक 17.8.1978 को अधिनिर्णय पारित किया गया था। दिनांक 28.8.1978 को दावेदारों ने विरोध के अधीन मुआवजा का भुगतान प्राप्त किया। मुआवजा की वृद्धि इप्सित करते हुए, भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 18 के अधीन निर्देश किया गया था और उन मामलों को (i) एल॰ ए॰ केस सं॰ 166/78 वर्ष 1979; (ii) एल॰ ए॰ केस सं॰ 159/72 वर्ष 1979; (iii) एल॰ ए॰ केस सं॰ 163/76 वर्ष 1979; (iv) एल॰ ए॰ केस सं॰ 164/76 वर्ष 1979; (v) एल॰ ए॰ केस सं॰ 162/75 वर्ष 1979; (vi) एल॰ ए॰ केस सं॰ 64/147 वर्ष 1979, (vii) एल॰ ए॰ केस सं॰ 65/148 वर्ष 1979 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त के अतिरिक्त उसी अर्जन से उद्भूत होने वाला एक अन्य मामला एल॰ ए॰ केस सं॰ 161/1979 (अनिल कुमार गुप्ता बनाम राज्य) था।

3. उक्त सात भूमि अर्जन मामलों को व्यतिक्रम के कारण मार्च 1981 में खारिज कर दिया गया था और बाद में, सिविल पुनरीक्षण सं॰ 392/1983 (R) और बैच मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 27.9.1983 के आदेश के अनुसरण में भूमि अर्जन मामलों को उनके फाइलों में पुनर्स्थापित करने का आदेश दिया गया था। पुनर्स्थापना के बाद सात भूमि अर्जन मामले कुछ समय से फाइल पर लंबित हैं। अपीलार्थी विपणन कमिटी को अगस्त, 2012 में अथवा इसके आसपास भूमि अर्जन मामलों में प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया गया था। दिनांक 29.9.2012 के निर्णय द्वारा सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन, गढ़वा द्वारा सात भूमि अर्जन मामलों को निपटाया गया था। निर्देश न्यायालय ने मुआवजा की दर बढ़ाते हुए अधिनिर्णय पारित किया:–

(i) 16,900/- #i;k çfr ,dM (tl k lMd d cxy l 200 QhV rd dh Hkfe d fy, lekgrk }kjk vfèkfu.khr fd;k x;k Fkk) l 1,00,000/- #i;k çfr ,dM rd(

(ii) 12,675/- #i;k çfr ,dM (tl k lMd d cxy l 200 QhV d ij Hkfe d fy, lekgrk }kjk vfèkfu.khr fd;k x;k Fkk; l 80,000/- #i;k çfr ,dM

(iii) Hkfe vtu vfèkfu;e dh èkkjk 4(1) d vèkhu vfèklpuk d idk'ku dh frfFk l ikjHk gku okyh rFkk dCtk yu ;k vfèkfu.k; dh frfFk] tk Hkh igy gk] rd dh vofèk d fy, evkotk dh dy jkf'k ij 12% çfro"k dh nj ij vfrfjDr evkotk dk vfèkfu.k; djr g,A

(iv) Hkfe d fofuf'pr fd, x, eY;kdu ij 30% dh nj ij rk"k.k vfèkfu.khr djr g,A

(v) dCtk fy, tku d le; l ,d o"k dh vofèk d fy, 9% çfro"k dh nj ij lkfofèkd C;kt vkj ;fn ,d o"k dh vofèk d Hkhrj jkf'k tek ugh dh x;h g] nkonkjx.k ,d o"k d volku dh frfFk l evkotk dh jkf'k vFkok mld Hkkx ftldk Hkxrku@tek ,l volku d igy ugh fd;k x;k g d Åij 15% çfro"k dh nj ij C;kt iku d gdnkj gkxA

(vi) lkfofèkd C;kt d vfrfjDr] bldh olyh dh frfFk rd li.k jkf'k d Åij 12% çfr o"k dh nj ij okndkyhu C;ktA

4. मुआवजा की वृद्धि और मुआवजा की संपूर्ण राशि के ऊपर 12% प्रतिवर्ष की दर पर वादकालीन ब्याज के अधिनिर्णय, 30% की दर पर तोषण एवं प्रोद्भूत ब्याज से व्यथित होकर अपीलार्थी विपणन कमिटी ने प्रथम अपीलों को दाखिल किया है। प्रथम अपीलों में, दिनांक 28.1.2014 के एक ही निर्णय द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश ने निर्देश न्यायालय द्वारा पारित अधिनिर्णय संपुष्ट किया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने मुआवजा की संपूर्ण राशि पर 12% प्रति वर्ष की दर पर वादकालीन ब्याज का अधिनिर्णय, जैसा निर्देश न्यायालय द्वारा आदेशित किया गया था, संपुष्ट किया। प्रथम अपीलों में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय से व्यथित होकर कृषि विपणन कमिटी ने इन अपीलों को दाखिल किया है।

5. प्रत्यर्थी राज्य के लिए उपस्थित विद्वान एस॰ सी॰ (एल॰ & सी॰) श्री विकास किशोर प्रसाद ने और निजी प्रत्यर्थीगण/दावेदारगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री महेश तिवारी ने अपीलीय अधिकारिता के प्रयोग में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय के विरुद्ध इन एल॰ पी॰ ए॰ की पोषणीयता के प्रति कठोर आपत्ति किया। की गयी आपत्तियों को ध्यान में रखकर हमने इन एल॰ पी॰ ए॰ की पोषणीयता पर पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के तर्कों को सुना।

6. अपीलार्थी विपणन कमिटी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ पी॰ सिंह ने निवेदन किया है कि भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 सर्वोपरि खंड अंतर्विष्ट करती है और भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 के अधीन लेटर्स पेटेन्ट अपील की जा सकती है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि सामान्य विधियों से उद्भूत होने वाले मामलों के संबंध में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के मूल अथवा अपीलीय डिक्री से उद्भूत होने वाले किसी अपील में पारित निर्णयों एवं आदेशों पर सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100-A के अधीन वर्जना लागू होगी, अधिनियम की धारा 54 के प्रावधानों के मुताबिक, भूमि अर्जन अधिनियम, 1894 से उद्भूत होने वाली ये अपीलें पोषणीय हैं।

7. अपीलार्थी विपणन कमिटी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि धारा 100A में संशोधन वर्ष 2002 में किया गया है और यह दिनांक 1.7.2002 से प्रभाव में आया और उक्त संशोधन उस भूमि अर्जन कार्यवाही में प्रयोज्य नहीं होगा, जो वर्ष 1977-1979 में आरंभ हुई और आगे दावेदारगण/प्रत्यर्थीगण की ओर से विलंब एवं ढिलाई के कारण कार्यवाही को जारी कार्यवाही के रूप में नहीं माना जाना चाहिए और अपीलार्थी को पीड़ित नहीं किया जा सकता है। भूमि अर्जन मामलों को वर्ष 1981 में खारिज किया गया था और केवल वर्ष 2004 में पुनर्स्थापित किया गया था और चूँकि ऐसा था, अत: अपीलार्थी को विलंब के लिए पीड़ित नहीं किया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया था कि लेटर्स पेटेन्ट उच्च न्यायालय का चार्टर है और विशेष अधिनियम अथवा सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान लेटर्स पेटेन्ट के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति वापस नहीं ले सकते हैं। अपने प्रतिवाद के समर्थन में, विद्वान वरीय अधिवक्ता ने **पी॰ एस॰ सथप्पन बनाम आंध्रा बैंक लि॰, AIR 2004 SC 5152,** और **शारदा देवी बनाम बिहार राज्य** 2002 (2) JLJR (SC) 12 पर विश्वास किया।

8. झारखंड राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विकास किशोर प्रसाद ने निवेदन किया कि संसद ने दिनांक 1.7.2002 के प्रभाव से सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100A को संशोधित करते हुए एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध अपील के मामले में उच्च न्यायालय की लेटर्स पेटेन्ट अपील को वापस ले लिया जहाँ मूल अथवा अपीलीय डिक्री से कोई अपील सुनी जाती है और उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा विनिश्चित की जाती है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने **कमल कुमार दत्ता एवं एक अन्य बनाम रुबी जेनरल अस्पताल लि॰, (2006)7 SCC 613;** और **मो॰ सउद एवं एक अन्य बनाम डॉ॰ (मेजर) शेख महफूज, (2010)13 SCC 517** एवं अन्य निर्णयों पर विश्वास किया।

9. प्रत्यर्थी राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों कि लेटर्स पेटेन्ट अपील पोषणीय नहीं है को दोहराते हुए निजी प्रत्यर्थीगण/दावेदारगण के विद्वान अधिवक्ता श्री महेश तिवारी ने निवेदन किया है कि यद्यपि भूमि अर्जन मामलों को व्यतिक्रम के कारण वर्ष 1981 में खारिज कर दिया गया था, उन्हें सिविल पुनरीक्षण सं॰ 392/1983 (R) एवं समूह मामलों में दिनांक 27.9.1983 के आदेश के तहत पुनर्स्थापित करने का आदेश दिया गया था। यह निवेदन किया गया था कि चूँकि सिविल पुनरीक्षण सं॰ 392/1983 (R) और समूह मामलों में पारित आदेश अवर न्यायालय को संसूचित नहीं किया गया था,

मामले की पुनर्स्थापना में विलंब हुआ था और इसलिए, अपीलार्थी विपणन कमिटी सांविधिक ब्याज को भुगतान करने से बच नहीं सकती है।

10. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का परिशीलन किया है।

11. भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 के अधीन, क्या लेटर्स पेटेन्ट अपील पोषणीय है और क्या निर्देश न्यायालय द्वारा पारित अधिनिर्णय से उद्भूत होने वाली प्रथम अपीलों को विनिश्चित करने वाले एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध दाखिल लेटर्स पेटेन्ट अपीलों पर सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100A की प्रयोज्यता नहीं होगी, इन अपीलों में विचारार्थ आया बिंदु है।

12. भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 न्यायालय के समक्ष किसी कार्यवाही पर विचार करती है। भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 का पठन निम्नलिखित है:–

> ***54. U;k;ky; e gb dk;okfg;k e vihy–*** *&flfoy çfØ;k lfgrk] 1908 (1908 dk 5) d mu micèkk d] tk ey fMfØ;k dh vihyk dk ykx g] vè;èkhu jgr g, vkj fdlh rRle; çoÙk vfèkfu;fefr e fdlh çfrdy ckr d gkr g, Hkh bl vfèkfu;e d vèkhu dh fdlh dk;okgh e U;k;ky; d vfèkfu.k; ;k vfèkfu.k; d fdlh Hkkx dh dkb vihy doy mPp U;k;ky; e gkxh vkj ,lh vihy e] tlh iokDr g] ikfjr mPp U;k;ky; dk fdlh fMØh dh vihy flfoy çfØ;k lfgrk] 1908 dh èkkjk 110 e vkj mld vkn'k 45 e vUrfo"V micUèkk d vè;èkhu jgr g, mPpre U;k;ky; e gkxhA*

13. धारा 54 के सावधानीपूर्ण पठन पर यह स्पष्ट है कि निर्देश न्यायालय द्वारा पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध अपील केवल उच्च न्यायालय में होगी। उच्च न्यायालय द्वारा ऐसी अपील में पारित निर्णय से मूल डिक्रियों के विरुद्ध अपीलों से संबंधित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के प्रावधान के अध्यधीन, आगे अपील केवल सर्वोच्च न्यायालय में होगी। धारा 54 उपरिका ''मूल डिक्री से अपीलों पर प्रयोज्य सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अध्यधीन'' से आरंभ होती है। धारा 54 का सावधानीपूर्ण विश्लेषण इसे स्पष्ट करेगा कि उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे अपील पर पारित किसी डिक्री से आगे अपील सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों द्वारा शासित होगी।

14. सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1999 (46 वर्ष 1999) और सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2002 (22 वर्ष 2002) द्वारा (दिनांक 1.7.2002 के प्रभाव से सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100A संशोधित की गयी थी। धारा 100A के मुताबिक, जब मूल अथवा अपीलीय डिक्री अथवा आदेश के विरुद्ध अपील उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा सुनी और विनिश्चित की जाती है, ऐसे एकल न्यायाधीश के निर्णय एवं डिक्री के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील नहीं होगी। न्यायमूर्ति मालीमथ कमिटी ने एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध आगे अपील के विवाद्यक का परीक्षण किया और कमिटी ने यह प्रावधानित करने की दृष्टि से कि इस संबंध में आगे अपील नहीं होगी, संहिता की धारा 100A में उपयुक्त संशोधन की अनुशंसा की। धारा 100A ऐसी अपील प्रावधानित करने वाले लेटर्स पेटेन्ट अथवा किसी अन्य विधि के प्रावधानों को अध्यारोहित करते हुए एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध आगे अपील वर्जित करते हुए न्यायनिर्णयन की अंतिमता में विलंब को न्यून करने के प्रयोजन से अंत: स्थापित की गयी है। धारा 100A प्रथम अपीलीय अधिकारिता का प्रयोग करते हुए एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध आगे अपीलों का उत्सादन प्रावधानित करती है। **सालेम अधिवक्ता बार एसोसिएशन, तमिलनाडू बनाम भारत संघ, AIR 2003 SC 189,** में माननीय संविधान के अधिकारातीत नहीं है और किसी संवैधानिक दुर्बलता से पीड़ित नहीं होते हैं।

15. यह प्रतिवाद करते हुए कि लेटर्स पेटेन्ट अपील चार्टर है जिसके अधीन उच्च न्यायालय की अपील ग्रहण करने की शक्ति अपवर्जित नहीं हो जाएगी और भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 के अधीन लेटर्स पेटेन्ट पोषित करने पर वर्जना नहीं है, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **शारदा देवी,** 2002 (2) JLJR (SC) 12 के मामले पर विश्वास किया है। भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 54 के अधीन अपील की पोषणीयता के प्रश्न पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

"9. yVl iVUV pkVj g ftld vèkhu mPp U;k;ky; LFkkfir fd;k x;k gA yVl iVUV d vèkhu mPp U;k;ky; dk nh x;h 'kfDr;k mPp U;k;ky; dh loèkkfud 'kfDr;k d leku gA bl çdkj] tc yVl iVUV mPp U;k;ky; dk ,dy U;k;kèkh'k d fu.k; d fo#) vihy dh 'kfDr çnku djrk g] vihy xg.k dju dk vfèkdkj vioftr ugh gk tk,xk tc rd lcfèkr lkfofèkd vfèkfu;eu yVl iVUV d vèkhu vihy vioftr ugh djrk gA

13. nljh vkj] Jh ekFkj u fuonu fd;k g fd yVl iVUV vihy gkxhA og bfxr djr g fd leLr mPp U;k;ky;k u nf"Vdk.k viuk;k g fd mDr vfèkfu;e dh èkkjk 54 d vèkhu nkf[ky vihy e ikfjr ,dy U;k;kèkh'k d fu.k; d fo#) yVl iVUV vihy gkxhA og ekgyh noh cuke pnj Hkku] AIR (1995) Delhi 293; ekgCcr flg cuke lekV] (1923) ykgkj 274, ukjk;.knkl nkxk cuke x.kir jko] AIR (1944) Nagpur 284 vkj ,e0 Jh fuokl cuke tokgjyky ug: çk|kfxdh fo'ofo|ky;] gnjkckn] (1990)3 Andhra Law Times 3 ekeyk ij fo'okl djr gA

*14. gekj nf"Vdk.k e] Jh ekFkj lgh gA mDr vfèkfu;e dh èkkjk 26 çkoèkkfur djrh g fd çR;d vfèkfu.k; fMØh gkxk vkj çR;d vfèkfu.k; d vkèkkjk dk c;ku fu.k; gkxkA yVl iVUV d QyLo#i mPp U;k;ky; d ,dy U;k;kèkh'k d fu.k; d fo#) vihy [kMihB dk dh tk,xhA mDr vfèkfu;e dh èkkjk 54 yVl iVUV d vèkhu vihy vioftr ugh djrh gA èkkjk 54 e lokifj [kM d rjUr ckn vku okyk 'kCn ^^doy** vihy d Qkje dk fufn"V djrk gA nlj 'kCnk e] ;g çkoèkkfur djrk g fd vihy mPp U;k;ky; e dh tk,xh vkj u fd fdlh vU; U;k;ky; vFkkr ftyk U;k;ky; eA 'kCn ^^vihy** viu foLrkj d vrxr yVl iVUV vihy dk Hkh yxhA yVl iVUV vihy e fn;k x;k [kMihB dk fu.k; rc lokPp U;k;ky; e fd, x, vihy d vè;èkhu gkxkA fdlh Hkh vU; rjhd l iBu dju ij èkkjk 54 vkj yVl iVUV d çkoèkku d chp l?k"k gkxkA ;g lfuf'pr fofèk g fd ;fn l?k"k g] çkoèkkuk dk lketL;i.k vFk yxku dk ç;kl fd;k tkuk pkfg,A*

*15. vr%] ge vfHkfuèkkfjr djr g fd mDr vfèkfu;e dh èkkjk 154 d vèkhu yVl iVUV vihy dh ik"k.kh;rk d çfr otuk ugh gA vr% ge clUr dekj ekey e viuk, x, nf"Vdk.k d lkFk lger gA rnulkj] fun'k dk mÙkj fn;k tkrk gA***

शारदा देवी, 2002 (2) JLJR (SC) 12 (दिनांक 13.3.2002) में उक्त निर्णय का निर्णयाधार वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है चूँकि शारदा देवी में निर्णय सी॰ पी॰ सी॰ (संशोधन) अधिनियम, 1999 और 2002 जो धारा 100A को संशोधित करते हुए दिनांक 1.7.2002 से प्रभाव में आने से पहले दिनांक 13.3.2002 को दिया गया था।

16. सी॰ पी॰ सी॰ संशोधन अधिनियम 2002 का प्रभाव यह है कि जहाँ अपीलीय आदेश अथवा डिक्री के विरुद्ध अपील उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा सुनी और विनिश्चित की जाती है, उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष आगे अपील नहीं होगी। संशोधन अधिनियम की धारा 100A में शब्द ''आगे अपील नहीं होगी'' महत्वपूर्ण है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि एकल न्यायाधीश के निर्णय से उद्भूत होने वाली आगे की अपील दिनांक 1.7.2002 के बाद दाखिल अपील के संबंध में ग्रहण नहीं की जाएगी। इस संबंध में, हम **सलेम अधिवक्ता बार एशोसिएशन, तमिलनाडू बनाम भारत संघ, AIR 2003 SC 189,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को लाभदायी रूप से निर्दिष्ट कर सकते हैं जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"15. èkkjk 100A nk çdkj d ekeyk ij fopkj djrh g ftl ,dy U;k;kèkh'k }kjk fofuf'pr fd;k tkrk gA igyk ekeyk g tgk ,dy U;k;kèkh'k vihyh; fMØh vFkok vkn'k l vihy lurk gA ,l ekey e vkx dkb vihy gku d ç'u dk vuè;kr ugh fd;k tk ldrk g vkj vuè;kr ugh fd;k tkuk pkfg,A fdr] tc fopkj.k U;k;ky; dh fMØh d fo#) mPp U;k;ky; d le{k vihy nkf[ky dh tkrh g] ç'u mnHkr gk ldrk g fd D;k vkx fdlh vihy dh vuefr nuh pkfg, ;k ughA oreku e Hkh ekey d eY; ij fuHkj djr g,] ey fMØh d fo#) vihy mPp U;k;ky; d ,dy U;k;kèkh'k vFkok [kMihB }kjk luh tkrh gA tc bl çdkj nkf[ky fu;fer çFke vihy [kMihB }kjk luh tkrh g] vrjk&U;k;ky; vihy fd, tku dk ç'u mnHkr ugh gkrk gA doy ,l ekeyk e tgk eY; lkjoku ugh g] mPp U;k;ky; d fu;e ,dy U;k;kèkh'k }kjk lu tku d fy, fu;fer çFke vihy çkoèkkfur dj ldr gA ,l ekey e] [kMihB d le{k vihy dk vkx vfèkdkj nuk] tgk vrxLr jkf'k ukeek= dh g] oLrr% vuko';d :i l dk;Hkkj c<kuk gkxkA ge ugh ikr g fd ogk Hkh tgk vrxLr eY; fo'kky g] vrjk&U;k;ky; vihy çkoèkkfur ugh djd okndkjk ij dkb çfrdyrk dkfjr dh tk,xhA ,l ekey e] mPp U;k;ky; fu;ek }kjk çkoèkkfur dj ldrk g fd [kMihB fu;fer çFke vihy luxhA bl çdkj] èkkjk 100A d l'kkfèkr çkoèkku e nk"k ugh ik;k tk ldrk gA***

17. धारा 100A के विस्तार पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **कमल कुमार दत्ता एवं एक अन्य, (2006)7 SCC 613,** मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"22. tgk fofèk dh lkekU; çfriknuk dk lcèk g fd vihy fufgr vfèkdkj g] bl çfriknuk d lkFk dkb >xMk ugh g fdr ;g Li"V fd;k tkrk g fd i'pkrorh l'kkèku }kjk] vfHk0;Dr :i l vFkok vko';d foo{kk }kjk] lk vfèkdkj okil fy;k tk ldrk gA lln u fnukd 1.7.2002 d çHkko l l'kkèku vfèkfu;e 22 o"k 2002 }kjk flfoy çfØ;k lfgrk dh èkkjk 100A dk l'kkfèkr djr g, ,dy U;k;kèkh'k d vkn'k d fo#) [kMihB dk vihy d ekey e mPp U;k;ky; d yVl iVUV 'kfDr dk okil y fy;kA flfoy çfØ;k lfgrk dh èkkjk 100A dk iBu fuEufyf[kr g%&

*100A. **dN ekeyk e vkx vihy dk u gkuk-**&fdlh mPp U;k;ky; d fy, fdlh yVl iVUV e ;k fofèk dk cy j[ku okyh fdlh vU; fy[kr e ;k rRle; çoÙk fdlh vU; fofèk e fdlh ckr d gkr g, Hkh] tgk fdlh vihy fMØh ;k vkn'k dh vihy dh luokb vkj mldk fofu'p; mPp U;k;ky; d fdlh ,dy U;k;kèkh'k }kjk fd;k tkrk g ogk ,lh vihy e ,l ,dy U;k;kèkh'k d fu.k; vkj fMØh dh vkx dkb vihy ugh gkxhA*

*23. vr%] tgk¡ ey vkn'k d fo#) vihy ,dy U;k;kèkh'k }kjk fofuf'pr dh x;h g] vkx vihy çkoèkkfur ugh dh x;h g vkj og 'kfDr tk mPp U;k;ky; d yVl iVUV d vèkhu ogk¡ gkrh Fkh] ckn e okil y yh x;h g----------**

18. पी॰ एस॰ सथप्पन बनाम आंध्र बैंक लि॰, (2004)11 SCC 672, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ ने धारा 100A जैसा वर्ष 2002 में संशोधित किया गया था के प्रभाव पर विचार किया। धारा 100A (संशोधन अधिनियम के बाद) को निर्दिष्ट करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

^^lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 100A l] tl k o"k 1976 e vr%LFkkfir fd;k x;k g] ;g n[kk tk ldrk g fd tc foèkkueMy u yVl iVUV vihy dk vioftr djuk pkgk] blu fofufn"Vr% ,lk fd;kA iu% èkkjk 100A, l tl k o"k 2002 e l'kkfèkr fd;k x;k g] ;g n[kk tk ldrk g fd foèkkueMy u fofufn"V viotu çkoèkkfur fd;k gA ;g dFku djuk gkxk fd vc èkkjk 100A d QyLo#i oreku ekey d rF;k e yVl iVUV vihy ik"k.kh; ugh gkxhA fdr] ;g LohÑr voLFkk g fd fofèk tk çpfyr gkxh] çklfxd le; ij dh fofèk gkxhA çklfxd le; ij u rk èkkjk 100A vkj u gh èkkjk 104 (2) yVl iVUV vihy oftr djrk FkkA èkkjk 100A e ç;Dr 'kCn i;klr lrdrk d :i e ugh gA o"k 1976 vkj 2002 d l'kkfèkr vfèkfu;ek }kjk fofufn"V viotu çkoèkkfur fd;k x;k g D;kfd foèkkueMy tkurk Fkk fd ,l 'kCnk dh vuifLFkfr e yVl iVUV vihy oftr ugh gkxhA foèkkueMy tkx:d Fkk fd blu èkkjk 104 (1) e 0;kofÙk [kM lfEefyr fd;k Fkk vkj lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 4 lfEefyr fd;k FkkA bl çdkj] vc fofufn"V viotu çkoèkkfur fd;k x;k FkkA

*vr%] rF;k ij enkl mPp U;k;ky; d yVl iVUV d [kM 15 d vèkhu vihy rRle; çoÙk fofèk }kjk çkoèkkfur vihy gA vr% èkkjk 104 (2) }kjk vuè;kr vfrerk ,lh fofèk d vèkhu ikfjr vihy l lc) ugh gkrh FkhA**

19. पुनः माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मो॰ सउद बनाम डॉ॰ (मेजर) एस॰ के॰ महफूज, (2010)13 SCC 517,** मामले में अनेक निर्णयों को निर्दिष्ट करते हुए और यह संप्रेक्षित करते हुए कि दिनांक 1.7.2002 के प्रभाव से सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100A में संशोधन के बाद विशेष अधिनियम के अधीन कार्यवाही से उद्भूत होने वाले अपील में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश अथवा निर्णय के विरुद्ध लेटर्स पेटेन्ट अपील नहीं होगी, निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

"7. i.kihB u vk{kfir fu.k; }kjk vfHkfuèkkfjr fd;k g fd fnukd 1.7.2002 d çHkko l èkkjk 100A dh ij%LFkkiuk d ckn vihy e fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk ikfjr fu.k; vFkok vkn'k d fo#) yVl iVUV vihy ugh gkxhA i.kihB u vfHkfuèkkfjr fd;k g fd fcjkV pn Mkxjk cuke Vkfj;u ,fDte (çk0) fy0 e mPp U;k;ky; dh [kMihB dk fu.k; vPNh fofèk vfèkdfFkr ugh djrk g tcfd oh0 ,u0 ,u0 ifuDdj cuke ukjk;.k ikfVy e [kMihB dk fu.k; vPNh fofèk vfèkdfFkr djrk gA i.kihB u vkx vfHkfuèkkfjr fd;k g fd fnukd 1.7.2002 d çHkko l èkkjk 100A d l'kkèku d ckn fo'k"k vfèkfu;e d vèkhu dk;okgh l mnHkr gku okyh vihy e Hkh fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk ikfjr vkn'k vFkok fu.k; d fo#) dkb ,y0 ih0 ,0 ugh gkxkA

9. lkye vfèkoDrk ckj ,'kkfl,'ku cuke Hkkjr l?k e bl U;k;ky; d fu.k; }kjk lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 100A dh oèkrk ekU; Bgjk;h x;h gA xnyk

iuYyk Hky{eh cuke ,O ihO ,lO vkjO VhO lhO d rgr vkèk çn'k d mPp U;k;ky; dh i.kihB u] y{eh ukjk;.k cuke f'koyky xtj e eè; çn'k mPp U;k;ky; dh i.kihB u vkj d'ko fiYyb Jh èkj.k fiYyb cuke djy jkT; e djy mPp U;k;ky; dh i.kihB u vfHkfuèkkfjr fd;k g fd o"k 2002 e èkkjk 100A d l'kkèku d ckn fdlh okndkj dk vihy e ikfjr mPp U;k;ky; d fo}ku ,dy U;k;kèkh'k d fu.k; vFkok vkn'k d fo#) vkx vihy dju dk vfèk"Bk;h vfèkdkj ugh gk ldrk gA ge iokDr fu.k;k d lkFk lEekuiod lger gA

10. deyk noh cuke d'ky doj e bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd doy l'kkèku vfèkfu;e d çHkko e vku l igy nkf[ky ,yO ihO ,O ik"k.kh; gkxkA oreku ekey e] ,yO ihO ,O o"k 2002 d ckn nkf[ky fd, x, Fk vkj blfy, gekj er e o ik"k.kh; ugh gA

13. igyh utj e ;g rd rdlxr yx ldrk g fdr tc ge bldh xgjkb e tkr g] ge egll djx fd ble x.kkx.k ugh gA ;g vfHkfuèkkfjr djuk fofp= gkxk fd ;|fi ftyk U;k;kèkh'k d vrorh vkn'kk d fo#) nk vihy ik"k.kh; gkxh] ftyk U;k;kèkh'k d vfre fu.k; d fo#) doy ,d vihy ik"k.kh; gkxhA

14. ;g xkj fd;k tk ldrk g fd èkkjk 100A e] tlk o"k 2002 e l'kkfèkr fd;k x;k Fkk] dN çdV fojkèkkHkkl gA tgk èkkjk 100A d ,d Hkkx e ;g dFku fd;k x;k g ^^tgk ey vFkok vihyh; fMØh vFkok vkn'k d fo#) vihy mPp U;k;ky; d ,dy U;k;kèkh'k }kjk luh vkj fofuf'pr dh tkrh g** (tkj fn;k x;k)] ckn oky Hkkx e ;g dFku fd;k x;k g ^^, l ,dy U;k;kèkh'k d fu.k; ,o fMØh d fo#) vkx vihy ugh gkxhA** bl çdkj] èkkjk 100A dk ,d Hkkx vkn'k dk fufn"V djrk g tk gekj food e vrorh vkn'k dk Hkh lfEefyr djxk] èkkjk dk ckn okyk Hkkx fu.k; ,o fMØh dk mYy[k djrk gA

15. bl l?k"k dk lekèkku dju d fy, ge ç;ktukRed 0;k[;k viukuk gkxkA èkkjk 100A ij%LFkkfir dju dk li.k ç;ktu vihyk dh l[;k ?kVkuk Fkk D;kfd Hkkjr e turk dk lfofèk e çkoèkkfur vud vihyk }kjk ij'kku fd;k tk jgk FkkA ;fn ge ml dk.k l ekey dk n[kr g] ;g rjUr Li"V gk tk,xk fd ç'uxr ,yO ihO ,O ik"k.kh; ugh Fkk D;kfd ;fn bl ik"k.kh; vfHkfuèkkfjr fd;k tkrk g] rc ifj.kke ;g gkxk fd ftyk U;k;kèkh'k d vrorh vkn'k d fo#) nk vihy gk ldrh g] çFke fo}ku ,dy U;k;kèkh'k dk vkj rc mPp U;k;ky; dh [kMihB dk fdr ftyk U;k;kèkh'k d vfre fu.k; d fo#) doy ,d vihy gk ldrh gA ;g gekj er e fofp= gkxk vkj èkkjk 100A d mí'; d ç;ktu vFkkr vihyk dh l[;k ?kVku d ç;ktu d fo#) HkhA**

यही सिद्धांत **गीता देवी बनाम पूरन राम रायगार, (2010)9 SCC 84** और **कमला देवी बनाम कुशल कँवर एवं एक अन्य, (2006)13 SCC 295,** मामलों में प्रतिपादित किया गया था। सी० पी० सी० की धारा 100A की दृष्टि में, प्रथम अपीलों में पारित विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय के विरुद्ध दाखिल लेटर्स पेटेन्ट अपील पोषणीय नहीं है। चूँकि लेटर्स पेटेन्ट का प्रयोग करने में उच्च न्यायालय की शक्ति, जहाँ एकल न्यायाधीश ने निर्देश न्यायालय द्वारा पारित अधिनिर्णय से अपील विनिश्चित किया, वापस ले ली गयी है, लेटर्स पेटेन्ट अपील ग्रहण नहीं की जा सकती है।

20. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि सी० पी० सी० की धारा 100A के बावजूद लेटर्स पेटेन्ट अपीलें पोषणीय हैं क्योंकि भूमि अर्जन वर्ष 1977-78 में किया गया था और भूमि अर्जन मामले वर्ष 1979 में दाखिल किए गए थे और उन भूमि अर्जन मामलों को व्यतिक्रम के कारण वर्ष 1981 में खारिज कर दिया गया था और बाद में सिविल पुनरीक्षण सं० 392/1983 (R)

एवं बैच मामलों में पारित दिनांक 27.9.1983 के आदेश के अनुसरण में पुनर्स्थापित किया गया था। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि अर्जन एवं भूमि अर्जन मामले (दिनांक 1.7.2002 के प्रभाव से) सी॰ पी॰ सी॰ संशोधन अधिनियम 1999 और 2002 के काफी पहले के हैं, सिविल प्रक्रिया संहिता की संशोधित धारा 100A वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है। संपूर्ण मुआवजा राशि के ऊपर 12% प्रति वर्ष की दर पर वादकालीन ब्याज, 30% तोषण एवं प्रोद्भूत ब्याज अधिनिर्णीत करने के संबंध में कड़ी आपत्ति करते हुए विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि निर्देश न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत 12% वादकालीन ब्याज संपोषणीय नहीं है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एक अन्य **भूमि अर्जन मामला सं॰ 161/1979 (अनिल कुमार गुप्ता बनाम राज्य)** के संबंध में दावेदार अनिल कुमार गुप्ता द्वारा दाखिल एफ॰ ए॰ सं॰ 146/1988 (R) में प्रथम अपील दिनांक 14.10.1999 के निर्णय द्वारा अंशत: अनुज्ञात की गयी थी जिसमें न्यायालय ने 12% प्रतिवर्ष की दर पर वादकालीन ब्याज का अधिनिर्णय संपुष्ट किया है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विपणन कमिटी द्वारा दाखिल सिविल पुनर्विलोकन सं॰ 32/2004 में दिनांक 30.7.2004 के निर्णय के तहत माननीय मुख्य न्यायाधीश ने इसकी वसूली की तिथि तक संपूर्ण राशि के ऊपर 12% प्रति वर्ष की दर पर वादकालीन ब्याज विलोपित कर दिया है। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि 12% की दर से वादकालीन ब्याज विलोपित करते हुए सिविल पुनर्विलोकन सं॰ 32/2004 में पारित आदेश के बारे में विद्वान एकल न्यायाधीश के ध्यान में इसे लाने के बावजूद विद्वान एकल न्यायाधीश ने 12% प्रतिवर्ष की दर पर अधिनिर्णीत वाद कालीन ब्याज संपुष्ट करने में गंभीर गलती किया और इसलिए विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि गंभीर दुर्बलता की दृष्टि में एल॰ पी॰ ए॰ ग्रहण किया जाना है। सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100A के अधीन विनिर्दिष्ट वर्जना की दृष्टि में हमने पहले ही अभिनिर्धारित किया है कि प्रथम अपील में एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध एल॰ पी॰ ए॰ पोषणीय नहीं है। चूँकि एल॰ पी॰ ए॰ पोषणीय नहीं हैं, हम अपीलार्थी की ओर से किए गए उक्त प्रतिवादों के गुणागुण पर विचार करने के इच्छुक नहीं हैं।

21. परिणामस्वरुप, समस्त लेटर्स पेटेन्ट अपीलों को पोषणीय नहीं होने के कारण खारिज किया जाता है। अपीलार्थी प्रथम अपीलों में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय को विधि के अनुरुप चुनौती देने के लिए स्वतंत्र है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

बिहार राज्य एवं एक अन्य

cuke

रविन्द्र प्रसाद सिंह एवं अन्य

L.P.A. No. 511 of 2009. Decided on 22nd April, 2014.

बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000—धाराएँ 72 एवं 73—कैडर आवंटन–परस्पर स्थानांतरण इप्सित करने वाले कर्मचारियों को धारा 73 के परन्तुक के अधीन संरक्षण उपलब्ध नहीं है–धारा 73 के परन्तुक के अधीन प्रत्यर्थी को केवल उस स्थिति में संरक्षण उपलब्ध होता यदि उसने कैडर आवंटन के अनुपालन में बिहार सरकार के अधीन पदग्रहण किया होता और उस स्थिति में उसके प्रति हानिकर तरीके से उसकी सेवा शर्तें परिवर्तित नहीं की जा सकती थी–एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–एल॰ पी॰ ए॰ अनुज्ञात। (पैराएँ 19 से 23)

निर्णयज विधि.–2009(2) JLJR 750—Discussed.

अधिवक्तागण.–Mr. Ramit Satender, For the Appellants; Mr. M.S. Anwar, For the Resp. No.1; Mr. Sumir Prasad, For the State of Jharkhand.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–दिनांक 16.1.2008 के उसके अभ्यावेदन, जिसके द्वारा उसने यह प्रावधानित करने वाली कि वरीयता के उसके दावा पर विचार नहीं किया जाएगा, दिनांक 5.12.2007 की अधिसूचना सं॰ 12730 में अंतर्विष्ट शर्त शिथिल करने के लिए अथवा अंतिम कैडर आवंटन के मुताबिक बिहार राज्य में अपना पद ग्रहण करने के लिए उसको अनुमति देने के लिए अनुरोध किया था, पर 'विचार करने के लिए और निर्णय लेने के लिए' निर्देश इप्सित करते हुए वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा रिट याचिका दाखिल की गयी थी। ''**राजेन्द्र प्रताप सिन्हा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** 2009 (2) JLJR 750, में निर्णय का अनुसरण करते हुए रिट याचिका यह अभिनिर्धारित करते हुए अनुज्ञात की गयी थी कि रिट याची (वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 1) मूल ग्रेडेशन सूची के आधार पर वरीयता का दावा करने का हकदार है। व्यथित होकर बिहार राज्य ने गृह (विशेष) विभाग, बिहार सरकार के माध्यम से इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल किया है।

2. वर्तमान मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक यह है कि क्या एक राज्य से दूसरे राज्य में परस्पर स्थानांतरण का विकल्प चुनने वाले कर्मचारियों को इस शर्त के अध्यधीन किया जा सकता है जिसके अधीन मूल ग्रेडेशन सूची के निबंधनानुसार वरीयता के लिए उसका दावा ग्रहण नहीं किया जाएगा और क्या ऐसे कर्मचारी, जिनका परस्पर स्थानांतरण का अनुरोध परस्पर राज्यों द्वारा स्वीकार किया गया है, बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धारा 73 के अधीन संरक्षण के हकदार है?

3. वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक पर विचार करने के पहले इस संबंध में जारी केंद्र सरकार, बिहार सरकार और झारखंड सरकार के अनेक आदेशों/परिपत्रों/अधिसूचनाओं को ध्यान में लेना समुचित होगा। बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धारा 72 (2) के अधीन केंद्र सरकार को अविभाजित बिहार राज्य की अनेक सेवाओं में कैडर एवं पद आवंटित करना था। कैडर के विभाजन एवं पदों तथा कार्मिकों के आवंटन के लिए अपनायी गयी योजना के अधीन सरकारी कर्मचारियों को पुनर्गठित बिहार राज्य में अथवा नवसृजित झारखंड राज्य में सेवा देने के लिए अपना विकल्प प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था। इस प्रयोजन से सृजित राज्य सलाहकार कमिटी ने अनेक विभागों में कर्मचारियों की अनंतिम सूची तैयार किया। अनंतिम आवंटन सूची के प्रकाशन के बाद राज्य सलाहकार कमिटी ने आपत्ति आमंत्रित किया और तत्पश्चात् अंतिम कैडर आवंटन आदेश जारी किए गए थे। अंतिम आवंटन आदेशों को जारी किए जाने के बाद कैडर के पुनर्आवंटन के लिए कार्मिक, लोक शिकायत एवं पेंशन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अनेक अभ्यावेदन प्राप्त किए गए थे। दिनांक 15.9.2004 को कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, भारत सरकार ने यह उपदर्शित करते हुए कि कतिपय कोटियों के अधीन आने वाले कर्मचारियों की ओर से दिए गए अभ्यावेदनों पर विचार किया जा सकता है, बिहार सरकार एवं झारखंड सरकार के मुख्य सचिव को पत्र लिखा। तत्पश्चात् विशेष सचिव, गृह (विशेष) विभाग ने दिनांक 21.5.2005 के पत्र के तहत निम्नलिखित शर्तों पर परस्पर स्थानांतरण के लिए आवेदन ग्रहण करने के लिए मुख्य सचिव, झारखंड सरकार से अनुरोध किया:–

(i) nkuk depkjh ,d gh lok ,o dMj l vkr gkA

(ii) nkuk depkjh lerY; orueku vkj ojh;rk d ,d gh Lrj ij gkA

(iii) nkuk depkjh ,d gh ookfgd ntk d gk rkfd ,d gh jkT; e inLFkkiuk d lcèk e ifr@iRuh l lcfèkr ekeyk e fu.k;k d chp l?k"k ugh gku ik,A

(iv) nkuk depkfj;k u igy fodYi dk ç;kx ugh fd;k g vFkok mud fodYi ij fopkj ugh fd;k x;k gA

(v) ml jkT; e lok d vkoVu d fy, vujkèk fd;k tk jgk g ft l jkT; d o ey fuokl h gA

(vi) chekjh vFkok fdl h vU; vkdfLed dkj.k l nlj jkT; e lok dk vkoVu vko';d cu x;k gA

4. यह गौर करते हुए कि दोनों उत्तरजीवी राज्य कर्मचारियों के कैडर के आवंटन में परिवर्तन के लिए अनुरोध कर रहे हैं, कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग ने दिनांक 8.6.2006 के पत्र के तहत बिहार सरकार एवं झारखंड सरकार के मुख्य सचिव को संसूचित किया कि अन्य बातों के साथ ऐसे विचार के लिए निबंधनों एवं शर्तों को परिभाषित करके अथवा उक्त प्रयोजन से उपयुक्त नियमों को विरचित करके उत्तरजीवी राज्य सरकारों के बीच हुई व्यापक सर्वसम्मति के आधार पर कैडर आवंटन के पुनरीक्षण के अनुरोध पर विचार करने की छूट उत्तरजीवी राज्य सरकारों को थी।

5. दिनांक 8.6.2006 के पत्र के आलोक में, प्रमुख सचिव, कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार ने दिनांक 21.12.2006 के पत्र के तहत बिहार सरकार के मुख्य सचिव को सूचित किया कि झारखंड सरकार ने निम्नलिखित शर्तों के अधीन कैडर आवंटन में परिवर्तन इप्सित करने वाले आवेदन को ग्रहण करने का निर्णय लिया है:–

(i) ,l depkjh ftudk vfre dMj vkoVu mud fodYi d fo#) fd;k x;k gA

(ii) doy in dh miyCèkrk d vkèkkj ij dMj iujh{k.k ij fopkj fd;k tk,xkA

(iii) dMj iujh{k.k d ifj.kkeLo#i ojh;rk dk nkok Lohdk; ugh gkxk vFkkr ml mldh dkfV@dMj e lokfèkd tfu;j d :i e inLFkkfir fd;k tk,xkA

(iv) bl vkn'k dk tkjh fd, tku rd vFkok mu dMjk ftudk vfre vkoVu çrh{kkjr g] dMj iujh{k.k dh lfoèkk vfre vkoVu d pkj ekg d Hkhrj çkIr vH;konuk d fo#) Lohdk; gkxhA

6. दिनांक 27.6.2007 को राज्य पुनर्गठन के अधीन गठित उच्च शक्तिमान कमिटी ने कैडर पुनरीक्षण इप्सित करने के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए नयी विज्ञप्ति जारी करने का निर्णय लिया। इन परिस्थितियों में, वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 1 (रिट याची) को झारखंड राज्य में बने रहने की अनुमति इस शर्त पर दी गयी थी कि मूल ग्रेडेशन सूची के आधार पर वरीयता के लिए उसका दावा ग्रहण नहीं किया जाएगा।

7. अब मामले के तथ्यों पर आते हुए, यह देखा गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 को वर्ष 1987 में पथ निर्माण विभाग, बिहार सरकार में सहायक अभियन्ता के रूप में नियुक्त किया गया था और उस समय जब अंतिम कैडर आवंटन आदेश जारी किया गया था, उसे सहायक अभियन्ता के रूप में राष्ट्रीय उच्च पथ, सब डिविजन मेदिनीनगर, डालटेनगंज, झारखंड राज्य में पदस्थापित किया गया था। पथ निर्माण विभाग

में सहायक अभियन्ताओं से संबंधित अंतिम कैडर आवंटन आदेश दिनांक 13.9.2006 को जारी किया गया था और प्रत्यर्थी सं॰ 1 को बिहार राज्य आवंटित किया गया था और अंतिम कैडर आवंटन सूची में उसका नाम क्रमांक सं॰ 950/बिहार पर आया था। बिहार राज्य में पथ निर्माण विभाग में कार्यरत किसी सहायक अभियन्ता अविनाश प्रसाद सिंह को दिनांक 13.9.2006 के उक्त आदेश द्वारा झारखंड राज्य के आवंटित किया गया था और उक्त सूची में उसका नाम क्रमांक सं॰ 215 पर आया था। प्रत्यर्थी सं॰ 1 और उक्त अविनाश प्रसाद सिंह इस समझ पर कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 झारखंड राज्य में बने रहने का आशय रखता था जबकि उक्त अविनाश प्रसाद सिंह पुनर्गठित बिहार राज्य में बने रहने का इच्छुक था, कैडर आवंटन आदेश में पुनरीक्षण इप्सित करने के लिए परस्पर रूप से सहमत हुए। उन्होंने संयुक्त रूप से उप सचिव, गृह (विशेष) विभाग, झारखंड सरकार को दिनांक 4.10.2006 का अभ्यावेदन दिया। किंतु, दिनांक 20.10.2006 की अधिसूचना के द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को भारमुक्त किया गया था और इसलिए, रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6234 वर्ष 2006 दाखिल की गयी थी जिसे संबंधित प्राधिकारी को प्रत्यर्थी सं॰ 1 और अन्य कर्मचारियों जो भी डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6234 वर्ष 2006 में याचीगण थे द्वारा दिए गए आवेदन पर विचार करने एवं निर्णय लेने का निर्देश देते हुए दिनांक 2.11.2006 के आदेश के तहत निपटाया गया था। आगे यह आदेश दिया गया था कि आवेदकों, जो न्यायालय के समक्ष थे, की पदस्थापना अस्त व्यस्त नहीं की जाएगी। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं॰ 1 और उक्त अविनाश प्रसाद सिंह ने पुनः परस्पर स्थानांतरण इप्सित करते हुए दिनांक 8.1.2007 को आयुक्त-सह-सचिव, पथ निर्माण विभाग, बिहार सरकार के समक्ष संयुक्त अभ्यावेदन दिया। किंतु, प्रत्यर्थी सं॰ 1 यह जानकारी होने पर कि गृह (विशेष) विभाग, बिहार सरकार द्वारा परस्पर स्थानांतरण का आदेश इस शर्त पर दिया जा रहा है कि वरीयता के दावा पर विचार नहीं किया जाएगा, दिनांक 4.10.2006 और दिनांक 8.1.2007 के अपने पूर्व आवेदनों को वापस लेते हुए सचिव, पथ निर्माण विभाग, झारखंड सरकार के समक्ष दिनांक 5.11.2007 का अभ्यावेदन दिया और अनुरोध किया कि कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग द्वारा जारी दिनांक 13.9.2006 की अधिसूचना के निबंधनानुसार उसे बिहार सरकार के अधीन अपना पद ग्रहण करने की अनुमति दी जाए। किंतु, गृह (विशेष) विभाग, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 5.12.2007 की अधिसूचना के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 1 को झारखंड राज्य को पुनर्स्थानांतरित इस शर्त पर कर दिया गया था कि वरीयता के उसके दावा पर विचार नहीं किया जाएगा। तत्पश्चात्, प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने दिनांक 16.1.2008 को सचिव पथ निर्माण विभाग, झारखंड सरकार को वरीयता से संबंधित शर्त शिथिल करने के लिए अथवा उसको बिहार राज्य भेजने के लिए अभ्यावेदन दिया।

8. प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने यह अभिवचन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है कि चूँकि झारखंड सरकार ने **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में पारित आदेश क्रियान्वित करने का निर्णय किया है और परिणामस्वरुप दिनांक 29.8.2009 का आदेश जारी करके दिनांक 19.7.2008 का आदेश वापस ले लिया गया है, अतः मामले में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि दिनांक 21.5.2005 के पत्र में, जो स्थानांतरण की शर्तों को विहित करता है, वरीयता की हानि के प्रति शर्त प्रावधानित नहीं की गयी थी, अतः दिनांक 5.12.2007 के कैडर आवंटन के आदेश में ऐसी कोई शर्त सम्मिलित नहीं की जा सकती थी जिससे प्रत्यर्थी सं॰ 1 को वरीयता की हानि से पीड़ित किया जा सके।

9. झारखंड राज्य ने यह कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है कि शर्त शिथिल करने का दावा ग्रहण नहीं किया जा सकता है, क्योंकि पथ निर्माण विभाग, झारखंड सरकार द्वारा एकपक्षीय रूप से ऐसी शर्त परिवर्तित नहीं की जा सकती है। आगे यह कथन किया गया है कि पथ निर्माण विभाग,

झारखंड सरकार गृह (विशेष) विभाग, बिहार द्वारा अधिरोपित शर्त का अनुसरण करने के लिए बाध्य है और यह प्रत्यर्थी सं॰ 1 की सेवा बिहार को वापस भेजने के लिए सक्षम नहीं है क्योंकि उसकी सेवा परस्पर स्थानांतरण के माध्यम से प्राप्त की गयी है।

10. हमने पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

11. अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रमित सतेन्दर ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी गृह (विशेष) विभाग को नोडल एजेन्सी के रूप में गठित किया गया था जिसने केंद्र सरकार द्वारा जारी अंतिम कैडर आवंटन आदेशों के बाद कैडर पुनरीक्षण का आदेश पारित किया है। यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 21.12.2006 के पत्र की दृष्टि में, जिसके अधीन झारखंड राज्य ने कैडर आवंटन में परिवर्तन के लिए अनुरोध ग्रहण करने के लिए अपनी सहमति संसूचित किया और शर्तों में से एक शर्त यह थी कि कर्मचारी मूल ग्रेडेशन सूची के आधार पर वरीयता इप्सित करने का हकदार नहीं होगा और परस्पर स्थानांतरण इप्सित करने वाले कर्मचारियों को वरीयता सूची में नीचे डाला जाएगा, अपीलार्थी विभाग ने दिनांक 5.12.2007 का आदेश जारी किया है। यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 शर्तों जिन पर परस्पर स्थानांतरण का अनुरोध ग्रहण किया गया था के बारे में पूरी जानकारी होने पर और परस्पर स्थानांतरण इप्सित करने वाला अपना अभ्यावेदन देने पर दिनांक 5.12.2007 के आदेश में अधिरोपित शर्त का शिथिलिकरण इप्सित नहीं कर सकता है। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस आधार पर रिट याचिका अनुज्ञात करने में गलती किया कि बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के अधीन सेवा के लाभ, जो प्रत्यर्थी सं॰ 1 को प्रोद्भूत हुआ, से इनकार नहीं किया जा सकता है अथवा इसे कम या वापस नहीं लिया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में आदेश इस कारण से भी गलत है क्योंकि बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 परस्पर स्थानांतरण के मामलों में आकृष्ट नहीं होती है। यह कथन किया गया है कि वर्तमान अपीलार्थी, जिसे डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 3844 वर्ष 2008 (राजेन्द्र प्रसाद सिन्हा) में पक्ष नहीं बनाया गया था, ने इसलिए सिविल पुनरीक्षण सं॰ 112 वर्ष 2009 दाखिल किया है। आगे यही निवेदन किया गया है कि **सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 10928 वर्ष 2006, "भरत झा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य''**, में दिनांक 10.12.2007 के आदेश की दृष्टि में, परस्पर स्थानांतरण इप्सित करने वाले अपने पूर्व अभ्यावेदन को वापस लेते हुए दिनांक 5.11.2007 के पत्र के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 1 का अनुरोध स्वीकार नहीं किया जा सकता था क्योंकि दिनांक 5.11.2007 का पत्र केवल प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल किया गया था और अन्य व्यक्ति अर्थात् अविनाश प्रसाद सिंह द्वारा इस पर हस्ताक्षर नहीं किया गया था।

12. दिनांक 15.9.2004 और दिनांक 21.5.2005 के पत्रों को निर्दिष्ट करते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 1 के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री सोहेल अनवर ने निवेदन किया है कि जैसा भारत सरकार द्वारा निर्देश दिया गया है, कर्मचारियों के परस्पर स्थानांतरण को विनियमित करने के लिए राज्य सरकारों द्वारा कोई नियम अथवा मार्गदर्शक सिद्धांत विरचित नहीं किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 3.2.2009 के पत्र पर अपीलार्थी द्वारा किया गया विश्वास कुस्थापित है क्योंकि दिनांक 5.11.2007 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 स्थानांतरित कर दिया गया और चूँकि दिनांक 3.2.2009 के पत्र को भूतलक्षी प्रभाव से प्रयोज्य नहीं बनाया गया है, उसमें उल्लिखित शर्तों को दिनांक 3.2.2009 के पूर्व किए गए स्थानांतरणों पर प्रयोज्य नहीं बनाया जा सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में झारखंड राज्य ने दिनांक 29.8.2009 का पत्र जारी करके **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्देश को क्रियान्वित करने का निर्णय किया। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि चूँकि झारखंड राज्य ने मूल ग्रेडेशन सूची के मुताबिक प्रत्यर्थी सं॰ 1 को वरीयता देने का निर्णय किया है और इसने

''**राजेन्द्र प्रताप सिन्हा**'' **(ऊपर)** के मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को चुनौती नहीं देने का निर्णय किया है, यह न्यायालय दिनांक 1.7.2009 के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 3844 वर्ष 2008 अर्थात् **राजेन्द्र प्रताप सिन्हा (ऊपर)** मामले में दिनांक 26.2.2009 के आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दाखिल सिविल पुनरीक्षण सं॰ 112 वर्ष 2009 इस न्यायालय के समक्ष लंबित है, उक्त पुनर्विलोकन याचिका में अंतिम निर्णय की प्रतीक्षा करना समुचित होगा।

13. प्रत्यर्थी सं॰ 1 की ओर से किए गए निवेदन का उत्तर देते हुए अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रमित सतेन्दर ने निवेदन किया है कि चूँकि गृह (विशेष) विभाग, बिहार सरकार को नोडल एजेन्सी के रूप में गठित किया गया है और दिनांक 21.12.2006 के पत्र के तहत झारखंड राज्य द्वारा दी गयी सहमति की दृष्टि में, परस्पर स्थानांतरणों के लिए आवेदनों सहित कैडर के पुनर्आवंटन के लिए आवेदनों पर विचार किया गया था और कैडर पुनर्आवंटन आदेशों को पारित किया गया था, अतः झारखंड राज्य का दिनांक 29.8.2009 का पत्र, जिसके द्वारा इसके ''**राजेन्द्र प्रताप सिन्हा**'' **(ऊपर)** के मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को क्रियान्वित करने का निर्णय किया, बाध्यकारी नहीं होगा और इसे इस न्यायालय द्वारा विचार में नहीं लिया जा सकता है।

14. हमने पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

15. बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 के अधीन, अविभाजित बिहार राज्य में कैडरों एवं पदों के आवंटन के संबंध में भारत सरकार अंतिम प्राधिकार था। कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, भारत सरकार ने दिनांक 15.9.2004 के पत्र के तहत राज्य सरकारों को कैडर आवंटन आदेश में पुनरीक्षण के लिए अनुरोधों पर विचार करने की अनुमति दी। दिनांक 15.9.2004 के पत्र में परस्पर स्थानांतरण से संबंधित प्रासंगिक उद्धरण नीचे उद्धृत किया जाता है:–

ijLij LFkkukrj.k d ekeyk

nlj lgefr nu oky jkT; lok dkfed d lkFk viu ijLij LFkkukrj.k ij fopkj dju dk vujkèk dju oky dkfedk l vud vH;konu çkIr fd, x, gA pfd dn ljdkj u igy gh vfre vkoVu vkn'kk dk tkjh fd;k g] ;g ,l vujkèkk dk xg.k dju dk dkj.k ugh ikrk gA fdr] vU; ckrk d lkFk ,l fopkj d fy, fucèkuk ,o 'krk dk ifjHkkf"kr djd vFkok bl ç;ktu l mi;Dr fu;ek dk fojfpr djd jkT; ljdkjk d chp gb lgefr ij vkèkkfjr ijLij LFkkukrj.k d vujkèkk ij fopkj dju dh NV mÙkj thoh jkT; ljdkjk dk gA

16. इस प्रकार, यह देखा जाता है कि दिनांक 15.9.2004 के पत्र द्वारा केंद्र सरकार ने मुख्य सचिव, बिहार सरकार को संसूचित किया कि अन्य बातों के साथ ऐसे विचार के लिए निबंधनों एवं शर्तों को परिभाषित करके अथवा इस प्रयोजन से उपयुक्त नियमों को विरचित करके राज्य सरकारों के बीच हुई सहमति पर आधारित परस्पर स्थानांतरणों के अनुरोध पर छूट उत्तरजीवी राज्य के सरकारों को थी। दिनांक 21.5.2005 के आदेश द्वारा परस्पर स्थानांतरण के अनुरोधों को ग्रहण करने के लिए छह शर्तों को अधिसूचित किया गया था।

17. उक्त संसूचनाओं का परिशीलन इसे प्रकट करता है कि परस्पर स्थानांतरण के मामलों पर राज्य सरकारों के बीच ''व्यापक सहमति के आधार पर'' विचार किया जाना था और ''निबंधनों एवं शर्तों'' को परिभाषित करने अथवा इस प्रयोजन से उपयुक्त नियमों को विरचित करने की छूट राज्य सरकारों को

थी। दिनांक 21.12.2006 के पत्र द्वारा झारखंड राज्य ने स्पष्ट शब्दों में निबंधनों एवं शर्तों को संसूचित किया जिनके आधार पर परस्पर स्थानांतरण के मामलों पर विचार किया जाना था। वर्तमान अपीलार्थी ने दिनांक 21.12.2006 के पत्र पर कृत्य किया और दिनांक 5.12.2007 का आदेश जारी किया जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 के कैडर आवंटन को इस शर्त पर पुनर्विलोकित किया गया था कि वह मूल ग्रेडेशन सूची के मुताबिक वरीयता का दावा करने का हकदार नहीं होगा।

18. विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि चूँकि दिनांक 21.5.2005 के पत्र ने वरीयता की हानि के किसी शर्त को प्रतिपादित नहीं किया था, अत:, दिनांक 5.12.2007 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को ऐसी शर्त के अध्यधीन नहीं किया जा सकता था। दिनांक 21.5.2005 के पत्र का परिशीलन इसे स्पष्ट करता है कि यह केवल उन कर्मचारियों जो उक्त उल्लिखित छह शर्तों को परिपूर्ण करते थे के कैडर आवंटन के पुनर्विलोकन के लिए प्रस्तावों को भेजने के लिए मुख्य सचिव, झारखंड सरकार को दी गयी संसूचना थी। दिनांक 21.5.2005 के पत्र में उल्लिखित शर्तें परस्पर स्थानांतरण के मामलों पर विचार करने के लिए पात्रता शर्तें हैं और दिनांक 21.5.2005 का पत्र स्थानांतरण के निबंधनों एवं शर्तों को विहित नहीं करता है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 की ओर से किया गया प्रतिवाद कि दिनांक 21.5.2005 के पत्र में विहित वरीयता की हानि से संबंधित किसी शर्त की अनुपस्थिति में दिनांक 5.12.2007 के स्थानांतरण आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को ऐसी शर्त के अध्यधीन नहीं किया जा सकता था जिसके अधीन वह अपनी मूल वरीयता खो बैठेगा, इस प्रकार अस्वीकार किए जाने का दायी है।

19. ''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर) में, वरीयता सूची में कर्मचारी को पदावनत करने से गया था, जैसा की स्थानांतरण आदेश में अनुबंधित किया गया था, राज्य प्रत्यर्थीगण को अवरुद्ध करने के लिए प्रार्थना की गयी थी और इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के अधीन प्रावधान को ध्यान में लेते हुए संप्रेक्षित किया कि चूँकि सरकारी सेवकों जिनकी सेवाओं को उत्तरजीवी राज्यों को आवंटित किया गया है कि सेवा शर्तें परिवर्तित नहीं की जाएगी, अत: एक अनंतिम ग्रेडेशन सूची प्रकाशित की गयी थी जिसमें यह उल्लिखित किया गया था कि सरकारी सेवकों जिनको झारखंड कैडर आवंटित किया गया है की वरीयता प्रभावित नहीं की जाएगी। किंतु, चूँकि उक्त राजेन्द्र प्रताप सिन्हा की वरीयता परिवर्तित किया जाना इप्सित किया गया था, उक्त तथ्यों की दृष्टि में विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि उक्त मामले में रिट याची का मामला एक कैडर से दूसरे कैडर में स्थानांतरण का नहीं था बल्कि यह सेवाओं के परस्पर आदान-प्रदान के लिए योजना के आधार पर उत्तरजीवी झारखंड राज्य को उसकी सेवाओं के आवंटन का मामला था। अंतत: यह अभिनिर्धारित किया गया था कि बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के प्रावधान सरकारी सेवकों, जिनकी सेवाओं को उत्तरजीवी राज्य में से किसी एक को आवंटित किया गया है, के अलाभ के प्रति सेवा शर्तों में किसी परिवर्तन की अनुमति नहीं देते हैं।

20. जैसा ऊपर गौर किया गया है, वर्तमान मामले में रिट याचिका वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल दिनांक 16.1.2008 के अभ्यावेदन पर ''विचार करने एवं निर्णय लेने के लिए'' प्रत्यर्थी झारखंड राज्य को निर्देश देने के लिए दाखिल की गयी थी। इस प्रकार, **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** के मामले में इप्सित अनुतोष वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा की गयी प्रार्थना से बिल्कुल भिन्न था। इसके अतिरिक्त, बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धारा 73 के परिशीलन से यह प्रकट है कि बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 का परन्तुक का संरक्षण केवल एक राज्य से दूसरे राज्य को उसकी

सेवा के अंतिम आवंटन की प्रक्रिया के दौरान कर्मचारी को उपलब्ध है। स्वीकृत रूप से, बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 72 के अधीन जारी दिनांक 13.9.2006 के अंतिम कैडर आवंटन आदेश के फलस्वरुप प्रत्यर्थी सं॰ 1 की सेवाएँ अंतिम रूप से बिहार राज्य को आवंटित की गयी थी। बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धाराओं 72 एवं 73 का पठन निम्नलिखित है:–

*"72. **fcgkj ,o >kj[kM e lokvk l lcfèkr çkoèkku-**&(1) çR;d 0;fDr tk fu;r fnu l Bhd igy fo|eku fcgkj jkT; d dk;dyki d lcèk e lok dj jgk g og ml fnu dk ,o ml fnu l fcgkj jkT; d dk;dyki d lcèk e lok djuk tkjh j[kxk tcrd fd dUn ljdkj d lkekU; ;k fo'k"k vkn'k }kjk >kj[kM jkT; d dk;dyki d lcèk e lok dju dh mldh t:jr u gk%*

ijUr ;g fd fu;r fnu l ,d o"k dh vofèk d volku d ckn bl èkkjk d vèkhu dkb fun'k tkjh ugh fd;k tk;xkA

(2) fu;r fnu d mijkr ;FkklHko ;Fkk'kh?k dUn ljdkj lkekU; ;k fo'k"k vkn'k }kjk ml mÙkjorh jkT; dk fuèkkj.k djxk ftl miekkjk (1) e fufn"V çR;d 0;fDr lok d fy, vkofVr fd;k tk;xk rFkk ml frfFk dk ftld çHkko l ,lk vkoVu çHkkoh gkxk ;k çHkkoh le>k tk;xkA

(3) çR;d 0;fDr ftl miekkjk (2) d çkoèkkuk d vèkhu mÙkjorh jkT; dk vkofVr fd;k x;k g] vxj og igy l gh mle lok u dj jgk gk ,lh frfFk l mÙkjorh jkT; dk lok d fy, miyCèk djk;k tk;xk ftlij lc) ljdkjk d chp lEefr cuh gk ;k ,lh lgefr dh vuifLFkfr e ,lh frfFk l tk dUn ljdkj }kjk fuèkkfjr fd;k tk ldxkA

*73. **lok l tM vU; çkoèkku-**&(1) èkkjk 72 dh dkb Hkh ckr l?k ;k fdlh jkT; d dk;dykik d lcèk e lok dj jg depkfj;k dh lok'krk d fuèkkj.k d lcèk e lfoèkku d vè;k; 1 d Hkkx XIV d çkoèkkuk d çoru dk fu;r fnu dk ;k bld mijkr çHkkfor dju okyk ugh le>k tk;xk%*

ijUr ;g fd ,d ,l 0;fDr d ekey e fu;r fnu d Bhd igy ç;kT; lok dh 'kr dUn ljdkj d iokueknu d flok; mldk gkfu igpkr g, ifjofrr ugh dh tk;xh ftl èkkjk 72 d vèkhu fcgkj jkT; ;k >kj[kM jkT; dk vkofVr le>k x;k gA

(2) fdlh 0;fDr }kjk fu;r fnu d igy dh x;h lHkh lok;&

(a) vxj ml èkkjk 72 d vèkhu fdlh jkT; dk vkofVr fd;k x;k le>k x;k g] ml ml jkT; d dk;dyki d lEcUèk e fd;k x;k le>k tk;xk(

(b) vxj ml >kj[kM d ç'kklu d lcèk e l?k dk vkofVr fd;k x;k le>k tkrk g] ml lok dh 'krk dk fofu;fer dju okyk fu;ek d ç;ktu l l?k d dk;dyki d lcèk e lok le>k tk;xkA

*(3) èkkjk 72 d çkoèkku fdlh vf[ky Hkkjrh; lok d lnL;k d lcèk e ykx ugh gkxA**

21. इस प्रकार, यह प्रतीत होगा कि बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के परन्तुक का संरक्षण केवल उस स्थिति में प्रत्यर्थी सं॰ 1 को उपलब्ध होता यदि उसने दिनांक 13.9.2006 के कैडर आवंटन आदेश के अनुपालन में बिहार सरकार के अधीन सेवा ग्रहण किया होता और उस स्थिति में उसके प्रति हानिकर किसी तरीके से उसकी सेवा शर्तों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता था। किंतु, भारत सरकार के दिनांक 15.9.2004 के पत्र के अनुसरण में परस्पर राज्यों द्वारा सहमति प्राप्त और नोडल विभाग द्वारा क्रियान्वित कतिपय निबंधनों एवं शर्तों पर परस्पर स्थानांतरण के लिए आवेदन पर कैडर आवंटन को पुनर्विलोकित करने वाला आदेश बिल्कुल भिन्न संव्यवहार था और बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के परन्तुक के अधीन संरक्षण उन कर्मचारियों को उपलब्ध नहीं है जिन्होंने परस्पर स्थानांतरण इप्सित किया और जिनके अनुरोध को इस शर्त के अध्यधीन स्वीकार किया गया है कि वे अंतिम ग्रेडेशन सूची के मुताबिक वरीयता का दावा नहीं करेंगे। दिनांक 5.12.2007 के आदेश में वरीयता की हानि अनुबंधित करने वाली शर्त, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को झारखंड राज्य में कैडर पुनर्आवंटित किया गया था, को बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के अधीन प्रावधान के प्रतिकूल नहीं कहा जा सकता है। दिनांक 5.12.2007 के आदेश में अनुबंधित शर्त प्रत्यर्थी सं॰ 1 पर बाध्यकारी है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करने में स्पष्टत: गलती की कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 अंतिम ग्रेडेशन सूची के मुताबिक अपनी वरीयता का हकदार नहीं होगा यद्यपि ऐसी प्रार्थना रिट याचिका में नहीं की गयी थी।

22. नोडल एजेन्सी अर्थात् गृह (विशेष) विभाग का निर्णय दोनों राज्यों पर बाध्यकारी है और वस्तुत: झारखंड राज्य ने यह कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है कि दिनांक 5.12.2007 के आदेश द्वारा अधिरोपित शर्तों को पथ निर्माण विभाग, झारखंड सरकार द्वारा एकपक्षीय रूप से परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। अपीलार्थी ने यह अभिवचन भी किया है कि राज्य पुनर्गठन उच्च स्तरीय कमिटी ने दिनांक 27.6.2007 की अपनी बैठक में महसूस किया कि यदि वरीयता की हानि अनुबंधित करने वाले कैडर पुनर्आवंटन आदेशों में शर्त को शिथिल किया जाता है, यह उन कर्मचारियों के मनोबल को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा जिन्होंने भारत सरकार के आदेश का पालन किया और अपने आवंटित उत्तरजीवी राज्यों में पद ग्रहण किया और यह निर्णय किया गया था कि कैडर पुनर्आवंटन इप्सित करने वाले कर्मचारियों को इस शर्त के अध्यधीन किया जाना चाहिए कि वे अंतिम ग्रेडेशन सूची के मुताबिक वरीयता का दावा नहीं करेंगे। अपीलार्थी के लिए उपस्थित अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में पारित आदेश की दृष्टि में पटना उच्च न्यायालय ने भी अनेक कर्मचारियों को अंतरिम संरक्षण प्रदान किया है और इसलिए, वर्तमान मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक को इस न्यायालय द्वारा विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता थी। पूर्वोक्त कारणों से, हम इस प्रतिवाद में सार नहीं पाते हैं कि चूँकि झारखंड राज्य ने **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को क्रियान्वित करना चुना है, वर्तमान मामले में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। झारखंड राज्य दिनांक 21.12.2006 के पत्र के तहत अपनी सहमति संसूचित करने के बाद **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में निर्णय क्रियान्वित करना नहीं चुन सकता था क्योंकि यह एकपक्षीय रूप से सहमति वापस लेने के तुल्य होगा। हम आगे पाते हैं कि **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में वर्तमान अपीलार्थी को पक्ष नहीं बनाया गया था और इस प्रकार, उक्त मामले में निर्णय वर्तमान अपीलार्थी की अनुपस्थिति में दिया गया था, और इसलिए, वर्तमान प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल रिट याचिका **''राजेन्द्र प्रताप सिन्हा'' (ऊपर)** में निर्णय का अनुसरण करते हुए अनुज्ञात नहीं की जा सकती थी। चूँकि हमने अभिनिर्धारित किया है कि बिहार पुनर्गठन अधिनियम, 2000 की धारा 73 के अधीन संरक्षण परस्पर स्थानांतरण इप्सित करने वाले कर्मचारियों को उपलब्ध नहीं है,

हम प्रत्यर्थी सं॰ 1 के अभिवचन को स्वीकार नहीं करते हैं कि पुनर्विलोकन याचिका सं॰ 112 वर्ष 2009 में अंतिम निर्णय तक वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील की सुनवाई स्थगित की जाए।

23. परिणामस्वरुप, हम अभिनिर्धारित करते हैं कि दिनांक 5.12.2007 के आदेश में अनुबंधित शर्त प्रत्यर्थी सं॰ 1 और अन्य कर्मचारियों पर बाध्यकारी हैं और बिहार पुनर्गठन अधिनियम की धारा 73 के परन्तुक के अधीन संरक्षण परस्पर स्थानांतरण इप्सित करने वाले कर्मचारियों को उपलब्ध नहीं है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 1.7.2009 का आक्षेपित आदेश गंभीर दुर्बलताओं से पीड़ित है और तद्नुसार, हम दिनांक 1.7.2009 के आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हैं। परिणामस्वरुप, लेटर्स पेटेन्ट अपील अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferko dekj xlrk] U;k;efrx.k

मंगल बोदरा

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 543 of 2013. Decided on 30th April, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 17 वर्ष 2001 में विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 9.9.2002 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 12.9.2002 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—पत्नी की हत्या–अनेक अवसरों पर काफी मारपीट करने का अभिकथन–अपीलार्थी द्वारा काफी पीटे जाने के बाद मृतक ने जहर खा लिया–मृत्यु मृतका द्वारा सही गयी उपहतियों के कारण हुई है और उपहतियाँ प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थीं–चाक्षुक साक्ष्य एवं चिकित्सीय साक्ष्य संपुष्टकारी हैं–अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपीलार्थी द्वारा की गयी मृतका की हत्या का अपराध सिद्ध किया है–विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दंडादेश परिवर्तित करने एवं दोषसिद्धि संपरिवर्तित करने का कारण नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajendra Prasad Gupta, For the Appellant; Mr. T.N. Verma, For the State.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 17 वर्ष 2001 में विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, चाईबासा, पश्चिम सिंहभूम द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय एवं आदेश तथा दंडादेश के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गयी है जिसके द्वारा विद्वान विचारण न्यायालय ने दिनांक 9/12 सितंबर, 2002 के आदेश के तहत इस अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया है और उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंड दिया है और 2000/- रुपयों का जुर्माना और व्यतिक्रम में एक वर्ष का कठोर कारावास इस अपीलार्थी के विरुद्ध अधिनिर्णीत किया गया है; अत: वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

2. अभियोजन का मामला यह है कि अ॰ सा॰ 1 जो मृतका का भाई है, ने दिनांक 6.7.2000 को गोयल केरा पुलिस थाना, जिला पश्चिम सिंहभूम, चाईबासा के समक्ष फर्दबयान दिया कि दिनांक 5.7.2000 को उसकी बहन को इस अपीलार्थी द्वारा बुरी तरह पीटा गया था कि वह जहर खाने के लिए मजबूर हो गयी और इसलिए, उसकी मृत्यु हो गयी। पहले भी अनेक अवसरों पर उसने उसकी बहन जो इस अपीलार्थी की पत्नी है को पीटा है। उसकी बहन इस अपीलार्थी की दूसरी पत्नी है और इस अपीलार्थी

की पहली पत्नी की मृत्यु भी इस अपीलार्थी द्वारा पीटे जाने के कारण हो गयी है। अपीलार्थी और सूचक के बहन के बीच विवाह घटना की तिथि के लगभग छह वर्ष पहले संपन्न हुआ था, और इसलिए, अन्वेषण किया गया था और अनेक गवाहों के बयान दर्ज किए गए थे और विचारण न्यायालय के समक्ष आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और सत्र विचारण सं॰ 17 वर्ष 2001 में मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और अ॰ सा॰ 1 से 8 द्वारा दिए गए साक्ष्य तथा अभिलेख पर मौजूद अन्य दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय ने इस अपीलार्थी को दया मनि बोदरा जो इस अपीलार्थी की पत्नी है की हत्या के अपराध के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया है और उसे आजीवन कारावास का दंड दिया है और दोषसिद्धि के इस निर्णय एवं आदेश तथा दंडादेश के विरुद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

3. हमने अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्य में महत्वपूर्ण लोप, विरोधाभास एवं सुधार हैं। इसके अतिरिक्त, अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा दयामनि बोदरा की हत्या का अपराध सिद्ध करने में विफल रहा है। घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। तथाकथित चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 2 घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है। इसके अतिरिक्त, प्राथमिकी को देखते हुए अभियोजन का थ्योरी एक-दूसरे के विपरीत जा रहा है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि विसरा रिपोर्ट भी अभिलेख पर नहीं लाया गया है; वस्तुतः जहर खाने के बारे में अभियोजन की पूरी थ्योरी आधारहीन है। विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है और इसलिए, विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, चाईबासा, पश्चिम सिंहभूम द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं आदेश तथा दंडादेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

4. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि अ॰ सा॰ 2 जो तथाकथित चश्मदीद गवाह है मृतका का निकट संबंधी है। इस अ॰ सा॰ 2 के अलावा अ॰ सा॰ 4 जो मृतका की माता है भी अनुश्रुत गवाह है। सूचक अ॰ सा॰ 1 जो मृतका का भाई है भी अनुश्रुत गवाह है। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 4 अनुश्रुत गवाह हैं और वे अभियोजन के मददगार नहीं हैं। जहाँ तक अ॰ सा॰ 3 का संबंध है, जो अभिग्रहण सूची गवाह है और जहर की तथाकथित थ्योरी जिसे विसरा रिपोर्ट के बिना अभियोजन द्वारा दिया गया है भी अभियोजन गवाहों के मददगार नहीं हैं जबकि अभियोजन गवाहों अ॰ सा॰ 5, 6 और 7 ने अपने अभिसाक्ष्य में इस अपीलार्थी अभियुक्त द्वारा निभायी गयी भूमिका के बारे में एक शब्द भी नहीं कहा है। अ॰ सा॰ 8 डॉक्टर है जो निश्चय ही चश्मदीद गवाह नहीं है। इस प्रकार, अभियोजन का संपूर्ण मामला आधारहीन है और इस अपीलार्थी के विरुद्ध लेश मात्र साक्ष्य नहीं है। अतः, विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, चाईबासा, पश्चिम सिंहभूम द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं आदेश तथा दंडादेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है। अन्यथा भी, अपीलार्थी दिनांक 8.7.2000 से न्यायिक अभिरक्षा में है; इस प्रकार, वह दिनांक 30.4.2014 तक लगभग 13 वर्ष 9 माह 23 दिन से कारा में है और इसलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंड भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंड में संपरिवर्तित किया जा सकता है क्योंकि यह मृतका की पूर्व नियोजित एवं सुनियोजित हत्या नहीं है।

5. हमने राज्य के लिए उपस्थित विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा गलती नहीं की गयी

है। अभियोजन का मामला चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 2 पर और अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ योगेन्द्र सिंह द्वारा दिए गए चिकित्सीय साक्ष्य पर और अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य पर आधारित है। राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि यद्यपि अ॰ सा॰ 2 मृतका का निकट संबंधी है किंतु वह अपीलार्थी का संबंधी भी है और इस अपीलार्थी को झूठा आलिप्त करने का कारण नहीं है। अ॰ सा॰ 2 और इस अपीलार्थी के बीच बैर नहीं है और अ॰ सा॰ 2 के प्रति परीक्षण में इस अपीलार्थी के पक्ष में कुछ भी नहीं आया है। अ॰ सा॰ 2 ने स्पष्टत: कथन किया है कि इस अपीलार्थी ने दयामनि बोदरा पर लकड़ी के कुंदे से वार किया है और इस उपहति के कारण उसकी मृत्यु हो गयी। अ॰ सा॰ 2 ने तुरन्त अ॰ सा॰ 1 को टेलीफोन पर सूचना दिया और अ॰ सा॰ 1 द्वारा दिये गये अभिसाक्ष्य को देखते हुए, विशेषत: पैरा-4 में जहाँ उसने कहा है कि उसे अ॰ सा॰ 2 द्वारा तुरन्त सूचना दी गयी थी तथा अ॰ सा॰ 1 अपनी बहन के घर की ओर भागा और उसने दयामनि बोदरा को घायल देखा। इस प्रकार, यद्यपि अ॰ सा॰ 1 चश्मदीद गवाह नहीं है किंतु, वह हत्या के तुरन्त बाद के तथ्य का गवाह है। इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 4 जो मृतका की माता है को भी अ॰ सा॰ 2 द्वारा तुरन्त सूचित किया गया है इस प्रकार, अ॰ सा॰ 2 चश्मदीद गवाह है जिसने तुरन्त अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 4 को सूचित किया है। अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ योगेन्द्र सिंह द्वारा दिए गए अभिसाक्ष्य को देखते हुए, अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा की गयी दयामनि बोदरा की हत्या सिद्ध किया है और विद्वान विचारण न्यायालय ने सही प्रकार से अभिसाक्ष्यों एवं अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजी साक्ष्यों (प्रदर्श 2) पर विश्वास किया है और राज्य के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय द्वारा इस दांडिक अपील को ग्रहण नहीं किया जा सकता है।

6. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए इस दांडिक अपील में गुणागुण नहीं है। अत:, हम एतद् द्वारा अभिलेख पर मौजूद निम्नलिखित तथ्यों, कारणों एवं साक्ष्य पर इस दांडिक अपील को खारिज करते हैं:–

> *(i) vfHk;ktu dk ekeyk ;g g fd v0 lk0 1 tk erdk dk Hkkb vkj bl ekey dk lpd gu fnukd 6.7.2000 dk xk;y djk ifyl Fkkuk] pkbcklk] if'pe flgHke d le{k Qnc;ku fn;k Fkk fd fnukd 5.7.2000 dk bl vihykFkh tk erd dk ifr gu lpd (v0 lk0 1) dh cgu dk bruh cjh rjg ihVk Fkk fd mldh cgu tgj [kku d fy, etcj gk x;hA Qnc;ku e ;g dFku Hkh fd;k x;k g fd bl vihykFkh u mldh cgu tk bl vihykFkh dh iRuh g dk ihVk FkkA bl çdkj ihV tku d dkj.k bl vihykFkh dh igyh iRuh dh Hkh eR; gk x;h FkhA mldh cgu dk fookg bl vihykFkh d lkFk ?kVuk dh frfFk d yxHkx Ng o"k igy gvk Fkk vkj fookg d rjUr ckn vud voljk ij bl vihykFkh u mldh cgu dk ihVk FkkA bl Qnc;ku d vkèkkj ij çkFkfedh nt dh x;h Fkh] vUo"k.k fd;k x;k Fkk] vud xokgk dk c;ku nt fd;k x;k Fkk vkj fopkj.k U;k;ky; d le{k vkjki&i= nkf[ky fd;k x;k Fkk vkj l= U;k;ky; dk l= fopkj.k l0 17 o"k 2001 lin fd;k x;k Fkk vkj l= U;k;ky; u v0 lk0 1 l 8 }kjk fn, x, vfHklk{; d vkèkkj ij vkj U;k;ky; xokg tk vUo"k.k vfèkdkjh g d vkèkkj ij bl vihykFkh dk n;kefu cknjk dh gR;k d vijkèk d fy, nk"kfl) fd;k g vkj vkthou dkjkokl dk nM fn;k g vkj nk"kflf) d bl fu.k; ,o vkn'k rFkk nMkn'k d fo#) vihykFkh }kjk oreku vihy nkf[ky dh x;h gA*

(ii) vfHky[k ij ekt n lk{; ,o çkFkfedh dk n[kr g, ;g çrhr gkrk g fd v0 lk0 2 egRoi.k xokg g tk p'enhn xokg g vkj v0 lk0 2 tk vihykFkh dk Hkrhtk g }kjk fn, x, vfHklk{; dk n[kr g,] v0 lk0 2 ij vfo'okl dju dk dkj.k ugh g fd og bl vihykFkh dk >Bk vkfylr djxk vkj v0 lk0 2 rFkk bl vihykFkh d chp cj ugh gA v0 lk0 2 u n;kefu cknjk dh gR;k e bl vihykFkh }kjk fuHkk;h x;h Hkfedk dk Li"Vr% dFku fd;k gA bl xokg u fooj.k fn;k Fkk fd bl vihykFkh u erdk n;kefu cknjk tk bl vihykFkh dh iRuh g dk ydMh d dn l ihVk Fkk vkj ml cjh rjg ihVk x;k Fkk vkj bl migfr d dkj.k og fxj x;h Fkh vkj mldh eR; gk x;h FkhA mld çfr ijh{k.k dk n[kr g, bl vihykFkh d i{k e dN ugh vk;k g bld foijhr] çfr ijh{k.k e mlu viu e[; ijh{k.k dk li"V fd;k gA

(iii) ge v0 lk0 2 ij vfo'okl dju dk dkj.k ugh ikr gA v0 lk0 2 u ?kVuk dh frfFk] le; ,o LFkku rFkk ml rjhdk ft l rjhd l bl vihykFkh u erdk dh gR;k dkfjr fd;k g fl) fd;k gA bl v0 lk0 2 u v0 lk0 1 tk erdk dk Hkkb g dk lfpr fd;k g vkj ;g xokg fo'oluh; xokg gA vfHklk{; fo'k"kr% e[; ijh{k.k dk fdl h xokg d çfr ijh{k.k d lkFk tkpk tkuk gA çfr ijh{k.k cpko i{k dk gfFk;kj g vkj bl v0 lk0 2 d çfr ijh{k.k e mlu viuk e[; ijh{k.k li"V fd;k g vkj fo}ku fopkj.k U;k;ky; }kjk v0 lk0 1 l 8 }kjk fn, x, vfHklk{; dk vfèkeY;u dju e xyrh ugh dh x;h gA

(iv) v0 lk0 1 tk erdk dk Hkkb ,o lpd g d vfHklk{; dk n[kr g,] ft lu ifyl d le{k Qnc;ku fn;k g vkj v0 lk0 1 d vfHklk{; dk n[kr g, ft lu dFku fd;k g fd mlu rjUr v0 lk0 2 dk lfpr fd;k Fkk fd bl vihykFkh }kjk mldh cgu dk ihVk x;k Fkk vkj mldh eR; gk x;h FkhA rjUr ;g lpd v0 lk0 1 viuh cgu d ?kj dh vkj Hkkxk tgk mlu viuh cgu n;kefu cknjk dk er 'kjhj n[kkA er 'kjhj ij fpfUgr migfr FkhA v0 lk0 2 Hkh erdk d ?kj e mifLFkr FkkA mlu viuk Qnc;ku fl) fd;k g tk çn'k 1 gA mld }kjk eR; leh{kk fjikV ij Hkh gLrk{kj fd;k x;k g ft l Hkh çn'k l[;k fn;k x;k gA mld çfr ijh{k.k dk n[kr g,] mlu erdk }kjk ik;h x;h migfr li"V fd;k gA bl çdkj] v0 lk0 1 p'enhn xokg ugh g fdr og vud rF;k dk xokg g ft lu ml gR;k d rjUr ckn n[kk gA v0 lk0 1 }kjk fn;k x;k vfHklk{; v0 lk0 2 d vfHklk{; dk li"V djrk gA v0 lk0 1 Hkh fo'oluh; xokg gA blh çdkj l] v0 lk0 4 tk erdk dh ekrk g u viu vfHklk{; e dFku fd;k g fd ml v0 lk0 2 }kjk ?kVuk vkj bl rF; d ckj e lfpr fd;k x;k Fkk fd bl vihykFkh u mldh i=h n;kefu cknjk dh gR;k fd;k gA bl xokg u Hkh ?kVuk d frfFk] le; ,o LFkku dk fl) fd;k g vkj mldk vfHklk{; v0 lk0 2 d vfHklk{; dk li"V djrk gA

(v) v0 lk0 8 MkO ;kxUn flg }kjk fn, x, vfHklk{; dk n[kr g, erdk d 'kjhj ij fuEufyf[kr eR; io migfr;k ik;h x;h Fkh%

(i) thHk ckgj fudyh gb FkhA

(ii) fo?kVu d vfre pj.k d dkj.k Ropk dk jx uhyk dkyk gk x;k Fkk rFkk xnu rFkk Nkrh dk ---------- mifLFkr FkkA

(iii) foPNnu dju ij xnu Vfd;k fjx VVk FkkA 'okl uyh ij [ku FkkA

(iv) FkkjDl LVue VVk gvk FkkA ck;h vkj dh pkFkh] ikpoh vkj Ngh ilyh Hkh VVh gbZ FkhA

(v) Fkkjfld dfoVh e jDr mifLFkr FkkA

(vi) ân; [kkyh FkkA iV e rh[kh xèk d lkFk dN rjy vrfo"V FkkA

(vii) xHkk'k; NkV vkdkj dk FkkA jklk;fud ijh{k.k d fy, foljk j[kk x;k FkkA

(viii) QQM dk Hkkx] ân; dk Hkkx] ;Ñr dk Hkkx] vkr] frYyh] oDd ,o ijk iV Hkh ljf{kr fd;k x;k FkkA

(ix) er%& eR; jDr lko ,o vk?kkr dkfjr dju okyh mDr migfr;k d dkj.k dkfjr gbZ FkhA

(x) xnu ,o Nkrh ij migfr dM ,o HkkFkj inkFk }kjk dkfjr dh tk ldrh gA ;g gkFk ij d okj l Hkh dkfjr dh tk ldrh gA

(xi) eR; d le; l chrk le;&48 ?kV l vfèkdA

(xii) mDr migfr;k çÑfr d lkekU; Øe e eR; dkfjr dju d fy, i;kIr FkhA

vO lkO 8 }kjk fn, x, iokDr vfHkldk{; dh nf"V e ;g çrhr gkrk g fd eR; erdk }kjk ik;h x;h migfr;k d dkj.k gbZ g vkj migfr;k çÑfr d lkekU; Øe e eR; dkfjr dju d fy, i;kIr FkhA bl çdkj] vO lkO 8 dk vfHkldk{; vO lkO 2 d vfHkldk{; dk lei"kZu djrk gA bl çdkj] pk{kd lk{; vkj fpfdRlh; lk{; li"Vdkjh gA bl vihykFkh dk nk"kfl) djr g, fd;k x;k gA fopkj.k U;k;ky; }kjk ekey d bl igy dk lefpr :i l vfèkeY;u fd;k x;k gA

7. पूर्वोक्त तथ्यों, यहाँ ऊपर कथित कारणों एवं अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के समेकित प्रभाव के कारण अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे इस अपीलार्थी द्वारा की गयी दयामनि बोदरा की हत्या का अपराध सिद्ध किया है और हम सत्र मामला सं॰ 17 वर्ष 2001 में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत दोषसिद्धि को संपरिवर्तित करने एवं दंडादेश को परिवर्तित करने का कारण नहीं पाते हैं। इस दांडिक अपील में सार नहीं है। अतः, हम एतद् द्वारा सत्र विचारण सं॰ 17 वर्ष 2001 में विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, चाईबासा, पश्चिम सिंहभूम द्वारा दिए गए दिनांक 9/12 सितंबर, 2002 के निर्णय को मान्य ठहराते हैं।

8. तद्नुसार, यह दांडिक अपील एतद् द्वारा खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

झारखंड राज्य एवं अन्य

cuke

अजम्बर अहीर एवं एक अन्य

L.P.A. No. 238 of 2009. Decided on 13th May, 2014.

बिहार पेंशन नियमावली, 1950—नियम 86—पेंशन–प्रत्यर्थी अस्थायी रूप से चौकीदार के रूप में कार्यरत था और ऐसा नियोजन किसी अधिष्ठायी पद पर नहीं था–पेंशन नियमावली के नियम 86 के मुताबिक पेंशन का लाभ पाने के लिए सरकारी सेवक के पास दस वर्ष से अन्यून की वास्तविक अर्हक सेवा होनी चाहिए थी किंतु प्रत्यर्थी के पास पेंशन का लाभ पाने के लिए दस वर्षों की अर्हक सेवा नहीं है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और एल॰ पी॰ ए॰ अनुज्ञात किया गया। (पैराएँ 12 से 17)

निर्णयज विधि.–2003 (3) BLJR 2388—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Sunil Singh, For the Appellants; M/s Mukesh Kumar Sinha, Jai Prakash Sahu, For the Respondents.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–यह एल॰ पी॰ ए॰ डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6514/2005 में पारित आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा रिट न्यायालय ने रिट याची अजंबर अहीर की आरंभिक नियुक्ति की तिथि एवं उसके द्वारा दी गयी अस्थायी सेवा को विचार में लेते हुए प्रत्यर्थीगण को पेंशन के साथ अन्य सेवानिवृत्ति देयों के भुगतान पर विचार करने के लिए झारखंड राज्य को निर्देश दिया।

2. रिट याची प्रथम प्रत्यर्थी का मामला यह है कि उसे तमार सर्किल, जिला राँची में अस्थायी बीट सं॰ 3/1 में दिनांक 3.1.1958 को चौकीदार के रूप में नियुक्त किया गया था और तब से उसने कम वेतन पर अस्थायी कर्मचारी के रूप में सरकार को सेवा दिया है। बार–बार मांग किए जाने के बाद सरकार ने दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से 750-12-870-14-940/- रुपया के वेतनमान में नियमित पद में चौकीदारों को चतुर्थ वर्ग कर्मचारी के रूप में दिनांक 5.5.1992 के पत्र के तहत घोषित किया और उक्त निर्णय रिट याची प्रथम प्रत्यर्थी की सेवा पुस्तिका में प्रविष्ट किया गया था। याची प्रत्यर्थी दिनांक 31.12.1997 को सेवा से सेवानिवृत्त हुआ। यद्यपि प्रथम प्रत्यर्थी को दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से नियमित किया गया था, प्रथम प्रत्यर्थी ने दिनांक 3.1.1958 को अपनी नियुक्ति से सरकार को सेवा दिया और प्रथम प्रत्यर्थी चौकीदार चतुर्थ वर्ग कर्मचारी के रूप में अपनी सेवा का 40 वर्ष पूरा करने पर सेवा निवृत्त हुआ किंतु उसे पेंशन का भुगतान नहीं किया गया है।

3. रिट याची प्रथम प्रत्यर्थी का मामला यह है कि उसने 40 वर्षों तक सरकार को सेवा दिया और प्रथम प्रत्यर्थी की 40 वर्ष की सेवा की दृष्टि में वह अन्य लाभों, सामूहिक बीमा, अवकाश नकदीकरण और भविष्य निधि के अतिरिक्त समयबद्ध वेतनमान के साथ पुनरीक्षित वेतन के लाभ, पेंशन, उपदान का हकदार था। यह कथन करते हुए कि उसका अभ्यावेदन निपटाया नहीं गया है और सेवा लाभ का भुगतान नहीं किया गया है, प्रथम प्रत्यर्थी ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6514/2005 प्रत्यर्थीगण (वर्तमान अपीलार्थीगण) को प्रथम प्रत्यर्थी जिसने चतुर्थ वर्ग कर्मचारी–चौकीदार के रूप में सेवा दिया को सेवा लाभ का भुगतान करने के लिए निर्देश देने के लिए दाखिल किया।

4. झारखंड राज्य ने प्रतिवाद करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया कि चौकीदार की सेवा दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से नियमित की गयी थी और राज्य का चौकीदार दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से अर्थात् सरकारी सेवक के रूप में घोषित किए जाने की तिथि से 10 वर्ष की सेवा पूरी करने पर पेंशन का हकदार होगा। रिट याची प्रथम प्रत्यर्थी दिनांक 1.1.1990 को सरकारी सेवक बना और दिनांक 13.12.1997 को अधिवर्षित हुआ और इसलिए, उसने केवल सेवा का आठ वर्ष पूरा किया और प्रथम प्रत्यर्थी के पास पेंशन योग्य अर्हक सेवा नहीं है और वह पेंशन का हकदार नहीं है।

5. यह संप्रेक्षित करते हुए कि बिहार पेंशन नियमावली के नियम 63 के मुताबिक, नियमितिकरण आरंभिक नियुक्ति की तिथि से संबंधित होगा और पेंशन एवं अन्य सेवा लाभों की संगणना करने के लिए

अस्थायी सेवा को विचार में लिया जाना होगा, विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी झारखंड राज्य को उस आदेश की प्राप्ति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप रिट याचिका को अन्य सेवानिवृत्ति देयों के साथ पेंशन के भुगतान पर विचार करने का निर्देश दिया।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश यह अधिमूल्यन करने में विफल रहे कि बिहार पेंशन नियमावली का नियम 63 केवल उस मामले पर लागू होता है जहाँ किसी व्यक्ति को सरकारी सेवक के रूप में अधिष्ठायी अथवा स्थानापन्न, यद्यपि अस्थायी, पद पर नियुक्त किया जाता है। आगे यह निवेदन किया गया था कि प्रत्यर्थी रिट याची केवल दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से सरकारी सेवक बना और दिनांक 31.12.1997 को सेवानिवृत्त हुआ और इस प्रकार उसकी अधिष्ठायी सेवा आठ वर्ष की है और चूँकि प्रत्यर्थी ने 10 वर्षों की अर्हक सेवा पूरा नहीं किया है, प्रत्यर्थी पेंशन का हकदार नहीं है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने अस्थायी कर्मचारी के रूप में अपीलार्थी द्वारा दी गयी विगत सेवा को विचार में लेने का निर्देश अपीलार्थी को देने में गलती किया।

7. प्रथम प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जनवरी, 1958 में प्रत्यर्थी को चौकीदार के रूप में काम में लगाया गया था और उसने काम में लगाए जाने की तिथि से तीस वर्षों से अधिक तक काम किया और वर्ष 1992 में बिहार सरकार ने समस्त चौकीदारों एवं वफादारों को चतुर्थ वर्ग सरकारी कर्मचारी के रूप में मानने का निर्णय लिया। आगे यह निवेदन किया गया था कि बिहार सरकार द्वारा पत्र जारी किए जाने से (दिनांक 5.5.1992) बीस वर्षों बाद झारखंड राज्य यह कथन करते हुए दिनांक 4.11.2003 के एक अन्य पत्र के साथ आया कि पेंशन पाने के प्रयोजन से दिनांक 1.1.1990 के बाद किसी को दस वर्षों की सेवा पूरी करनी होगी। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची प्रथम प्रत्यर्थी और अन्य समस्थित व्यक्तियों–चौकीदारों एवं वफादारों–के लाभ के लिए बिहार राज्य ने उनको चतुर्थ वर्ग सरकारी कर्मचारी के रूप में घोषित करते हुए और मानते हुए वर्ष 1992 में निर्णय लिया और इसलिए, बिहार पेंशन नियमावली के नियम 63 के मुताबिक पेंशन की संगणना करने के प्रयोजन से निर्णय लिए जाने के पहले याची प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा दी गयी सेवा को भी विचार में लिया जाना चाहिए। यह प्रतिवाद किया गया था कि प्रत्यर्थी बिहार पेंशन नियमावली के नियम 63 के अधीन पेंशन के प्रदान के लिए समस्त शर्त परिपूर्ण करता है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से अपीलार्थी को प्रत्यर्थी की आर्रंभिक नियुक्ति की तिथि तथा उसके द्वारा दी गयी सेवा को विचार में लेकर पेंशन के भुगतान पर विचार करने का निर्देश दिया।

8. हमने सावधानीपूर्वक परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार किया है और आक्षेपित आदेश एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का परिशीलन किया है।

9. प्रत्यर्थी को दिनांक 3.1.1958 को तमार सर्किल, जिला राँची में अस्थायी बीट सं॰ 3/1 में अस्थायी कर्मचारी के रूप में चौकीदार के रूप में नियुक्त किया गया था। राज्य सरकार ने दिनांक 5.5.1992 के पत्र सं॰ 998 के तहत दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से चौकीदार को 750-12-870-14-940/- रुपयों के वेतनमान में चतुर्थ वर्ग सरकारी कर्मचारी के रूप में घोषित किया। दिनांक 1.1.1990 के पहले चौकीदार सरकारी कर्मचारी नहीं थे। झारखंड राज्य सरकारी आदेश सं॰ 2991 दिनांक 11.10.2003 के साथ आया जिसके अधीन चौकीदारों की सेवाओं को दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से नियमित किया गया था। दिनांक 4.11.2003 के पत्र सं॰ 5262 (परिशिष्ट–2) में अंतर्विष्ट अनुदेश के मुताबिक राज्य के चौकीदार दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से सेवा का दस वर्ष पूरा करने के बाद पेंशन के हकदार होंगे। दिनांक 4.11.2003 के उक्त पत्र में यह स्पष्ट किया गया है कि दिनांक 1.1.1990 के पहले दी गयी अस्थायी सेवा को पेंशन की संगणना करने के लिए विचार में नहीं लिया जाएगा। दिनांक 4.11.2003 के पत्र के उक्त अनुबंध का पठन निम्नलिखित है:–

"(1) fnukd 01.01.1990 vFkkr ljdkjh depkjh ?kkf"kr gku dh frfFk l 10 ¼nl½ o"kk d i'pkr ;fn dkb pkdhnkj@fnxokj@ ?kVokj ,o nQknkj@ljnkj lokfuoÙk gkrk g rk i'ku dh lfoèkk inku dh tk;xhA 10 ¼nl½ o"k l de lokofèk ijh dju oky lokfuoÙk pkdhnkj@fnxokj@ ?kVokj ,o nQknkj@ljnkj i'ku d gdnkj ugh gkxA ;g lfoèkk fnukd 01.01.2000 l vgd lok ijh gku ij vuekU; jgxhA fnukd 15.11.2000 l io d cdk; i'kukfn dk Hkxrku foÙk foHkkx] >kj[k.M d i= l[;k&132 fo0 i0 fnukd 28.6.2002 d vkyd e fd;k tk;xk] rkfd fnukd 15.11.2000 d io d fy; fd; x; Hkxrku dk lketu fcgkj l fd;k tk ldA

(ii) fnukd 01.01.1990 d io pkdhnkj@fnxokj@?kVokj ,o nQknkj@ljnkj d :i e fcrk;h x;h lokofèk i'ku gr ifjxf.kr ugh dh tk;xhA

(iii) fnukd 01,01,1990 l vFkkr ljdkjh lod ?kkf"kr gku d mijkUr fdlh pkdhnkj@fnxokj@?kVokj ,o nQknkj@ljnkj dh lokdky e eR; dh n'kk e mld vkfJr foèkok dk foÙk foHkkx d ifji= l0&ih0lh0&2-9-4/80-3000 fo0 fnukd 29.07.1980 d ikoèkkuk d rgr ikfjokfjd i'ku vuekU; gkxkA

10. प्रथम प्रत्यर्थी दिनांक 31.12.1997 को सेवा से निवृत्त हुआ। दिनांक 1.1.1990 से जिस तिथि पर रिट याची प्रथम प्रत्यर्थी ने सरकारी सेवा में प्रवेश किया और दिनांक 31.12.1997 अर्थात् अधिवर्षिता की तिथि तक संगणना करते हुए प्रत्यर्थी ने आठ वर्ष की सेवा पूरी की है। यदि इसे दिनांक 1.1.1990 से संगणित किया जाता है, प्रत्यर्थी पेंशन पाने का हकदार नहीं है।

11. अस्थायी कर्मचारी के रूप में प्रत्यर्थी द्वारा दी गयी सेवा अभिनिर्धारित करने के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश ने नियम 63 को निर्दिष्ट किया जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"63. ***vLFkk;h l LFkk;h fu;qDr e LFkkukrfjr ljdkjh lod vLFkk;h in e viuh lok dh x.kuk dj ldrk g ;fn] ;|fi bl igy çk;kfxd vFkok vLFkk;h :i l lftr fd;k x;k g] ;g vrrkxRok LFkk;h cu tkrk gA***

ukVk&;g fu;e foof{kr djrk g fd tc igyh ckj vLFkk;h :i l vFkok çk;kfxd :i l etj dMj l vlcfèkr iFkd in ckn e LFkk;h cuk fn;k tkrk g] ljdkjh lod dh lh.k vLFkk;h lok vFkok ml in e ljdkjh lod dh lok i'ku d fy, fxuh tkuh pkfg, ijUr ;g fd ,l ljdkjh lod vFkok ljdkjh lodk dk ckn e LFkk;h in ij vfèk"Bk;h :i l fu;Dr fd;k tkrk gA ;g fj;k;r doy ljdkjh lodk dk xkg; g tk LFkk;h in ij èkkj.kkfèkdkj ugh j[kr g, vLFkk;h lok] vfèk"Bk;h vFkok LFkkukiUu] nr g vkj ljdkjh lod dk xkg; g ;|fi og vc vLFkk;h in èkkj.k ugh djrk g tc bl LFkk;h cuk;k tkrk gA**

fo"kerkvk] tk ox fo'k"k d ekeyk e bl fu;e d 'kkfCnd ç;kT;rk l mnHkr gk ldrh g] dk nj dju d fy, ,l ekeyk e fu;e ykx dju e fuEufyf[kr fl)kr dk ikyu fd;k tkuk pkfg,%

(1) mlh çdkj d ink d LFkk;h dMj dk ifjr dju oky vkj lekukrj dr0;k dk fuogu dju oky vLFkk;h in d èkkjd] ;|fi ml ml dMj e LFkk;h in l lefpr :i l lcfèkr dke ij okLrfod :i l fu;kftr fd;k x;k g] dk vLFkk;h in ij lok nrk ekuk tkuk pkfg,A

*(2) tc LFkk;h ink dk ifjr djr g,] tl mDr (1) e g] vud vLFkk;h ink e l dN LFkk;h ink e lifjofrr fd;k tkrk g vkj ojh;rk d vulkj vFkok p;u }kjk bu ink ij LFkk;h çkUufr nh tkrh g] okLrfod :i l bl çdkj çkUur ljdkjh lodk dk vLFkk;h ink d èkkjdk d :i e ekuk tkuk pkfg, ftUg lifjofrr fd;k x;k g vkj ink ij nh x;h mudh vLFkk;h lok dh x.kuk dju dh vuefr nh tkuh pkfg,A** (tkj fn;k x;k)*

12. बिहार पेंशन नियमावली के नियम 63 के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि नियम 63 केवल ऐसे मामलों पर लागू होता है जहाँ व्यक्ति सरकारी सेवक के रूप में नियुक्त किया जाता है यद्यपि अस्थायी रूप से किंतु अधिष्ठायी स्थानापन्न पद पर। प्रथम प्रत्यर्थी को किसी अधिष्ठायी पद पर नियुक्त नहीं किया गया था। किंतु प्रथम प्रत्यर्थी अस्थायी रूप से चौकीदार के रूप में कार्यरत था और ऐसा अस्थायी नियोजन अधिष्ठायी पद पर नहीं था। चूँकि प्रथम प्रत्यर्थी को किसी अधिष्ठायी पद पर अथवा स्थानापन्न पद पर नियुक्त नहीं किया गया था, प्रथम प्रत्यर्थी पर नियम 63 प्रयोज्य नहीं है।

13. प्रथम प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दिनांक 11.10.2003 का सरकारी आदेश सं॰ 2991 प्रथम प्रत्यर्थी के पेंशन पाने के अधिकार को वापस नहीं ले सकता है। यह निवेदन किया गया था कि ऐसा पत्र सांविधिक लिखत नहीं है और उक्त पत्र के फलस्वरूप राज्य को इसे वापस रोकने की शक्ति नहीं है। उक्त प्रतिवाद स्वीकार्य नहीं है। बिहार पेंशन नियमावली, 1950 के नियम 86 के मुताबिक सरकारी सेवक पेंशन नियमावली के लाभ का दावा केवल तब कर सकता है, यदि सरकारी सेवा छोड़ने के समय पर उसकी वास्तविक अर्हक सेवा दस वर्ष और इसके ऊपर है। दिनांक 11.10.2003 का पत्र केवल बिहार पेंशन नियमावली का नियम 86 स्पष्ट करता है कि जहाँ तक चौकीदारों का संबंध है, जो दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से सरकारी सेवक बने। प्रथम प्रत्यर्थी दिनांक 1.1.1990 को सरकारी सेवा में आया और दिनांक 31.12.2007 को अधिवर्षित हुआ और इसलिए, उसने सेवा केवल आठ वर्ष पूरा किया है और पेंशन पाने के लिए उसके पास अर्हक सेवा नहीं है।

14. पटना उच्च न्यायालय के समक्ष समरुप मामले में, **2003 (3) BLJR 2388 (चरित्र पासवान बनाम बिहार राज्य एवं अन्य),** में जहाँ चौकीदार ने दिनांक 1.1.1990 के पहले अपनी विगत सेवा की गणना के लिए प्रार्थना किया, अभिवचन अस्वीकार करते हुए पटना उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि याची अपनी विगत सेवा की गणना करवाने का हकदार नहीं था और दस वर्षों से कम की सेवा देने के बाद सेवा से अधिवर्षित होने पर याची पेंशन का दावा नहीं कर सकता है। पटना उच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णय के पैरा 18 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

"8. i'ku fu;ekoyh d fu;e 58 d vèkhu ljdkjh lod dh lok i'ku d fy, vfgr ugh gkrh g tc rd ;g rhu 'krk dk ijk ugh djrh g%& (a) lok ljdkj d vèkhu gkuh gkxh((b) fu;ktu vfèk"Bk;h ,o LFkk;h gkuk gkxk vkj (c) lok dk Hkxrku ljdkj }kjk fd;k tkuk gkxkA fnukd 1.1.1990 d igy xke pkdhnkj d ekey e f}rh; 'kr Li"Vr% vuifLFkr Fkh D;kfd fu;ktu etj in ij fd, x, vfèk"Bk;h fu;ktu tl ugh FkkA ;|fi xke pkdhnkj dk in vurdky l vfLrRo e jgk g vkj oLrr% lfofèk;k g] mnkgj.kLo#i] xke pkdhnkjh vfèkfu;e] 1870, fcgkj ,o mMhlk ç'kklfud vfèkfu;e] 1922 vkj bld vfrfjDr in ij fu;fDr vkfn d çkoèkkuk dk vrfo"V dju oky ljdkjh vkn'kk ,o ifji=k dk lxg] pkdhnkjh euvy Hkh Fkk] ij fu;ktu dh çÑfr

*fcYdy fHkUu FkhA ;fn , lk ugh Fkk] pkdhnkj bu lkj o"kk rd o"k 1990 d igy fdl ckr d fy, 'kkj dj jg Fk\ o fu;fer in pkgr Fk rkfd o ljdkjh lodk d lerY; gk ld vkj doy mudh ekx dk è;ku e j[k dj ljdkj u in dk fu;fer prFk ox in cuku dk fu.k; fd;kA***

15. जहाँ तक सरकारी सेवा से सेवा निवृत्त कर्मचारी को पेंशन प्रदान करने के प्रयोजन से अर्हक सेवा की संगणना का संबंध है, यह विनिर्दिष्ट प्रावधन द्वारा विनियमित है जैसा बिहार पेंशन नियमावली के नियम 58 में अंतर्विष्ट है जो निम्नलिखित है:–

^^ljdkjh lod dh lok i'ku d fy, vfgr ugh gkrh g] tc rd ;g rhu fuEufyf[kr 'krk dk ijk ugh djrh g%&

(i) lok ljdkj d vèkhu gkuh gkxh(

(ii) fu;ktu vfèk"Bk;h ,o LFkk;h gkuk gkxk(

*(iii) lok dk Hkxrku ljdkj }kjk fd;k tkuk gkxkA***

16. प्रत्यर्थी को दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से चौकीदार के पद पर नियुक्त किया गया था। दिनांक 1.1.1990 के पहले चौकीदार बिहार सेवा संहिता द्वारा शासित नहीं होते थे और इसलिए, प्रथम प्रत्यर्थी पेंशन के प्रयोजन से अपनी विगत सेवा की गणना इप्सित नहीं कर सकता है। यदि प्रत्यर्थी अपनी विगत सेवा की गणना का हकदार नहीं है, आठ वर्ष की सेवा देने के बाद दिनांक 31.12.1997 को सेवा से अधिवर्षित होने पर, प्रत्यर्थी पेंशन का दावा नहीं कर सकता है। जैसा पहले इंगित किया गया है, बिहार पेंशन नियमावली के नियम 86 के मुताबिक, पेंशन का लाभ पाने के लिए, सरकारी सेवक के पास कम से कम दस वर्षों की वास्तविक अर्हक सेवा होनी चाहिए थी किंतु प्रथम प्रत्यर्थी के पास पेंशन का लाभ पाने के लिए दस वर्षों की अर्हक सेवा नहीं है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने इसे दृष्टि में नहीं रखा था कि प्रथम प्रत्यर्थी केवल दिनांक 1.1.1990 के प्रभाव से सरकारी सेवक बना था और इसके पहले वह किसी अधिष्ठायी अथवा स्थानापन्न पद पर कार्यरत नहीं था। डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6514/2005 में पारित दिनांक 17.12.2008 का आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने का दायी है।

17. परिणामस्वरुप, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6514/2005 में दिनांक 17.12.2008 को पारित आदेश अपास्त किया जाता है और यह लेटर्स पेटेन्ट अपील अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,p lh feJk] U;k;efr

युधिष्ठिर दास

cuke

झारखंड राज्य

Cr.M.P. No. 5120 of 2001. Decided on 16th June, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 468, 471, 469 एवं 34—छल एवं कूट रचना–कूटरचित चेक के आधार पर खाता से अवैध निकासी–याची बैंक का प्रबंधक था–प्राथमिकी में उसके विरुद्ध दांडिक अपराध बनाते हुए याची के विरुद्ध विनिर्दिष्ट एवं गंभीर अभिकथन हैं–इस चरण पर संपूर्ण प्राथमिकी अभिखंडित करने के लिए याची द्वारा मामला नहीं बनाया गया है–याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 3 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची ने गोलमुरी पी॰ एस॰ केस सं॰ 110 वर्ष 2001, जी॰ आर॰ सं॰ 1062 वर्ष 2001 के तत्सम, जिसे भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 420, 468, 471, 469 और 34 के अधीन अपराध के लिए याची के विरुद्ध संस्थित किया गया था, के संबंध में उसके विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए इस आवेदन को दाखिल किया है।

3. प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि प्रासंगिक समय पर याची सिंहभूम जिला केंद्रीय सहकारी बैंक, गोलमुरी शाखा में प्रबंधक के रूप में पदस्थापित था जिसमें सूचक का भी खाता था। सूचक ने नगदकरण के लिए चेक भेजा, किंतु उसे सूचित किया गया था कि उसके खाता में पर्याप्त धन नहीं था। अगले दिन, सूचक द्वारा 1500/- रुपया का चेक दिया गया था जिसे पास किया गया था और बाद में जब सूचक द्वारा खाता-चेक किया गया था, यह पाया गया था कि दिनांक 8.5.2001 को कूटरचित चेक के आधार पर खाता से एक लाख रुपया अवैध रूप से निकाल लिया गया था। जब सूचक इसका परिवाद करने के लिए याची से मिला, याची ने टालमटोल वाला उत्तर दिया। जब सूचक ने पुलिस ने जाने का धमकी दिया, उसे याची द्वारा पुलिस में नहीं जाने के लिए कहा गया था और खाता में धन का प्रबंध कर दिया जाएगा। आगे यह अभिकथित किया गया है, पर याची ने खाता मैनेज करने के बहाने सूचक से एक लाख रुपया का चेक लिया था, पर खाता में राशि जमा नहीं की गयी थी और यह भी अभिकथित किया गया है कि याची द्वारा कपटपूर्वक उक्त चेक का इस्तेमाल भी किया गया था। सूचक द्वारा दिए गए लिखित सूचना के आधार पर याची के विरुद्ध पुलिस मामला दर्ज किया गया था और अन्वेषण किया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची को इस मामले में झूठा फँसाया गया है और यह सुयोग्य मामला है जिसमें याची के विरुद्ध प्राथमिकी अभिखंडित की जाए।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

6. प्राथमिकी से प्रकट है कि याची के विरुद्ध विनिर्दिष्ट एवं गंभीर अभिकथन हैं जो उसके विरूद्ध दांडिक मामला निर्मित करते हैं। इस चरण पर संपूर्ण प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए याची द्वारा मामला नहीं बनाया गया है। इस मामले में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vferko dekj xlrk] U;k;efr

सुधीर दूबे

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Revision No. 1208 of 2013. Decided on 7th August, 2014.

किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) नियमावली, 2007—नियम 12—किशोरिता–आयु का विनिश्चयकरण–पंचायत द्वारा प्रमाण पत्र जारी किए जाने की तिथि के बाद याची को किशोर घोषित करने के लिए याचिका दाखिल की गयी थी–चूँकि दस्तावेज संदिग्ध हैं, विचारण न्यायालय मुख्य चिकित्सा अधिकारी से चिकित्सीय मत प्राप्त करने का निर्देश दे सकता है–नियम 12 के निबंधनानुसार चिकित्सीय बोर्ड गठित किया गया। (पैरा 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Dilip Kumar Chakraverty, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

वर्तमान दांडिक पुनरीक्षण आवेदन एस॰ टी॰ केस सं॰ 124 वर्ष 2009 (जी॰ आर॰ केस सं॰ 592 वर्ष 2008) में विद्वान प्रथम सहायक सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 5.12.2013 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा उसको किशोर घोषित करने के लिए याची की याचिका अस्वीकार कर दी गयी है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007 के नियम 12 के निबंधनानुसार नियम 12 किशोर की आयु के विनिश्चयकरण के लिए प्रक्रिया विहित करता है, कि यदि विद्यालय से मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र अथवा समतुल्य प्रमाण पत्र अथवा जन्मतिथि प्रमाण पत्र और निगम अथवा नगरपालिका प्राधिकारी अथवा पंचायत द्वारा दिया गया जन्म प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया जाता है अथवा संदेहास्पद है, तब किशोर अथवा बालक की आयु के विनिश्चयकरण के संबंध में सम्यक रूप से गठित मेडिकल बोर्ड से मेडिकल मत इप्सित किया जा सकता है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि याची ने दिनांक 2.2.2013 को किशोर के रूप में उसे घोषित करने के लिए आवेदन वापस ले लिया था। बाद में, उसके द्वारा यह पाया गया था कि उसके पास ग्राम पंचायत के रजिस्ट्रार द्वारा जारी प्रमाण पत्र है और उसने स्वयं को किशोर घोषित करवाने के लिए दिनांक 12.9.2013 को याचिका दाखिल किया था किंतु इसे इस आधार पर कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज बयान में उसकी आयु 24 वर्ष अभिनिश्चित की गयी है, अस्वीकार कर दिया गया था; कि विद्वान अवर न्यायालय यह अधिमूल्यन करने में विफल रहा है कि आयु केवल निर्धारण पर दर्ज की गयी है जो मूल्यांकन मात्र पर है। यह निवेदन किया गया है कि यदि न्यायालय को दस्तावेजों की सत्यता के संबंध में संदेह था, यह किशोर न्याय नियमावली, 2007 के नियम 12 के निबंधनानुसार मेडिकल बोर्ड गठित करके मेडिकल मत के लिए आदेश दे सकता था।

4. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इसका विरोध किया है और निवेदन किया है कि यदि याची के पास ऐसा दस्तावेज था, इसे आसानी से जाँच के क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता था और वस्तुतः दस्तावेज दिनांक 31.8.2012 का है जबकि उसने स्वयं को किशोर घोषित करवाने के लिए दिनांक 28.9.2012 को याचिका दाखिल किया था। यह दर्शाता है कि याची शुद्ध भाव से नहीं आया है बल्कि वह विचारण में विलंब करना चाहता है; कि दस्तावेजों को संदिग्ध पाया गया था।

5. अधिवक्ता को सुनने पर और किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण नियमावली, 2007 के नियम 12 का परिशीलन करने पर जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"12.* ***vk; fuèkkj.k dju e vulfjr dh tku okyh çfØ;k-***&(1) ckyd ;k fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj l lcfèkr çR;d ekey e] U;k;ky; ;k e.My] ;FkkfLFkfr] bu fu;ek d fu;e 19 e fufn"V lfefr ml ç;ktu d fy, vkonu dju dh frfFk l rhl fnuk dh vofèk d Hkhrj ,l fd'kkj ;k ckyd ;k fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj dh vk; fuèkkfjr djxkA
>
> (2) U;k;ky; ;k e.My] ;k ;FkkfLFkfr] lfefr 'kkjhfjd y{k.kk ;k nLrkot k] ;fn miyCèk gk] d vkèkkj ij çFke n"V;k fd'kkj ;k ckyd ;k ;FkkfLFkfr] fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj dh fd'kkjrk ;k vU;Fkk fuèkkfjr djxk] vkj ml lç{k.k xg ;k ty e HkstxkA
>
> (3) ckyd ;k fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj l lcfèkr çR;d ekey e vk; fuèkkfjr dju okyh tkp fuEufyf[kr çkIr djr g, lk{; pkgr g, U;k;ky; ;k e.My] ;k ;FkkfLFkfr lfefr }kjk dh tk;xh&

(a) (i) nloh ;k led{k çek.ki=] ;fn miyCèk gk] vkj ftld vHkko e]

(ii) igy çoʼk fy; fo|ky; l tUefrfFk çek.k i= (ly Ldy d vykok)] vkj ftld vHkko e(

(iii) fuxe ;k fuxe çkfèkdkjh ;k ipk;r }kjk fn;k x;k tUe çek.ki=]

(b) vkj mijkDr [k.M (a) d (i), (ii) ;k (iii) d vHkko e] fpfdRlh; jk; lE;d :i l xfBr fpfdRlh; e.My l çkIr fd;k tk;xk] tk fd ʼkkj ;k ckyd dh vk; ?kkf"kr djxkA ;fn vk; dk lgh fuèkkj.k ugh fd;k tk ld] rk U;k;ky; ;k e.My] ;k ;FkkfLFkfr] lefr mud }kjk y[kc) fd; tku oky dkj.kk d fy,] ;fn vko';d fopkfjr fd;k tk;] ,d o"k d ekftu d Hkhrj fupyh rjQ mldh vk; fuèkkfjr djr g, ckyd ;k fd'kkj dk ykHk çnku dj ldrk gA

vkj ,l ekey e vkn'k ikfjr djr le;] ,l lk{; tk] miyCèk gk] ;k fpfdRlh; jk; dk fopkfjr dju d i'pkr ;FkkfLFkfr] mldh vk; d vkj [k.M (a) (i), (ii) ;k (iii) e l fdlh e fofufn"V lk{; d lcèk e fu"d"k vfHkyf[kr djxk] ;k ftld vHkko e [k.M (b) ,l ckyd ;k fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj d lcèk e vk; dk fu'pk;d çek.k gkxkA

(4) ;fn fd'kkj ;k ckyd ;k fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj vijkèk dh frfFk ij mi&fu;e (3) e fofufn"V fu'pk;d çek.k e l fdlh d vkèkkj ij 18 o"k l de vk; dk ik;k tkrk g] rk U;k;ky; ;k e.My ;k ;FkkfLFkfr lefr vk; of.kr djr g, vkj vfèkfu;e vkj bu fu;ek d ç;ktu d fy, fd'kkjrk ;k vU;Fkk dh gfl;r ?kkf"kr djr g, vkn'k fyf[kr e ikfjr djxk vkj vkn'k dh çfr ,l fd'kkj ;k lcfèkr 0;fDr dk nh tk;xhA

(5) ,lk gkr g, vkj flok;] tgk vU; tkp ;k vU;Fkk vU; ckrk d lkFk vfèkfu;e dh èkkjk 7(a), èkkjk 64 vkj bu fu;ek dh 'krk e vif{kr gk] rk dkb Hkh vU; tkp bl fu;e d mi&fu;e (3) e fufn"V çek.ki= ;k dkb vU; nLrkoth çek.k dk ijhf{kr dju vkj çkIr dju d i'pkr U;k;ky; ;k e.My }kjk ugh dh tk;xhA

*(6) bl fu;e e vUrfo"V çkoèkku mu fuLrkfjr ekeyk dk Hkh ykx gkx] tgk fd'kkjrk dh gfl;r l fofèk dk mYy?ku dju oky fd'kkj d fgr e lefpr vkn'k ikfjr dju vkj vfèkfu;e d vèkhu n.Mkn'k l NVdkjk vif{kr djr g, mi&fu;e (3) vkj vfèkfu;e e vUrfo"V çkoèkkuk dh ikyuk e fuèkkfjr ugh dh x;h gkA***

6. स्वीकृत रूप से, जाँच गवाह सं॰ 2 के रूप में याची के पिता का परीक्षण किया गया था और वह अवश्य उक्त दस्तावेज से अवगत होगा क्योंकि याची को किशोर घोषित करवाने के लिए याचिका दिनांक 28.9.2012 को अर्थात् पंचायत द्वारा प्रमाण पत्र जारी किए जाने की तिथि के बाद दाखिल की गयी थी। चूँकि दस्तावेज संदिग्ध हैं, विचारण न्यायालय जे॰ जे॰ नियमावली, 2007 के नियम 12 के निबंधनानुसार याची की आयु के विनिश्चयकरण के लिए मुख्य चिकित्सा अधिकारी, जमशेदपुर से मेडिकल मत के लिए उसको मेडिकल बोर्ड गठित करने का निर्देश दे सकता है। मेडिकल बोर्ड दो सप्ताह के भीतर रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

उक्त निर्देश एवं संप्रेक्षण के साथ पुनरीक्षण एतद् द्वारा निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

सुशीला देवी

cuke

बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ एवं अन्य

W.P. (S) No. 4160 of 2013. Decided on 1st July, 2014.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–मृत्यु-सह-सेवा निवृत्ति लाभ–याची का दावा मुख्यतः दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में पारित आदेश पर आधारित है–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही मुख्यतः महिला को भरण-पोषण के भुगतान पर विचार किए जाने के लिए होती है जो स्वयं का पत्नी होने का दावा करती है–उसमें दर्ज निष्कर्ष केवल प्रथम दृष्टया प्रकृति के हैं और इन पर ऐसा भरण-पोषण इप्सित करने वाली पत्नी के रूप में दावा करते हुए याची के दर्जा के न्याय निर्णयन/घोषणा के रूप में विचार नहीं किया जा सकता है–सेवा अभिलेख प्राईवेट प्रत्यर्थी को विधिवत ब्याहता पत्नी के रूप में दर्शाता है जिसके पक्ष में लाभों को निर्मुक्त किया गया है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैरा 6)

अधिवक्तागण.–M/s Manoj Tandon, For the Petitioner; Mr. Ananda Sen, For the Respondents; Mr. Purendu Sharan, For the Respondent No..

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. वर्तमान मामला में वर्तमान याची स्वयं का स्वर्गीय सुरेश लाल की विधिवत ब्याहता पत्नी होने का दावा करती है जिसकी मृत्यु दिनांक 30.4.2011 को प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के अधीन सेवारत रहते हुए हो गयी। वह पहले मृतक कर्मचारी की मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ का भुगतान इप्सित करते हुए डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4144 वर्ष 2002 में इस न्यायालय के पास आयी थी। उक्त रिट याचिका याची के दावा के गुणागुण पर विचार किए बिना, दिनांक 6.8.2012 के निर्णय, परिशिष्ट 13 के तहत अनुबंधित समय के भीतर उसके अभ्यावेदन पर निर्णय लेने के लिए प्रत्यर्थी नियोक्ता को निर्देश देते हुए निपटायी गयी थी। तत्पश्चात, अन्य बातों के साथ उसको विधि की समुचित प्रक्रिया के माध्यम से स्वर्गीय सुरेश लाल की विधिवत ब्याहता पत्नी के रूप में अपनी पहचान स्थापित करने के लिए उसको कहते हुए, जिस पर वह मृतक कर्मचारी के भविष्य निधि लाभ को प्राप्त कर सकती है और यदि इच्छुक हो, श्रीमती रेखा देवी द्वारा प्राप्त की गयी राशि वसूल कर सकती है, उसका दावा अस्वीकार करते हुए दिनांक 17/29.11.2012 को आक्षेपित आदेश, परिशिष्ट-15 पारित किया गया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने भरण-पोषण जिसे उसके पक्ष में अनुज्ञात किया गया था, का दावा करने के लिए याची द्वारा दाखिल दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में पारित आदेश पर विश्वास किया है। उक्त आदेश विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, नवादा द्वारा दिनांक 20.2.1979 को पारित किया गया था और उसके विरुद्ध सुरेश लाल द्वारा दाखिल दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 136 वर्ष 1979 में तृतीय अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 27.8.1981 का निर्णय, परिशिष्ट-2, भी अभिलेख पर मौजूद है। यह निवेदन किया गया है कि मृतक ने अपनी विधिवत ब्याहता पत्नी के रूप में वर्तमान याची के दर्जा को विवादित कभी नहीं किया और इसलिए, प्रत्यर्थी नियोक्ता मृतक कर्मचारी के ग्राह्य मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति लाभ के लिए उसका दावा अस्वीकार करने में न्यायोचित नहीं है।

4. प्रत्यर्थी नियोक्ता बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि मृतक कर्मचारी ने निजी प्रत्यर्थी का नाम अपनी विधिवत् ब्याहता पत्नी के रूप में दिया था और स्वयं वर्ष 1979 में उपदान

भुगतान प्राप्त करने के लिए फॉर्म एफ० में उसे नामांकित किया था। प्रत्यर्थी–बी० सी० सी० एल० के विद्वान अधिवक्ता श्री आनंद सेन ने निवेदन किया है कि उसके दावा पर विचार करते हुए प्रत्यर्थीगण द्वारा उसको उपदान एवं अवकाश नगदकरण आदि, का भुगतान किया गया था। भुगतान के बाद वर्तमान याची ने मृतक कर्मचारी के साथ विवाह के अभिकथित कृत्य को प्रकट करते हुए कानूनी नोटिस के माध्यम से अभ्यावेदन दिया है। यह निवेदन किया गया है कि प्राईवेट प्रत्यर्थी के पुत्र जिसे वर्तमान रिट याचिका में पक्ष नहीं बनाया गया है ने भी अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया था। अत: यह निवेदन किया गया है कि उसके लिए अपने दर्जा की घोषणा एवं अपनी शिकायत के निवारण के लिए विधि के सक्षम न्यायालय के समक्ष जाना समुचित उपचार है।

5. प्रत्यर्थी सं० 5 रेखा देवी के विद्वान अधिवक्ता ने भी वर्तमान याची का दावा विवादित किया है। उसके अनुसार, मृतक कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में पत्नी के रूप में निजी प्रत्यर्थी और पुत्र के रूप में विकास कुमार सिन्हा सहित सात व्यक्तियों का नाम दर्शाया गया है जिन्हें विधि के मुताबिक भविष्य निधि, उपदान, जीवन आच्छादन योजना एवं पारिवारिक पेंशन के भुगतान के लिए नामांकित किया गया था। वर्तमान याची अचानक उक्त दावा के लिए उपस्थित हुई है। पूर्व अवसर पर उसने वर्तमान प्राइवेट प्रत्यर्थीगण जो आवश्यक पक्ष थी को पक्षकार बनाए बिना रिट याचिका दाखिल किया है। ऐसी परिस्थितियों में, उसका दावा अस्वीकार करने वाला आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में पूर्णत: न्यायोचित है। मृतक कर्मचारी के ग्राह्य सेवा निवृत्ति लाभ को इप्सित करने के लिए वर्तमान याची के पास कोई वैध आधार नहीं हैं।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया है। याची का दावा मुख्यत: महिला जो स्वयं के पत्नी होने का दावा करती है को भरण–पोषण के भुगतान पर विचार करने के लिए दं० प्र० सं० की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में पारित आदेश पर आधारित है। उसमें दर्ज निष्कर्ष अथवा किए गए संप्रेक्षण केवल प्रथम दृष्टया प्रकृति के हैं और ऐसा भरण–पोषण इप्सित करते हुए पत्नी के रूप में दावा करने वाले वर्तमान याची के दर्जे के न्याय निर्णयन/घोषणा के रूप में इस पर विचार नहीं किया जा सकता है। इसके विपरीत, मृतक कर्मचारी के सेवा अभिलेख में नि:संदेह प्राईवेट प्रत्यर्थी रेखा देवी का नाम प्रविष्ट किया गया था और स्वयं वर्ष 1979 में तैयार किए गए उपदान फॉर्म में नामांकित किया गया था। यह भी प्रतीत होता है कि रेखा देवी से जन्मे पुत्र, जिसका नाम मृतक कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में दर्ज किया गया था, ने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए दावा किया है। इन समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए प्रत्यर्थीगण ने सही रूप से याची के अभ्यावेदन को विनिश्चित किया है क्योंकि स्वयं को मृतक कर्मचारी की विधिवत् ब्याहता पत्नी के रूप में दर्शाने वाले किसी निश्चयात्मक दस्तावेज को प्रत्यर्थीगण के समक्ष साक्ष्यित नहीं किया जा सकता था। इसके विपरीत, नियोक्ता द्वारा रखे गए अभिलेख प्राइवेट प्रत्यर्थी को विधिवत ब्याहता पत्नी के रूप में दर्शाता था जिसके पक्ष में ग्राह्य भविष्यनिधि एवं उपदान का लाभ निर्मुक्त किया गया है। याची को स्वर्गीय सुरेश लाल की विधिवत ब्याहता पत्नी के रूप में याची के दर्जा से संबंधित विनिश्चित किए जाने वाले तथ्यों के विवादित प्रश्न पर सक्षम न्यायालय के समक्ष उपचार इप्सित करने की सलाह सही प्रकार से दी गयी है। अत:, मैं आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं पाता हूँ। अत:, रिट याचिका खारिज की जाती है।